इकाई 1 सामाजिक शोध : अर्थ तथा सामाजिक शोध का उद्देश्य
Social Research: Meaning & Purpose of Social Research

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य
1.1 प्रस्तावना
1.2 सामाजिक शोध की अवधारणा का स्पष्टीकरण : अर्थ एवं परिभाषाएँ
1.3 सामाजिक शोध की प्रकृति
1.4 सामाजिक शोध के उद्देश्य
1.5 सामाजिक शोध में प्रेरणार्थक कारक
1.6 सामाजिक शोध का महत्त्व
1.7 सामाजिक शोध की समस्याएँ
1.8 सारांश
1.9 शब्दावली
1.10 अभ्यास प्रश्न
1.11 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई में सामाजिक शोध की अवधारणा को समझाने का प्रयास किया गया है। इसके साथ ही इसकी प्रकृति, उद्देश्यों, प्रेरणार्थक कारकों, महत्त्व एवं समस्याओं को स्पष्ट करना भी इस इकाई का उद्देश्य है। आशा है कि इस इकाई को पढ़ने के बाद, आप :

- सामाजिक शोध की अवधारणा को समझ पाएँगे;
- सामाजिक शोध की प्रकृति का ज्ञान प्राप्त कर पाएँगे;
- सामाजिक शोध के उद्देश्यों की व्याख्या कर पाएँगे;
- सामाजिक शोध में प्रेरणार्थक कारकों को समझ पाएँगे;
- सामाजिक शोध का महत्त्व समझ पाएँगे; तथा
- सामाजिक शोध की समस्याओं की चर्चा कर पाएँगे।

1.1 प्रस्तावना

मानव एक सामाजिक प्राणी है तथा प्रारम्भ से ही वह एक जिज्ञासु प्राणी रहा है क्योंकि उसने प्रकृति को समझने एवं अपनी समस्याओं के समाधान के लिए सदैव सतत प्रयास किया है। वास्तव में, सभ्यता एवं संस्कृति का विकास मानव की इस जिज्ञासा द्वारा प्रेरित अपने पर्यावरण को अनवरत रूप से समझने के प्रयासों का ही परिणाम है। आज प्रकृति को समझने तथा सामाजिक जीवन के बारे में नवीन ज्ञान प्राप्त करने के प्रयासों को ही शोध कहा जाने लगा है। अतः शोध ज्ञान की खोज से सम्बन्धित है।

1.2 सामाजिक शोध की अवधारणा का स्पष्टीकरण : अर्थ एवं परिभाषाएँ

'सामाजिक शोध' का अर्थ समझने से पहले यह जान लेना अनिवार्य है कि 'शोध' या 'अनुसन्धान' किसे कहते हैं। 'शोध' शब्द अंग्रेजी के 'Research' शब्द का हिन्दी रूपान्तर है जिसे दो भागों 'Re' तथा 'Search' में विभाजित किया जा सकता है। पहले अर्थात् 'Re' शब्द का अर्थ है 'पुनः' जबकि दूसरे अर्थात् 'Search' शब्द का अर्थ है 'खोज करना'। अतः 'शोध' का शाब्दिक अर्थ 'पुनः खोज

करना' है। **प्लूटचिक** (Plutchik) के मतानुसार शोध शब्द का उद्गम एक ऐसे शब्द से हुआ है जिसका अर्थ सब दिशाओं में जाना अथवा खोज करना है।

मूल रूप से शोध शब्द का अर्थ अन्वेषण (Enquiry) से लिया जाता था, परन्तु कालान्तर में इसका रूप शनैः शनैः निरन्तर संशोधित तथा विकसित होता गया। आधुनिक वैज्ञानिक शोध इसी सतत्, प्रगतिशील एवं विकासशील प्रक्रम की देन है। **द न्यू सेन्चुरी डिक्शनरी** (The New Century Dictionary) के अनुसार शोध का अर्थ किसी वस्तु अथवा व्यक्ति के विषय में विशेष रूप से सावधानी के साथ खोज करना, तथ्यों अथवा सिद्धान्तों का अन्वेषण करने के लिए विषय–सामग्री की निरन्तर सावधानीपूर्वक पूछताछ अथवा जाँच–पड़ताल करना है।

सी0 वी0 गुड (C. V. Good) के अनुसार–"आदर्श रूप में शोध किसी समस्या के बारे में सावधानी एवं निष्पक्ष रूप से किया जाने वाला अन्वेषण है जिसमें यथासम्भव प्रमाणित तथ्यों में अन्तर, निर्वचन तथा सामान्य रूप से सामान्यीकरण को आधार बनाया जाता है।" इसी प्रकार, **सामाजिक विज्ञानों के विश्वकोश** (Encyclopedia of the Social Sciences) के अनुसार–"शोध वस्तुओं, अवधारणाओं या प्रतीकों आदि को कुशलतापूर्वक व्यवस्थित करता है, जिसका उद्देश्य सामान्यीकरण द्वारा ज्ञान का विकास, प्रामाणिकता की जाँच अथवा सत्यापन की जाँच होता है चाहे वह ज्ञान व्यवहार में सहायक हो या कला में।"

इस प्रकार, शोध का अर्थ केवल पुनः खोज करना ही नहीं है अपितु किसी प्रघटना या समस्या के बारे में में नवीन जानकारी प्राप्त करना या उपलब्ध ज्ञान में किसी प्रकार का संशोधन करना भी है। 'शोध' शब्द का प्रयोग भी एक प्रकार से शुद्धि, संस्कार या संशोधन के अर्थ के रूप में किया जाता है। सामान्यतः नवीन ज्ञान की दिशा में किया गया क्रमबद्ध प्रयास ही शोध कहलाता है, परन्तु सामाजिक विज्ञानों में 'शोध' शब्द का प्रयोग नवीन ज्ञान प्राप्त करने के लिए ही नहीं किया जाता अपितु विस्तृत अर्थ में ज्ञान में वृद्धि के साथ–साथ इसमें किसी प्रकार का संशोधन करने या ज्ञान की पुनर्स्थापना करने के रूप में भी किया जाता है। वास्तव में, सामाजिक शोध मानव के सामाजिक जीवन, सामाजिक घटनाओं एवं सामाजिक जटिलताओं के सम्बन्ध में अन्वेषण का एक वैज्ञानिक प्रयास है जिसका उद्देश्य नवीन ज्ञान प्राप्त करना अथवा/तथा विद्यमान ज्ञान का परिष्कार करना है। सामाजिक शोध में वैज्ञानिक एवं तार्किक पद्धतियों की सहायता से सामाजिक व्यवहार का विश्लेशण करने के पश्चात् सिद्धान्तों का निर्माण करने का प्रयास किया जाता है। अन्य शब्दों में यह कहा जा सकता है कि सामाजिक शोध की प्रकृति वैज्ञानिक होती है तथा इसमें निरीक्षण, परीक्षण, तथ्यों के अवलोकन, वर्गीकरण तथा सामान्यीकरण हेतु व्यवस्थित ढंग से वैज्ञानिक पद्धति के सभी चरणों को अपनाया जाता है। सामाजिक शोध में वस्तुनिष्ठता, सत्यापनशीलता, तटस्थता, व्यवस्थितता तथा भविष्योक्ति पर जोर दिया जाता है।

अतः सरल शब्दों में यह कहा जा सकता है कि सामाजिक शोध का अर्थ सामाजिक घटनाओं या तथ्यों के बारे में नवीन जानकारी प्राप्त करना, प्राप्त ज्ञान में वृद्धि करना अथवा जिन सिद्धान्तों एवं नियमों का निर्माण किया गया है उनमें किसी प्रकार का संशोधन करना है। सामाजिक शोध की परिभाषाएँ विभिन्न विद्वानों ने निम्नलिखित प्रकार से दी हैं–

यंग (Young) के अनुसार–"सामाजिक शोध नवीन तथ्यों की खोज, पुराने तथ्यों के सत्यापन, उनके क्रमबद्ध पारस्परिक सम्बन्धों, कारणों की व्याख्या तथा उन्हें संचालित करने वाले प्राकृतिक नियमों के अध्ययन की सुनियोजित पद्धति है।" उनके अनुसार, "शोध का उद्देश्य (i) नवीन तथ्यों का पता लगाना अथवा पुराने तथ्यों की प्रामाणिकता की जाँच एवं परीक्षण करना; (ii) उपयुक्त सैद्धान्तिक सन्दर्भ में तथ्यों के क्रमों, अन्तर्सम्बन्धों तथा कार्य–कारण व्याख्याओं का विश्लेशणकरना तथा (iii) नवीन वैज्ञानिक यन्त्रों, आवधारणाओं और सिद्धान्तों का निर्माण करना है जिनसे कि मानवीय व्यवहार का विश्वसनीय और प्रमाणित अध्ययन किया जा सके।" **फिशर** (Fisher) के अनुसार–"किसी समस्या को

हल करने या एक उपकल्पना की परीक्षा करने, या नए घटनाक्रम या उसमें नए सम्बन्धों को खोजने के उद्देश्य से उपयुक्त पद्धतियों का सामाजिक परिस्थितियों में जो प्रयोग किया जाता है, उसे सामाजिक शोध कहते है।" **रैडमैन** एवं **मोरी** (Redman and Mory) के अनुसार–"नवीन ज्ञान को प्राप्त करने के क्रमबद्ध प्रयास को हम शोध कह सकते हैं।"

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट हो जाता है कि सामाजिक शोध सामाजिक सम्बन्धों, घटनाओं तथा तथ्यों से सम्बन्धित है जिसमें इनकी व्याख्या, कार्य–कारण सम्बन्धों की खोज, नवीन तथ्यों की खोज तथा पुराने तथ्यों की प्रामाणिकता की जाँच वैज्ञानिक ढंग से करने का प्रयास किया जाता है। अतः सामाजिक शोध एक व्यवस्थित पद्धति है जिसमें सामाजिक तथ्यों की वास्तविकता, उनके कार्य–कारण सम्बन्धों एवं प्रक्रियाओं के बारे में क्रमबद्ध ज्ञान प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है।

1.3 सामाजिक शोध की प्रकृति

शोध एवं सामाजिक शोध की अवधारणा के स्पष्टीकरण से सामाजिक शोध की प्रकृति का भी पता चल जाता है। सामाजिक शोध की प्रकृति निम्नांकित तथ्यों द्वारा स्पष्ट की जा सकती है–

(1) सामाजिक सम्बन्धों, घटनाओं, तथ्यों एवं प्रक्रियाओं की व्याख्या–सामाजिक शोध के अन्तर्गत मानव–व्यवहार का अध्ययन किया जाता है। समाज में रहने वाले अन्य सदस्यों एवं समूहों के साथ उसके सम्बन्ध, उनकी विभिन्न प्रक्रियाओं एवं अन्तर्क्रियाओं का अध्ययन तथा विभिन्न सामाजिक तथ्यों एवं घटनाओं, जो कि व्यक्ति के व्यवहार को प्रभावित करती हैं, का विष्लेशणसामाजिक शोध के अन्तर्गत किया जाता है।

(2) सामाजिक घटनाओं के बारे में नवीन तथ्यों की खोज करना–सामाजिक शोध का उद्देश्य किसी घटना के सम्बन्ध या व्यक्तियों के पारस्परिक सम्बन्धों में नवीन तथ्यों एव नियमों की खोज करना है। इन नवीन तथ्यों की खोज द्वारा सामाजिक शोध सामाजिक सम्बन्धों द्वारा निर्मित संरचना एवं संगठन को भी समझने एवं इनका स्पष्टीकरण करने में सहायता देता है। नवीन तथ्यों की खोज के कारण अनेक विद्वान् सामाजिक शोध का उद्देश्य केवल सैद्धान्तिक ज्ञान प्राप्त करने तक ही सीमित रखने का प्रयास करते हैं।

(3) सामाजिक समस्याओं की प्रकृति एवं कारणों का अध्ययन करना–सामाजिक शोध में विविध प्रकार की सामाजिक समस्याओं की प्रकृति एवं उनके कारणों का पता लगाने का भी प्रयास किया जाता है। जब तक सामाजिक समस्याओं की प्रकृति एवं कारणों का पता न हो तब तक उनका उपचार सम्भव नहीं है। **पी0 वी0 यंग** (P. V. Young) का कहना है कि सामाजिक शोध व्याधिकीय समस्याओं से केवल वहीं तक सम्बद्ध है जहाँ तक वे आधारभूत सामाजिक प्रक्रियाओं, मानव व्यवहार तथा व्यक्तित्व के विकास अथवा विघटन पर प्रकाश डालती हैं। सामाजिक शोध में कार्य–कारण सम्बन्धों की खोज करने का प्रयास किया जाता है। उदाहरण के लिए–यदि शोध के आधार पर यह स्थापित हो जाए कि गन्दी बस्तियाँ बाल अपराध के लिए उत्तरदायी हैं, तो इसे कार्य–कारण सम्बन्धों की स्थापना कहा जाएगा।

(4) प्राचीन तथ्यों का पुनर्परीक्षण एवं सुधार करना–नवीन नियमों तथा सिद्धान्तों के निर्माण के साथ–साथ सामाजिक शोध का उद्देश्य प्राचीन तथ्यों की पुनर्परीक्षा करना तथा उनमें सुधार करना भी है। समयानुकूल ज्ञान के आधार पर सामाजिक तथ्यों की व्याख्या करना मानव जीवन को समझने के लिए अनिवार्य है। उदाहरण के लिए–सामाजिक शोध के आधार पर ही यह धारणा परिवर्तित हुई है कि अपराधी जन्मजात होते हैं।

(5) वैज्ञानिक पद्धति का प्रयोग–सामाजिक शोध में वैज्ञानिक पद्धति का प्रयोग किया जाता है ताकि विश्वसनीय एवं प्रमाणित तथ्यों का संकलन किया जा सके और निष्पक्ष व्याख्या द्वारा मानव

सम्बन्धों की प्रकृति को समझा जा सके। वैज्ञानिक पद्धति से अभिप्राय सामाजिक शोध में निरीक्षण, परीक्षण, तथ्यों के संकलन, वर्गीकरण तथा सामान्यीकरण हेतु व्यवस्थित विधि को अपनाना है। वैज्ञानिक पद्धति द्वारा किए गए अध्ययनों की सत्यापनशीलता कभी भी की जा सकती है।

(6) सांख्यिकीय विश्लेषण का प्रयोग–सामाजिक शोध में सांख्यिकीय प्रविधियों का प्रयोग भी किया जाता है जिससे कि विभिन्न चरों (Variables) अथवा घटनाओं में सहसम्बन्ध का पता चल सके और अधिक विश्वसनीय निष्कर्ष निकाले जा सकें। यदि शोध का उद्देश्य केवल घटनाओं का वर्णन करना है, तो उसे गुणात्मक शोध कहा जाता है तथा ऐसे शोध में सांख्यिकीय विष्लेशण की आवश्यकता नहीं होती है। गणनात्मक शोध सदैव सांख्यिकीय विष्लेशण पर आधारित होता है। गुणात्मक एवं गणनात्मक शोध को विस्तार से इसी खण्ड की दूसरी इकाई में समझाया गया है।

सामाजिक शोध की प्रकृति से हमें पता चलता है कि इसका अध्ययन–क्षेत्र अति व्यापक है। वास्तव में, यह क्षेत्र इतना ही व्यापक है जितना कि स्वयं सामाजिक वास्तविकता का। इसके अन्तर्गत विभिन्न सामाजिक समस्याओं का विष्लेशण करना, उनके कारणों का पता लगाना, घटनाओं का समाधान प्रस्तुत करना, वर्तमान ज्ञान का परिवर्तित परिस्थितियों के सन्दर्भ में मूल्यांकन करके उपयुक्तता का पता लगाना इत्यादि विविध प्रकार के अध्ययनों को रखा जा सकता है।

1.4 सामाजिक शोध के उद्देश्य

सामाजिक शोध सामाजिक वास्तविकता से सम्बन्धित है। अतः इसका उद्देश्य सामाजिक वास्तविकता को यथासम्भव वस्तुनिष्ठ एवं क्रमबद्ध रूप में समझना है। इसका उद्देश्य केवल ज्ञान प्राप्त करना ही नहीं है अपितु ज्ञान को व्यावहारिक जीवन में पाई जाने वाली समस्याओं के समाधान के लिए प्रयोग में लाना भी है। अतः सामाजिक शोध के निम्नलिखित तीन प्रमुख उद्देश्य हो सकते हैं–

(1) सामाजिक वास्तविकता के बारे में विशुद्ध ज्ञान प्राप्त करना तथा सिद्धान्तों का विकास अथवा विस्तार करना,

(2) विशिष्ट समस्याओं का समाधान करना, तथा

(3) प्रचलित एवं वर्तमान सिद्धान्तों की पुनर्परीक्षा करना।

यह अनिवार्य नहीं है कि शोध का केवल एक ही उद्देश्य हो अपितु, वास्तव में, सामाजिक शोध का उद्देश्य नवीन तथ्यों की खोज, प्राचीन तथ्यों की नवीन ढंग से विवेचना करते हुए वर्तमान सिद्धान्तों की उपयुक्तता का परीक्षण करना तथा उनमें आवश्यक संशोधन करके नवीन सिद्धान्तों का निर्माण करना हो सकता है।

सामाजिक शोध का उद्देश्य अन्य शोधों की तरह ज्ञान की प्राप्ति करना है जिसे सैद्धान्तिक उद्देश्य (Theoretical objective) कहते हैं। इस प्रकार के शोध में सामाजिक घटनाओं के बारे में नवीन तथ्यों की खोज, पुराने नियमों की जाँच या पहले से उपलब्ध ज्ञान में वृद्धि केवल मात्र मानव जिज्ञासा की सन्तुष्टि के लिए की जाती है। परन्तु सामाजिक शोध का व्यावहारिक उद्देश्य (Applied or utilitarian objective) भी हो सकता है अर्थात् इसका उद्देश्य प्राप्त ज्ञान का प्रयोग व्याधिकीय एवं विघटनकारी समस्याओं के समाधान के लिए करना हो सकता है। **यंग** (Young), **लैजरफेल्ड** (Lazarsfeld) तथा **रोजनबर्ग** (Rosenberg) ने सामाजिक शोध के व्यावहारिक पक्ष पर अधिक महत्त्व दिया है। ज्ञान सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक दोनों ही दृष्टियों से तभी अधिक उपयोगी सिद्ध हो सकता है, जबकि इसके अन्तर्गत भविष्यवाणी करने की क्षमता हो क्योंकि इससे परिस्थितियों का पूर्वानुमान लगाया जा सकता है।

अतः स्पष्ट है कि अनेक विद्वानों ने सामाजिक शोध के उद्देश्यों को सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक उद्देश्यों की दृष्टि से प्रतिस्थापित करने का प्रयास किया है। यदि हम इसे केवल नवीन ज्ञान प्राप्त करने

अथवा वर्तमान ज्ञान में वृद्धि करने तक ही सीमित रखें, तो निश्चित रूप से यह इसके सैद्धान्तिक महत्त्व का द्योतक है। दूसरी ओर, यदि हम सामाजिक शोध द्वारा प्राप्त ज्ञान का प्रयोग समाज में विद्यमान समस्याओं के निराकरण हेतु करने का प्रयास करें अथवा इसका प्रयोग समाज कल्याण एवं समाज सुधार कार्यों हेतु करें, तो यह शोध का व्यावहारिक महत्त्व है। व्यावहारिक महत्त्व के कारण ही सामाजिक शोध नीति–निर्माण में सहायक माना जाता है।

1.5 सामाजिक शोध में प्रेरणार्थक कारक

प्रत्येक मानवीय क्रिया के समान सामाजिक शोध भी सम्प्रेरित है। **पी0 वी0 यंग** ने सामाजिक शोध में चार प्रमुख प्रेरणार्थक कारकों का उल्लेख किया है जो कि इस प्रकार हैं–

(1) अज्ञात के प्रति जिज्ञासा–जिज्ञासा को मानवीय मस्तिष्क की मूल प्रवृत्ति माना गया है क्योंकि मनुष्य आदिकाल से ही उत्सुकता के साथ अज्ञात वस्तुओं के बारे में ज्ञान प्राप्त करने का प्रयास करता रहा है। इसी जिज्ञासा के कारण व्यक्ति सामाजिक वास्तविकता को भी समझने का प्रयास करता है। शोध इसी जिज्ञासा का परिणाम है।

(2) कार्य–कारण सम्बन्धों को समझने की इच्छा–विभिन्न घटनाओं एवं प्रक्रियाओं में कार्य–कारण सम्बन्धों की खोज करना भी सामाजिक शोध का एक प्रेरणार्थक कारण रहा है क्योंकि अधिकतर शोध घटनाओं के परस्पर सम्बन्धों को समझने या इसके बारे में सन्देह दूर करने के लिए ही किए गए हैं।

(3) समय–समय पर नवीन एवं आशातीत घटनाओं का घटित होना–समय–समय पर नवीन एवं अप्रत्याशित घटनाएँ हमारी जिज्ञासा को उकसाती हैं। अतः व्यक्ति इनके एवं विभिन्न समस्याओं के कारण जानकर हमेशा यह चाहता है कि वह उन पर विजय प्राप्त कर ले। अनेक सामाजिक शोध समस्याओं को समझने के प्रयास हेतु भी किए जाते हैं।

(4) लाभकारी एवं मौलिक ज्ञान प्राप्त करने हेतु नवीन वैज्ञानिक प्रवृत्तियों की खोज तथा पुरानी प्रणालियों की परीक्षा करने की इच्छा–सामाजिक शोध में एक अन्य प्रेरणार्थक कारक शोध के लिए नवीन विधियों एवं प्रविधियों को विकसित करने की इच्छा भी है ताकि सामाजिक समस्याओं को और अधिक अच्छी तरह से समझा जा सके।

1.6 सामाजिक शोध का महत्त्व

सामाजिक शोध आज के युग में दैनिक जीवन का एक अभिन्न अंग बन गया है क्योंकि सामाजिक जीवन अत्यधिक जटिल होता जा रहा है। इसमें धन एवं समय दोनों ही लगते हैं परन्तु फिर भी अधिक–से–अधिक लोग शोध कार्यों में रुचि लेने लगे हैं। इसका कारण सामाजिक अनुसन्धान का बढ़ता हुआ महत्त्व है। सामाजिक शोध के महत्त्व को निम्नांकित शीर्षकों के अन्तर्गत स्पष्ट किया जा सकता है–

(1) अज्ञानता और अन्धविश्वास को मिटाने में सहायक–अज्ञानता एवं अन्धविश्वास मनुष्य की अनेक समस्याओं का कारण हैं। सामाजिक शोध नवीन ज्ञान द्वारा अज्ञानता एवं अन्धविश्वास को मिटाने में सहायता देता है। इससे हम सामाजिक कुरीतियों के बारे में वैज्ञानिक ज्ञान प्राप्त करते हैं जिससे इनके प्रति हमारी अज्ञानता एवं अन्धविश्वास कम होता है।

(2) ज्ञान के विकास में सहायक–सामाजिक शोध मानवीय ज्ञान में निरन्तर वृद्धि करने में सहायक है तथा इससे बुद्धि का भी विकास होता है। आज के जटिल समाज को समझने के लिए निरन्तर ज्ञान में वृद्धि अनिवार्य है तथा सामाजिक शोध द्वारा वर्तमान ज्ञान को बढ़ाया जा सकता है।

(3) समाज के वैज्ञानिक अध्ययन में सहायक–सामाजिक शोध समाज के विभिन्न पहलुओं एवं उनमें पाई जाने वाली जटिलताओं का वैज्ञानिक ज्ञान उपलब्ध कराने में सहायता देकर हमें सामाजिक विभिन्नताओं को समझने में सहायता देता है। वैज्ञानिक ज्ञान समाज को उचित रूप से समझने के लिए अनिवार्य है।

(4) सामाजिक समस्याओं के निष्पक्ष विश्लोण में सहायक–आज का मानव जीवन चारों ओर से विविध प्रकार की समस्याओं से घिरा हुआ है। सामाजिक शोध हमें ऐसी सामाजिक समस्याओं के निष्पक्ष विष्लेशणमें सहायता प्रदान करता है जिससे समस्याओं के कारणों का पता चल जाता है और उनके समाधान के बारे में सोचा जाता है।

(5) सामाजिक कल्याण में सहायक–सामाजिक शोध समाज सुधार से सम्बन्धित कार्यों को वैज्ञानिक आधार प्रदान करता है। सामाजिक शोध द्वारा ही अनेक कुरीतियों तथा उनके लिए उत्तरदायी कारकों को समझा जा सकता है और उन्हें दूर किया जा सकता है।

(6) भविष्यवाणी करने में सहायक–सामाजिक शोध सामाजिक वास्तविकता को समझने तथा उसके बारे में नियमों एवं सिद्धान्तों का निर्माण करने में सहायता प्रदान करता है। वर्तमान परिस्थितियों का वैज्ञानिक विष्लेशणभविष्य का अनुमान लगाने में सहायता देता है।

(7) सामाजिक नियन्त्रण में सहायक–सामाजिक शोध द्वारा प्राप्त ज्ञान सामाजिक नियन्त्रण में भी सहायक होता है। सामाजिक संगठन तथा इसकी भिन्न इकाइयों के बारे में सामाजिक शोध द्वारा पूर्ण ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है तथा यह पता लगाया जा सकता है कि कौन–सी विघटनकारी प्रवृत्तियाँ सामाजिक व्यवहार के लिए खतरा पैदा करती हैं। नियोजन भी सामाजिक शोध द्वारा ही सम्भव है।

1.7 सामाजिक शोध की समस्याएँ

सामाजिक शोध एक जटिल प्रक्रिया है। लगता तो ऐसा है कि शोध करना अत्यधिक सरल कार्य है, परन्तु जब हम सामाजिक शोध की प्ररचना (Research design) बनाना प्रारम्भ करते हैं तो हमें पता चलता है कि यह कार्य कितना कठिन है। सामाजिक शोध में अनेक प्रकार की समस्याओं का सामना करना पड़ता है। प्रथम समस्या यह है कि शोध समस्या का निरूपण ठीक प्रकार से किया जा सके। ऐसा माना जाता है कि यदि शोध समस्या का निरूपण ठीक प्रकार से हो गया है तो यह आधे शोध के बराबर है। समस्या का सावधनीपूर्वक निर्माण हमें शोध के अगले चरणों में आने वाली अनेक बाधाओं से बचा सकता है। दूसरी समस्या निदर्शन के चयन से सम्बन्धित है। सामान्यतया जिन सूचनादाताओं का चयन किया जाता है उनमें से बहुत–से मिलते ही नहीं हैं। इससे निदर्शन की विश्वसनीयता प्रभावित होती है। तीसरी समस्या विश्वसनीय सामग्री के संकलन से सम्बन्धित है। अधिकांश सूचनादाता सही सूचनाएँ नहीं देते हैं जिसके कारण भ्रामक निष्कर्ष निकल सकते हैं। एक से अधिक अनुसन्धान प्रविधियों का प्रयोग करके संकलित सामग्री की विश्वसनीयता की जाँच की जाती है। सामाजिक शोध की चौथी प्रमुख समस्या शोध में वस्तुनिष्ठता बनाए रखने की है। अधिकांश विद्वान् इस बात पर बल देते हैं कि सामाजिक शोध में प्राकृतिक विज्ञानों की भाँति प्रामाणिकता लाना कठिन है। समाज विज्ञानों के नियम प्राकृतिक विज्ञानों के नियमों की भाँति अटल नहीं होते, वे तो सामाजिक व्यवहार के सन्दर्भ में सम्भावित प्रवृत्ति को प्रकट करते हैं। ऐसी स्थिति के लिए अनेक कारक उत्तरदायी हैं; जैसे–सामाजिक घटना का स्वभाव (प्रकृति) तथा ठोस मापदण्डों का विकसित न होना आदि। वस्तुनिष्ठ शोध से सम्बन्धित पाँच प्रमुख समस्याएँ हैं–

(1) समस्या का चयन सदैव मूल्य–निर्णयों द्वारा प्रभावित होता है। इसी खण्ड की तीसरी इकाई में आपको मैक्स वेबर के विचारों के सन्दर्भ में यह स्पष्ट करने का प्रयास किया जाएगा कि किस प्रकार शोध से सम्बन्धित समस्या का चयन सदैव मूल्यों से प्रभावित होता है।

(2) सामाजिक शोध में तटस्थता रख पाना सम्भव नहीं है। यह समस्या शोध में वस्तुनिष्ठता बनाए रखने से सम्बन्धित है तथा इसकी विस्तृत विवेचना भी तीसरी इकाई में की गई है।

(3) शोधकर्ता के आन्तरिक एवं बाह्य हित व्यक्तिनिष्ठता को प्रोत्साहन देते हैं। प्रत्येक शोधकर्ता अनेक नैतिक मूल्यों एवं धारणाओं के आधार पर सामाजिक यथार्थता को समझने का प्रयास करता है। ऐसा करने में वह शोध के प्रत्येक स्तर पर निष्पक्ष न होकर वास्तविकता को एक–तरफा दृष्टि से देखने का प्रयास करता है। इसीलिए सामाजिक शोध में निष्कर्षों के प्रमाणीकरण (सत्यापनशीलता) एक कठिन कार्य माना जाता है।

(4) सामाजिक घटनाओं की गुणात्मक प्रकृति परिशुद्ध एवं यथार्थ रूप से घटनाओं के अध्ययन में एक बाधा है। एक तो सामाजिक घटनाएँ गुणात्मक होती हैं तथा दूसरे इनकी प्रकृति अत्यन्त जटिल भी होती है। इसका प्रमुख कारण यह है कि प्रत्येक सामाजिक घटना हेतु कोई एक कारक उत्तरदायी न होकर वह घटना अनेक कारकों की देन होती है। शोधकर्ता के लिए इन कारकों को एक–दूसरे से अलग कर घटना को समझना सम्भव नहीं है।

(5) शोधकर्ता के नैतिक मूल्य (संजातिकेन्द्रवाद) शोध की प्रत्येक अवस्था में उसे अत्यधिक प्रभावित करते हैं। जब हम अंग्रेज समाजशास्त्रियों एवं मानवशास्त्रियों पर भारतीय समाज की यथार्थता को गलत ढंग से चित्रित करने का आरोप लगाते हैं, तो हमारे सामने संजातिकेन्द्रवाद ही होता है। यूरोपीय विद्वान् अपनी संस्कृति को उच्च एवं आदर्श मानकर भारतीय समाज को समझने का प्रयास करते रहे हैं, जिससे वे निष्पक्ष होकर यथार्थता का वर्णन नहीं कर पाए हैं।

वास्तव में, सामाजिक शोध में उपर्युक्त समस्याओं के अतिरिक्त माप की समस्या का उल्लेख किया जाना भी आवश्यक है। सामाजिक यथार्थता के अनेक पहलुओं को मापना सम्भव नहीं है। उदाहरण के लिए–यदि कोई यह कहे कि भारतीय समाज में उच्च एवं निम्न जातियों में काफी सामाजिक दूरी पाई जाती है, तो हो सकता है यह सही हो परन्तु इन जाति श्रेणियों में दूरी को मापा नहीं जा सकता है।

सामाजिक शोध की अन्तिम समस्या अन्तःविषयक दृष्टिकोण (Interdisciplinary perspective) की है जो कि अधिकांश शोधकर्ताओं में नहीं पाया जाता है। इससे सामाजिक घटनाओं की यथार्थता का पूरा पता नहीं चल पाता है।

1.8 सारांश

सामाजिक शोध मानव के सामाजिक जीवन, सामाजिक घटनाओं एवं सामाजिक जटिलताओं के सम्बन्ध में अन्वेषण का एक वैज्ञानिक प्रयास है जिसका उद्देश्य नवीन ज्ञान प्राप्त करना अथवा/तथा विद्यमान ज्ञान का परिष्कार करना है। सामाजिक शोध में वैज्ञानिक एवं तार्किक पद्धतियों की सहायता से सामाजिक व्यवहार का विष्लेशण करने के पश्चात् सिद्धान्तों का निर्माण करने का प्रयास किया जाता है। इसमें सांख्यिकीय विष्लेशण का प्रयोग किया जाता है। ऐसे शोध आनुभविक शोध कहलाते हैं। आधुनिक युग में सामाजिक शोध जीवन का एक अभिन्न अंग बन गया है। इसका प्रयोग समाज कल्याण की नीतियों के मूल्यांकन एवं उन्हें प्रभावशाली बनाने हेतु भी किया जाने लगा है। सामाजिक शोध में तटस्थता अर्थात् वस्तुनिष्ठता बनाए रखना एक प्रमुख समस्या है क्योंकि शोधकर्ता के मूल्य, सोच एवं उन्मुखीकरण निरन्तर इसे प्रभावित करने का प्रयास करते हैं। इतना ही नहीं, सामाजिक घटनाओं की गुणात्मक प्रकृति एवं इनके लिए बहुकारकों का उत्तरदायी होना भी शोध में समस्यामूलक माना जाता है।

1.9 शब्दावली

सामाजिक शोध	–	सामाजिक जीवन, सामाजिक घटनाओं एवं सामाजिक जटिलताओं के सम्बन्ध में अन्वेषण के वैज्ञानिक प्रयास को सामाजिक शोध कहा जाता है।
वैज्ञानिक प्रकृति	–	इससे अभिप्राय सामाजिक शोध के सभी सोपानों में वैज्ञानिक पद्धति को अपनाने से है।
कार्य–कारण सम्बन्ध	–	इससे अभिप्राय सामाजिक शोध के आधार पर कारणों एवं परिणामों में सम्बन्ध स्थापित करना है।
समाज कल्याण	–	समाज कल्याण का अभिप्राय समाज में व्याप्त कुरीतियों को समाप्त कर समाज सुधार कार्यों को प्रोत्साहन देना है।

1.10 अभ्यास प्रश्न

1. सामाजिक शोध किसे कहते हैं? इसकी प्रकृति स्पष्ट कीजिए।
2. सामाजिक शोध की अवधारणा स्पष्ट कीजिए।
3. सामाजिक शोध को परिभाषित कीजिए तथा इसके प्रमुख उद्देश्यों का उल्लेख कीजिए।
4. सामाजिक शोध से आप क्या समझते हैं? इसे प्रेरणा देने वाले प्रमुख कारक कौन–से हैं?
5. सामाजिक शोध क्या है? इसका महत्त्व स्पष्ट कीजिए।
6. सामाजिक शोध का अर्थ बताइए तथा इसकी प्रमुख समस्याओं का संक्षिप्त परिचय दीजिए।

1.11 संदर्भ ग्रन्थ सूची

C. V. Good (1973), **Dictionary of Education**, McGraw-Hill Inc., New York.

Edwin Robert Anderson Seligman (1934), **Encyclopaedia of the Social Sciences**, Vol. XIV, The Macmillan Company, New York.

G. M. Fisher, Quoted in H. P. Fairchild (1944), **Dictionary of Sociology** (ed.), Philosophical Library, New York.

L. V. Redman and A. V. H. Mory (1933), **The Romance of Research**, The Williams and Wilkins Company, Baltimore.

P. V. Young (1966), **Scientific Social Surveys and Research : An Introduction to the Background, Content, Methods, Principles and Analysis of Social Studies**, Prentice-Hall, Englewood Cliffs, N.J.

R. Plutchik (1968), **Foundations of Experimental Research**, Harper & Row, New York.

The New Century Dictionary, 17th Edition (1957), Standard Reference Works Publishing Company Inc., New York.

The Encyclopedia of the Social Sciences (1930), MscmiUan and Co. Ltd. MCMXXX. London.

इकाई 2 सिद्धान्त तथा शोध : गुणात्मक एवं गणनात्मक

Theory & Research: Qualitative & Quantitative

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य
2.1 प्रस्तावना
2.2 सिद्धान्त की अवधारणा का स्पष्टीकरण
2.3 शोध की अवधारणा का स्पष्टीकरण
2.4 शोध एवं सिद्धान्त में परस्पर सम्बन्ध
2.5 गुणात्मक एवं गणनात्मक शोध
2.6 गुणात्मक एवं गणनात्मक शोध में अन्तर
2.7 सारांश
2.8 शब्दावली
2.9 अभ्यास प्रश्न
2.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची

2.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई में सिद्धान्त की अवधारणा को समझाने का प्रयास किया गया है। इसके साथ ही शोध एवं सिद्धान्त में परस्पर सम्बन्ध तथा गुणात्मक एवं गणनात्मक शोध को स्पष्ट करना भी इस इकाई का उद्देश्य है। आशा है कि इस इकाई को पढ़ने के बाद, आप :

- सिद्धान्त की अवधारणा को समझ पाएँगे;
- शोध की अवधारणा का स्पष्टीकरण कर पाएँगे;
- शोध एवं सिद्धान्त में परस्पर सम्बन्ध को स्पष्टतया समझ पाएँगे; तथा
- गुणात्मक एवं गणनात्मक शोध का ज्ञान प्राप्त कर पाएँगे।

2.1 प्रस्तावना

मानव की जिज्ञासात्मक प्रकृति शोध के लिए उत्तरदायी मानी जाती है। मानव एक सामाजिक प्राणी है तथा प्रारम्भ से ही एक जिज्ञासु प्राणी रहा है क्योंकि उसने प्रकृति को समझने एवं अपनी समस्याओं के समाधान के लिए सदैव सतत प्रयास किया है। वास्तव में, सभ्यता एवं संस्कृति का विकास मानव की इस जिज्ञासा द्वारा प्रेरित अपने पर्यावरण को अनवरत रूप से समझने के प्रयासों का ही परिणाम है। आज प्रकृति को समझने तथा सामाजिक जीवन के बारे में नवीन ज्ञान प्राप्त करने के प्रयासों को ही शोध कहा जाने लगा है। अतः शोध ज्ञान की खोज से सम्बन्धित है। सामाजिक शोध द्वारा प्राप्त तथ्यों को जब परस्पर सम्बन्धित किया जाता है तो एक सिद्धान्त का निर्माण होता है। समाजशास्त्र में सिद्धान्त शब्द का प्रयोग इसके सामान्य जीवन में व्यवहार के विपरीत अर्थ के रूप में नहीं किया जाता है। सिद्धान्त से अभिप्राय तथ्यों के क्रमबद्ध अवधारणात्मक ढाँचे से है। इस प्रकार, शोध तथा सिद्धान्त परस्पर सम्बन्धित हैं तथा दोनों एक–दूसरे को प्रोत्साहित करते हैं।

2.2 सिद्धान्त की अवधारणा का स्पष्टीकरण

सिद्धान्त वैज्ञानिक अन्वेषण का महत्त्वपूर्ण चरण है। **गुड** एवं **हैट** (Goode and Hatt) ने इसे विज्ञान का एक उपकरण माना है क्योंकि इससे हमें वैज्ञानिक दृष्टिकोण का पता चलता है, तथ्यों को

सुव्यवस्थित करने, वर्गीकृत करने तथा परस्पर सम्बन्धित करने के लिए इससे अवधारणात्मक प्रारूप प्राप्त होता है, इससे तथ्यों का सामान्यीकरण के रूप में संक्षिप्तीकरण होता है तथा इससे तथ्यों के बारे में भविष्यवाणी करने एवं ज्ञान में पाई जाने वाली त्रुटियों का पता चलता है।

कई बार सिद्धान्त को तथ्यों का योग मात्र ही मान लिया जाता है जो ठीक नहीं है तथा यदि हम इस अर्थ में सिद्धान्त को परिभाषित करते हैं तो इसका क्षेत्र अत्यन्त सीमित हो जाता है। तथ्य एक आनुभविक रूप से प्रमाणित अवलोकन है तथा सिद्धान्त के निर्माण में महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। सिद्धान्त शब्द किसी वस्तु/घटना के परिकल्पनात्मक स्वरूप को इंगित करता है। यह घटनाओं के कारणों की व्याख्या से सम्बन्धित है। इसमें 'क्यों' और 'कैसे' जैसे प्रश्नों का उत्तर देने का प्रयास किया जाता है।

समाजशास्त्र में सिद्धान्त शब्द का प्रयोग तीन प्रमुख अर्थों में किया जाता है—सामान्यीकरण के अर्थ में, आनुभविक सिद्धान्त के रूप में तथा व्याख्यात्मक सिद्धान्त के रूप में। अनेक विद्वान् यह मानते हैं कि सिद्धान्त से अभिप्राय केवल मात्र सामाजिक विश्व के बारे में सामान्यीकरण तथा इसका वर्गीकरण है। सामान्यीकरण का क्षेत्र कुछ मूर्त घटनाओं से लेकर अत्यधिक अमूर्त एवं समाज के सम्पूर्ण इतिहास के सामान्य सिद्धान्त तक विस्तृत हो सकता है। आनुभविक अर्थात् अनुभवपरक दृष्टि से सिद्धान्त को ऐसे कथन माना जा सकता है जिसके आधार पर व्यवस्थित रूप से जाँच—पड़ताल की जाती है। इस अर्थ में प्रयोग किए जाने वाले सिद्धान्त को 'प्रत्यक्षवाद' के नाम से भी जाना जाता है। जब सिद्धान्त शब्द का प्रयोग व्याख्यात्मक अर्थ में किया जाता है तो इसे केवल घटनाओं की व्याख्या तक ही सीमित करने का प्रयास किया जाता है। ऐसे सिद्धान्त कारणात्मक सम्बन्धों एवं प्रक्रियाओं को प्रकट करने वाले होते हैं। अवधारणात्मक ढाँचा होने के नाते सिद्धान्तों को प्रत्यक्ष रूप में देखा तो नहीं जा सकता, परन्तु इनके प्रभावों को अनुभव किया जा सकता है।

सिद्धान्त के अर्थ के बारे में पाए जाने वाले एक सामान्य भ्रम को दूर करना भी अनिवार्य है। इस भ्रम का कारण सिद्धान्त जैसी अन्य समाजशास्त्रीय अवधारणाओं के अर्थ को जानने हेतु अंग्रेजी—हिन्दी शब्दकोशों का भी प्रयोग करना है। वास्तविकता यह है कि समाजशास्त्र में प्रयुक्त अवधारणाएँ इनके सामान्य अथवा शब्दकोशीय अर्थ से भिन्न अर्थ रखती है। उदाहरणार्थ—'सिद्धान्त' शब्द का शब्दकोशीय अर्थ 'व्यवहार के विपरीत' अथवा 'अव्यावहारिक' है। इसलिए बहुधा यह कहा जाता है कि जो सिद्धान्त में उपयुक्त होता है वह अनिवार्य रूप से व्यवहार में नहीं। समाजशास्त्र में सिद्धान्त शब्द का अर्थ व्यवहार के विपरीत कदापि नहीं है।

प्रमुख विद्वानों ने इसकी परिभाषाएँ निम्न प्रकार से दी हैं—

गुड एवं **हैट** (Goode and Hatt) के अनुसार—''एक वैज्ञानिक के लिए सिद्धान्त का अर्थ तथ्यों में पाए जाने वाले सम्बन्धों से अथवा उन्हें निश्चित क्रम प्रदान करने से है।'' **जैटरबर्ग** (Zetterberg) के अनुसार—''सिद्धान्त सुव्यवस्थित रूप से सम्बन्धित प्रस्तावनाओं का कुलक है।'' **फिलिप्स** (Phillips) के अनुसार—''सिद्धान्त को प्रस्तावनाओं में पाए जाने वाले विशिष्ट सम्बन्धों के अंश के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। इसलिए प्रत्येक सिद्धान्त का मूल्यांकन इस अंश की मात्रा, प्रामाणिकता, विषय—क्षेत्र तथा व्याख्या एवं भविष्यवाणी की क्षमता के आधार पर किया जा सकता है।'' **लिन** (Lin) के अनुसार—''एक सिद्धान्त को परस्पर सम्बन्धित प्रस्तावनाओं के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिनमें से कुछ का आनुभविक परीक्षण किया जा सकता है।''

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट हो जाता है कि सिद्धान्त उन प्रस्तावनाओं से बनता है जिनका कि आनुभविक परीक्षण किया जा सकता है। सिद्धान्त को सामान्यतः नियम भी मान लिया जाता है, परन्तु सामाजिक विज्ञानों के क्षेत्र में अभी तक ऐसे सार्वभौमिक सिद्धान्तों का निर्माण नहीं किया गया है जिन्हें नियम कहा जा सके। **फेयरचाइल्ड** (Fairchild) के शब्दों में, "सामाजिक घटना के बारे में एक ऐसा

सामान्यीकरण जो पर्याप्त रूप में वैज्ञानिक ढंग से स्थापित हो चुका है तथा समाजशास्त्रीय व्याख्या के लिए एक विश्वसनीय आधार बन सकता है, सिद्धान्त कहलाता है।" इसी भाँति, **पारसन्स** (Parsons) के मतानुसार, "एक वैज्ञानिक सिद्धान्त को आनुभविकता के सन्दर्भ में तार्किक रूप में परस्पर सम्बन्धित सामान्य अवधारणाओं के समूह के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।"

विज्ञान का अन्तिम उद्देश्य सिद्धान्तों का निर्माण करके घटनाओं की व्याख्या करना है। दूसरे शब्दों में, यह कहा जा सकता है कि सिद्धान्त सामाजिक वास्तविकता के बारे में ही अवलोकित प्रस्तावनाओं का सार है। समाजशास्त्र में प्रयोग की जाने वाली अवधारणाओं की अस्पष्टता के कारण अभी अधिक सिद्धान्तों का निर्माण नहीं किया गया है।

वे सिद्धान्त जो अधिक सुव्यवस्थित नहीं हैं, प्ररूप अथवा प्रतिरूप (Model) कहे जा सकते हैं। प्रतिरूप किसी सामाजिक घटना अथवा इकाई के व्यवहार के बारे में आनुभविक सिद्धान्त बनाने के लिए निर्मित कुछ सैद्धान्तिक कल्पनाएँ हैं। यह कहा जा सकता है कि प्रतिरूप किसी घटना अथवा इकाई का वर्णन मात्र नहीं है, अपितु उसकी प्रमुख विशेषताओं का प्रतिनिधित्व करता है। प्रतिरूप द्वारा की जाने वाली व्याख्या अवलोकित घटना के विष्लेशण किए जाने वाले वास्तविक व्यवहार के अधिक समीप है।

2.3 शोध की अवधारणा का स्पष्टीकरण

सामाजिक शोध का अर्थ सामाजिक घटनाओं या तथ्यों के बारे में नवीन जानकारी प्राप्त करना, प्राप्त ज्ञान में वृद्धि करना अथवा जिन सिद्धान्तों एवं नियमों का निर्माण किया गया है उनमें किसी प्रकार का संशोधन करना है। यद्यपि शोध एवं सामाजिक शोध की अवधारणाओं को पिछली इकाई में स्पष्ट किया जा चुका है, तथापि यहाँ पर भी इसको संक्षेप में समझाने का प्रयास किया गया है। किसी वस्तु, व्यक्ति, घटना आदि के सम्बन्ध में सावधानीपूर्वक खोज करना तथा तथ्यों या सिद्धान्तों का पता लगाने हेतु विषय–सामग्री की जाँच–पड़ताल करना शोध कहलाता है।

सामाजिक शोध की परिभाषाएँ विभिन्न विद्वानों ने निम्नलिखित प्रकार से दी हैं–

मोजर (Moser) के अनुसार–"सामाजिक प्रघटनाओं एवं समस्याओं के सम्बन्ध में नवीन ज्ञान प्राप्त करने के लिए की गई व्यवस्थित खोज ही सामाजिक शोध है।" **बोगार्डस** (Bogardus) के अनुसार–"साहचर्य में अर्थात् एक साथ रहने वाले लोगों के जीवन में क्रियाशील अन्तर्निहित प्रक्रियाओं की खोज ही सामाजिक शोध है।" **यंग** (Young) के अनुसार–"सामाजिक शोध नवीन तथ्यों की खोज, पुराने तथ्यों के सत्यापन, उनके क्रमबद्ध पारस्परिक सम्बन्धों, कारणों की व्याख्या तथा उन्हें संचालित करने वाले प्राकृतिक नियमों के अध्ययन की सुनियोजित पद्धति है।" उनके अनुसार शोध के तीन प्रमुख उद्देश्य हैं–प्रथम, नवीन तथ्यों का पता लगाना अथवा पुराने तथ्यों की प्रामाणिकता की जाँच एवं परीक्षण करना; द्वितीय, उपयुक्त सैद्धान्तिक सन्दर्भ में उनके क्रमों, अन्तर्सम्बन्धों तथा कार्य–कारण व्याख्याओं का विश्लेषण करना; तथा तृतीय, नवीन वैज्ञानिक यन्त्रों, आवधारणाओं और सिद्धान्तों का निर्माण करना है जिनसे कि मानवीय व्यवहार का विश्वसनीय और प्रमाणित अध्ययन किया जा सके।"

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट हो जाता है कि सामाजिक शोध सामाजिक सम्बन्धों, घटनाओं तथा तथ्यों से सम्बन्धित है जिसमें इनकी व्याख्या, कार्य–कारण सम्बन्धों की खोज, नवीन तथ्यों की खोज तथा पुराने तथ्यों की प्रामाणिकता की जाँच वैज्ञानिक ढंग से करने का प्रयास किया जाता है। अतः सामाजिक शोध एक व्यवस्थित पद्धति है जिसमें सामाजिक तथ्यों की वास्तविकता, उनके कार्य–कारण सम्बन्धों एवं प्रक्रियाओं के बारे में क्रमबद्ध ज्ञान प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है। जब हम कहते हैं कि शोध से अभिप्राय वैज्ञानिक पद्धति द्वारा प्राप्त ज्ञान से है, तो हमारा अभिप्राय शोध में निरीक्षण, परीक्षण, तथ्यों के संकलन, वर्गीकरण तथा सामान्यीकरण के आधार पर वस्तुस्थिति की तार्किक ढंग से विवेचना करने से है।

2.4 शोध एवं सिद्धान्त में परस्पर सम्बन्ध

शोध एवं सिद्धान्त परस्पर एक–दूसरे से घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित हैं। यदि यह कहा जाए कि दोनों एक–दूसरे के पूरक हैं तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। शोध एवं सिद्धान्त में परस्पर सम्बन्ध निम्नलिखित दो रूपों में समझा जा सकता है–

(अ) शोध को सिद्धान्त का योगदान–किसी भी विषय में सिद्धान्तों का स्थान महत्त्वपूर्ण होता है तथा इन्हीं से शोध को दिशा–निर्देश मिलते हैं। समाजशास्त्र इनमें कोई अपवाद नहीं है क्योंकि इसमें भी समाजशास्त्रीय सिद्धान्त आनुभविक शोध को अधिक उपयोगी बनाने में महत्त्वपूर्ण योगदान देते हैं। **रोबर्ट के० मर्टन** (Robert K. Merton) के अनुसार समाजशास्त्रीय सिद्धान्त शोध को निम्नांकित छह प्रकार से प्रभावित करता है–

(1) पद्धतिशास्त्र के विकास में सहायता देना–समाजशास्त्रीय सिद्धान्त शोध के पद्धतिशास्त्र को प्रभावित करता है क्योंकि बिना पद्धतिशास्त्र के कोई भी शोध सम्भव नहीं है। समाजशास्त्रीय सिद्धान्त शोध के निष्कर्षों को वास्तविक दिशा–निर्देश देता है।

(2) सामान्य समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण विकसित करना–सामान्य समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण के आधार पर हमें आनुभविक शोध की रूपरेखा का निर्माण करने में सहायता मिलती है। अन्य शब्दों में, सामान्य समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण ही उपकल्पनाओं का निर्माण करने में सहायक है। सामान्यतः विद्वान् यह स्वीकार करते हैं कि समाजशास्त्रीय शोध अथवा उपकल्पना समाजशास्त्रीय सिद्धान्त से सम्बन्धित होनी चाहिए। अन्य शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि समाजशास्त्रीय सिद्धान्त यह निर्धारित करता है कि आनुभविक शोध अथवा उपकल्पना कैसी होनी चाहिए। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि समाजशास्त्रीय सिद्धान्त आनुभविक शोध को एक विशिष्ट दृष्टिकोण प्रदान करता है।

(3) समाजशास्त्रीय अवधारणाओं का विश्ले□ण में सहायता देना–समाजशास्त्रीय सिद्धान्त से हमें समाजशास्त्रीय अवधारणाओं का विष्लेशण करने में सहायता मिलती है। इन अवधारणाओं के स्पष्टीकरण के अभाव में न ही तो सिद्धान्त महत्त्वपूर्ण है और न ही आनुभविक शोध अधिक उपयोगी हो सकता है। वस्तुतः अवधारणाएँ शोध में महत्त्वपूर्ण स्थान रखती हैं। समाजशास्त्रीय सिद्धान्त अवधारणाओं का स्पष्टीकरण करके तथा इनके निर्माण में विशेष रूप से सहायता देता है। समाजशास्त्रीय सिद्धान्त समाजशास्त्र में हो रहे आनुभविक शोध में प्रयुक्त उपकल्पनाओं का एक प्रमुख आधार है। इससे अवधारणाओं के निर्माण में ही सहायता नहीं मिलती अपितु इनके वर्गीकरण में भी सहायता मिलती है जो कि (अर्थात् वर्गीकरण) शोध में विशेष महत्त्व रखता है।

(4) उत्तर–कारकीय समाजशास्त्रीय विश्ले□ण में सहायता देना–समाजशास्त्रीय सिद्धान्त उत्तर–कारकीय समाजशास्त्रीय विष्लेशण में सहायक है अर्थात् यह आनुभविक शोध द्वारा संकलित तथ्यों के विष्लेशण में सहायता देता है। समाजशास्त्रीय सिद्धान्त हमें अनेक ऐसी प्रतिस्थापनाएँ प्रदान करते हैं जिनके आधार पर तथ्यों को संकलित किया जा सकता है। समाजशास्त्रीय सिद्धान्त आनुभविक शोध द्वारा एकत्रित तथ्यों की व्याख्या करने तथा उनके बारे में भविष्यवाणी करने में सहायक है। तथ्यों के आधार पर समाजशास्त्री भविष्यवाणी कर सकते हैं, चाहे इसकी उपयोगिता सीमित ही क्यों न हो।

(5) आनुभविक सामान्यीकरण में सहायता देना–समाजशास्त्रीय सिद्धान्त आनुभविक शोध के लिए अनेक आनुभविक सामान्यीकरण प्रस्तुत करता है जिन्हें हम शोध द्वारा प्रमाणित करते हैं। अतः **मर्टन** के अनुसार समाजशास्त्रीय सिद्धान्त आनुभविक शोध के लिए अनेक प्रस्तावनाएँ प्रस्तुत करता है जिनको शोध के द्वारा प्रमाणित व पुनःप्रमाणित किया जा सकता है। समाजशास्त्रीय सिद्धान्त आनुभविक शोध द्वारा प्राप्त विस्तृत एवं व्यापक ज्ञान को अमूर्त रूप में भी प्रस्तुत करता है। इस प्रकार, यह सामान्यीकरण के साथ–साथ विस्तृत ज्ञान के संक्षिप्तीकरण में भी सहायक है।

(6) नवीन समाजशास्त्रीय सिद्धान्तों के निर्माण में सहायता देना–समाजशास्त्रीय सिद्धान्त आनुभविक शोध को दिशा प्रदान करके नवीन सिद्धान्तों के निर्माण में सहायता प्रदान करता है। समाजशास्त्रीय सिद्धान्त आनुभविक शोध को केवल दृष्टिकोण प्रदान करने के साथ–साथ उसे एक निश्चित दिशा भी देता है। सिद्धान्त से ही हमें यह पता चलता है कि कौन–से कारण हमारी शोध समस्या की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण हैं। अतः समाजशास्त्रीय सिद्धान्त शोध को दिशा प्रदान करता है। समाजशास्त्रीय सिद्धान्त आनुभविक शोध में रह गई कमियों की ओर हमारा ध्यान आकर्षित करता है ताकि इनको दूर करके अधिक विस्तृत एवं सार्वभौमिक सिद्धान्त बनाए जा सकें।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि सिद्धान्त का प्रमुख कार्य क्रमबद्ध ज्ञान का संचय करना है तथा समाजशास्त्रीय सिद्धान्त इसमें कोई अपवाद नहीं है। समाजशास्त्रीय सिद्धान्त के आधार पर उपकल्पनाओं का निर्माण किया जाता है, नवीन तथ्यों का संकलन किया जाता है तथा पहले से निर्मित सिद्धान्त में संशोधन किया जाता है। इस प्रकार, समाजशास्त्रीय सिद्धान्त द्वारा आनुभविक शोध को दिए जाने वाले योगदान के परिणामस्वरूप ज्ञान की निरन्तर वृद्धि होती रहती है। नवीन तथ्यों के आधार पर सिद्धान्तों की पुनर्परीक्षा होती रहती है तथा कई बार नए सिद्धान्तों का विकास भी आनुभविक सिद्धान्त से प्राप्त तथ्यों के आधार पर ही होता है।

(ब) सिद्धान्त को शोध का योगदान–जिस प्रकार सिद्धान्त शोध में सहायक है, ठीक उसी प्रकार शोध भी सिद्धान्त के निर्माण में सहायक है। **मर्टन** के अनुसार सिद्धान्त के निर्माण में शोध की सक्रिय भूमिका होती है। उनके अनुसार समाजशास्त्र में सिद्धान्त को आनुभविक शोध का योगदान निम्न प्रकार से स्पष्ट किया जा सकता है–

(1) आकस्मिक खोज में सहायता देना–शोध समाजशास्त्रीय सिद्धान्तों का निर्माण करने में सहायक है। कई बार ऐसे शोध आकस्मिक या अप्रत्याशित खोज में सहायक होते हैं जिनका शोधकर्ता ने पहले से अनुमान ही नहीं लगाया था। मर्टन के मत में आनुभविक शोध से प्राप्त नए तथ्यों के आधार पर सामाजिक सिद्धान्तों का निर्माण किया जा सकता है अथवा विद्यमान सिद्धान्त को आगे बढ़ाया जा सकता है।

(2) सैद्धान्तिक पुर्निनर्माण में सहायता देना–शोध समाजशास्त्रीय सिद्धान्त को पुनर्व्यवस्थित करने एवं सैद्धान्तिक पुर्निनर्माण करने में सहायक होता है। शोध के आधार पर ही हम प्रचलित धारणाओं का बार–बार अवलोकन करके उनकी प्रामाणिकता की जाँच करते हैं तथा प्रचलित सिद्धान्तों को एक नए साँचे में ढालने का प्रयास करते हैं।

(3) सैद्धान्तिक रुचि को नवीन मोड़ देने में सहायता देना–शोध सैद्धान्तिक रुचि को नवीन मोड़ देने में सहायता प्रदान करता है अर्थात् आनुभविक शोध में समाजशास्त्रीय सिद्धान्त का मार्गदर्शन करता है। **मर्टन** के मतानुसार शोध कार्य प्रचलित सिद्धान्तों को पुनः नए साँचे में ढालने एवं सैद्धान्तिक रुचि को नया मोड़ देने में अपना योगदान देता है।

(4) अवधारणाओं का स्पष्टीकरण करने में सहायता देना–शोध का समाजशास्त्रीय सिद्धान्त को सबसे प्रमुख योगदान यह है कि इससे समाजशास्त्रीय सिद्धान्त की अनेक अवधारणाओं का स्पष्टीकरण करने में सहायता मिलती है। अवधारणाओं का स्पष्टीकरण समाजशास्त्रीय सिद्धान्त की प्रामाणिकता को सिद्ध करने के लिए आवश्यक है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट हो जाता है कि सिद्धान्त एवं शोध दोनों घनिष्ठ रूप से परस्पर सम्बन्धित हैं तथा दोनों एक–दूसरे के पूरक हैं। इन दोनों को सिक्के के ऐसे दो पहलू माना जा सकता है जिन्हें एक–दूसरे से अलग करना सम्भव नहीं है। एक ओर, सिद्धान्त शोध को प्रेरित करता है तो दूसरी ओर, शोध से प्राप्त आँकड़े एवं तथ्य सिद्धान्तों के निर्माण में सहायक होते हैं। **सैल्टिज**, **जहोदा** एवं **अन्य विद्वानों** (Selltiz Jahoda and Others) के मतानुसार, ''सिद्धान्त तथा शोध का सम्बन्ध परस्पर

सहयोग का होता है। सिद्धान्त उन क्षेत्रों की ओर ध्यान दिलाते हैं जिनमें शोध उपयोगी होता है। दूसरी ओर शोध से प्राप्त निष्कर्ष सिद्धान्तों का मूल्यांकन कर सकते हैं तथा नए सिद्धान्तों को बनाने एवं पुराने सिद्धान्तों को बदलने हेतु सुझाव दे सकते हैं। सैद्धान्तिक विचारों द्वारा प्रेरित शोध नवीन सैद्धान्तिक परिणाम उत्पन्न करता है जिससे नए शोधों हेतु मार्गदर्शन प्राप्त होता है तथा यह क्रम लगातार चलता रहता है। सैद्धान्तिक व्याख्या के अभाव में शोध कार्य तथा शोध के अभाव में सिद्धान्त बनाना सम्भव नहीं है।''

2.5 गुणात्मक एवं गणनात्मक शोध

प्रत्येक विषय की अपनी एक विषय–वस्तु होती है जिसका अध्ययन करने के लिए उस विषय में विशिष्ट पद्धतियाँ होती हैं। इन्हीं विशिष्ट पद्धतियों के आधार पर एक विषय को दूसरे विषय से पृथक् किया जाता है। समाजशास्त्र में भी विषय–वस्तु का अध्ययन कुछ विशिष्ट पद्धतियों की सहायता से किया जाता है। जो पद्धतियाँ संख्याओं एवं माप को महत्त्व देती हैं उन्हें हम गणनात्मक पद्धतियाँ कहते हैं। इन पद्धतियों में सामाजिक सर्वेक्षण का प्रमुख स्थान है। अवलोकन (सहभागी अवलोकन को छोड़कर), प्रश्नावली, अनुसूची तथा साक्षात्कार गणनात्मक पद्धतियाँ ही मानी जाती हैं। इन पद्धतियों द्वारा सूचना संकलन करने के पश्चात् सारणीयन किया जाता है तथा सांख्यिकीय विश्लेशण के आधार पर निष्कर्ष निकाले जाते हैं। गुणात्मक पद्धतियाँ केवल गुणों को महत्त्व देती हैं संख्याओं को नहीं। इनमें अध्ययनरत् इकाइयों का वर्णन मात्र किया जाता है अर्थात् उनका केवल विवरण प्रस्तुत किया जाता है। इस प्रकार का शोध वर्तमान स्थिति की व्याख्या तथा विवेचना प्रस्तुत करता है। इसका सम्बन्ध उन स्थितियों, व्यवहारों या सम्बन्धों से है जिनका अस्तित्व वर्तमान में है अथवा उन दृष्टिकोणों या मनोवृत्तियों से है जिनका वर्तमान में प्रचलन है। सहभागी अवलोकन, वैयक्तिक अध्ययन, अन्तर्वस्तु विश्लेशण तथा जीवन इतिहास गुणात्मक पद्धतियाँ मानी जाती हैं। इन पद्धतियों के प्रयोग से स्पष्ट है कि शोध गुणात्मक अथवा गणनात्मक किसी भी रूप में हो सकता है।

वस्तुतः शोध का प्रमुख लक्ष्य वैज्ञानिक पद्धति के प्रयोग द्वारा प्रश्नों के उत्तर खोजना है। इसका उद्देश्य अध्ययनरत समस्या के अन्दर छिपी यथार्थता का पता लगाना है या उस सब की खोज करना है जिसकी जानकारी समस्या के बारे में नहीं है। यद्यपि प्रत्येक शोध के अपने विशिष्ट लक्ष्य हो सकते हैं, तथापि इन्हें विद्वानों (यथा **सैल्टिज**, **जहोदा** एवं **अन्यों** तथा **सी० आर० कोठारी** आदि) ने मुख्य रूप से निम्नलिखित चार श्रेणियों में विभाजित किया है–

(1) किसी घटना के बारे में जानकारी प्राप्त करना अथवा इसके बारे में नवीन ज्ञान प्राप्त करना (इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु किए जाने वाले शोध को अन्वेषणात्मक अथवा निरूपणात्मक शोध कहते हैं);

(2) किसी व्यक्ति, परिस्थिति अथवा समूह की विशेषताओं का सही चित्रण करना (इन उद्देश्यों की पूर्ति हेतु किए जाने वाले शोध को वर्णनात्मक शोध कहते हैं);

(3) किसी वस्तु के घटित होने की आवृत्ति (Frequency) निर्धारित करना अथवा इसका किसी अन्य वस्तु के साथ सम्बन्ध निर्धारित करना (इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु किए जाने वाले शोध को निदानात्मक शोध कहते हैं) तथा

(4) विभिन्न चरों में कार्य–कारण सम्बन्धों वाली उपकल्पनाओं का परीक्षण करना (इस प्रकार के शोध को उपकल्पना–परीक्षण शोध अथवा प्रायोगिक शोध कहते हैं)।

अन्वेषणात्मक शोध का उद्देश्य अज्ञात तथ्यों की खोज करना अर्थात् तथ्यों के बारे में नवीन अन्तर्दृष्टि प्राप्त करना है ताकि यथार्थ समस्या का निर्माण किया जा सके अथवा उपकल्पनाएँ बनाई जा सकें। किसी संरचनात्मक अध्ययन करने से पहले शोधकर्ता द्वारा किसी प्रकरण के बारे में जानकारी प्राप्त करने, अवधारणाओं का स्पष्टीकरण करने, अग्रिम शोध के लिए प्राथमिकताओं का पता लगाने,

यथार्थ परिस्थिति में शोध करने की व्यावहारिक सम्भावनाओं का पता लगाने अथवा महत्त्वपूर्ण समस्याओं का पता लगाने इत्यादि उद्देश्यों की पूर्ति के लिए भी अन्वेषणात्मक शोध किया जाता है। अन्वेषणात्मक अध्ययन का प्रमुख उद्देश्य शोध के लिए समस्या का निर्माण करना अथवा शोध के लिए उपकल्पनाएँ बनाना है। वस्तुत: ये दोनों शोध के प्रमुख चरण माने जाते हैं। **सैल्टिज** तथा **जहोदा** आदि का कहना है कि ''अन्वेषणात्मक शोध प्ररचना उस अनुभव को प्राप्त करने के लिए आवश्यक है जो अधिक निश्चित शोध हेतु सम्बद्ध उपकल्पना के निरूपण में सहायक होगा।'' कई बार शोध समस्या के बारे में हमें बहुत कम जानकारी होती है अर्थात् हमें इसके सामाजिक महत्त्व, सैद्धान्तिक पहलुओं, व्यावहारिक स्वरूप तथा इससे सम्बन्धित विश्वसनीय आँकड़ों की उपलब्धता के बारे में कोई ज्ञान नहीं होता। ऐसी स्थिति में भी अन्वेषणात्मक शोध में लचीलापन (Flexibility) पाया जाता है।

वर्णनात्मक एवं निदानात्मक शोध परस्पर सम्बन्धित शोध हैं, क्योंकि प्रथम का उद्देश्य शोध समस्या से सम्बन्धित ज्ञान प्राप्त करना है, जबकि द्वितीय (निदानात्मक) का उद्देश्य समस्या का निदान करना है। परन्तु दोनों एक नहीं हैं तथा इनमें स्पष्ट भेद पाया जाता है। वर्णनात्मक शोध का उद्देश्य समस्या के सम्बन्ध में पूर्ण, यथार्थ एवं विस्तृत तथ्यों की जानकारी प्राप्त करना है। इसके द्वारा वास्तविक तथ्यों का संकलन किया जाता है और इन तथ्यों के आधार पर समस्या का वर्णनात्मक विवरण अथवा चित्रण प्रस्तुत किया जाता है। निदानात्मक शोध का उद्देश्य समस्या का निदान प्रस्तुत करना है। इसलिए यह अधिक संरचित होता है, उपकल्पनाओं द्वारा निर्देशित होता है तथा समस्या के उपचार इत्यादि पर अधिक बल देता है।

प्रायोगिक अथवा परीक्षणात्मक शोध प्रयोगशाला में प्रयोग की तरह दो चरों के परस्पर सम्बन्ध का अध्ययन करने के लिए किया जाता है। इसमें एक नियन्त्रित (Controlled) समूह बनाया जाता है तथा दूसरा प्रायोगिक (Experimental) समूह। नियन्त्रित समूह को जैसे वह है वैसे ही रहने दिया जाता है, जबकि प्रायोगिक समूह में जिस कारक का प्रभाव देखना है उसका प्रकाशकरण (Exposure) किया जाता है। अध्ययन में वैज्ञानिक विधि के सभी चरण अपनाए जाते हैं। **चैपिन** (Chapin) के अनुसार, ''समाजशास्त्रीय शोध में परीक्षणात्मक प्ररचना की अवधारणा नियन्त्रण की दशाओं के अन्तर्गत निरीक्षण द्वारा मानवीय सम्बन्धों के व्यवस्थित अध्ययन की ओर संकेत करती है।''

सामाजिक विज्ञानों में किया जाने वाले शोध को इसकी प्रकृति एवं अन्वेषण हेतु प्रयुक्त पद्धतियों के आधार पर मुख्य रूप से दो श्रेणियों में विभाजित किया जाता है—गुणात्मक शोध (Qualitative) एवं गणनात्मक शोध (Quantitative)। गुणात्मक शोध से अभिप्राय उस शोध से है जिसका उद्देश्य किसी सामाजिक घटना के गुणों को उजागर करना होता है। यह एक प्रकार से वर्णनात्मक (Descriptive) अध्ययन होता है जिसमें सामाजिक घटना का वर्णन ज्यों का त्यों करने का प्रयास किया जाता है। इस प्रकार के शोध में मात्राओं अथवा संख्याओं का प्रयोग नहीं किया जाता है। गणनात्मक शोध, जिसे मात्रात्मक शोध भी कहा जाता है, वह शोध है जिसमें मात्राओं अथवा संख्याओं का प्रयोग किया जाता है। दोनों प्रकार के शोधों की अपनी पृथक्–पृथक् प्रविधियाँ हैं। उदाहरणार्थ—सहभागी अवलोकन, साक्षात्कार निर्देशिका, वैयक्तिक अध्ययन, जीवन इतिहास इत्यादि गुणात्मक शोध की प्रमुख प्रविधियाँ हैं, जबकि सामाजिक सर्वेक्षण, अवलोकन, प्रश्नावली, अनुसूची एवं साक्षात्कार आदि गणनात्मक शोध की प्रमुख प्रविधियाँ मानी जाती हैं।

गुणात्मक शोध में वैधता एवं विश्वसनीयता—गुणात्मक शोध की यह माँग रहती है कि संकलित आँकड़े विश्वसनीय एवं वैध हों। विश्वसनीयता का सम्बन्ध पुनरावृत्ति (Repeatability) से है अर्थात् यदि दो शोधकर्ता एक जैसे निष्कर्ष निकालते हैं अथवा एक शोधकर्ता द्वारा निकाले गए निष्कर्ष दो समयों पर सुसंगत (Consistent) होते हैं, तो ऐसे अध्ययनों को विश्वसनीय कहा जाता है। यदि माप में निदर्शन त्रुटि (Sampling error) पाई जाती है तो उसे अविश्वसनीय माना जाता है। विश्वसनीयता

की एक उच्च एवं निम्न सीमा होती है। गुणात्मक अध्ययनों में आँकड़ों की विश्वसनीयता एक गम्भीर समस्या मानी जाती है क्योंकि गुणात्मक प्रकृति के कारण इनकी विश्वसनीयता की परख करना सम्भव नहीं है। चूँकि ऐसे अध्ययनों में कोई वस्तुनिष्ठ पैमाना प्रयोग में नहीं लाया जाता। इसलिए विश्वसनीयता का प्रश्न अधिक उठाया जाता है। गुणात्मक शोध की विश्वसनीयता को प्रभावित करने वाले कारणों में किसी अध्ययनरत समूह की संरचना का बाह्य एवं आन्तरिक कारणों के प्रभावों से निरन्तर परिवर्तित होना, इस संरचना का समय के अन्तराल में अत्यधिक परिवर्तित हो जाना, अध्ययन सम्बन्धी कसौटी के रूप में अन्तर आ जाना आदि प्रमुख हैं।

गुणात्मक अध्ययनों की विश्वसनीयता को मापने की भी निम्नलिखित तीन पद्धतियाँ हैं–

(1) परीक्षा–पुनर्परीक्षा (Test-retest) **पद्धति**–विश्वसनीयता को मापने की इस पद्धति में एक ही माप को अध्ययनरत समूह पर दो समयों पर लागू किया जाता है। यदि दोनों समयों पर निष्कर्ष एक समान होते हैं, तो उस माप को विश्वसनीय मान लिया जाता है।

(2) तुल्यनीय प्रकार (Equivalent form) **पद्धति**–इस पद्धति में मापन हेतु दो एक समान मापकों का निर्माण किया जाता है। यदि दोनों द्वारा एक समान निष्कर्ष प्राप्त होते हैं तो उन्हें विश्वसनीय मान लिया जाता है।

(3) आन्तरिक संगति (Internal consistency) **पद्धति**–यह सर्वाधिक प्रचलित पद्धति है। इसमें माप में सम्मिलित प्रश्नों को स्वेच्छिक रूप में दो समूहों में विभाजित किया जाता है। इन दोनों समूहों में पाया जाने वाला सहसम्बन्ध आन्तरिक संगति तथा माप की विश्वसनीयता को दर्शाता है।

विश्वसनीयता के विपरीत, वैधता का सम्बन्ध सूचना संकलित करने में प्रयुक्त प्रविधि एवं पद्धति की यथार्थता या परिशुद्धता एवं सत्यता से है। इसमें दो बातें महत्त्वपूर्ण मानी जाती हैं–प्रथम यह कि चयनित प्रविधि या पद्धति द्वारा उसी चीज का अध्ययन किया जा रहा है जिसका कि हम करना चाहते हैं या नहीं तथा दूसरे यह अध्ययन सही रूप से किया जा रहा है या नहीं। गुणात्मक शोध में प्रविधि की वैधता को स्थापित करने में निम्नलिखित कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है–

(1) सामाजिक अवरोधों के कारण एक समूह के व्यक्ति प्रायः अपनी स्वाभाविक नापसन्दों को व्यक्त नहीं करते हैं।

(2) सामान्यतया सूचनादाता उचित सम्पर्क के अभाव में सही सूचनाएँ नहीं देते हैं।

(3) शोधकर्ता एवं सूचनादाता की स्थिति में अन्तर के परिणामस्वरूप दोनों में वार्तालाप के स्तर में तारतम्य स्थापित नहीं रह पाता। यदि सूचनादाता में निम्नता की भावना (Inferiority complex) आ जाती है तो वह सूचनाओं को बढ़ा चढ़ाकर देने का प्रयास करता है।

(4) सूचनादाता अल्पसंख्यक समूहों के प्रति प्रायः अपनी स्वाभाविक प्रतिक्रियाओं को व्यक्त करने में संकोच करते हैं।

गुणात्मक शोधों में बहुधा किसी एक ही प्रविधि द्वारा आँकड़ों का संकलन किया जाता है जिससे आँकड़ों की विश्वसनीयता को प्रमाणित नहीं किया जा सकता है। इसलिए आँकड़ों की विश्वसनीयता बढ़ाने हेतु एक से अधिक प्रविधियों एवं स्रोतों का प्रयोग किया जाना अनिवार्य है। निर्वचन करते समय व्यक्तिनिष्ठता से बचाव भी अध्ययन की विश्वसनीयता की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। वैधता हेतु गुणात्मक शोध में उपयुक्त शोध प्रविधि का चयन किया जाना तथा उसका किसी अन्य सम्पूरक प्रविधि द्वारा सत्यापन अत्यन्त आवश्यक है। निर्वचन एवं मुख्य निष्कर्षों के बारे में किसी विशेषज्ञ से विचार–विमर्श भी गुणात्मक शोध को अधिक वैध बना सकता है। गुणात्मक शोध की विश्वसनीयता एवं वैधता के बारे में दो बातें ध्यान देने योग्य हैं–प्रथम, प्रासंगिक शोध प्रश्नों अथवा समस्या का निर्माण करना तथा द्वितीय, उन प्रश्नों का उत्तर देने अथवा उस समस्या के समाधान हेतु सर्वाधिक उपयुक्त प्रविधि का चयन करना। यदि इन दोनों में कोई चूक नहीं होती तो गुणात्मक शोध विश्वसनीय एवं वैध हो सकता है।

गणनात्मक (जिसे परिमाणनात्मक भी कहा जाता है) शोध का सम्बन्ध विभिन्न चरों में सम्बन्धों की स्थापना से है। यह चर भार, समय, निष्पादन, उपचार, आधुनिकीकरण इत्यादि कुछ भी हो सकते हैं। इन चरों का सूचनादाताओं के निदर्शन के आधार पर मापन करने का प्रयास किया जाता है। चरों में पाए जाने वाले सम्बन्धों का प्रदर्शन सांख्यिकीय पद्धतियों; जैसे–सहसम्बन्ध, साहचर्य, प्रतिगमन इत्यादि द्वारा किया जाता है। इस प्रकार के अध्ययनों पर वे विद्वान् ज्यादा बल देते हैं जिनकी मान्यता है कि सामाजिक सिद्धान्तों के निर्माण में प्राकृतिक विज्ञानों की पद्धतियाँ उपयोगी हैं तथा समाजशास्त्र में इनका प्रयोग किया जा सकता है। इस श्रेणी के विद्वान् समाज का एक ऐसा विज्ञान बनाने पर बल देते हैं जोकि उन्हीं सिद्धान्तों एवं प्रक्रियाओं पर आधारित होगा जो प्राकृतिक विज्ञानों (जैसे–रसायनशास्त्र एवं जीवविज्ञान) में प्रचलित हैं। व्यक्ति का व्यवहार, द्रव्य के व्यवहार की भाँति, वस्तुनिष्ठ रूप से मापा जा सकता है। जिस प्रकार द्रव्य का व्यवहार भार, तापमान एवं दबाव जैसे मापों द्वारा मापा जा सकता है, ठीक उसी प्रकार से मानव व्यवहार को वस्तुनिष्ठ रूप से मापने की पद्धतियों का विकास करना सम्भव है। ऐसे विद्वान् यह भी स्वीकार करते हैं कि मानव व्यवहार को उसी प्रकार से समझा जा सकता है जिस प्रकार से द्रव्य के व्यवहार को समझा जा सकता है। द्रव्य की भाँति, व्यक्ति भी बाहरी उद्दीपनों के प्रति प्रतिक्रिया करते हैं तथा उनके इस व्यवहार को इसी प्रतिक्रिया के रूप में समझा जा सकता है।

सम्बन्धों के गणनात्मक सम्बन्धी अध्ययन मुख्य रूप से निम्नलिखित दो प्रकार के होते हैं–

(1) वर्णनात्मक अध्ययन–इस प्रकार के अध्ययनों में व्यवहार या परिस्थितियों को परिवर्तित करने हेतु कोई प्रयास नहीं किया जाता है। इन्हें उसी रूप में मापने का प्रयास किया जाता है जिस रूप में वे विद्यमान होती हैं। इस प्रकार के अध्ययनों को प्रेक्षणनात्मक अध्ययन (Observational studies) भी कहा जाता है क्योंकि इसमें अध्ययन–वस्तु का उसमें बिना किसी हस्तक्षेप के अवलोकन किया जाता है।

(2) प्रायोगिक अध्ययन–प्रायोगिक अध्ययनों में दो चरों में सम्बन्ध स्थापित करने हेतु उनका मापन किया जाता है तथा फिर नियन्त्रण एवं हस्तक्षेप कर पुनः मापन किया जाता है ताकि यह ज्ञात हो सके कि नियन्त्रण एवं हस्तक्षेप का परिणाम क्या हुआ। इस प्रकार के अध्ययनों में एक चर को नियन्त्रित चर तथा दूसरे को आश्रित चर कहा जाता है। इन्हें देशान्तरीय (Longitudinal) अथवा पुनरावृत्ति मापन अध्ययन भी कहा जाता है।

गणनात्मक शोध एवं अनुमापन से सम्बन्धित अध्ययनों की प्रमुख मान्यताएँ निम्नलिखित हैं–

(1) विभिन्न चरों में पाए जाने वाले सम्बन्धों का यथार्थ मापन सम्भव है।

(2) सामाजिक व्यवहार एवं घटनाओं से सम्बन्धित अध्ययनों में भी कारण–प्रभाव (Cause-effect) सम्बन्धों की स्थापना करना सम्भव है।

(3) मानव व्यवहार एवं सामाजिक घटनाओं के व्यवहार एवं द्रव्य के व्यवहार में अनेक समरूपताएँ पाई जाती हैं।

(4) मूर्त सामाजिक घटनाओं के साथ–साथ अनेक अमूर्त विषयों; जैसे–सामाजिक संश्लिष्टता, सामाजिक दूरी, मूल्यों में भिन्नता इत्यादि का परिमाणात्मक अध्ययन सम्भव है तथा इनके माप हेतु पद्धतियाँ उपलब्ध हैं अथवा उनका निर्माण किया जा सकता है।

(5) पैमानों के निर्माण द्वारा घटना के विभिन्न अंगों अथवा पक्षों में पाए जाने वाले तारतम्य को ज्ञात किया जा सकता है।

(6) परिमाणात्मक अध्ययनों में मापन हेतु अपनाए गए पैमानों की विश्वसनीयता की जाँच अनेक पद्धतियों द्वारा की जा सकती है। इन पद्धतियों में परीक्षा–पुनर्परीक्षा (Test-retest) पद्धति, विविध स्वरूप (Multiple form) पद्धति तथा दो भागों में बाँटने (Split-half) की पद्धति प्रमुख हैं।

(7) सामाजिक शोधों में अपनाए जाने वाले मापों की प्रामाणिकता की भी जाँच की जा सकती है। **गुड** एवं **हैट** ने पैमानों की प्रामाणिकता की जाँच करने की निम्नलिखित चार पद्धतियों का उल्लेख किया है–

(अ) तार्किक प्रमाणीकरण (Logical validation)–इस पद्धति के अन्तर्गत यदि पैमाना तर्क एवं सामान्य ज्ञान के अनुकूल प्रतीत होता है तो उसे प्रमाणित माना जा सकता है। यद्यपि यह पद्धति सर्वाधिक प्रयोग में लाई गई है, तथापि **गुड** एवं **हैट** का कहना है कि केवल इसी पद्धति द्वारा पैमाने की प्रामाणिकता की जाँच करना पर्याप्त नहीं है। पैमानों के सन्तोषजनक प्रयोग के लिए तार्किक प्रमाणीकरण के अतिरिक्त अन्य विधियों की भी आवश्यकता होती है।

(ब) पंचों की राय (Jury opinion)–यह पद्धति भी तार्किक प्रमाणीकरण का प्रसार–मात्र है क्योंकि इसमें तर्क की पुष्टि पैमाना लागू किए जाने वाले व्यक्तियों के चुने हुए समूह द्वारा की जाती है। पैमाने द्वारा प्रमाणित परिणामों को विशेषज्ञों या पंचों के सामने रखा जाता है। यदि उनकी राय में परिणाम ठीक है तो पैमाने को प्रमाणित मान लिया जाता है।

(स) परिचित समूह (Known groups)–इस पद्धति में विशेषज्ञों की अपेक्षा पैमाने का प्रयोग उन समूहों पर किया जाता है जिनके विषय में हम पहले से परिचित होते हैं। उदाहरणार्थ–यदि चर्च के बारे में मनोवृत्तियों को मापना है तो पैमाने का प्रयोग पहले चर्च जाने वाले समूह पर किया जाएगा, फिर चर्च न जाने वाले समूह पर किया जाएगा। यदि दोनों परिचित परन्तु विरोधी समूहों से प्राप्त परिणामों की तुलना में एक–दूसरे के विपरीत परिणाम मिलते हैं तो पैमाने को प्रामाणिक माना जा सकता है।

(द) स्वतन्त्र मापदण्ड (Independent criteria)–इसमें पैमाने की प्रामाणिकता की जाँच करने के लिए उसे विभिन्न स्वतन्त्र कारकों पर भी लागू किया जाता है। यदि घटना तथा उससे सम्बन्धित विभिन्न स्वतन्त्र कारकों द्वारा एक समान परिणाम प्राप्त होते हैं तो पैमाने को प्रामाणिक माना जा सकता है।

यद्यपि गुणात्मक एवं गणनात्मक शोध परस्पर विपरीत मान्यताओं पर आधारित होते हैं, तथापि सामाजिक यथार्थता को समझने हेतु इनका मिश्रित रूप भी प्रयोग में लाया जा सकता है। हो सकता है कि शोध का एक भाग गुणात्मक प्रकृति का हो, जबकि दूसरे भाग में गुणात्मक आँकड़ों की पुष्टि हेतु गणनात्मक शोध का सहारा लिया जाए। जैसे–जैसे शोध में प्रयुक्त पद्धतियों का परिष्कार होता जा रहा है, वैसे–वैसे शोध को अधिक से अधिक तार्किक, विश्वसनीय एवं प्रामाणिक बनाने हेतु गुणात्मक एवं गणनात्मक दोनों प्रकार की पद्धतियों का प्रयोग किया जाने लगा है।

2.6 गुणात्मक एवं गणनात्मक शोध में अन्तर

गुणात्मक शोध मुख्य रूप से अन्वेषणात्मक शोध होता है। इसका प्रयोग कारणों, मतों एवं प्रेरणाओं का पता लगाने के लिए किया जाता है। यह समस्या के बारे में अन्तर्दृष्टि प्रदान करता है अथवा नवीन विचार या उपकल्पना विकसित करने में सहायता प्रदान करता है। इससे गणनात्मक शोध में सहायता प्राप्त होती है। गुणात्मक शोध का प्रयोग चिन्तन एवं मतों में पाई जाने वाली प्रवृत्तियों का पता लगाने तथा समस्या के बारे में गहराई तक पहुँचने हेतु भी किया जाता है। गुणात्मक सामग्री संकलन करने की पद्धतियाँ असंरचित अथवा अर्द्धसंरचित होती हैं। कुछ सामान्य पद्धतियाँ सामूहिक वार्तालाप, व्यक्तिगत साक्षात्कार, वैयक्तिक अध्ययन, जीवन इतिहास, नृजातीय वर्णन तथा सहभागी अवलोकन मानी जाती हैं। इस प्रकार के शोध में निर्दशन का आकार विशेष रूप से लघु होता है तथा सूचनादाताओं का चयन निर्धारित संख्या के अनुसार किया जाता है। अधिकतर विद्वान् गुणात्मक शोध को असंरचित एवं अन्वेषणात्मक पद्धति मानते हैं जिसकी सहायता से जटिल प्रघटनाओं को समझने का

प्रयास किया जाता है। ऐसे शोध का उद्देश्य गुणात्मक शोध हेतु विचार अथवा उपकल्पना निर्मित करना भी हो सकता है।

गुणात्मक शोध के विपरीत गणनात्मक शोध नम्बरों से सम्बन्धित सामग्री के प्रयोग द्वारा समस्या को परिमाणात्मक स्वरूप प्रदान करने का प्रयास करता है ताकि सामग्री को सांख्यिकीय रूप में समझने हेतु रूपान्तरित किया जा सके। इसमें मनोवृत्तियों, मतों, व्यवहार तथा अन्य चरों को परिमाणात्मक दृष्टि से समझने का प्रयास किया जाता है। गणनात्मक शोध में निर्दशन बृहत् आकार का होता है। सामग्री के संकलन हेतु सामाजिक सर्वेक्षण, साक्षात्कार, दूरभाष साक्षात्कार, अनुसूची जैसी पद्धतियों का प्रयोग किया जाता है।

गुणात्मक एवं गणनात्मक शोध में पाए जाने वाले अन्तर को निम्नलिखित तालिका द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है–

अन्तर का बिन्दु	गुणात्मक शोध	गणनात्मक शोध
प्रकृति	समग्र (Holistic)	विशेषीकृत (Particularistic)
दृष्टिकोण	व्यक्तिनिष्ठ (Subjective)	वस्तुनिष्ठ (Objective)
शोध का प्रकार	अन्वेषणात्मक (Exploratory)	निर्णयात्मक (Conclusive)
तर्क	आगमनात्मक (Inductive)	निगमनात्मक (Deductive)
निर्दशन	उद्देश्यपूर्ण (Purposive)	दैव (Random)
समग्री	मौखिक (Verbal)	मापन योग्य (Measurable)
अन्वेषण	प्रक्रिया–केन्द्रित (Process-oriented)	परिणाम–केन्द्रित (Result-oriented)
उपकल्पना	निर्मित (Generated)	प्रमाणित (Tested)
विष्लेशण के तत्त्व	शब्द, चित्र एवं वस्तुएँ (Words, pictures and objects)	संख्यात्मक सामग्री (Numerical data)
उद्देश्य	अनवरत प्रक्रियाओं में प्रयुक्त विचारों का अन्वेषण एवं खोज (To explore and discover ideas used in the ongoing processes.)	चरों में कार्य–कारण सम्बन्धों का परीक्षण (To examine cause and effect relationship between variables.)
पद्धतियाँ	गहन साक्षात्कार, समूह वार्तालाप जैसी असंरचित पद्धतियाँ (Non-structured techniques like In-depth interviews, group discussions etc.)	सर्वेक्षण, प्रश्नावली, अवलोकन जैसी संरचित पद्धतियाँ (Structured techniques such as surveys, questionnaires and observations.)
परिणाम	प्रारम्भिक समझ विकसित करना (Develops initial understanding)	अन्तिम कार्यवाही हेतु सुझाव देना (Recommends final course of action)

उपर्युक्त तालिका से गुणात्मक एवं गणनात्मक शोध में पाए जाने वाले सभी प्रकार के अन्तर स्पष्ट हो जाते हैं।

2.7 सारांश

सिद्धान्त वैज्ञानिक शोध का एक महत्त्वपूर्ण चरण है। इसे विज्ञान का उपकरण भी माना जाता है क्योंकि इसकी सहायता से संकलित तथ्यों को सुव्यवस्थित करने, वर्गीकृत करने तथा उनमें परस्पर सम्बन्ध स्थापित करने हेतु अवधारणात्मक प्रारूप अथवा ढाँचा प्राप्त होता है। क्योंकि सिद्धान्तों का निर्माण शोध द्वारा प्रमाणित तथ्यों द्वारा किया जाता है, इसलिए सिद्धान्त एवं शोध परस्पर सम्बन्धित हैं। मर्टन जैसे विद्वानों ने इन दोनों को एक–दूसरे को प्रोत्साहन देने वाले ही नहीं, अपितु एक–दूसरे पर आश्रित भी माना है। समाजशास्त्र में शोध के अनेक प्रकार के स्वरूपों का प्रयोग किया जाता है। आज अधिकांश विद्वान् गुणात्मक एवं गणनात्मक शोध में विभेद करने लगे हैं। गुणात्मक शोध सामाजिक वास्तविकता के गुणों के वर्णन से सम्बन्धित होता है तथा इसमें सांख्यिकीय पद्धतियों का प्रयोग नहीं किया जाता है। इसके विपरीत गणनात्मक शोध मात्राओं से सम्बन्धित होता है तथा इसमें सांख्यिकीय पद्धतियाँ प्रमुख भूमिका निभाती हैं। इन दो प्रकार के शोधों के आधार पर समाजशास्त्र में आँकड़ों के संकलन हेतु प्रयुक्त पद्धतियों को भी गुणात्मक एवं गणनात्मक श्रेणियों में विभाजित किया जाता है। गुणात्मक शोध में अधिकतर सहभागी अवलोकन, जीवन इतिहास, वैयक्तिक अध्ययन, वंशावली आदि पद्धतियों का प्रयोग होता है, जबकि गणनात्मक शोध में प्रश्नावली, अनुसूची, साक्षात्कार, असहभागी, अवलोकन जैसी पद्धतियाँ ही आँकड़ों के संकलन हेतु प्रयोग में लायी जाती हैं। आज अनेक विद्वान् यह मानने लगे हैं कि सामाजिक यथार्थता को सामाजिक ढंग से समझने हेतु इन दोनों प्रकार के शोधों के मिश्रित रूप को अपनाया जाना चाहिए।

2.8 शब्दावली

सामाजिक शोध – सामाजिक जीवन, सामाजिक घटनाओं एवं सामाजिक जटिलताओं के सम्बन्ध में अन्वेषण के वैज्ञानिक प्रयास को सामाजिक शोध कहा जाता है।

सिद्धान्त – एक सिद्धान्त को परस्पर सम्बन्धित प्रस्तावनाओं के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिनका आनुभविक परीक्षण किया जा सकता है।

गुणात्मक शोध – गुणात्मक शोध से अभिप्राय मुख्य रूप से ऐसे अन्वेषणात्मक शोध से है जिसका प्रयोग कारणों, मतों एवं प्रेरणाओं का पता लगाने के लिए किया जाता है।

गणनात्मक शोध – गणनात्मक शोध वह है जो नम्बरों से सम्बन्धित सामग्री के प्रयोग द्वारा समस्या को परिमाणात्मक स्वरूप प्रदान करता है ताकि सामग्री को सांख्यिकीय रूप में समझा जा सके।

2.9 अभ्यास प्रश्न

7. सामाजिक शोध एवं सिद्धान्त की अवधारणाएँ स्पष्ट कीजिए।
8. सिद्धान्त किसे कहते हैं? इसमें तथा शोध में पाए जाने वाले परस्पर सम्बन्धों की विवेचना कीजिए।
9. सामाजिक शोध को परिभाषित कीजिए तथा गुणात्मक एवं गणनात्मक शोध में भेद स्पष्ट कीजिए।
10. गुणात्मक शोध से आप क्या समझते हैं? यह गणनात्मक शोध से किस प्रकार भिन्न है? स्पष्ट कीजिए।
11. गुणात्मक एवं गणनात्मक शोध पर एक विस्तृत लेख लिखिए।
12. मर्टन के विचारों के सन्दर्भ में शोध एवं सिद्धान्त में पाई जाने वाली पारस्परिकता की व्याख्या कीजिए।

2.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची

G. M. Fisher, Quoted in H. P. Fairchild (1944), **Dictionary of Sociology** (ed.), Philosophical Library, New York.

P. V. Young (1966), **Scientific Social Surveys and Research : An Introduction to the Background, Content, Methods, Principles and Analysis of Social Studies**, Prentice-Hall, Englewood Cliffs, N.J.

Bernard S. Phillips (1976), **Social Research : Strategy and Tactics**, The Macmillan Company, New York.

C. A. Moser and G. Kalton (1971), **Survey Methods in Social Investigation**, Heinemann, London.

C. R. Kothari (1996), Research Methodology : Methods and Techniques, Surjeet Publication, New Delhi.

Claire Selltiz, Marie Jahoda, Morton Deutsch and Stuart Cook (1965), **Research Methods in Social Relations**, Holt, Rinehart and Winston, New York.

E. S. Bogardus (1964), **Sociology**, The Macmillan Company, New York.

F. Stuart Chapin (1947), **Experiments in Sociological Research**, Harper and Bros, New York.

H. P. Fairchild (1944), **Dictionary of Sociology** (ed.), Philosophical Library, New York.

Hans L. Zetterberg (1976), Quoted in Bernard S. Phillips, **Social Research : Strategy and Tactics**, The Macmillan Company, New York, p. 57.

Nan Lin (1976), **Foundations of Social Research**, McGraw-Hill Book Company, New York.

Robert K. Merton (1966), ‘‘The Sociologist as Empiricist’’ in Alex Inkeles (ed.), **Readings on Modern Sociology**, Prentice Hall, New York.

Robert K. Merton (1968), **Social Theory and Social Structure**, The Free Press, New York.

Talcott Parsons (1951), **The Social System**, The Free Press, Glencoe, Illinois.

W. J. Goode and P. K. Hatt (1965), **Methods in Social Research**, McGraw-Hill Book Company, New York.

इकाई 3 सामाजिक शोध में वस्तुनिष्ठता एवं व्यक्तिनिष्ठता
Objectivity & Subjectivity in Social Research

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य
3.1 प्रस्तावना
3.2 वस्तुनिष्ठता एवं व्यक्तिनिष्ठता की अवधारणाओं का स्पष्टीकरण : अर्थ एवं परिभाषाएँ
3.3 वस्तुनिष्ठता से सम्बन्धित समस्याएँ
3.4 वस्तुनिष्ठता एवं व्यक्तिनिष्ठता की समस्या के बारे में वेबर के विचार
3.5 सामाजिक शोध में वस्तुनिष्ठता की आवश्यकता एवं महत्त्व
3.6 सामाजिक शोध में वस्तुनिष्ठता को बनाए रखने के उपाय
3.7 सारांश
3.8 शब्दावली
3.9 अभ्यास प्रश्न
3.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची

3.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई में वस्तुनिष्ठता एवं व्यक्तिनिष्ठता की अवधारणाओं को समझाने का प्रयास किया गया है। इसके साथ ही वस्तुनिष्ठता की समस्याओं, इसकी आवश्यकता तथा इसे बनाए रखने के उपायों को स्पष्ट करना भी इस इकाई का उद्देश्य है। आशा है कि इस इकाई को पढ़ने के बाद, आप :

- वस्तुनिष्ठता एवं व्यक्तिनिष्ठता की अवधारणाओं को समझ पाएँगे;
- वस्तुनिष्ठता से सम्बन्धित समस्याओं की व्याख्या कर पाएँगे;
- वस्तुनिष्ठता एवं व्यक्तिनिष्ठता की समस्या के बारे में वेबर के विचारों को समझ पाएँगे;
- सामाजिक शोध में वस्तुनिष्ठता की आवश्यकता एवं महत्त्व को स्पष्टतया समझ पाएँगे; तथा
- सामाजिक शोध में वस्तुनिष्ठता को बनाए रखने के उपायों को समझ पाएँगे।

3.1 प्रस्तावना

समाजशास्त्र एक सामाजिक विज्ञान है। विज्ञान दो तरह के होते है–प्रथम, प्राकृतिक विज्ञान तथा द्वितीय, सामाजिक विज्ञान। प्राकृतिक विज्ञान प्रकृति अथवा प्राकृतिक घटनाओं से सम्बन्धित होते हैं, जबकि सामाजिक विज्ञान समाज के विभिन्न पहलुओं का अध्ययन करते हैं। समाजशास्त्र ही एकमात्र सामाजिक विज्ञान नहीं है अपितु अर्थशास्त्र, राजनीतिशास्त्र, मनोविज्ञान, समाज–कार्य, मानवशास्त्र तथा इतिहास इत्यादि भी सामाजिक विज्ञान हैं। अतः समाजशास्त्र सामाजिक विज्ञानों में से एक विज्ञान है। सामाजिक विज्ञानों में प्राकृतिक विज्ञानों की भाँति प्रामाणिकता लाना कठिन है। समाज विज्ञानों के नियम प्राकृतिक विज्ञानों के नियमों की भाँति अटल नहीं होते, वे तो सामाजिक व्यवहार के सम्बन्ध में सम्भावित प्रवृत्ति को प्रकट करते हैं। ऐसी स्थिति के लिए अनेक कारक उत्तरदायी हैं; जैसे–सामाजिक प्रघटना का स्वभाव, ठोस मापदण्डों का विकसित न होना आदि। इन्हीं कारणों में एक प्रमुख समस्या वस्तुनिष्ठता की भी है। किसी भी वैज्ञानिक अध्ययन एवं अनुसन्धान की सफलता की पूर्वपेक्षित शर्त वस्तुनिष्ठता है। इसके अभाव में शोध के द्वारा प्राप्त निष्कर्षों की विश्वसनीयता एवं प्रामाणिकता सन्दिग्ध हो जाती है।

यही कारण है कि समाजशास्त्र सहित सभी समाज विज्ञानों में प्रारम्भ से ही इस समस्या पर विचार किया जाता रहा है।

सामाजिक शोध का उद्देश्य किसी घटना का वैज्ञानिक विधि द्वारा अध्ययन करके उसे यथार्थ रूप से समझना है। यह उद्देश्य तभी सम्भव हो सकता है यदि शोधकर्ता घटना के अध्ययन को अपने विचारों से प्रभावित न होने दे। अन्य शब्दों में, घटना के वस्तुनिष्ठ अध्ययन द्वारा ही उसे यथार्थ रूप से समझा जा सकता है। यदि विभिन्न शोधकर्ता एक घटना का अध्ययन कर एक समान निष्कर्ष निकालते हैं, तो हम उस अध्ययन को वस्तुनिष्ठ अध्ययन कह सकते हैं। यदि उनके निष्कर्षों में काफी अन्तर है, तो इसका अर्थ यह है कि शोधकर्ताओं के विचारों ने अध्ययन को प्रभावित किया है, क्योंकि जब घटना एक है तो उसके अध्ययन के बारे में एक समान निष्कर्ष होने चाहिए।

क्या सामाजिक शोध पूर्णतः वस्तुनिष्ठ हो सकता है या नहीं? यह प्रारम्भ से ही सामाजिक विज्ञानों में एक वाद–विवाद एवं मार्मिक चर्चा का विषय रहा है और आज भी इसके बारे में मतैक्य का अभाव पाया जाता है। कुछ विद्वानों (यथा **मैक्स वेबर**) का कहना है कि सामाजिक–सांस्कृतिक घटनाओं की प्रकृति ही ऐसी है कि इनका पूर्ण रूप से वस्तुनिष्ठ अध्ययन किया ही नहीं जा सकता, जबकि अनेक अन्य विद्वानों (यथा **इमाइल दुर्खीम**) का विचार है कि समाजशास्त्रीय अध्ययनों में वस्तुनिष्ठता रखना सम्भव है। दुर्खीम ने इस बात का दावा ही नहीं किया अपितु धर्म, श्रम–विभाजन एवं आत्महत्या जैसे सामाजिक तथ्यों का वस्तुनिष्ठ अध्ययन करने में सफलता भी प्राप्त की। परन्तु फिर भी अनेक विद्वान् यह मानते हैं कि सामाजिक घटनाओं की प्रकृति प्राकृतिक घटनाओं की प्रकृति से भिन्न है जिसके कारण इनका पूर्ण वस्तुनिष्ठ अध्ययन सम्भव नहीं है। हाँ, शोधकर्ता अनेक सावधानियों का प्रयोग कर अपने विचारों के प्रभावों अर्थात् व्यक्तिनिष्ठता या व्यक्तिपरकता (Subjectivity) को कम–से–कम करने का प्रयास कर सकता हैं ।

3.2 वस्तुनिष्ठता एवं व्यक्तिनिष्ठता की अवधारणाओं का स्पष्टीकरण : अर्थ एवं परिभाषाएँ

वस्तुनिष्ठता का अभिप्राय घटना का यथार्थ या वास्तविक रूप में अर्थात् उसी रूप में, जिसमें वे हैं, वर्णन करना है। यह एक तरह से वैज्ञानिक भावना है जो शोधकर्ता को उसके पूर्व दृष्टिकोणों से उसके अध्ययन को प्रभावित करने से रोकती है। यदि कोई शोधकर्ता किसी घटना का वर्णन उसी रूप से करता है जिसमें कि वह विद्यमान है, चाहे उसके बारे में शोधकर्ता के विचार कुछ भी क्यों न हों, तो हम इसे वस्तुनिष्ठ अध्ययन कह सकते हैं।

दैनिक जीवन की भाषा में वस्तुनिष्ठ शब्द का आशय पूर्वाग्रह–रहित, तटस्थ या केवल तथ्यों पर आधारित होता है। किसी भी वस्तु के बारे में वस्तुनिष्ठ होने के लिए हमें वस्तु के बारे में अपनी भावनाओं या मनोवृत्तियों को अवश्य अनदेखा करना चाहिए। इसीलिए वस्तुनिष्ठता तथ्यों को वैसे ही प्रस्तुत करने में सहायक है जैसे कि वे हैं। जब एक भू–वैज्ञानिक चट्टानों का अध्ययन करता है अथवा एक वनस्पतिशास्त्री पौधों का अध्ययन करता है तो उनके व्यक्तिगत पूर्वाग्रह या मान्यताएँ उनके अध्ययन को प्रभावित नहीं करती हैं। वे स्वयं उस संसार का हिस्सा नहीं होते जिनका वे अध्ययन करते हैं। इसके विपरीत, समाजशास्त्री एवं अन्य समाज वैज्ञानिक उस संसार का अध्ययन करते हैं जिनमें वे स्वयं रहते हैं। इसलिए उनके द्वारा किया जाने वाला अध्ययन 'व्यक्तिनिष्ठ' होता है। उदाहरणार्थ, पारिवारिक सम्बन्धों का अध्ययन करने वाला समाजशास्त्री भी स्वयं एक परिवार का सदस्य होता है तथा उसके अनुभवों का उसके अध्ययन पर प्रभाव पड़ सकता है। हो सकता है कि वह पारिवारिक सम्बन्धों के बारे में अपने कुछ मूल्य अथवा पूर्वाग्रह रखता हो। इसीलिए सामाजिक विज्ञानों में वस्तुनिष्ठता बनाए रखना एक प्रमुख समस्या है। प्रमुख विद्वानों ने इसकी परिभाषाएँ निम्नलिखित प्रकार से दी हैं–

कार (Carr) के अनुसार–"सत्य की वस्तुनिष्ठता से अभिप्राय है कि दृष्टि विषयक जगत किसी व्यक्ति के प्रयासों, आशाओं या भय से स्वतन्त्र एक वास्तविकता है, जिसे हम सहज ज्ञान एवं कल्पना से नहीं बल्कि वास्तविक अवलोकन के द्वारा प्राप्त करते हैं।" **ग्रीन** (Green) के अनुसार–"वस्तुनिष्ठता प्रमाण का निष्पक्षता से परीक्षण करने की इच्छा एवं योग्यता है।" **फेयरचाइल्ड** (Fairchild) "वस्तुनिष्ठता का अर्थ तथ्यों को पक्षपात तथा उद्देश्य के आधार पर नहीं, बल्कि प्रमाण एवं तर्क के आधार पर बिना किसी सुझाव या पूर्व–धारणाओं के, सही पृष्ठभूमि में देखने की योग्यता है।"

उपर्युक्त परिभाषाओं से यह स्पष्ट हो जाता है कि वस्तुनिष्ठता किसी घटना का निष्पक्ष एवं तटस्थ रूप से अध्ययन करने की भावना एवं क्षमता है जो शोधकर्ता को अध्ययन करते समय उसके अपने विश्वासों, आशाओं एवं भय से दूर रखती है। वस्तुनिष्ठता शोध में वैयक्तिक पक्षपात का विरोध करता है। यह शोध के प्रति वह दृष्टिकोण है जिसके अनुसार किसी घटना से सम्बन्धित तथ्यों को समझने हेतु शोधकर्ता अपने पूर्वाग्रहों, मूल्यों, मनोवृत्तियों आदि की अपेक्षा साक्ष्य एवं तर्क के आधार पर निष्पक्ष विश्लेशण करने का प्रयास करता है। सामाजिक विज्ञानों में वस्तुनिष्ठता बनाए रखना इन्हें विज्ञान की श्रेणी में जाने के लिए अत्यन्त अनिवार्य है।

सामाजिक शोध में वस्तुनिष्ठता एवं वैज्ञानिक पद्धति के प्रयोग के विरोधी विद्वान् यह तर्क देते हैं कि सामाजिक घटनाओं की प्रकृति ही ऐसी है कि उन्हें वस्तुनिष्ठ रूप में समझना ज्यादा उचित है। **मैक्स बेवर** जैसे विद्वानों ने इस तथ्य पर बल दिया है कि किसी भी घटना को समझने हेतु उसके अन्तर्निहित अर्थ को समझना अनिवार्य है। इस अर्थ को केवल व्यक्तिनिष्ठ दृष्टि से ही समझा जा सकता है। व्यक्तिनिष्ठता (जिसे आत्मपरकता अथवा व्यक्तिपरकता भी कहा जाता है) वह सिद्धान्त है जो सामाजिक यथार्थता को समझने हेतु उसे मूल्यों से पृथक् करना असम्भव मानता है। कोई भी शोधकर्ता अपने आन्तरिक विचारों एवं मूल्यों को कहीं दूसरी जगह छोड़कर अन्वेषण नहीं कर सकता है। उसके मूल्य, विश्वास एवं मनोवृत्तियाँ सदैव उसके साथ रहती हैं तथा इसी से वह सामाजिक यथार्थता को देखने का प्रयास करता है। अन्य शब्दों में यह कहा जा सकता है कि जब कोई शोध घटनाओं का अध्ययन शोधकर्ता के दृष्टिकोण या परिप्रेक्ष्य से किया जाता है, तो उसे व्यक्तिनिष्ठ अध्ययन कहा जाता है। प्रत्यक्षवादी विद्वान् ऐसे अध्ययनों का विरोध करते हैं। **कूले** एवं **बेवर** ने 'सहानुभूतिमूलक समझ' तथा मनोविश्लेशणवादियों ने 'आत्म–स्पष्टीकरण' की जिस पद्धति का उल्लेख किया है, वह वास्तव में व्यक्तिनिष्ठता से ही सम्बन्धित है। इस पद्धति के समर्थक समाजशास्त्र की वस्तुनिष्ठ प्रकृति को पूर्णतः अस्वीकार करते हैं।

3.3 वस्तुनिष्ठता से सम्बन्धित समस्याएँ

प्रत्येक विज्ञान अपनी विषय–वस्तु का अध्ययन वस्तुनिष्ठ रूप से करने का प्रयास करता है, परन्तु सामाजिक घटनाओं की प्रकृति के कारण सामाजिक विज्ञानों में वस्तुनिष्ठता रख पाना एक कठिन कार्य है। इसमें आने वाली प्रमुख समस्याएँ निम्नलिखित हैं–

(1) समस्या का चयन मूल्य–निर्णयों द्वारा प्रभावित–समाजिक शोध में वस्तुनिष्ठता न रख पाने का सर्वप्रथम कारण शोध समस्या का चयन है जो कि अन्वेषणकर्ता के मूल्यों तथा रुचियों द्वारा प्रभावित होता है। समस्या का चयन सदैव मूल्यों से सम्बन्धित होता है और इसीलिए सामाजिक–सांस्कृतिक घटनाओं का पूर्ण रूप से वस्तुनिष्ठ अथवा वैज्ञानिक अध्ययन सम्भव नहीं है।

(2) अध्ययन में तटस्थता असम्भव–सामाजिक शोध में जब हम व्यक्तियों एवं समूहों का अध्ययन करते हैं तो स्वयं एक सामाजिक प्राणी होने के कारण हम अध्ययन से अपने आपको तटस्थ अथवा पृथक् नहीं रख पाते। प्राकृतिक विज्ञानों में ऐसा इसलिए सम्भव हो जाता है क्योंकि उनमें जड़ या निर्जीव वस्तुओं का अध्ययन किया जाता है। स्वयं सामाजिक समूह, विशेष जाति एवं सम्प्रदाय का

सदस्य होने के कारण शोधकर्ता का पक्षपात या किसी विशेष बात की ओर आकर्षित होना स्वाभाविक ही है। अतः सामाजिक विज्ञानों में निष्कर्षों के शोधकर्ता की मनोवृत्तियों या मूल्यों द्वारा प्रभावित होने की सम्भावना अधिक होती है।

(3) बाह्य हितों द्वारा बाधा–सामाजिक विज्ञानों में वस्तुनिष्ठता से सम्बन्धित तीसरी बाधा शोधकर्ता के बाह्य हित हैं। जब वह अपने समूह का अध्ययन करता है तो बहुत–सी बातों, जिन्हें वह अनुचित मानता है, की उपेक्षा कर देता है। दूसरी ओर, जब वह किसी दूसरे समूह का अध्ययन करता है तो वह ऐसी बातों की ओर अधिक ध्यान देता है। इससे अध्ययन की वस्तुनिष्ठता प्रभावित होती है।

(4) सामाजिक घटनाओं की प्रकृति–सामाजिक घटनाओं की प्रकृति भी सामाजिक विज्ञानों में वस्तुनिष्ठ अध्ययनों में एक बाधा है। चूँकि इनकी प्रकृति गुणात्मक होती है और कई बार शोधकर्ता को समूह के सदस्यों की मनोवृत्तियों, मूल्यों एवं आदर्शों आदि का अध्ययन करना पड़ता है, इसीलिए उसके लिए परिशुद्ध एवं यथार्थ रूप में घटनाओं का निष्पक्ष अध्ययन करना सम्भव नहीं रह पाता।

(5) संजातिकेन्द्रवाद–शोधकर्ता स्वयं एक सामाजिक प्राणी है तथा वह किसी विशेष जाति, प्रजाति, वर्ग, लिंग, समूह का सदस्य होने के नाते विभिन्न मानवीय क्रियाओं एवं सामाजिक पहलुओं के बारे में अपने विचार एवं मूल्य रखता है। उसके ये विचार एवं मूल्य उसके अध्ययन को प्रभावित करते हैं। **लुण्डबर्ग** (Lundberg) के अनुसार शोधकर्ता के नैतिक मूल्य का उसके अध्ययन पर अत्यधिक प्रभाव पड़ता है।

उपर्युक्त बाधाओं के अतिरिक्त अनेक अन्य ऐसे कारण भी हैं जो सामाजिक विज्ञानों में होने वाले अध्ययनों में पक्षपात या अभिनति (Bias) लाते हैं। अभिनति के ऐसे कुछ प्रमुख स्रोत निम्नांकित हैं–

(1) शोधकर्ता की अपनी मूल्यों से सम्बन्धित अभिनति,

(2) सूचनादाता की झूठ बोलने अथवा सही उत्तर देने में कतराने के कारण होने वाली अभिनति,

(3) सूचनादाता की तथ्यों को बढ़ा–चढ़ाकर कहने अर्थात् डींग मारने की आदत,

(4) सूचनादाता द्वारा शोधकर्ता पर विश्वास न होने के कारण सही उत्तर देने में असमर्थता,

(5) निदर्शन के चुनाव में अभिनति (बहुधा निदर्शन का चयन पक्षपातपूर्ण रूप में किया जाता है तथा यदि दैव निदर्शन का प्रयोग किया गया है तो भी अनेक सूचनादाता सूचना देने हेतु उपलब्ध नहीं हो पाते जिससे निदर्शन प्रभावित होता है),

(6) सामग्री संकलन करने की दोषपूर्ण प्रविधियाँ (सामान्यतः प्रश्नावली एवं अनुसूची इत्यादि प्रविधियों में ऐसे प्रश्न सम्मिलित कर लिए जाते हैं जो यथार्थता के बारे में सूचना संकलन करने में सहायक नहीं होते हैं अथवा इन प्रविधियों में पूर्व–परीक्षण किए बिना प्रयोग में लाने से इनकी वस्तुनिष्ठता प्रभावित होती है, तथा

(7) सामग्री के विष्लेशणएवं निर्वचन में अभिनति (सामान्यतः विष्लेशणएवं निष्कर्ष के स्तर पर भी शोधकर्ता के मूल्य अध्ययन को प्रभावित करते हैं जिससे वह वही निष्कर्ष निकालता है जो उसके मूल्यों के अनुरूप होता है। बहुधा शोधकर्ता के निजी स्वार्थ भी विष्लेशणएवं निर्वचन को प्रभावित करते हैं)।

3.4 वस्तुनिष्ठता एवं व्यक्तिनिष्ठता की समस्या के बारे में वेबर के विचार

मैक्स वेबर के अनुसार प्राकृतिक तथा सामाजिक विज्ञानों में अन्तर अन्वेषणकर्ता के अनुभव सम्बन्धी आशयों (Cognitive intentions) का परिणाम है, न कि मानव–क्रिया की विषय–वस्तु के अध्ययन में वैज्ञानिक तथा सामान्यीकरण विधियों के प्रयोग करने की कठिनाई। अन्वेषण की विधियों से अधिक, वैज्ञानिक की रुचियाँ तथा उद्देश्य महत्त्वपूर्ण होते हैं। दोनों ही तरह के विज्ञानों में अमूर्तता (Abstraction) का सहारा लिया जाता है, अमूर्तता के लिए दोनों ही तरह के विज्ञानों में वास्तविकता के

विभिन्न पहलुओं में से कुछ पहलुओं का चयन करना पड़ता है। वेबर के विचारों को निम्नलिखित दो शीर्षकों के अन्तर्गत विभाजित किया जा सकता है—

(अ) समस्या का चयन सदैव मूल्य—निर्णयों द्वारा प्रभावित—कौन—सी विशेष समस्या तथा उसकी किस प्रकार की व्याख्या विद्वान् का ध्यान अपनी ओर केन्द्रित करती है, यह अन्वेषणकर्ता के मूल्यों तथा रुचियों पर निर्भर करता है। समस्या का चयन सदैव मूल्यों से सम्बन्धित (Value relevant) है। संस्कृति अथवा समाज का पूर्ण रूप से वस्तुनिष्ठ अथवा वैज्ञानिक अध्ययन सम्भव नहीं है क्योंकि इनके अध्ययन का दृष्टिकोण एक—तरफा है जिसका चयन तथा व्याख्या प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष, चेतन अथवा अचेतन रूप से की जाती है। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि सांस्कृतिक अथवा सामाजिक प्रघटना को बिना इसके महत्त्व को ध्यान में रखे नहीं समझा जा सकता। प्रत्येक सामाजिक प्रघटना अपने आप में विशिष्ट होती है तथा कोई भी सांस्कृतिक घटना अपने आपको दोहराती नहीं है। सामाजिक वास्तविकता के बारे में ज्ञान सार्वभौमिक नहीं है क्योंकि यह ज्ञान किसी विशेष दृष्टिकोण के अनुसार प्राप्त किया गया है। यह चेतना सम्बन्धी ज्ञान है। इसलिए प्रश्न यह पैदा होता है कि क्या सामाजिक प्रघटनाओं का अध्ययन वस्तुनिष्ठ रूप से किया जा सकता है? वस्तुनिष्ठ अध्ययन का अभिप्राय है कि वह अध्ययन चेतना सम्बन्धी नहीं है अर्थात् हमारे अपने विचारों द्वारा प्रभावित नहीं है। वस्तुनिष्ठ अध्ययन निष्पक्ष होता है जिस पर शोधकर्ता का कोई प्रभाव नहीं पड़ता। सामाजिक वास्तविकता का अध्ययन केवल एक—तरफा है क्योंकि वैज्ञानिक केवल अपनी रुचि व मूल्यों के आधार पर समस्या व प्रघटना का चयन ही नहीं करता अपितु इसका अध्ययन भी अपने दृष्टिकोण से करता है अर्थात् केवल उसी पक्ष की ओर अधिक ध्यान देता है जिसे वह महत्त्वपूर्ण मानता है।

वेबर ने इस बात पर बल दिया है कि मूल्य अन्वेषणकर्ता द्वारा समस्या के चयन को प्रभावित करता है क्योंकि समस्या के चयन के लिए कोई वैज्ञानिक आधार नहीं है तथा इससे सामाजिक विज्ञानों में वस्तुनिष्ठता का उल्लंघन होता है। यह प्रश्न कि कोई प्रस्तावना सही है अथवा गलत है, तार्किक दृष्टि से इससे भिन्न है कि मूल्यों से इसका क्या सम्बन्ध है। मूल्य सम्बन्ध समस्या के चयन को प्रभावित करते हैं, न कि उस समस्या की व्याख्या को। इसलिए वेबर का कहना है कि सामाजिक विज्ञानों में समस्या के चयन के मूल्यों के प्रभाव को नहीं रोका जा सकता परन्तु समस्या का चयन कर लेने के बाद वस्तुनिष्ठता बनाए रखी जा सकती है।

(ब) समस्या के चयन के बाद वस्तुनिष्ठ अध्ययन सम्भव—समस्या का चयन कर लेने के बाद (जो कि मूल्यों से प्रभावित होती है) समाज वैज्ञानिक को अपने अथवा अन्य व्यक्तियों के मूल्यों को दूर रखकर सामग्री द्वारा प्रकट रूपरेखा का अनुसरण करना चाहिए। वह अपने विचारों को सामग्री पर थोप नहीं सकता तथा इसलिए जरूरी नहीं है कि निष्कर्ष उसकी अपनी मान्यता अथवा मूल्यों के अनुरूप ही हों। **वेबर** इसे नैतिक निष्पक्षता कहते हैं। उनका कहना है कि, "मूल्य निर्णयों का वैज्ञानिक अध्ययन केवल अपेक्षित साध्यों अथवा आदर्शों को समझाने तथा आनुभविक विश्लेशणमें सहायता ही नहीं करता अपितु उनका आलोचनात्मक मूल्यांकन भी कर सकता है।" यह आलोचना द्वन्द्ववादी प्रकृति की है अर्थात् यह ऐतिहासिक मूल्य—निर्णयों तथा विचारों से सम्बन्धित औपचारिक तार्किक मूल्यांकन है। इसके द्वारा समाज वैज्ञानिक मूल्यों के प्रति जागरूक हो जाता है तथा इनसे अपने अध्ययन को प्रभावित नहीं होने देता।

कोई भी आनुभविक विज्ञान यह नहीं बताता है कि किसी व्यक्ति को क्या करना चाहिए अपितु यह बताता है कि वह क्या कर सकता है। यह सत्य है कि सामाजिक विज्ञानों में व्यक्तिगत मूल्य—निर्णय हमारे वैज्ञानिक तर्कों को प्रभावित करते हैं परन्तु फिर भी हम समस्या के चयन के पश्चात् वस्तुनिष्ठ अध्ययन कर सकते हैं। इस प्रकार, वेबर कहते हैं कि अनुसन्धान की प्रारम्भिक अवस्थाओं; विशेषकर समस्या के चयन तक हमारे मूल्य हमारे अध्ययन को प्रभावित करते हैं परन्तु उसके बाद

वस्तुनिष्ठता रखी जा सकती है। वास्तव में, प्रारम्भिक अवस्था में सामाजिक विद्वानों का एक–तरफा दृष्टिकोण होने के कारण वस्तुनिष्ठता नहीं रखी जा सकती। वेबर की यह मान्यता थी कि सामाजिक विज्ञान, जिसके विषय में हमारी रुचि है, यथार्थ वास्तविकता से सम्बन्धित आनुभविक विज्ञान है। एक ओर हम व्यक्तिगत प्रघटनाओं में सम्बन्धों तथा उनके सांस्कृतिक महत्त्व का अध्ययन करना चाहते हैं, जबकि दूसरी ओर उनके ऐतिहासिक होने के कारणों का अध्ययन करना चाहते हैं। अध्ययन को वैज्ञानिक बनाने तथा तुलनात्मक अध्ययनों में सहायता करने के लिए उन्होंने आदर्श प्रारूप की अवधारणा का निर्माण किया जो हमें मूर्तता से आमूर्तता की ओर ले जाती है तथा इस अमूर्त अवधारणात्मक निर्माण से हम फिर यथार्थ वास्तविकता को समझने का प्रयास करते हैं। वेबर इस बात को मानते हैं कि सार्वभौमिक नियमों का निर्माण सामाजिक विज्ञानों में नहीं किया जा सकता तथा इनकी यह मान्यता है कि इन नियमों की खोज करना सामाजिक विज्ञानों के लिए महत्त्वपूर्ण भी नहीं है।

3.5 सामाजिक शोध में वस्तुनिष्ठता की आवश्यकता एवं महत्त्व

सामाजिक शोध में वस्तुनिष्ठता बनाए रखना अत्यन्त अनिवार्य है क्योंकि यदि ऐसा नहीं किया जाता तो हम कभी यथार्थता का अध्ययन नहीं कर पाएँगे। वस्तुनिष्ठता की आवश्यकता निम्नांकित बातों से स्पष्ट की जा सकती है–

(1) वैज्ञानिक पद्धति के सफल प्रयोग हेतु सामाजिक शोध में वस्तुनिष्ठता बनाए रखना अनिवार्य है,

(2) घटनाओं को यथार्थ एवं वास्तविक रूप में समझने तथा मौलिक तथ्यों के संकलन के लिए वस्तुनिष्ठता अनिवार्य है,

(3) पक्षपातरहित निष्कर्षों की प्राप्ति के लिए वस्तुनिष्ठता आवश्यक है। यदि शोधकर्ता के अपने मूल्य एवं विचार अध्ययन के निष्कर्षों को प्रभावित करते हैं तो वे निष्कर्ष भ्रामक हो सकते हैं,

(4) प्रतिनिधि तथ्यों की प्राप्ति के लिए वस्तुनिष्ठता आवश्यक है, तथा

(5) तथ्यों एवं सिद्धान्तों की पुनर्परीक्षा एवं सत्यापन के लिए वस्तुनिष्ठता आवश्यक है। यदि शोध में वस्तुनिष्ठता नहीं है तो एक ही सामाजिक घटना का विभिन्न विद्वानों द्वारा अध्ययन भिन्न–भिन्न निष्कर्षों की ओर ले जा सकता है जिससे यह समस्या उत्पन्न हो सकती है कि किसे सही माना जाए और किसे गलत। ऐसी स्थिति में तथ्यों एवं सिद्धान्तों का सत्यापन नहीं हो सकता।

3.6 सामाजिक शोध में वस्तुनिष्ठता को बनाए रखने के उपाय

सामाजिक शोध में वस्तुनिष्ठता को निम्नांकित उपायों द्वारा बनाए रखा जा सकता है–

(1) आनुभविक अध्ययन–अगर शोधकर्ता स्वयं अध्ययन क्षेत्र में जाकर घटनाओं का उसी रूप में अध्ययन करे जिस रूप में वे विद्यमान हैं तो उसका अध्ययन वस्तुनिष्ठ हो सकता है। उसे घटनाओं को अपने विचारों एवं मूल्यों के सन्दर्भ में न देखकर एक तटस्थ शोधकर्ता के दृष्टिकोण से देखना चाहिए। इसके लिए उसे आनुभविक प्रविधियों का प्रयोग करना चाहिए जिससे कि गणनात्मक सामग्री संकलित की जा सके। यदि प्रश्नावली एवं अनुसूची का प्रयोग किया जा रहा है तो इसका पूर्व–परीक्षण किया जाना आवश्यक है ताकि यह सुनिश्चित हो सके कि सभी सूचनादाता प्रश्नों का अर्थ एक समान रूप से समझेंगे। पूर्व संरचित एवं प्रश्न व उत्तर के विभिन्न विकल्प सुव्यवस्थित ढंग से लिखे होने के कारण सामग्री के संकलन में अभिनति की सम्भावना काफी कम हो जाती है।

(2) स्पष्ट शब्दों एवं अवधारणाओं का प्रयोग–भाषा की भिन्नता के कारण शब्दों एवं अवधारणाओं में भी भिन्नता आ जाती है। शोधकर्ता अपने अध्ययन में स्पष्ट रूप से परिभाषित शब्दों एवं अवधारणाओं का प्रयोग करके वस्तुनिष्ठता बनाए रख सकता है क्योंकि ऐसी स्थिति में लोग इनका अर्थ

वही समझेंगे जिसमें किसी शोधकर्ता ने इनका प्रयोग किया है। अवधारणाओं को उनके मानक अर्थ में ही प्रयोग करना चाहिए ताकि अन्य लोग उनका अर्थ वही समझें जो शोधकर्ता का है।

(3) दैव निदर्शन का प्रयोग—सामाजिक शोध में वस्तुनिष्ठता के भाव एवं अभिनति का एक प्रमुख स्रोत निदर्शन का समग्र का प्रतिनिधि नहीं होना है। इसका समाधान दैव निदर्शन विधि का प्रयोग करके किया जा सकता है। यह ही निदर्शन का केवल एक ऐसा प्रकार है जिसमें प्रतिनिधि इकाइयों का चयन सम्भव हो जाता है और पक्षपात की सम्भावना भी नहीं रहती।

(4) एक से अधिक प्रविधियों का प्रयोग—सामग्री एकत्रित करने के यन्त्र के रूप में, प्रत्येक प्रविधि के अपने कुछ दोष हैं जोकि शोध की वस्तुनिष्ठता को प्रभावित करते हैं। इसका समाधान काफी सीमा तक एक से अधिक प्रविधियों का प्रयोग करके किया जा सकता है क्योंकि इससे एकत्रित सामग्री की प्रामाणिकता की जाँच हो जाएगी।

(5) समूह अनुसन्धान प्रणाली—सामाजिक शोध में अभिनति कम करने एवं वस्तुनिष्ठता बनाए रखने का एक अन्य साधन समूह शोध है जिसमें शोधकर्ताओं की एक टीम सामूहिक रूप से घटनाओं का अवलोकन करती है। इसमें व्यक्तिगत पक्षपात की सम्भावना कम हो जाती है। ऐसे अध्ययन के पीछे मान्यता यह है कि एक शोधकर्ता के विचार एवं मूल्य उसे विशिष्ट निष्कर्षों की ओर मोड़ सकते हैं, परन्तु अधिक शोधकर्ता होने के कारण यह सम्भव नहीं है। अन्तःविषयक शोधों (Interdisciplinary research) में विभिन्न विज्ञानों के शोधकर्ता सामूहिक रूप से अध्ययन करते हैं जिससे पक्षपात की सम्भावना न्यूनतम हो जाती है।

(6) यान्त्रिक उपकरणों का प्रयोग—यान्त्रिक उपकरणों के प्रयोग द्वारा भी सामाजिक शोध में वस्तुनिष्ठता बनाए रखी जा सकती है। टेपरेकार्डर एवं कैमरे का प्रयोग आज अनेक अध्ययनों में इसीलिए किया जाने लगा है क्योंकि इन पर आधारित अध्ययनों में पक्षपात की सम्भावना कम हो जाती है।

सच तो यह है कि वस्तुनिष्ठता की समस्या जितनी विस्तृत और गहन बताई जाती हे, उतनी है नहीं। वस्तुनिष्ठता एक मानसिक गुण अथवा दृष्टिकोण है। यह कुछ सीमा तक व्यक्ति—विशेष के रुझान और कुछ सीमा तक उसके प्रशिक्षण पर आधारित होता है। शोधकर्ता का प्रशिक्षण और क्षेत्रीय अनुभव जितना अधिक बढ़ता जाता है उतना ही वह वस्तुनिष्ठता का गुण अर्जित करता जाता है। वास्तव में, यह अभ्यास, अनुभव और प्रशिक्षण का विषय है। समाज विज्ञानों में यह कोई असाध्य समस्या नहीं है। इसका समाधान सम्भव है और अनेक समाजशास्त्रियों एवं अन्य समाज वैज्ञानिकों ने वस्तुनिष्ठता के पालन की सम्भावना को साकार कर दिखाया है।

3.7 सारांश

समाजशास्त्र एक विज्ञान है। इस नाते इस विषय में होने वाले शोध में यह आशा की जाती है कि उसमें वैज्ञानिक पद्धति का प्रयोग किया जाएगा। जब से समाजशास्त्र विषय का विकास हुआ है, तभी से समाजशास्त्र में वैज्ञानिक पद्धति का प्रयोग एक विवादित विषय रहा है। एक ओर ऐसे विद्वान् हैं जिनका मत है कि समाजशास्त्र में वैज्ञानिक पद्धति का प्रयोग किया जा सकता है, जबकि दूसरी ओर ऐसे विद्वान् हैं जिनका मत है कि सामाजिक घटनाओं की प्रकृति ही ऐसी है कि उनके अध्ययन में वैज्ञानिक पद्धति सहायक नहीं हो सकती। सामाजिक शोध में वस्तुनिष्ठता एवं व्यक्तिनिष्ठता के बारे में विवाद इसी से सम्बन्धित है। वस्तुनिष्ठता से अभिप्राय सामाजिक यथार्थता को तटस्थ एवं तार्किक रूप से समझने का प्रयास है जिसमें शोधकर्ता के मूल्य उसे प्रभावित नहीं करते हैं। इसके विपरीत व्यक्तिनिष्ठता से अभिप्राय ऐसे शोध से है जो शोधकर्ता के दृष्टिकोण से प्रभावित होता है। यह सही है कि यदि हमें समाजशास्त्र को वैज्ञानिक धरातल पर स्थापित करना है तो शोध में वस्तुनिष्ठता बनाए

रखना आवश्यक है। यद्यपि वस्तुनिष्ठता बनाए रखना एक कठिन कार्य है, तथापि इसे असम्भव नहीं माना जा सकता। यदि शोधकर्ता चाहे तो सामाजिक यथार्थता को वस्तुनिष्ठ रूप में समझ सकता है। अनेक समाजशास्त्रियों के वस्तुनिष्ठ अध्ययनों के आधार पर ही ऐसे सिद्धान्तों का निर्माण किया गया है जिनकी प्रकृति काफी सीमा तक सार्वभौम है।

3.8 शब्दावली

वस्तुनिष्ठता – वस्तुनिष्ठता से अभिप्राय यथार्थता को तटस्थ एवं तर्क के आधार पर समझने का प्रयास है। ऐसे अध्ययनों में शोधकर्ता के मूल्य अध्ययन को प्रभावित नहीं करते हैं।

व्यक्तिनिष्ठता – व्यक्तिनिष्ठता से अभिप्राय पक्षपातपूर्वक किए गए अध्ययनों से है। जिन शोधों में शोधकर्ता के मूल्य अध्ययनरत समस्या को प्रभावित करते हैं, उस शोध को व्यक्तिनिष्ठ शोध कहा जाता है।

आनुभविक शोध – आनुभविक शोध ऐसा शोध है जो शोधकर्ता को प्राथमिक सामग्री के संकलन हेतु अध्ययन–क्षेत्र में जाने हेतु आवश्यक मानता है। अध्ययन–क्षेत्र में जो सामग्री संकलित की जाती है उसे प्राथमिक सामग्री कहते हैं तथा वह अधिक विश्वसनीय होती है।

वैज्ञानिक पद्धति – वैज्ञानिक पद्धति से अभिप्राय अध्ययन की उस पद्धति से है जिसमें परीक्षण, सत्यापन, वर्गीकरण, पूर्वानुमान आदि पर बल दिया जाता है। विज्ञान की परिभाषा वैज्ञानिक पद्धति के रूप में ही दी जाती है जो विज्ञानों में एक–समान है।

3.9 अभ्यास प्रश्न

13. वस्तुनिष्ठता एवं व्यक्तिनिष्ठता की अवधारणाएँ स्पष्ट कीजिए।
14. वस्तुनिष्ठता किसे कहते हैं? सामाजिक शोध में इसकी आवश्यकता की विवेचना कीजिए।
15. वस्तुनिष्ठता को परिभाषित कीजिए। सामाजिक शोध में वस्तुनिष्ठता को बनाए रखने के उपायों की विवेचना कीजिए।
16. क्या सामाजिक शोध में वस्तुनिष्ठता बनाए रखी जा सकती है? तर्क दीजिए।
17. सामाजिक शोध में वस्तुनिष्ठता की समस्या पर एक लेख लिखिए।

3.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची

A. W. Green (1964), **Sociology : An Analysis of Life in Modern Society**, *McGraw-Hill* Book Company, New York.

Emile Durkheim (1982), **The Rules of Sociological Method**, The Free Press, New York.

G. A. Lundberg (1947), **Sociology**, Oxford University Press, New York.

H. P. Fairchild (1944), **Dictionary of Sociology** (ed.), Philosophical Library, New York.

Lowell J. Carr (1955), **Analytical Sociology : Social Situations and Social Problems**, Harper and Brothers, New York.

Max Weber (1949), **The Methodology of Social Sciences**, The Free Press, New York.

इकाई 4 सामाजिक शोध में नैतिकता
Ethics in Social Research

इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य
4.1 प्रस्तावना
4.2 नैतिकता की अवधारणा का स्पष्टीकरण : अर्थ एवं परिभाषाएँ
4.3 सामाजिक शोध में नैतिक मुद्दे
4.4 शोध में नैतिक मुद्दों की दृष्टि से रखी जाने वाले सावधानियाँ
4.5 सारांश
4.6 शब्दावली
4.7 अभ्यास प्रश्न
4.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची

4.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई में सामाजिक शोध में नैतिक मुद्दों को समझाने का प्रयास किया गया है। आशा है कि इस इकाई को पढ़ने के बाद, आप :

- नैतिकता की अवधारणा को समझ पाएँगे;
- सामाजिक शोध में पाए जाने वाले प्रमुख नैतिक मुद्दों की व्याख्या कर पाएँगे; तथा
- सामाजिक शोध में नैतिकता बनाए रखने के उपायों अथवा सावधानियों को स्पष्टतया समझ पाएँगे।

4.1 प्रस्तावना

नैतिक मुद्दों का सम्बन्ध नीतिशास्त्र (Ethics) से है। इसे परमशुद्ध विज्ञान माना जाता है। इसमें मनुष्य के कर्त्तव्यों एवं अकर्त्तव्यों पर विचार किया जाता है। इसे 'चरित्र का विज्ञान' भी कहा जाता है क्योंकि यह उचित और अनुचित में भेद दिखलाता है। नीतिशास्त्र नैतिक निष्कर्षों की सत्यता से सम्बन्धित है। नैतिक निर्णयों में मनुष्य के सामने अनेक विकल्प होते हैं। इन विकल्पों में तर्क के द्वारा स्पष्टीकरण करने की आवश्यकता होती है। इसीलिए यह माना जाता है कि नैतिक निर्णयों पर पहुँचने के लिए तर्कशास्त्र का ज्ञान भी आवश्यक है। वास्तव में, तर्कशास्त्र एवं नीतिशास्त्र दोनों ही दर्शनशास्त्र की प्रमुख शाखाएँ हैं। सभी समूहों, पेशों (Professions) एवं व्यक्तियों को व्यवहार की एक ऐसी सामाजिक, धार्मिक तथा नागरिक संहिता को अपनाना होता है, जो सही (उचित) समझी जाती है। इसी दृष्टि से यह कहा जाता है कि सभी व्यक्तियों अथवा संगठनों को ऐसे विकल्पों का चयन करना होता है जिनका सही (नैतिक) अथवा गलत (अनैतिक) रूप में मूल्यांकन किया जा सके। शोध की सम्पूर्ण प्रक्रिया इसमें कोई अपवाद नहीं है क्योंकि इसके प्रत्येक सोपान (चरण) में नैतिकता या अनैतिक मुद्दे सामने आते हैं। शोधकर्ता से यह आशा की जाती है कि वह केवल नैतिक मुद्दों को ही महत्त्व प्रदान करे तथा जहाँ तक सम्भव हो सके किसी भी अनैतिक निर्णय या कार्य से बचें।

4.2 नैतिकता की अवधारणा का स्पष्टीकरण : अर्थ एवं परिभाषाएँ

मानव को सामाजिक प्राणी होने के नाते कुछ सामाजिक मर्यादाओं का पालन करना पड़ता है। समाज की इन मर्यादाओं में सत्य, अहिंसा, परोपकार, विनम्रता एवं सच्चरित्र आदि अनेक गुण सम्मिलित होते हैं। इन गुणों को यदि हम सामूहिक रूप से एक नाम देना चाहे तो ये सब नैतिकता के अन्तर्गत

आ जाते है। नैतिकता एक ऐसा व्यापक शब्द है जिसमें समाज की लगभग सभी मर्यादाओं का पालन हो जाता है। अत: सामाजिक व्यवस्था के लिए नैतिकता का सर्वाधिक महत्त्व है। नैतिकता ज्ञान की वह शाखा है जो नैतिक नियमों या संहिताओं से सम्बन्धित होती है। यही नैतिक नियम व्यक्ति के व्यवहार अथवा किसी क्रिया (जिसमें शोध भी सम्मिलित है) का संचालन करते हैं। इसे हम मानव व्यवहार के नैतिक मूल्यों अथवा व्यवहार को संचालित करने वाले नियमों का दर्शनशास्त्रीय अध्ययन भी कह सकते हैं।

प्रत्येक समाज में मनुष्य द्वारा कुछ ऐसे कार्य किए जाते हैं, जिनकी प्रशंसा होती है और कुछ कार्य ऐसे होते हैं, जिनके करने पर वह समाज में घृणा का पात्र बन जाता है। हमारे सामाजिक जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में कुछ आदर्श और कुछ निषेध होते हैं। इनका निर्धारण व्यक्ति और समाज के हित को ध्यान में रखकर किया जाता है। उदाहरण के लिए–सत्य बोलना चाहिए, बड़ों का आदर करना चाहिए, असहायों की सहायता करनी चाहिए, चोरी नहीं करनी चाहिए, किसी को सताना नहीं चाहिए आदि–आदि। इन आदर्शों और निषेधों का मूल उद्देश्य व्यक्ति के चरित्र और आचरण का इस प्रकार निर्माण करना है, जिससे कि समाज में शान्ति और व्यवस्था की स्थापना उचित ढंग से हो सके। नैतिकता मानव–जीवन का मार्गदर्शन करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

नैतिकता (नैतिक आदर्श) या नैतिक संहिता (Moral code) का अनुमोदन (Sanction) किसी बाह्य शक्ति द्वारा नहीं किया जाता, वरन् इसके पीछे समाज की शक्ति का हाथ रहता है, जो समाज में कुरीतियों का दमन करती है। सामान्यतया वे नियम ही नैतिक आदर्श कहलाते हैं, जो हमारे चरित्र व आचरणों से सम्बन्धित होते हैं और जिनके पीछे व्यक्तियों के अन्त:करण व सामाजिक शक्तियों की अभिमति होती है अर्थात् इनके साथ समाज का अनुमोदन जुड़ा होता है। नैतिकता शब्द की उत्पत्ति संस्कृत भाषा की 'नी' धातु से हुई है जिसका तात्पर्य मार्गदर्शन करना होता है। समाज की मान्यताओं के अनुकूल कार्य करना नैतिक माना जाता है, जबकि उनके विपरीत कार्य करना अनैतिक माना जाता है। ऐसा भी माना जाता है कि नैतिकता शब्द की व्युत्पत्ति लैटिन भाषा के 'Moralis' शब्द से हुई है जिसका अर्थ 'तौर–तरीका' या 'चाल–चलन' (Manner), 'चरित्र' (Character) अथवा 'उचित व्यवहार' (Proper behaviour) है।

नैतिक आदर्शों अथवा कर्त्तव्यों के रूप में नैतिकता को निम्न प्रकार से परिभाषित किया गया है–

मैकाइवर एवं **पेज** (MacIver and Page) के अनुसार–''नैतिकता (नैतिक आदर्श) नियमों की वह व्यवस्था है, जिसके द्वारा व्यक्ति का अन्तःकरण उसे उचित और अनुचित का बोध कराता है।'' इन विद्वानों के मतानुसार धर्म एवं नैतिकता घनिष्ठ रूप में एक–दूसरे में गुँथे हुए हैं तथा इन दोनों में केवल निर्देशों की सत्ता एवं अनुमोदन के आधार पर ही भेद किया जा सकता है। धर्म नैतिक शिक्षा का उपदेश देता है तथा धर्म द्वारा अनुमोदित नियम नैतिक संहिताएँ कहे जाते हैं। इसीलिए कोई संहिता धार्मिक एवं नैतिक दोनों रूपों में स्वीकृत हो सकती है।

जिसबर्ट (Gisbert) के अनुसार–''नैतिक नियम, नियमों की वह व्यवस्था है जो अच्छे और बुरे से सम्बद्ध है तथा जिसका अनुभव अन्तरात्मा द्वारा होता है।'' उन्होंने जटिल मानवीय क्रियाओं में सामाजिक एवं नैतिक मुद्दों को परस्पर घनिष्ठ रूप में सम्बन्धित माना है। जिसबर्ट ने नीतिशास्त्र एवं समाजशास्त्र में पारस्परिक सहयोग को महत्त्व प्रदान करने की वकालत की है।

डेविस (Davis) ने लिखा है–''नैतिकता कर्त्तव्य की वह आन्तरिक भावना है जिसमें उचित–अनुचित का विचार सन्निहित हो।'' उचित–अनुचित का निर्धारण सांस्कृतिक मूल्यों के आधार पर होता है। इसीलिए प्रत्येक समाज की मूल्य व्यवस्था नैतिकता, धर्म, प्रथाओं, परम्पराओं, विश्वासों जैसे अन्य पहलुओं से घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित होती है।

उपर्युक्त विचारों से स्पष्ट है कि नैतिकता द्वारा हमारे आचरण का मूल्यांकन होता है। जो आचरण नैतिक नियमों के अनुसार होते हैं, उसे नैतिक आचरण कहा जाता है और जो इन नियमों के विरुद्ध होता है उन्हें अनैतिक आचरण कहा जाता है।

उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर नैतिकता की निम्नलिखित प्रमुख विशेषताएँ स्पष्ट होती हैं–

(1) नैतिक नियम सम्पूर्ण समुदाय द्वारा स्वीकृत होते हैं; अर्थात् नैतिकता की प्रकृति सामुदायिक होती है।

(2) सामान्य रूप से नैतिकता में तर्कों की प्रधानता पायी जाती है; अर्थात् नैतिकता का तार्किकता से गहरा सम्बन्ध होता है।

(3) नैतिकता का सम्बन्ध स्वयं समाज से होता है। जिसे समाज अनुचित मानता है, वही अनैतिक भी माना जाता है।

(4) नैतिकता एक परिवर्तनशील संकल्पना है, क्योंकि समय एवं स्थान के अनुसार इसमें परिवर्तन होता रहता है।

(5) नैतिकता का पालन व्यक्ति द्वारा स्वेच्छा से किया जाता है।

(6) नैतिकता का सम्बन्ध व्यक्तियों के चरित्र से होता है।

(7) नैतिकता का सम्बन्ध समाज में पाये जाने वाले मान्य सामाजिक मूल्यों से भी होता है। इसीलिए यह माना जाता है कि नैतिकता के पीछे समाज की शक्ति निहित होती है।

(8) नैतिकता मुख्य रूप से सत्यता, ईमानदारी और पवित्रता की भावना जैसे मूल्यों पर आधारित होती है।

धर्म और नैतिकता में इतना घनिष्ठ सम्बन्ध है कि इनमें बहुधा अन्तर करना भी कठिन हो जाता है। **बेन्जामिन** (Benjamin) तथा **लेविस** (Lewis) के अनुसार धर्म की सहायता के अभाव में नैतिक आदर्श न तो पूर्ण हो सकते हैं और न ही सफल। **हक्सले** (Huxley) और **हरबर्ट स्पेन्सर** (Herbert Spencer) का भी यही विचार है। उनके अनुसार नैतिक आदर्श तब तक अपनी पूर्णता को नहीं प्राप्त कर सकते जब तक कि उन्हें धर्म की विशेष अभिसमितियों द्वारा अलग नहीं कर लिया जाए।

यह सत्य है कि धर्म और नैतिकता एक–दूसरे के परस्पर निकट प्रतीत होते हैं; परन्तु अनेक अवसरों पर धर्म और नैतिकता में परस्पर संघर्ष भी होता आया है और आज भी हो रहा है। धर्म का स्वरूप रूढ़िवादी है, जबकि नैतिकता की प्रकृति प्रगतिशील होती है। जब समाज में परिवर्तन आता है तो नैतिकता में भी परिवर्तन आने लगता है, जिसके परिणामस्वरूप धर्म और नैतिकता में संघर्ष छिड़ जाता है। वैज्ञानिक प्रगति और तकनीकी विकास के परिणामस्वरूप धर्म की अपेक्षा नैतिकता को अधिक महत्त्व दिया जाने लगा है। अन्य शब्दों में, नैतिकता धर्म को पीछे धकेलती जा रही है। शोषण और दुरुख के विषय में धर्म का विचार है कि यह ईश्वरीय देन है, परन्तु नैतिकता के अनुसार किसी का शोषण करना और उसे दुःख पहुँचाना अनुचित है। हमारे देश में धर्म और नैतिकता के मध्य संघर्ष के अनेक उदाहरण मिलते हैं। विवाह–विच्छेद, सन्तति–निरोध, विधवा–पुनर्विवाह आदि के विरुद्ध धर्म ने अनेक बाधाएँ खड़ी की हुई हैं। एक समय था जबकि स्त्रियों का सती होना हिन्दू धर्म के अनुसार अनिवार्य था, परन्तु नैतिकता की दृष्टि से यह गलत था। इस कारण ही अनेक समाज सुधारकों ने इस धार्मिक कृत्य के विरुद्ध आवाज उठाई। इसी प्रकार अस्पृश्यता को भी धर्म उचित मानता रहा है और उसके बनाए रखने पर बल देता आया है, परन्तु वर्तमान नैतिक दृष्टिकोण इसे पूर्णतया अनुचित ठहरा चुका है।

संक्षेप में, धर्म और नैतिकता के मध्य संघर्ष का मूल कारण धर्म का अन्धविश्वासी और रूढ़ियुक्त होना है। इसके विपरीत, नैतिकता तर्क और विवेक से युक्त है। यह सत्य है कि शिक्षा और सभ्यता के

प्रसार के साथ धर्म ने अपने स्वरूप को पर्याप्त सुधारने का प्रयास किया है, परन्तु अभी भी यह पूर्णतया विवेक पर आधारित नहीं हो पाया है।

4.3 सामाजिक शोध में नैतिक मुद्दे

सामाजिक शोध में नैतिक मुद्दों का सम्बन्ध शोधकर्ता के नैतिक कर्त्तव्यों से है। अन्य शब्दों में हम कह सकते हैं कि इन मुद्दों का सम्बन्ध इस प्रश्न से है कि सामाजिक शोध करते समय शोधकर्ता के लिए क्या उचित है अथवा ऐसी कौन–सी बातें हैं जिनसे उसे बचने की आवश्यकता है। उसे इस बात का ध्यान रखना है कि उसने जिन सूचनादाताओं पर शोध किया है, उनके प्रति उसके कुछ नैतिक कर्त्तव्य हैं। इन नैतिक कर्त्तव्यों को अनदेखा नहीं किया जा सकता। चूँकि शोध का सम्बन्ध व्यक्तियों से है, अतः इसमें कुछ नैतिक मानकों (Ethical standards) का पालन करना अनिवार्य है ताकि अध्ययन हेतु चयनित व्यक्तियों (सूचनादाताओं) को कोई नुकसान न हो। चिकित्सा विज्ञान सम्बन्धी शोध में यह नुकसान अत्यन्त गम्भीर परिणामों वाला हो सकता है क्योंकि यह किसी सूचनादाता या रोगी की मृत्यु तक में प्रतिफलित हो सकता है। इसीलिए सभी देशों में चिकित्सा विज्ञान के व्यावसायिक संगठन (Professional organizations) चिकित्सकों के व्यवहार हेतु नैतिक नियम निर्धारित करते हैं। चिकित्सक को इन नियमों का पालन न करने पर इस संगठन द्वारा उसकी व्यावसायिक सेवाओं पर प्रतिबन्ध भी लगाया जा सकता है।

अमेरिका जैसे देशों में चिकित्सा विज्ञान के समानन्तर समाजशास्त्र जैसे विषय में भी अमेरिकी समाजशास्त्रीय संघ (American sociological association) द्वारा सामाजिक शोध हेतु आचार संहिता (Code of ethics) निर्धारित की गई है। इस आचार संहिता में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण नैतिक दिशा–निर्देश शोध की गोपनीयता और विश्वसनीयता (Privacy and confidentiality) से सम्बन्धित है। शोधकर्ता को अपने सूचनादाताओं के सन्दर्भ में इसे बनाए रखना आवश्यक है। क्षेत्राधारित सर्वेक्षणों में सूचनादाताओं के बारे में गुमनामी (Anonymity) इसी सन्दर्भ में रखी जाती है।

शोधकर्ता द्वारा गोपनीयता एवं विश्वसनीयता कितनी महत्त्वपूर्ण होती है, इसके लिए **मेरियो ब्राजुहा** (Mario Brajuha) नामक शोधकर्ता का उदाहरण दिया जा सकता है। ब्राजुहा सहभागी अवलोकन द्वारा एक रेस्तरां वेटर (Restaurant waiter) के रूप में न्यूयॉर्क के लाँग उपद्वीप में अपना शोध कर रहा था। दुर्भाग्यवश उस रेस्तरां में आग लग गई। पुलिस को आगजनी एवं लूटपाट का शक हुआ तथा उसने दो गवाहों के कानूनी बचाव हेतु ब्राजुहा से उसके फील्ड नोट्स की मांग की। जब उसने इन्हें देने से मना कर दिया तो पुलिस ने उसे जेल में भेज देने तक की धमकी दी। ब्राजुहा ने तब भी इनकार कर दिया तथा अन्ततः दो वर्ष बाद शिकायतकर्ता की मृत्यु पर यह मामला अदालत द्वारा बन्द कर दिया गया (Brajuha and Hallowell, 1986)।

एक अन्य उदाहरण में **रिक स्कार्स** (Rik Scarce) नामक ग्रेजुएट छात्र, जो कि कट्टरपंथी पर्यावरणविदों का अध्ययन कर रहा था, ने विश्वविद्यालय की प्रयोगशाला में कट्टरपंथियों द्वारा तोड़–फोड़ के पश्चात् न्यायालय में इनके बारे में संकलित तथ्यों से सम्बन्धित फील्ड नोट्स देने से इनकार कर दिया। स्कार्स को इसके लिए न्यायालय की अवमानना के दोष में छह महीने के लिए जेल में रहना पड़ा (Monaghan, 1993)।

तीसरा उदाहरण समाजशास्त्रियों में अन्यन्त वाद–विवाद का विषय रहा है। **लॉड हमफ्रेज** (Laud Humphreys) ने सार्वजनिक शौचालयों में पुरुष समलैंगिक सेक्स का अध्ययन किया। उसने अपने इस शोध में दो पुरुषों द्वारा सेक्स के कृत्य को करते हुए बाहर से देखा। उसने इन दोनों के लाइसेंस प्लेट पर लिखे नामों के आधार पर उनके घर का पता प्राप्त कर लिया। एक वर्ष पश्चात् उसने छद्मवेश (Disguised) अर्थात् अपने को शोधकर्ता न बताकर उन दोनों का उनके घर पर जाकर साक्षात्कार किया। अनेक समाजशास्त्रियों एवं अन्य पर्यवेक्षकों ने हमफ्रेज की अपने सूचनादाताओं की

गोपनीयता भंग करने के लिए आलोचना की। हमफ्रेज ने यह तर्क दिया कि उसने दोनों के वास्तविक नाम उजागर नहीं किए हैं तथा उनका शौचालय में किया गया यह कृत्य गोपनीय नहीं था क्योंकि यह सार्वजनिक स्थान पर किया गया था (Humphreys, 1975)।

सामाजिक शोध में एक अन्य मुद्दा सहमति (Consent) से सम्बन्धित है। अमेरिका में यह परम्परा है कि शोध हेतु चयनित सूचनादाता को सूचित स्वीकृति हेतु एक फॉर्म पर हस्ताक्षर करने होते हैं। इस फॉर्म पर शोध के उद्देश्य तथा सूचनादाता होने के नाते उसके सम्भावित खतरों का वर्णन होता है। यदि शोधकर्ता नाबालिगों पर अध्ययन कर रहा होता है, तो उसे उनके संरक्षकों से सहमति लेनी अनिवार्य है। यद्यपि सूचित सहमति वास्तविक शोध हेतु एक आवश्यकता है, तथापि इस सहमति से सम्बन्धित अनेक नैतिक मुद्दे हैं। एक बार सहमति पर हस्ताक्षर कर देने के पश्चात् सूचनादाता उत्तर देने हेतु विवश हो जाते हैं तथा न चाहते हुए भी वे इससे इनकार नहीं कर सकते। कई बार सूचनादाताओं को शोध में सम्मिलित होने हेतु पुरस्कार के रूप में 5 से 20 डॉलर भी दिए जाते हैं। यह अनैतिक एवं सूचनादाताओं पर शोध में सहयोग देने हेतु अनुचित दबाव नहीं तो और क्या है? बन्दियों के अनेक अध्ययनों में ऐसे नैतिक मुद्दे सामने आए हैं।

उपर्युक्त उदाहरणों से यह स्पष्ट हो जाता है कि किसी शोध को नैतिकता की दृष्टि से न्यायोचित मानना सदैव इतना सरल नहीं है। इसलिए अमेरिका जैसे देशों में महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों में ऐसी समितियों का निर्माण किया गया है जो शोध प्ररचनाओं एवं प्रस्तावों का मूल्यांकन कर यह सुनिश्चित करती हैं कि संघीय दिशा निर्देशों (Federal guidelines) का पालन हो रहा है कि नहीं। यह सुनिश्चित करने के बाद ही उस प्ररचना या प्रस्ताव को स्वीकृत किया जाता है। खेद का विषय यह है कि भारत जैसे देश में शोध में नैतिकता बनाए रखने सम्बन्धी न तो राष्ट्रीय स्तर पर और न ही स्थानीय स्तर पर कोई विशेष ध्यान दिया जाता है। इसीलिए भारतीय विश्वविद्यालयों में हो रहे शोध की गुणवत्ता पर समय–समय पर प्रश्नचिह्न लगाए जाते रहे हैं।

नान लिन (Nan Lin) ने प्रतिवेदन लिखते समय शोधकर्ता के जिन दायित्वों का उल्लेख किया है उनमें नैतिक उत्तरदायित्व को प्रमुख स्थान दिया है। उनका कहना है कि शोधकर्ता को प्रतिवेदन तैयार करते समय अपने नैतिक उत्तरदायित्व को ध्यान में रखना चाहिए जिसमें दो बातें प्रमुख हैं–सूचनादाताओं एवं सहयोगियों का संरक्षण तथा वास्तविक एवं पूर्ण सूचना।

मुख्य रूप से सामाजिक शोध में निम्नलिखित मुद्दों को प्रमुख माना जाता है–

(1) सूचित स्वीकृति–शोधकर्ता का सर्वप्रथम यह नैतिक कर्त्तव्य है कि वह सूचनादाताओं को शोध से सम्बन्धित पूरी जानकारी उपलब्ध कराए। उसे सूचनादाता को सूचित करना होता है कि इस शोध के क्या उद्देश्य हैं, उत्तरदाताओं को क्या लाभ हो सकता है तथा सूचना देने में उन्हें किस प्रकार के खतरों का सामना करना पड़ सकता है। अधिकांश विद्वान् इस सूचित स्वीकृति (Informed consent) को नैतिक मुद्दा मानते हैं। यदि सामग्री (आँकड़ों) का संकलन प्रश्नावली से किया जा रहा है, तो सहगामी पत्र में इन सबका उल्लेख होना अत्यन्त अनिवार्य है। यदि सूचनादाता के मन में शोध के बारे में किसी प्रकार का सन्देह होगा तो वह निश्चित रूप से सूचना देने में आनाकानी करेगा अथवा भ्रमित करने वाली सूचना देगा।

(2) विश्वसनीयता–शोधकर्ता का नैतिक कर्त्तव्य है कि किसी भी सूचनादाता द्वारा दी गई व्यक्तिगत सूचना को उसके नाम से सार्वजनिक न करे। शोधकर्ता को इस विश्वसनीयता (Confidentiality) के बारे में अति सचेत रहना चाहिए। सूचनादाता को पूरी तरह से यह विश्वस्त कर दिया जाना चाहिए कि उसके द्वारा दी गई सूचना केवल शोध कार्य हेतु ही प्रयोग में लायी जाएगी तथा इसको किसी अन्य उद्देश्य के लिए सूचनादाता के नाम से प्रयोग में नहीं लाया जाएगा।

(3) गोपनीयता–सामाजिक शोध में एक प्रमुख नैतिक मुद्दा गोपनीयता (Privacy) से सम्बन्धित है। वास्तव में, यह मुद्दा विश्वसनीयता से जुड़ा हुआ है। सूचनादाताओं द्वारा दी गई सूचनाओं को गोपनीय रखना शोधकर्ता का नैतिक कर्त्तव्य है। इन्हें सार्वजनिक करने में सूचनादाताओं का नुकसान हो सकता है। उदाहरणार्थ–यदि कोई शोधकर्ता समलिंगियों अथवा घरेलू हिंसा से पीड़ित महिलाओं पर शोध कर रहा है, तो सूचनादाता की पहचान बताना अनैतिकता माना जाएगा। कोई भी समलिंगी यह नहीं चाहेगा कि किसी अन्य को यह पता चले कि वह समलिंगी है। इसी भाँति, कोई भी महिला यह नहीं चाहेगी कि उसके पड़ोसियों अथवा मौहल्ले के अन्य लोगों या रिश्ते–नातेदारों को इसका पता चले। यदि शोधकर्ता वैयक्तिक अध्ययन (Case study) द्वारा अपनी समस्या को स्पष्ट करने का प्रयास कर रहा है, तो उसे समलिंगियों अथवा घरेलू हिंसा से ग्रसित महिलाओं का उल्लेख काल्पनिक नाम से करना होता है। उनके वास्तविक नाम उजागर करना उनकी बदनामी का कारण हो सकते हैं।

(4) शारीरिक या मानसिक कष्ट–शोधकर्ता को सूचनादाताओं को शारीरिक या मानसिक कष्ट (Physical or mental distress) देने से बचना चाहिए। यह उसका नैतिक कर्त्तव्य है कि उसके द्वारा पूछे जाने वाले प्रश्नों से सूचनादाताओं को किसी प्रकार का मानसिक कष्ट न हो। इसीलिए यह कहा जाता है कि साक्षात्कार के समय अथवा साक्षात्कार अनुसूची में सम्मिलित प्रश्नों को पूछते समय शोधकर्ता को बड़ी सावधानी रखनी चाहिए। उसका यह निरन्तर प्रयास होना चाहिए कि सूचनादाता में किसी प्रकार की हीन भावना विकसित न हो। यह शोधकर्ता का नैतिक कर्त्तव्य है कि वह सूचनादाताओं से स्वयं सम्पर्क करे। कई बार ऐसा भी होता है कि अनेक बार जाने पर सूचनादाता गन्तव्य स्थान पर नहीं मिलता है। शोधकर्ता को सदैव यह सोचना चाहिए कि सूचनादाता उसके अधीन कार्य करने वाले कर्मचारी नहीं हैं। अतः उनसे समय लेकर उनसे मिलने में किसी प्रकार का संकोच नहीं करना चाहिए।

(5) प्रायोजित शोध–यदि शोध प्रायोजित (Sponsored) है तो इसका प्रायोजक शोध के निष्कर्षों को अपने हितों की पूर्ति हेतु तोड़–मरोड़कर प्रस्तुत करता है। इसीलिए शोधकर्ता को प्रायोजक से इस सम्बन्ध में अनुबन्ध करना चाहिए तथा यदि सम्भव हो तो सूचनादाताओं को शोध के प्रायोजक का पता नहीं चलना चाहिए। चुनावों के समय परिणाम आने से पहले जो सर्वेक्षण टेलीविजन पर अनेक चैनलों द्वारा दर्शाए जाते हैं, उन पर बहुधा प्रायोजित होने का आरोप लगाया जाता है। जिस दल को वे आगे दिखाते हैं उसके विरोधी दल यह कहने में संकोच नहीं करते कि यह कार्य किसी विशेष राजनीतिक दल ने पैसे देकर करवाया है। 2017 के प्रारम्भ में उत्तर प्रदेश एवं उत्तराखण्ड में भारतीय जनता पार्टी की जीत के बारे में जितने भी ओपिनियन पोल आए थे, उन पर समाजवादी पार्टी, बहुजन समाज पार्टी तथा कांग्रेस ने प्रायोजित होने का आरोप लगाया था। चुनाव के परिणाम आने पर भारतीय जनता पार्टी की जीत का सभी को पता चल गया, चाहे उन्हें सीटें अनुमान से कहीं अधिक मिली थी।

(6) वैज्ञानिक कदाचार एवं धोखा–शोधकर्ता का यह नैतिक कर्त्तव्य है कि वह संकलित सामग्री को किसी प्रकार से तोड़–मरोड़कर प्रस्तुत न करे। न तो उसे इस मामले में किसी प्रकार की लापरवाही करनी चाहिए और न ही पक्षपातपूर्ण सामग्री प्रस्तुत करनी चाहिए। इससे बचने हेतु अध्ययन के निष्कर्षों की जाँच हेतु शोध की पुनरावृत्ति एवं सहयोगियों की राय लिया जाना अनिवार्य है। वैज्ञानिक कदाचार एवं धोखा (Scientific misconduct and fraud) एक ऐसी अनैतिकता है जिससे शोधकर्ता को सदैव बचना चाहिए। यदि ऐसा नहीं होता है तो अन्य लोगों द्वारा किए गए शोधों के आधार पर कदाचार एवं धोखे से सम्बन्धित वास्तविकता सामने आ सकती है।

(7) वैज्ञानिक समर्थन–शोधकर्ता को शोध करते समय एवं प्रतिवेदन तैयार करते समय मूल्य–निरपेक्ष होना चाहिए। **मैक्स वेबर** जैसे समाजशास्त्रियों ने अपने पद्धतिशास्त्र में मूल्य–निरपेक्षता को प्रमुख स्थान दिया है। उन्होंने ज्ञान के निर्माण पर बल दिया न कि उसे व्यवहार में लागू करने पर। इसके विपरीत, **कार्ल मार्क्स** का कहना है कि शोधकर्ता को दलितों एवं गरीबों के विजेता (Champion)

के रूप में अपना कार्य करना चाहिए। शोध से इन वंचित वर्गों को किसी प्रकार का नुकसान नहीं होना चाहिए। इसी सन्दर्भ में **एल्विन गोल्डनर** ने रचनात्मक शोध की बात कही है। वस्तुतः आधुनिक युग में वैज्ञानिक समर्थन (Scientific advocacy) का होना किसी भी शोध के लिए अनिवार्य माना जाता है।

(8) अतिसंवेदनशील वर्गों का बचाव–शोधकर्ता को अतिसंवेदनशील वर्गों का ध्यान रखना चाहिए। शोध से सम्बन्धित किसी भी कार्य में उन पर कोई दबाव या जोर–जबरदस्ती नहीं की जानी चाहिए। अतिसंवेदनशील वर्गों (Protecting vulnerable clients) में इसका बहुत बुरा प्रभाव पड़ सकता है। जितने भी अध्ययन मद्यपान तथा मादक द्रव्य व्यसन के प्रयोग पर हुए हैं, उनमें शोधकर्ता का यह प्रयास रहा है कि अध्ययन में सम्मिलित सूचनादाताओं के हितों को किसी प्रकार का नुकसान न पहुँचे। ऐसे ही युवा वर्ग को अतिसंवेदनशील माना जाता है। इसलिए इस वर्ग से सम्बन्धित किए जाने वाले शोध में सावधानी रखी जानी आवश्यक है। युवा वर्ग में एड्स जैसे रोगों की जानकारी हेतु जब शोध के निष्कर्ष बताए जाते हैं, तो इस बात का ध्यान रखा जाना चाहिए कि एड्स के कारण उनमें सेक्स के बारे में उत्सुकता पैदा न हो। एड्स के कारणों की जानकारी हेतु भी शब्दों का चयन बड़ी सावधानीपूर्वक किया जाना चाहिए।

(9) शोध के उद्देश्यों हेतु उपचार को स्थगित रखना–शोध के निष्कर्षों को किसी भी उपचार हेतु प्रयोग में लाने से पहले इस बारे में आश्वस्त होना अनिवार्य है कि निष्कर्ष विश्वसनीय हैं। यदि निष्कर्षों के बारे में थोड़ा–बहुत भी सन्देह है तो इन्हें उपचार हेतु स्थगित रखा जाना चाहिए। चिकित्सा सम्बन्धी विज्ञान में होने वाले शोध में थोड़ा–सा भी सन्देह होने पर शोध के उद्देश्यों हेतु उपचार को स्थगित रखना (Withholding treatment for research purposes) एक परम नैतिक कर्तव्य माना जाता है। चिकित्सा विज्ञान में कोई भी अविश्वसनीय कार्य रोगियों के जीवन के लिए खतरा पैदा कर सकता है।

4.4 शोध में नैतिक मुद्दों की दृष्टि से रखी जाने वाले सावधानियाँ

सामाजिक शोध में नैतिकता को बनाए रखना अत्यन्त आवश्यक है। इस दृष्टि से प्रत्येक शोध में निम्नलिखित सावधानियाँ रखी जानी आवश्यक मानी जाती हैं–

(1) ईमानदारी–वैज्ञानिक शोध में ईमानदारी (Honesty) बनाए रखने का प्रयास करना चाहिए। सामग्री, परिणामों, पद्धतियों, कार्य–प्रणालियों एवं प्रकाशन स्थिति का ईमानदारी से उल्लेख किया जाना चाहिए। सामग्री का जाली एवं असत्य निर्माण नहीं करना चाहिए और न ही इसे मिथ्या अर्थ में प्रस्तुत करना चाहिए। अपने सहयोगियों, शोध प्रायोजकों एवं जनता को धोखा देने से बचना चाहिए।

(2) वस्तुनिष्ठता–शोध में सामग्री के विष्लेशण, व्याख्या (निर्वचन), मूल्यांकन, वैयक्तिक निर्णयों सम्बन्धी पक्षपात से बचना चाहिए। आत्म–प्रतारणा (Self-deception) से बचना चाहिए अथवा इसे कम–से–कम रखने का प्रयास करना चाहिए। शोध को प्रभावित करने वाले व्यक्तिगत एवं वित्तीय हितों की स्पष्ट रूप में घोषणा करनी चाहिए। ऐसा करने से शोध में वस्तुनिष्ठता (Objectivity) आती है।

(3) अखण्डता–शोध से सम्बन्धित किए गए अपने वादों एवं अनुबन्धों का पालन करना चाहिए। ईमानदारी के साथ शोध कार्य करना चाहिए तथा विचारों एवं कार्यों की स्थिरता हेतु सदैव प्रयासरत रहना चाहिए। इससे शोध की अखण्डता (Integrity) सुनिश्चित होती है।

(4) सर्तकता–शोध में की जाने वाली लापरवाह त्रुटियों एवं असावधानियों से बचना चाहिए, अपने एवं अपने सहयोगियों के कार्यों का समीक्षात्मक परीक्षण करना चाहिए, सम्पूर्ण शोध प्रक्रिया का ठीक प्रकार से रिकॉर्ड रखना चाहिए अर्थात् सामग्री संकलन, शोध प्ररचना तथा एजेंसियों या जर्नलों से पत्राचार सुरक्षित रखना चाहिए। इससे शोध में सतर्कता (Carefulness) बनी रहती है।

(5) खुलापन–सामग्री, परिणामों, विचारों, यन्त्रों (प्रविधियों), संसाधनों को अन्य लोगों के साथ साझा करके शोध में खुलापन (Openness) बनाए रखना चाहिए। साथ ही शोधकर्ता को अपनी आलोचना एवं नवीन विचारों हेतु तैयार रहना चाहिए।

(6) बौद्धिक सम्पदा का सम्मान–शोधकर्ता को लाइसेंस (पेटेण्ट) एवं सर्वाधिकार (कॉपीराइट) का आदर करना चाहिए। बिना अनुमति के अप्रकाशित सामग्री पद्धतियों अथवा परिणामों का प्रयोग नहीं करना चाहिए। अन्य विद्वानों की शोध में प्रयुक्त सामग्री को सदैव आदर सहित अभिस्वीकृति दी जानी चाहिए तथा सामग्री को दूसरों के ग्रन्थों से चोरी नहीं करना चाहिए।

(7) गोपनीयता–शोधकर्ता को प्रकाशित कराने अथवा ग्राण्ट प्राप्ति हेतु भेजे गए शोधपत्रों, व्यक्तिगत रिकॉर्ड, व्यापार एवं सैन्य राज (Military secrets) तथा सूचनादाताओं के रिकॉर्डो की गोपनीयता (Confidentiality) को बनाए रखना चाहिए।

(8) उत्तरदायी प्रकाशन–शोध का प्रकाशन केवल अपने स्वयं के कैरियर को आगे बढ़ाने के साथ–साथ ज्ञान के प्रचार–प्रसार हेतु भी किया जाना चाहिए। शोध को व्यर्थ तथा किसी रूप में बार–बार एक ही बात कहने हेतु प्रकाशित करने से बचना चाहिए। अन्य शब्दों में उत्तरदायी प्रकाशन (Responsible publication) को ही प्राथमिकता दी जानी चाहिए।

(9) अनुभवी परामर्शदाता–शोध का प्रशिक्षण देने वाले अध्यापकों एवं विशेषज्ञों को छात्रों को शोध की बारीकियाँ समझाते समय अनुभवी परामर्शदाता (Responsible mentoring) के रूप में कार्य करना चाहिए। उनकी भलाई का ध्यान रखना तथा उन्हें सही निर्णय लेने का प्रशिक्षण देना आवश्यक है। साथ ही अपने छात्रों एवं सहयोगियों के प्रति गैर–भेदभाव (Non-discrimination) की भावना होनी चाहिए।

(10) सामाजिक उत्तरदायित्व–शोध द्वारा सामाजिक अच्छाई का प्रचार–प्रसार तथा सामाजिक बुराइयों को समाप्त करने का प्रयास करना चाहिए। शोधकर्ता में अपने विषय तथा समाज के मानकों के प्रति सामाजिक उत्तरदायित्व (Social responsibility) होना आवश्यक है।

ग्रेट ब्रिटेन में आर्थिक एवं सामाजिक शोध परिषद् (Economic and Social Research Council) ने 2015 में शोध नैतिकता के लिए फ्रेमवर्क (Framework for Research Ethics) प्रकाशित किया है। यह परिषद् शोध हेतु एक अग्रणी एवं महत्त्वपूर्ण संस्थान है। इस फ्रेमवर्क में निम्नलिखित छह दिशानिर्देशों को सम्मिलित किया गया है–

(1) शोध का आयोजन, मूल्यांकन एवं प्रारम्भ अखण्डता, गुणवत्ता तथा पारदर्शिता सुनिश्चित करने हेतु होना चाहिए।

(2) शोध में सम्मिलित कर्मचारियों एवं प्रतिभागियों को सामान्यतः शोध के उद्देश्यों, पद्धतियों एवं इसके सम्भावित प्रयोग के बारे में पूर्ण जानकारी होनी चाहिए। इसमें प्रतिभागिता के खतरों के बारे में भी उन्हें पता होना चाहिए।

(3) शोध प्रतिभागियों द्वारा दी गई सूचनाओं की गोपनीयता तथा प्रतिभागियों की गुमनामी (नाम को गुप्त रखना) को सुनिश्चित रखा जाना चाहिए।

(4) शोध प्रतिभागियों (सूचनादाताओं) को शोध में बिना किसी दबाव एवं लालच के स्वेच्छा से भाग लेना चाहिए।

(5) सदैव शोध प्रतिभागियों के हितों की रक्षा की जानी चाहिए तथा यह ध्यान रखा जाना चाहिए कि उन्हें किसी भी रूप में नुकसान न हो।

(6) शोध की स्वायत्तता सुस्पष्ट होनी चाहिए तथा यदि हितों में किसी प्रकार टकराव है तो वह स्पष्ट होना चाहिए।

इस परिषद् के अनुसार शोध में नैतिकता बनाए रखना शोधकर्ता तथा उसके संस्थान का उत्तरदायित्व है। शोध संस्थान/संगठन को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि उपर्युक्त दिशानिर्देशों का पालन हो रहा है या नहीं। दिशानिर्देशों का पालन होने की स्थिति में ही शोध प्ररचना अथवा प्रस्ताव का अनुमोदन किया जाना चाहिए।

भारत में भी अनेक कृषि विश्वविद्यालयों ने शोध की गुणवत्ता एवं नैतिकता को बनाए रखने को शोध समितियों का गठन किया है। इन समितियों के माध्यम से ही सभी शोध एवं शोध पत्र अन्तिम रूप से अनुमोदित होते हैं। यह तथ्य ध्यान देने योग्य है कि कृषि विश्वविद्यालयों का गठन अमेरिकी पद्धति पर आधारित है तथा इनमें शिक्षण के साथ–साथ विस्तार एवं शोध को अत्यधिक महत्त्व दिया जाता है। आवश्यकता इस बात की है कि सभी विश्वविद्यालयों को शोध की गुणवत्ता एवं नैतिकता हेतु ऐसी शोध समितियों का गठन करना चाहिए।

4.5 सारांश

शोध की सम्पूर्ण प्रक्रिया ऊपर से जितनी सरल दिखाई देती है, वास्तव में यह उतनी ही जटिल है। इसके प्रत्येक सोपान (चरण) में वस्तुनिष्ठता–व्यक्तिनिष्ठता, नैतिकता–अनैतिकता, वैज्ञानिकता–अवैज्ञानिकता, स्वहित–समाज के हित सम्बन्धी अनेक मुद्दों का सामना करना पड़ता है। आधुनिक युग में चिकित्सा विज्ञान में हो रहे शोध की भाँति समाजशास्त्र सहित अन्य सामाजिक विज्ञानों में भी इन मुद्दों की ओर काफी ध्यान दिया जाने लगा है। समाजशास्त्र में शोध में नैतिकता का सम्बन्ध शोध की आचार संहिता को अपनाने से है। शोध में गोपनीयता, विश्वसनीयता, सूचित सहमति आदि को लेकर कुछ निर्णय लेने आवश्यक हैं जिससे शोध के प्रतिभागियों के हितों को किसी प्रकार का नुकसान न हो। अनेक देशों में प्रत्येक विषय में उससे सम्बन्धित व्यावसायिक संगठनों द्वारा शोध में नैतिकता बनाए रखने हेतु दिशानिर्देश प्रतिपादित किए गए हैं। इससे न केवल शोध की गुणवत्ता बनी रहती है अपितु अनैतिकता भी कम–से–कम होती है। आशा है कि पाठ्य–सामग्री के अध्ययन के पश्चात् आप शोध में नैतिक मुद्दों की दृष्टि से रखी जाने वाली सावधानियों को समझ गए होंगे।

4.6 शब्दावली

नैतिकता – नैतिकता (नैतिक आदर्श) नियमों की वह व्यवस्था है जो अच्छे और बुरे से सम्बद्ध है तथा जिसका अनुभव अन्तरात्मा द्वारा होता है।

सूचित स्वीकृति – सूचनादाताओं को शोध से सम्बन्धित पूरी जानकारी उपलब्ध कराकर उनकी शोध में सहभागिता सुनिश्चित करने को सूचित स्वीकृति कहा जाता है।

विश्वसनीयता – इससे अभिप्राय सूचनादाता को पूरी तरह से यह विश्वस्त करने से है कि उसके द्वारा दी गई सूचना केवल शोध कार्य हेतु ही प्रयोग में लायी जाएगी तथा इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए सूचनादाता के नाम से प्रयोग में नहीं लाया जाएगा।

गोपनीयता – नैतिकता की दृष्टि से इससे अभिप्राय शोधकर्ता द्वारा सूचनादाताओं द्वारा दी गई सूचनाओं को गोपनीय रखने से है।

4.7 अभ्यास प्रश्न

18. नैतिकता किसे कहते हैं? सामाजिक शोध के प्रमुख नैतिक मुद्दों की विवेचना कीजिए।
19. नैतिकता को परिभाषित कीजिए तथा सामाजिक शोध में गोपनीयता और विश्वसनीयता सम्बन्धी नैतिक मुद्दों को उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिए।

20. सामाजिक शोध के प्रमुख नैतिक मुद्दों पर एक विस्तृत लेख लिखिए।
21. सामाजिक शोध में नैतिक मुद्दों की दृष्टि से रखी जाने वाली प्रमुख सावधानियों का उल्लेख कीजिए।
22. नैतिकता की अवधारणा पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।
23. सामाजिक शोध में नैतिकता की क्या आवश्यकता है? इसे बनाए रखने के प्रमुख उपयों की संक्षिप्त विवेचना कीजिए।

4.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची

J. H. Jones (1981), ***Bad Blood : The Tuskegee Syphilis Experiment,*** Free Press, New York.

Kingsley Davis (1949), **Human Society**, The Macmillan Company, New York.

L. Humphreys (1975), ***Teamroom Trade : Impersonal Sex in Public Places,*** Aldine, Chicago, IL.

M. Brajuha and L. Hallowell (1986), Legal Intrusion and the Politics of Fieldwork : The Impact of the Brajuha Case, ***Urban Life,*** *Vol. 14,* pp. 454–478.

P. Gisbert (1989), **Fundamentals of Sociology**, Orient Longman, Bombay.

P. Monaghan (1993), Sociologist is jailed for refusing to testify about research subject, ***Chronicle of Higher Education,*** *Vol. 39,* P. 10.

R. M. MacIver and C. H. Page (1962), **Society : An Introductory Analysis**, Holt, Rinehart and Winston, New York.

इकाई -5 अनुसंधान समस्या का निर्माण
Formulation of Research Problem

इकाई की रूपरेखा

5.0 इकाई के उद्देश्य
5.1 प्रस्तावना
5.2 अनुसंधान समस्या का चुनाव एवं प्रतिपादन
5.3 अनुसंधान की प्रकृति
5.4 कार्यकारी परिभाषा एवं वैज्ञानिक शब्दावली
5.5 अवधारणाएं
5.6 परिकल्पनाएँ
5.7 चर
5.8 सारांश
5.9 शब्दावली
5.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
5.11 सहायकउपयोगी पाठ्य सामग्री/
5.12 निबंधात्मक प्रश्न

5.0 इकाई का उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद, आप :

- अनुसन्धान या शोध समस्या किसे कहते है यह जान सकेंगे|
- अनुसन्धान या शोध समस्या का चुनाव किस प्रकार किया जाता है का अध्ययन कर सकेंगे |
- अनुसन्धान या शोध समस्या के चुनाव एवं इसके प्रतिपादन में शोध के क्रम की व्याख्या कर सकेंगे |
- अनुसन्धान या शोध समस्या के चरणों के अध्ययन के पश्चात आप शोध समस्या का क्रमवार वर्णन कर सकेंगे |

5.1 प्रस्तावना

किसी भी सामाजिक अनुसन्धान में शोध समस्या के निर्धारण में शोध समस्या का स्पष्ट एवं तर्कसंगत होना नितांत आवश्यक है । शोध समस्या का उचित चयन किसी भी सामाजिक अनुसन्धान की नीव है एवं यहाँ पर यह ध्यान रखना आवश्यक है कि सम्पूर्ण शोध,चरण बद्ध तरीके से एवं सामाजिक शोध के प्रमाणिकता के आधार पर ही सम्पादिक किया जाये तभी यह सामाजिक अनुसन्धान की परिधि में आता है । जब एक बार शोध समस्या का स्पष्ट रूप से निर्धारण हो जाता है तभी उसे स्पष्ट अनुसन्धान की समस्या के रूप में परिभाषित किया जा सकता है । शोध समस्या को एक कथन के रूप में स्पष्ट करने के लिये शोध के चरण को भालिभांति समझना अत्यन आवश्यक है ।

शोध समस्या के चरणों को स्पष्ट रूप से समझने के लिये इसका क्रमबद्ध अध्ययन किया जाना आवश्यक है,क्योंकि सामाजिक अनुसन्धान में शोध समस्या के चयन में वह तार्किकता ,क्रमबद्धता एवं

गुणात्मकता होना अत्यंत आवश्यक है । जिस विषय या शोध समस्या पर आपके द्वारा शोध किया जाना है । अतः शोध समस्या का चुनाव ही शोध की आधारशिला है । शोध समस्या क्या है इसका विवरणात्मक लेखा जोखा ही हमें परिकल्पना निर्माण में मदद करता है यदि समस्या पर गौर किया जाये तो यह प्रश्नवाचक रूप में हमारे सामने आती है कि समस्या का स्वरुप क्या है एवं दो या दो से अधिक चारों के मध्य किस प्रकार का या क्या सम्बन्ध है । समस्या के चुनाव में और इसके प्रतिपादन में जो विवरण प्रस्तुत किया जाना होता उस कार्य हेतु हमें एक सुव्यवस्थित रूपरेखा का निर्माण करना होता है । इस अध्ययय में हम आगे रूपरेखा निर्माण की प्रक्रिया से अवगत होंगे ।

5. 2 अनुसंधान समस्या का चुनाव एवं प्रतिपादन

यहाँ पर हम शोध समस्या के निर्धारण की प्रक्रिया से अवगत होंगे एवं इसके साथ–साथ शोध के चरणों के विषय में भी ज्ञान प्राप्त करेंगे जिसका विवरण निम्नवत है–

ए आइन्स्टीन तथा एन एनफैल्ड के अनुसार,''समस्या का प्रतिवादन प्रायः इसके समाधान से आवश्यक है।''

समस्या के चुनाव के साथ समस्या से सम्बन्धित अवधारणाओं, परिभाषाओं,वाक्य विन्यासों और परिकल्पनाओं का विवरण प्रस्तुत किया जाना आवश्यक है । सामाजिक अनुसन्धान में शीर्षकों के चुनाव का क्षेत्र उतना ही व्यापक है जितना कि सामाजिक व्यवहार का इसलिए अनुसन्धान का विषय तर्कसंगत होना अत्यंत आवश्यक है । एक सामाजिक अनुसन्धानकर्ता को व्यक्तित्व एवं पर्यावरण दोनों का ही ज्ञान होना नितांत आवश्यक है ।

शोध समस्या निर्माण के चरणों का विवरण निम्नवत है –

1- समस्या का कथन

2- समस्या की प्रकृति

3- उपलब्ध साहित्य का पुर्नावलोकन

इस प्रकार से किसी अनुसन्धान हेतु समस्या के चयन में विचारों को एकत्रित करने के अनेक श्रोत हैं । जैसे लिखित उपलब्ध सामग्री ,व्यक्तियों के अनुभव ,व्यक्तिगत बातचीत,तथ्य ,मूल्य एवं सिद्धांत ,शोध ग्रन्थ, शोध विषय से सम्बन्धित विभिन्न पत्र–पत्रिकाओं को शामिल किया जाता है । इसके साथ ही यह भी ध्यान रखा जाना आवश्यक है कि जो व्यक्ति या अनुसन्धानकर्ता अनुसन्धान करने जा रहा है उसका व्यक्तित्व एवं वहाँ का पर्यावरण से सम्बन्धित कारक भी अनुसन्धान पर प्रभाव डालते है । क्योंकि अनुसंधानकर्ता के अपने निजी मूल्य विश्वास मनोव्रतियाँ एवं अभिरुचियां होती है और फिर एक अनुसन्धान कार्य बहुत ही धैर्य,परिश्रम,द्रढता की आवशयकता होती है जब अनुसंधानकर्ता द्वारा चुना गया विषय उसके अपनी रूचि का एवं उसके व्यक्तित्व को मेल खाता हुआ होता है तो अधिक उचित होता है इसी को संदर्भित करते हुए वाईटहेड ने स्पष्ट किया है कि –

''गुण सम्बन्धी निर्णय भौतिक विज्ञानों की विषयवस्तु के अंग नहीं है किन्तु वे इसकी उत्पत्ति की प्रेरणा के अंग है'' , अन्वेषण के लिए वैज्ञानिक क्षेत्रों के अंशों का चेतन चुनाव किया जाता है और इस चेतन चुनाव में मूल्यों के निर्णय सम्मिलित हैं।''

इस प्रकार से अनुसन्धान समस्या या अनुसन्धान शीर्षक के चुनाव के दौरान कुछ प्रश्नों के उत्तर खोजना अत्यंत आवश्यक है जैसे –

१. उक्त अनुसन्धान विषय पर क्या पूर्व में भी कोई कार्य किया गया है ,यदि किया गया है तो उसका लिखित दस्तावेज उपलब्ध है क्या ,और क्या शोधकर्ता ने उसका अध्ययन किया है ।

२. उक्त अनुसन्धान की उपयोगिता क्या होगी ।

३. उक्त अनुसन्धान का शीर्षक अनुसन्धान योग्य है या नहीं ।
४. क्या उक्त अनुसन्धान समाज के लिये उपयोगी होगा ।
५. इस कार्य में अनुसन्धान किया गया विषय समाज विरोधी तो नहीं है । क्योंकि ऐसा है तो विरोध का सामना भी किया जा सकता है ।

इस प्रकार से अनुसन्धान के कुछ अंगभूत इस प्रकार से हो सकते है –
१. अनुसन्धान में कौन लोग सम्मिलित होंगे एवं इसका विस्तार क्षेत्र क्या होगा ।
२. अनुसन्धान के उद्देश्य क्या है ?
३. अनुसन्धान के उद्देश्यों की पूर्ति हेतु साधन क्या उपलब्ध है ।
४. वह पर्यावरण जिससे अनुसन्धान सम्बन्धित है (प्रत्यक्ष एवं अपत्यक्ष रूप से सम्मलित लोग)

5.3अनुसंधान की प्रकृति

इस प्रकार से उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए यह जांचना आवश्यक है कि अनुसन्धान की प्रकृति क्या है, अर्थात आपके द्वारा किया जाने वाला अनुसन्धान व्यावहारिक होगा ,विशुद्ध होगा अथवा यह क्रिया शोध पर आधारित होगा । इसमें आपकी प्राथमिकताएं क्या होंगी एवं क्या यह समस्या का स्पष्ट प्रस्तुतीकरण करने में सक्षम होगा और समस्या की खोज में मददगार साबित होगा अथवा नहीं यहाँ यह भी ध्यान रखने योग्य है कि इन उद्देश्यों की पूर्ति हेतु स्पष्ट ,तर्कसंगत एवं सम्पूर्ण सुचना को प्रश्नावली या अनुसूची में समाहित किया जाना अत्यंत आवश्यक है । शोध समस्या के उचित प्रतिपादन हेतु क्रमबद्ध अध्ययन में क्रमशःप्रथमता आपके द्वारा चुने गये विषय या शीर्षक में समस्या का स्पष्ट प्रत्यक्षीकरण होना आवश्यक है अर्थात समस्या का उचित रूप में और स्पष्ट ढंग से स्पष्टीकरण होना चाहिए । इसके साथ समस्या की प्रकृति समस्या क्षेत्र का परिसीमन (परिसीमन उतना ही हो जितना कार्य शोध कर्ता द्वारा सफलतापूर्वक सम्हाला जा सके)समस्या से सम्बन्धित मान्यताओं एवं उप्कल्पनाओं का स्पष्ट एवं विस्तृत वर्णन होना चाहिए । समस्या के बाद में उससे सम्बन्धित सभी पहलुओं का स्पष्ट चित्रण किया जाना चाहिए ।

जहोडा एवं अन्य द्वारा स्पष्ट शब्दों में यह लिखा गया है कि –
"प्रतिपादन प्रक्रिया के दौरान अनुसंधान कार्यरीति में बाद में आने वाले चरणों की आशा किए जाने की आवश्यकता है ताकि यह आश्वासन प्रदान किया जा सके कि समस्या का प्रतिपादन ऐसे ढंग से किया गया है । जिसके साथ कार्य उपलब्ध प्रविधियों के साथ किया जा सकता हे। यह आशा वैज्ञानिक तथा प्रायोगिक चरणों से सम्बन्धित है। सर्व प्रमुख बात यह है कि समाज वैज्ञानिक को अपने मस्तिष्क में यह बात सदैव रखनी चाहिए कि प्रदिपादन कभी भी समाप्त न होने वाली प्रक्रिया है जो पूछतांछ के सभी चरणों में व्याप्त होती है।"

शोध समस्या के प्रतिपादन से पूर्व शोध कर्ता को कुछ प्रश्न अपने आप में स्पष्ट जरुर करना चाहिए जैसे–शोध समस्या के विषय में उसकी जानकारी कितनी है एवं इन जानकारियों के श्रोत क्या हैं । उपलब्ध जानकारी की पृष्ठभूमि क्या है । इसकी सम्पूर्ण जानकारी होना जरुरी है । धन,समय एवं प्रयासों की जानकारी के साथ स्पष्ट जानकारी होनी चाहिए । उक्त तथ्यों के मार्गदर्शन के श्रोत क्या है । उपकल्पनाओं के प्रयोग हेतु अवधारणायें,चारों एवं प्रायोगिक द्रष्टिकोणोँ की उपयुक्त एवं स्पष्ट परिभाषा प्रस्तुत की जानी चाहिए ।

5.4 कार्यकारी परिभाषा एवं वैज्ञानिक शब्दावली

कार्यकारी परिभाषा एवं वैज्ञानिक शब्दावली के प्रयोग की अनिवार्यता होनी चाहिए । अनुसन्धान की समस्या उपकल्पना के रूप में हो या अन्वेश्नातामक अथवा विवरणात्मक रूप में पर उसकी वैज्ञानिक शब्दावली का वर्णन किया जाना आवश्यक है । इसके साथ ही कार्यकारी परिभाषा जो आपके कार्य को पूर्ण करने में स्पष्टता प्रदान की जायेगी का वर्णन किया जाना चाहिए । क्योंकि प्रत्येक विज्ञान अपने शब्दों एवं अवधारणाओं को विकास के परिणामों से अवगत करने हेतु ही इसका विकास कर्ता है

एफ डब्ल्यू वेस्टावे ने लिखा हैः–

"शब्द कोष की स्थूल कार्यकारी परिभाषाएं केवल शब्दों के अर्थ पर कुछ प्रकाश डालती है किन्तु जब शब्दों का वास्तविक प्रयोग बलपूर्ण कथनों में किया जाता है तो इनकी अनिश्चितता संदेह को उत्पन्न करती है।"

5.5 अवधारणाएं

अवधारणा को साधारण रूप से इस प्रकार समझ सकते है कि यह समान्यता भाववाचक अभिव्यक्ति है जिसमे अवधारणाएँ प्रमुख रूप से तथ्यों द्वारा व्यक्त की जाने वाली घटनाओं का संकेतिकरण होता है । लैबोविज तथा हेजडार्न के अनुसार ''एक अवधारणा ऐसा शब्द अथवा संकेत है जो अन्यथा विभिन्न प्रकार की घटनाओं में समानता का प्रतिनिधित्व करता हे। उदाहरणार्थ, यद्यपि मनुष्य अपने अनेक वैयक्तिक लक्षणों में भिन्न होते हैं किन्तु सभी को कुछ जैविक विशेषताओं में समानता के आधार पर स्तनधारी की श्रेणी मे वर्गीकृत किया जा सकता है।'' अवधारणायें वैज्ञानिक उपयोग के साथ मानवीय क्रिया संचार हेतु भी आवश्यक है।

5.6 परिकल्पना/ उपकल्पना

परिकल्पना अथवा उपकल्पना को दो या दो से अधिक चारों के बीच अनुमानित संबंधों के तथ्यों के स्पष्टीकरण के रूप में समझ सकते है। अनुसंधानकर्ता द्वारा जब किसी समस्या अथवा विषय का चयन किया जाता है तो वह एक कार्यकारी परिभाषा का निर्माण करता है जिसको वह एक आस्थाई आधार के रूप में प्रयोग करता है ,जिसको एक आधे स्तंभ मानकर वह कार्य को आगे बढाता है । यह परिकल्पना बाद में जाँच के पश्चात स्पष्ट होती है कि यह सही थी अथवा गलत द्ययह शोध के आरंभ में एक प्रस्तावित जाँच होती है जिसको परिक्षण के पश्चात स्पष्ट किया जाता है ।इसका आधार संदर्भित विषय से संबंधिय शोधकर्ता का ज्ञान होता है जो उपकल्पना का आधार स्तंभ होता है। इस सन्दर्भ ये इसकी अर्थात परिकल्पना की जाँच किया जाना आवश्यक होता है एवं शोधकर्ता द्वरा बनायीं गई। उपकल्पना उसके द्वारा चुने गये अध्ययन के विषय से सम्संबंधित होनी चाहिय द्यपरिकल्पना तर्कपूर्ण होनी चाहिए एवं मितव्ययी होनी चाहिए द्यपरिकल्पना आपके द्वारा प्रयोग किये जा रहे सिद्धांतों एवं तथ्यो से मेल खाती होनी चाहिए तभी आपका शोध विषय के तरफ उन्मुख होगी क्योंकि उदाहरण के तौर पर यदि आप सामाजिक विज्ञान के अंतर्गत शोध कर रहे है तो निश्चित रूप से उसी से सम्बन्धित सिद्धांतों का प्रयोग करेंगे और उसी से सम्बन्धित समस्या के हल की उर उन्मुख होगें अतः यह ध्यान दिया जाना चाहिए की उपकल्पना विषय से इतर नहीं निर्मित की जानी चाहिए । एक परिकल्पना को अवधारणात्मक रूप में प्रस्तुत किया जाना चाहिए ,एवं यह वस्तुनिष्ट होनी चाहिए । परिकल्पनाओं के निर्माण में जैसा कि पहले ही कहा गया है की उस विषय से सम्बन्धित ज्ञान ही आधार है उसी को ध्यान में रखते हुए परिकल्पना निर्माण हेतु कुछ सहायक तथ्यों का वर्णन किया जा रहा है इसमें शोधकर्ता के व्यक्तिगत अनुभव , सम्बन्धित विषय में पूर्व में किये

गये शोध के परिणाम,शोध प्रपत्र ,पुस्तकों ,विषय विशेषज्ञ के अनुभव एवं मत इत्यादि का सहारा लिया जाता है ।

5.7 चर

चर को साधारण शब्दों में एक अवधारणा के परिमाण के पहलू के रूप में समझा जा सकता है । जो एक इकाई अथवा एक समय में एक से अधित इकाईयों के विभिन्न समयों में एक से अधिक मान ग्रहण करता हैद्य पुरुष और महिला के जैविक विभिन्नता एवं भार में अंतर इत्यादि ,एक के गुण – दोष दूसरे से भिन्न है । चर दो प्रकार के होते है स्वतंत्र चर एवं आश्रित चर । आश्रित चर वह है जिसके विषय में भविष्यवाणी की जाती है वही स्वतंत्र चर वह है जो भविष्यवाणी करता हैद्य ये परिवर्तनशील एवं सक्रिय चर कहलाते है । वे चर जिनकी परिभाषा की जा सके वे निर्धारित चर कहलाते है । एक बार प्रयोग में लाए जाने वाले चरों की परिभाषा हो जाने के पश्चात यह निर्णय लिया जाता है कि चरों को स्थिर रखते हुए या परिवर्तित करते हुए कार्य किया जाना है तो यह परिवर्तन किस सीमा तक किया जायेगा द्ययहाँ यह ध्यान दिया जाना आवश्यक है कि अनुसन्धान की उपकल्पना एवं शोध अध्ययन के उद्देश्य एवं उस परिस्थिति पर निर्भर करता है जिसपर समस्या का प्रतिपादन किया जाता है द्यउदाहरण के तौर पर यह कहा जा सकता है कि समस्या जितनी विशिष्ट एवं अपरिवर्तनशील परिस्थिति के लिये खोजी जानी है तो चरों को एक विशिष्ट मूल्य पर स्थिर रखा जायेगा और समस्या जितनी ही सामान्य होगी उतने अधिक चरों में और उतनी ही अधिक सीमा में परिवर्तन करने पड़ेंगे ।

इस प्रकार से शोध समस्या के निर्धारण हेतु उपरोक्त स्तरों से होकर गुजरना होता है तब एक शोध समस्या का निर्माण होता है जिसपर पुनः शोध किया जाना संभव होता है ।
शोध प्रक्रिया के चरणों का अध्ययन करने हेतु यहाँ पर इसके चरणों का संछिप्त विवरण प्रस्तुत किया जा रहा है ।

१. शोध समस्या का निर्माण / समस्या का कथन
२. उपलब्ध साहित्य का पुनरावलोकन
३. उपकल्पना अथवा परिकल्पना का निर्माण
४. अध्ययन के उद्देश्य
५. शोध अध्ययन की प्ररचना
६. शोध अध्ययन की प्रकृति एवं विषय क्षेत्र
७. अध्ययन का समग्र एवं निदर्श
८. निदर्शन की विधि
६. आंकड़ों के संग्रह की विधि
१०. आंकड़ों के संग्रह के प्राथमिक एवं द्वितीयक श्रोत
११. प्राप्त आंकड़ों का विष्लेशण
१२. परिकल्पना की जाँच
१३. सामान्यीकरण एवं व्याख्या करना
१४. प्रतिवेदन तैयार करना
१५. सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

5.8 सारांश

किसी भी सामाजिक शोध से तात्पर्य यह होता है कि पुनः अनुसन्धान के माध्यम से शोध करके उन तथ्यों को उजागर करना जिनको आपने अपनी शोध समस्या के लिये चुना है । समाजिक शोध को साधारण अर्थों में इस प्रकार से समझ सकते है कि मनुष्य एक जिज्ञासु प्राणी है वह अपने आस पास के वातावरण को समझने हेतु तो तरीकों का प्रयोग कर्ता है या तो वह नियंत्रित पूछताछ कर्ता है या आनियांत्रित रूप से तथ्यों का संकलन कर जानकारी प्राप्त करता है,जब वह अनियंत्रित रूप से पूछताछ कर जानकारी इकठ्ठा करता है तो इसे सामान्य ज्ञान की श्रेणी में रखते है परन्तु जब वह पूछताछ एक विशेष दिशा में अनुसन्धान की पद्धति का प्रयोग करते हुई की जाये तो इसे अनुसन्धान की श्रेणी में रखते है क्योंकि इसमें सब कुछ अनुसन्धान की पद्धति के अनुरूप होता है और इससे प्राप्त ज्ञान सामाजिक अनुसन्धान द्वारा प्राप्त शोध के सार के रूप में परिलक्षित होता है । सामाजिक शोध को करने के लिये जो प्रथम बात सामने आती है वह है शोध समस्या का चयन इस पर ही समस्त शोध का केंद्र बिदु टिका होता है अतः शोध समस्या के चयन में कुछ निर्धारित मानदंडों के आधार पर शोध समस्या का प्रतिपादन किया जाता है । इस अध्याय में आपने यह जाना कि शोध समस्या का निर्धारण किस प्रकार होता है और इसमें किस प्रकार के प्रयास द्वारा अनुसंधान की शोध समस्या का निर्माण संभव होता है ।

5.9 शब्दावली

- शोध–ज्ञान की खोज में प्रमाणीकृत कार्यरीति
- अवधारणा –दृविभिन्न प्रकार की घटनाओं में समानता का प्रतिनिधित्व
- उपकल्पना– दृकार्यकरण संबंधों का पूर्वानुमान
- चर– अवधारणा के परिमाण का पहलू
- स्वतंत्र चर–भविष्यवाणी करने में सामर्थ्य
- आश्रित चर – जिसके विषय में भविष्यवाणी की जाती है

5.10 अभ्यास प्रश्न(लघु प्रश्न)

१. सामाजिक अनुसन्धान से आप क्या समझते है ?
२. शोध समस्या क्या है ?
३. चर से आप क्या समझतें है ?
४. चर कितने प्रकार के होते है ?
५. परिकल्पना अथवा उपकल्पना से आप क्या समझतें है ?

5. 11सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

१. गुडे एवं हाट १९५२ मेथेड्स ऑफ सोशल रिसर्च मैकग्रा हिल कम्पनी न्यूयार्क-|
२. सरंताकोश एस -सोशल रिसर्च, मैकमिलन -लन्दन -१९९८ |
३. यंग ,पी० वी० -साइंटिफिक सोसिअल सर्वेज एंड रिसर्च इंडियन रिप्रिंटर,फोर्थ प्रिंटिंग प्रेन्टिस हॉल ऑफ इंडिया प्राइवेट लिमिटेड नई दिल्ली १९७७ |
४. सिंह ,सुरेन्द्र -सामाजिक शोध ,उत्तर प्रदेश हिंदी ग्रन्थ अकादमी लखनऊ |

5.12 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री

१. कोठारी की० आर० -रिसर्च मेथोडोलॉजी,मेथोड्स एंड टेक्निक्स २००४ |
२. बी सिक्नर ,दि आपरेशनल एनालिसिस आफ साइकोलोजिकल टर्म्स |

5.13 निबंधात्मक प्रश्न

१. शोध समस्या के निर्धारण के आयामों का वर्णन कीजिए |
२. सामाजिक शोध के चरणों का वर्णन कीजिये |

इकाई -6

वर्णात्मक ,अन्वेषणात्मक, प्रयोगात्मक एवं निदानात्मक शोध प्ररचना

Descriptive, Explanatory, Experimental & Diagnostic Research Design

इकाई की रूपरेखा

6.0 इकाई के उद्देश्य
6.1 प्रस्तावना
6.2 शोध प्ररचना का अर्थ एवं प्रकार एवं प्रमुख अंगभूत
6.3 वर्णात्मक शोध प्ररचना
6.4 अन्वेषणात्मक शोध प्ररचना
6.5 प्रयोगात्मक शोध प्ररचना
6.6 निदानात्मक शोध प्ररचना
6.7 सारांश
6.8 शब्दावली
6.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
6.10 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
6.11 निबंधात्मक प्रश्न

6.0 इकाई के उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप :-

- सामाजिक अनुसन्धान में शोध प्ररचना की अवधारणा को समझ सकेंगे |
- शोध प्ररचना के प्रकारों का अध्ययन कर सकेंगे |
- शोध प्ररचना की उपयोगिता को समझ सकेंगे |
- शोध की प्रकृति के अनुसार शोध प्ररचना का चुनाव करना सीख सकेंगे |

6.1 प्रस्तावना

अनुसन्धान या शोध की प्ररचना को एक ऐसी योजना के रूप में समझ सकते हैं कि इसके अंतर्गत हम पहले से ही समस्या के प्रतिपादन अथवा चुनाव से लेकर अनुसंधान प्रतिवेदन के अंतिम चरण तक के विषय में भलिभांति सोच समझ विचार कर तथा सभी उपलब्ध विकल्पों एवं साधनों को ध्यान में रख कर के इस प्रकार से निर्णय लिये जाते है कि न्यूनतम समय , प्रयासों,लागत एवं व्यय से अनुसन्धान के उद्देश्यों की प्राप्ति प्रभावपूर्णता ढंग से अधिकतम प्राप्त की जा सके | इस प्रकार से किसी शोध की प्ररचना यह तय करती है कि उक्त शोध को आप क्या दिशा देना चाहते है | आप शोध द्वारा समस्या के कारणों की व्याख्या करना चाहते है ,उसका विवरण तैयार करना चाहते है या फिर कोई नया प्रयोग

करना चाहते है अथवा समस्या के निष्पादन को निदान के रूप में प्रस्तुत करना चाहते है |इस अध्याय में हम सामाजिक शोध हेतु प्रयोग की जा रही शोध प्राचनाओं का अध्ययन करेंगे |

6.2 शोध प्ररचना का अर्थ एवं प्रकार एवं प्रमुख अंगभूत

अनुसन्धान को क्रमबद्ध एवं प्रभावपूर्ण ढंग से न्यूनतम प्रयासों ,समय एवं लगत के साथ संचालित करने हेतु प्ररचना का निर्माण आवश्यक है |यधपि किसी भी ढंग के प्रयोग द्वारा अनिश्चितता को पूर्णरूप से समाप्त नहीं किया जा सकता है |किन्तु क्रमबद्ध रूप से वैज्ञानिक ढंग का प्रयोग करते हुए अनिश्चितता के उन तत्वों को कम किया जा सकता है |जो सुचना की कमी के परिणामस्वरुप उत्पन्न होते है|अनुसन्धान के लिये प्रस्तावित् प्रश्नों के लिये विकल्पीय उत्तरों की उपयुक्तता के विषय में निर्णय लेने के लिये आवश्यक परिणामों को संयोग पर् आधारित ढंग का प्रयोग करते हुए न प्राप्त करते हुए क्रमबद्ध रूप से यथासंभव अधिक से अधिक नियन्त्रित ढंग का प्रयोग करते हुए प्राप्त किया जाता है |वास्तव में समस्या प्रतिपादन के अंतर्गत हम सूचना के उन प्रकारों का विशिष्ट विवरण प्रस्तुत करते है जो यह हमें आश्वाशन देते है ,कि प्रस्तावित प्रश्नों के उत्तर प्रदान करने के लिये इच्छित एवं अवशयक प्रमाण उपलब्ध हो जायेगे जबकि अनुसन्धान प्ररचना का निर्माण करते हुए हम आवश्यक एवं इच्छित प्रमाणों के संग्रह में त्रुटियों से यथा संभव बचना तथा प्रयासों ,समय एवं लगत को कम करना चाहते है |

सामाजिक अनुसन्धान के क्षेत्र में प्रमुख लेखकों द्वारा की गई प्ररचना की परिभाषाएं प्रस्तुत हैं :-

- आर० एल० एकाफ० के अनुसार ,'प्ररचित करना नियोजित करना है ,अर्थात प्ररचना उस परिस्थिति के उत्पन्न होने से पूर्व निर्णय लेने की प्रक्रिया है जिसमें निर्णय को लागु किया जाता है |यह एक आशान्वित परिस्थिति को नियंत्रण में लेन की और निर्देशित , जानबूझकर की गई आशा की प्रक्रिया है |"
- क्लेयर सैलिज तथा अन्य के अनुसार,"एक अनुसन्धान की प्ररचना आंकड़ों के संग्रह एवं *विश्लेषण* की शर्तों की ऐसी व्यवस्था है जो अनुसन्धान के उद्देश्यों की संगतता को कर्यरीतियों में बचत के साथ सम्मिलित करने का उद्देश्य रखती है |"
- सैनफोर्ड लैवोविज एंड रोबर्ट हेजडार्न के अनुसार,''एक अनुसन्धान प्ररचना उस तार्किक ढंग को प्रतुत करती है जिसमें व्यक्तियों एवं अन्य इकाईयों की तुलना एवं *विश्लेषण* किया जाता है ,यह आंकड़ों के विवेचन का आधार है |प्ररचना का उद्देश्य ऐसी तुलना का आश्वाशन दिलाना है जो विकल्पीय विवेचना से प्रभावित न हो |''

  सारांश में ,अनुसन्धान प्ररचना वहीँ तक विधितंत्रीय ढंग से प्रारचित होती है जिस सीमा तक यह नियोजित होता है तथा अनुसन्धान सम्बन्धी निर्णय लेने के ढंग के

मूल्यांकन का अवसर प्रदान करती है ,तथा इस ढंग को मूल्यांकन किये जाने योग्य बनाती है |

अनुसन्धान प्रचना के दो मौलिक उद्देश्य होते है :

- ❖ अनुसन्धान प्रश्नों के उत्तर प्रदान करना |
- ❖ प्रसारण को नियन्त्रित करना |

अनुसन्धान प्ररचना के प्रमुख अंगभूत है :-

१. समस्या का प्रतिपादन करना |
२. वर्तमान अनुसन्धान कार्य को समस्या से स्पष्ट रूप से सम्बन्धित करना |
३. वर्तमान अनुसन्धान कार्य की सीमाओं को स्पष्ट रूप से निर्धारित करना |
४. अनुसन्धान के विभिन्न क्षेत्रों का विस्तृत विवरण प्रस्तुत करना |
५. अनुसन्धान परिणामों के प्रयोग के विषय में निर्णय लेना |
६. पर्यवेक्षण , विवरण अथवा परिमापन के लिये उपयोक्त चरों का चुनाव करना तथा उनकी स्पष्ट परिभाषा करना |
७. अध्ययन के क्षेत्र तथा समग्र का उचित चुनाव एवं उनकी परिभाषा प्रस्तुत करना |
८. अध्ययन के प्रकार तथा इसके विषय क्षेत्र के विषय में विस्तृत निर्णय लेना |
९. अध्ययन के लिये उपयुक्त ढंगों एवं प्रविधियों का चुनाव करना |
१०. परिकल्पनाओं को परिचालात्मक स्वरुप प्रदान करते हुए इस प्रकार व्यक्त करना कि इनका उचित परिक्षण किया जा सके |
११. अध्ययन के दस्तावेजी श्रोतों के रूप में उपलब्ध साहित्य का सिंहावलोकन करना |
१२. संगृहीत आंकड़ों के संपादन की विस्तृत व्यवस्था का उल्लेख करना |
१३. आंकड़ों को प्रयोग बनाने हेतु की समुचित व्यवस्था का विकास करना |
१४. पूर्व परिक्षण एवं पाइलेट अध्ययनों का प्रावधान करना |
१५. उत्तरदाताओं के चुनाव एवं प्रशिक्षण के ढंगों एवं कार्यरितियों का उल्लेख करते हुए उन्हें कार्य संतोष का अनुभव करना तथा अनुसन्धान संस्था के साथ सामंजस्य की स्थिति में रखने के लिये कार्य की शर्तों एवं परिस्थितियों को अधिक से अधिक प्रेरणादायक बनाना |

6.3 वर्णात्मक शोध प्ररचना

वर्णनात्मक अनुसंघान का उददेष्य किसी अध्ययन विषयक के बारे में यथार्थ तथा तथ्य एकत्रित करके उन्हें एक विवरण के रूप में प्रस्तुत करना होता है | सामाजिक जीवन के अध्यन से सम्बन्धित अनेक विषय इस तरह होते है जिनका अतीत में कोई गहन अध्ययन प्राप्त नही होता हे ऐसी दषा में यह आवश्यक होता है कि अध्ययन से सम्भंदित समूह समुदाए अथवा विषय के बारे में अधिक से अधिक सूचनाए एकत्रिक करके उन्हें जनसामान्य

के समक्ष प्रस्तुत की जाए ऐसे अध्ययनो के लिये जो अनुसंघान किया जाता है | उसे वर्णनात्मक अनुसंघान कहते है | इस प्रकार के अनुसंघान में किसी पूर्व निर्धारित सामाजिक घटना, सामाजिक परिस्तिथि अथवा सामाजिक समस्या के विभिन्न पक्षों से सम्बन्धित तथ्यों को एकत्रिक करके उनका तार्किक *विश्लेषण* किया जाता है, एवं निष्कर्ष निकाले जाते है | तथ्यों को एकत्रित करने के लिये, प्रश्नावली, साक्षात्कार अथवा अवलोकन आदि किसी भी प्रविधि का प्रयोग किया जा सकता है | ऐसे अनुसंघान को स्पष्ट करने के लिये जनगणना उपक्रम का उदहारण लिया जा सकता है | जनगणना में भारत के विभिन्न प्रान्तों में भिन्न-भिन्न विशेषताओं से युक्त समूहों का संख्यात्मक तथा, आंशिक तौर पर, गुणात्मक विवरण दिया जाता है |

6.3.1वर्णनात्मक अनुसंघान के चरण

1. अध्ययन विषय का चुनाव
2. अनुसंघान के उद्देश्य का निर्धारण
3. तथ्य संकलन की प्रविधियों का निर्धारण
4. निर्दशन का चुनाव
5. तथ्यों का संकलन
6. तथ्यों का *विश्लेषण*
7. प्रतिवेदन को प्रस्तुत करना

6.4 अन्वेषणात्मक शोध प्ररचना

सामाजिक अनुसन्धान के अंतर्गत हम सामान्य नियमों का अन्वेषण करते है | इसके अंतर्गत हम दी गई परिस्थिति की विशेषताओं को व्यक्त करने का प्रयास करते है | इसमें समस्या के विभिन्न कारणों के आशय से सम्बन्धित खोज की जाती है| इस प्रकार के अध्ययन सिर्फ एक विशिष्ट आशय या ढंगों का ही प्रयाग नहीं किया जाता है अपितु इसके अंतर्गत किसी भी ढंग का प्रयोग किया जा सकता है ; जिसमे सर्वेक्षण के उद्देश्यों का प्रतिपादन ,आंकड़ों के संग्रह के लिये उपयुक्त ढंगों के विकास ,प्रतिदर्श के चुनाव ,आंकड़ों के संग्रह एवं संसाधन ,परिणामों के *विश्लेषण* एवं विवेचन और परिणामों के प्रतिवेदन की कार्यरीतियों को भी प्रयोग में लाया जाता है |

इसके अंतर्गत क्रमबद्ध अन्वेषण अथवा प्रतिपादनात्मक अध्ययन किया जाता है |इस प्रकार की प्ररचना का उद्देश्य विशिष्ट क्षेत्र में ऐसे प्रश्नों ,अवधारणाओं एवं परिकल्पनाओं का पता लगाया जाता है जिसका अभी तक विकास नहीं हो पाया है |इस प्रकार के अध्ययन अन्य अध्ययनों को आधार प्रदान करने के सिद्धांतों का विकास करतें है तथा इन्हें अनुभव सर्वेक्षण कहना उपयुक्त है |इसके अंतर्गत अकेले समग्रों के सूक्ष्म सांखिकीय अध्ययन अथवा

एक दिये हुए परिमंडल के अंतर्गत परिकल्पनाओं के विकास के लिये विभिन्न समग्रों की तुलना सम्मिलित है |

इस प्रकार के क्षेत्र अध्ययनों तीन प्रमुख उद्देश्य होते है :-

- क्षेत्र –परिस्थितियों के अंतर्गत महत्वपूर्ण चरों का पता लगाना |
- चरों के सम्बन्ध का पता लगाना |
- आगे चलकर कठोर परिकल्पनाओं के परिक्षण के लिये समुचित आधार तैयार करना |

6.5 प्रयोगात्मक शोध प्ररचना

यह प्ररचना परिकल्पनाओं के परिक्षण से सम्बन्धित है तथा नियंत्रण का तत्व आवश्यक रूप से इसके अंतर्गत पाया जाता है | समाज विज्ञान अनुसन्धान में प्रयोग करना एक क्रिया है| यह वह क्रिया है जिसे हम अनुसन्धान के लिये की गई पूंछ – ताछं कहते है | इस प्रकार से प्रयोग ऐसी परिस्तिथि में की गई पूंछ – ताछं है जिसमें सम्मिलित वस्तुओं एवं घटनाओं को अनुसंधानकर्ता वांछित ढंग से परिवर्तित कर सकता है | समाज विज्ञान अनुसन्धान में प्रयोग करना निश्चित ही पूंछ–ताछं है परतु यहाँ पर यह ध्यान रखने योग्य आवश्यक है कि समाज विज्ञान अनुसन्धान में प्रत्येक पूंछ – ताछं प्रयोग की श्रेणी में नहीं रखी जा सकती है | इस प्रकार से कहा जा सकता है कि सामाजिक अनुसन्धान में पूंछ–ताछं एक नियन्त्रित रूप में की गई खोज है जिसका प्रयोग हम अनुसन्धान की पूर्ति हेतु करते है | नियंत्रण के अंतर्गत एवं हेर फेर एवं परिवर्तन ही प्रयोग कहलाता है |

मेरी जहओदा तथा अन्य के मतानुसार,"अपने सबसे अधिक स्थूल अर्थ में एक प्रयोग को प्रमाण के संग्रह के संगठन के एक ऐसे ढंग में समझा जा सकता है जिससे परिकल्पना की सत्यता के विषय में परिणाम निकलने की अनुमति हो सके |"

एक प्रयोगशाला प्रयोग की आवशयकता यह है कि इसके अंतर्गत नियन्त्रित परिस्थितियों में एक चर् में परिवर्तित करते हुए इन परिवर्तनों के प्रभाव का पर्यवेक्षण आश्रित चर् पर किया जाता है |प्रयोगात्मक परिवर्तन के सम्बन्ध में सदैव ही यह ध्यान रखने योग्य है कि परिवर्तन यथासंभव एस प्रकार किया जाएँ कि उत्तरदाताओं को कृत्रिमता का कम से कम आभास हो |यथासंभव उत्तरदाताओं को प्रयोग के हानिकारक प्रभावों से बचने तथा उन्हें सहयोग प्रदान करने के लिये प्रेरित करने हेतु प्रयास किया जाना चाहिए |

प्रयोगात्मक समूह में अनुसंधानकर्ता परिकल्पना को 'भिन्नता के सिद्धांत' की दृष्टि से देखता है |'भिन्नता के सिद्धांत' का आवश्यक तत्व यह है कि किसी भी कारक को किसी अन्य घटना के कारण के रूप में तब तक नहीं स्वीकार किया जा सकता है जब तक कि यह सिद्ध न हो जाये कि जहाँ कहीं भी यह करक घटित होता है वहीँ यह घटना भी घटित होती है | नियन्त्रित समूह के अंतर्गत परिकल्पना की जाँच 'भिन्नता के सिद्धांत' के आधार पर की जाती है|

6.6 निदानात्मक शोध प्रचना

इस प्रकार के अध्ययनों में प्रायः विवरण प्रतुत करने अथवा निदान करने का प्रयास किया जाता है सामाजिक अनुसन्धान के अंतर्गत हम सामान्य नियमों का अन्वेषण करने के साथ विशिष्ट परिस्थितियों का निदान खोजते है | इसमें हम दी गई परिस्थितियों की विशेषताओं को व्यक्त करने का प्रयास करतें है| निदानात्मक अध्ययन कारणात्मक संबंधों को व्यक्त करने एवं समाजिक क्रिया के लिये विभिन्न आशयों का पता लगाने से सम्बन्धित है| इस प्रकार के अध्ययन एक विशिष्ट ढंग अथवा ढंगों के प्रयोग से ही सम्बन्ध नहीं रखते बल्कि इनके अंतर्गत किसी भी ढंग का प्रयोग किया जा सकता है| यह आम तौर पर् निम्न बिंदुओं पर् कार्य करतें है :-

- सर्वेक्षण के उद्देश्यों के प्रतिपादन में |
- आंकड़ों के संग्रह के लिये उपयुक्त ढंगों के विकास में |
- प्रतिदर्श के चुनाव में |
- आंकड़ों के संग्रह एवं संसाधन में |
- परिणामों के विष्लेशणएवं विवेचन में |
- परिणामों के प्रतिवेदन की कार्यरीतियों के प्रयोग में|

6.7 शब्दावली

१.वर्णात्मक अनुसंधान : वर्णात्मक सामाजिक अनुसंधान में घटना के सम्बन्ध में प्रमाणिक तथ्य एकत्रित करके उनका क्रमबद्ध एवं तार्किक वर्णन करना है।

२.परीक्षणात्मक अनुसंधान : ऐसा अनुसंधान जिसमें नियंत्रित दशाओं के अन्तर्गत मानवीय सम्बन्धों का अध्ययन किया जाता है।

३.अन्वेषणात्मक अनुसंधान : किसी घटना के सम्बन्ध में प्रारम्भिक जानकारी प्राप्त करने हेतु किया गया

४.अनुसंधान : जिससे कि मुख्य अनुसंधान की रूपरेखा एवं उपकल्पना का निर्माण किया जा सके।

५.क्रियात्मक अनुसंधान : समाज की मौजूदा दशाओं को परिवर्तित करने के उद्देश्य से किया गया अनुसंधान चाहे गन्दी बस्ती हो या प्रजातीय तनाव

६.निदानात्मक अनुसन्धान : सामान्य नियमों का अन्वेषण करने के साथ विशिष्ट परिस्थितियों का निदान खोजने की प्रक्रिया

6.8 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

१.सामाजिक अनुसंधान के विभिन्न प्रकारों की चर्चा उदाहरण सहित कीजिये।

२.विशुद्ध एवं व्यावहारिक सामाजिक अनुसंधान की विशेषताओं को समझाइये।

३.अन्वेषणात्मक और वर्णनात्मक सामाजिक अनुसंधान को उदाहरण सहित समझाइये।

४. निदानात्मक अनुसन्धान को परिभाषित कीजिये

५. व्याख्यात्मक अनुसन्धान से क्या समझते है

६. प्रयोगात्मक अनुसन्धान प्ररचना की विशेषताएं बताएं

6.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

१. यंग ,पी० वी० –साइंटिफिक सोसिअल सर्वेज एंड रिसर्च इंडियन रिप्रिंटर,फोर्थ प्रिंटिंग
२. सी.ए. मोजर सर्वे मैथड्स इन सोशल इन्वेस्टीगेशन।
३. आर० एल० एकाफ एदि डिजाईन ऑफ सोशल रिसर्च
४.मेरी जहोदा तथा अन्य एरिसर्च मेथडस् इन सोशल रेलेशंस
५. गुडे एवं हाट-मेथेड्स ऑफ सोशल रिसर्च मैकग्रा हिल कम्पनी न्यूयार्क १९५२ |
६. सरंताकोश एस –सोशल रिसर्च, मैकमिलन -लन्दन -१९९८ |
७.प्रेन्टिस हॉल ऑफ इंडिया प्राइवेट लिमिटेड नई दिल्ली १९७७ |
८.सिंह ,सुरेन्द्र -सामाजिक शोध ,उत्तर प्रदेश हिंदी ग्रन्थ अकादमी लखनऊ |

6.10 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

१. कोठारी की० आर० –रिसर्च मेथोडोलॉजी,मेथोड्स एंड टेक्निक्स २००४ |
२. बी सिक्नर ,दि आपरेशनल एनालिसिस आफ साइकोलोजिकल टर्म्स |

इकाई– 7 तुलनात्मक विश्लेषण या पद्धति
Comparative Analysis in Social Research

7.0 इकाई का उद्देश्य
7.1 प्रस्तावना
7.2 तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण का अर्थ एवं परिभाषा
7.2.1 तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण का प्रयोग
7.2.2 तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण के उपयोग की विधि
7.2.3 तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण की उपयोग से पूर्व आवश्यकतायें
7.2.4 तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण का महत्व
7.2.5 तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण के उपयोग में कठिनाइयॉ
7.3 सारांश
7.4 शब्दावली
7.5 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
7.6 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
7.7 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
7.8 निबंधात्मक प्रश्न

7.0 इकाई का उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप–

1. तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण का अर्थ एवं परिभाषा की जानकारी प्राप्त कर सकेगें।
2. तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण के प्रयोग के बारे में प्रकाश डाल सकेगें।
3. तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण के उपयोग की विधि के बारे में लिख सकेगें।
4. तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण के उपयोग से पूर्व आवश्यकताओं का वर्णन कर सकेगें।
5. तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण के महत्व की व्याख्या कर सकेगें।
6. तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण के उपयोग में आने वाली कठिनाइओं के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेगें।

7.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई आप लोगों को तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण के बारे में ज्ञान प्रदान करेगी। वास्तव में समाज में घटित होने वाली घटनाओं का वैज्ञानिक अध्ययन करना व विश्लेषण करना बहुत ही आवश्यक होता है, जिसके आधार पर ठोस निष्कर्ष निकालना आसान हो जाता है। यह इकाई भी तुलनात्मक पद्धति के आधार पर सामाजिक घटनाओं का विश्लेषण करने के महत्वपूर्ण तरीके के बारे में आपको ज्ञान प्रदान करेगी। वास्तव में सामाजिक घटनाओं के वैज्ञानिक अध्ययन के लिए आज जिन पद्धतियों या

विश्लेषणों को अधिक महत्वपूर्ण माना जाता है, उनमें तुलनात्मक पद्धति या विष्लेशण का एक प्रमुख स्थान है। यह पद्धति इस आधारभूत मान्यता पर आधारित है कि कोई भी सामाजिक घटना स्वयं में पूर्ण या निरपेक्ष नहीं होती बल्कि प्रत्येक सामाजिक घटना अपनी प्रकृति से तुलनात्मक होती है। इसका अर्थ यह है कि दो विभिन्न इकाइयों या घटनाओं की परस्पर तुलना करके ही उनकी वास्तविक प्रकृति को ज्ञात किया जा सकता है। यही कारण है कि आज कोई भी सामाजिक विज्ञान ऐसा नहीं है जिसमें किसी न किसी सीमा तक तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण के द्वारा सामाजिक घटनाओं का अध्ययन न किया जाता हो। वास्तविकता यह है कि हम रोजमर्रा के जीवन में भी विभिन्न सामाजिक तथ्यों के बीच तुलना करके ही एक सामान्य निष्कर्ष निकालने का प्रयत्न करते हैं। जब हम कहते हैं कि वर्तमान युग में हमारे सामाजिक मूल्य बदल रहे हैं, अपराधों की संख्या में वृद्धि हो रही है, तो ऐसा कहते समय हमारा ध्यान वर्तमान सामाजिक दशाओं की अतीत से तुलना करके एक सामान्य निष्कर्ष प्रदान करने का होता है। इसके अलावा दैनिक जीवन में की जाने वाली तुलना एक सामान्य दृष्टिकोण पर आधारित होती है जबकि वैज्ञानिक अध्ययन के एक साधन के रूप में तुलनात्मक पद्धति या विष्लेशणकी प्रकृति अत्यधिक व्यवस्थित है।

7.2 तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण का अर्थ एवं परिभाशा

जब हम विभिन्न सामाजिक घटनाओं के बीच पायी जाने वाली समानताओं या असमानताओं की तुलना करके क्रमबद्ध और व्यवस्थित रूप से कोई सामान्य निष्कर्ष प्रदान करते हैं तो अध्ययन की इस पद्धति को तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण कहते हैं। इसके बाद भी यह ध्यान रखना आवश्यक है कि कुछ सामाजिक घटनाओं को तुलनात्मक रूप से प्रस्तुत कर देना ही तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण नहीं है। यह ऐसी पद्धति है जो विभिन्न सामाजिक तथ्यों की तुलना करने के साथ ही उनकी व्याख्या और विष्लेशणभी करती है। इसी आधार पर **गिन्सबर्ग** ने लिखा है, '' तुलनात्मक पद्धति या विष्लेशणका तात्पर्य केवल कुछ सामाजिक घटनाओं के बीच तुलना करना ही नहीं होता बल्कि तुलना के माध्यम से उसकी व्याख्या करनी होती है।'' इसका अर्थ यह है कि यह पद्धति आधारभूत रूप से तुलनात्मक विधि के द्वारा घटनाओं की व्याख्या में रूचि लेती है। **गिन्सबर्ग** ने आगे लिखा है कि ''शुरूआती दौर में तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण का उपयोग विकासवादी समाजशास्त्रियों द्वारा करने के कारण यह समझाा जाता था कि यह पद्धति विकासवादी उपागम से ही जुड़ी हुई है लेकिन वास्तव में इसकी कार्यविधि विकासवाद से काफी भिन्न है।''

तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण अध्ययन की वह पद्धति है जिसके अन्तर्गत दो या दो से अधिक सामाजिक तथ्यों, इकाइयों या समुदायों को अध्ययन का आधार मानते हुए उनकी एक दूसरे से तुलना की जाती है एवं तुलना के दौरान पायी गयी समान अथवा असमान विशेषताओं के आधार पर सामान्य निष्कर्ष प्रस्तुत किये जाते हैं। यदि इस दृष्टिकोण से देखा जाय तो स्पष्ट होता है कि सामाजिक अध्ययनों में तुलनात्मक पद्धति प्रयोगात्मक पद्धति का ही विकल्प है। सामाजिक घटनाओं को किसी प्रयोग या परीक्षण के लिए पूरी तरह नियंत्रित नहीं किया जा सकता। ऐसी स्थिति में हमारे सामने केवल यही विकल्प रह जाता है कि हम दो सामाजिक तथ्यों के बीच तुलना करके एक सामान्य प्रवृति को ज्ञात करने का प्रयत्न करें। इस आधार पर यह स्पष्ट होता है कि तुलनात्मक पद्धति या विष्लेशणअध्ययन का वह तरीका है जिसमें एक से अधिक सामाजिक घटनाओं के बीच तुलना करके उनका इस प्रकार विष्लेशणऔर व्याख्या है जिसमें एक सामान्य प्रवृति का ज्ञात किया जा सकें।

तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण की परिभाषा विभिन्न विद्वानों ने समय–समय पर प्रस्तुत की है जिनक उल्लेख अग्रलिखित किया जा रहा है जिससे इस पद्धति को समझने में आसानी होगी–

रैडक्लिफ ब्राउन के अनुसार– तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण वह है जिसके द्वारा हम विशिष्ट से सामान्य तक पहुॅचते हैं व जिसमें हम उन विशेषताओं को जान पाये जो सब मानव संस्थानों में विभिन्न रूपों में पाये जाते हैं। इसके अन्तर्गत हम निम्नलिखित का अध्ययन करते हैं–

1. विभिन्न वर्गों मे पाये जाने वाले रीति–रीवाजों का तुलनात्मक अध्ययन।
2. समाज के अन्तर्गत होने वाले परिवर्तनों का अध्ययन।
3. विशिष्ट सामाजिक घटनाओं का अध्ययन।

जी0डी0 सिमेल द्वारा– तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण उस विधि को कहते है जिसमें भिन्न समाजों या एक ही समाज के भिन्न–भिन्न समूहों की तुलना करके यह पता लगाया जा सके कि इनमें समानता है या नहीं, तथा यदि है तो क्यों है?

हर्सको विट्ज के अनुसार– ''तुलनात्मक पद्धति के अन्तर्गत व्यक्तियों के बीच पाये जाने वाले स्वरूपों की तुलना मानवीय संस्थाओं तथा विश्वासों के विकासपूर्ण क्रम को स्थापित किया जाता है।''

7.2.1 तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण का प्रयोग

तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण का प्रयोग समाजशास्त्र और मानवशास्त्र के अनेक विद्वानों ने किया है। सामाजिक और सांस्कृतिक मानवशास्त्रों ने सामाजिक और सांस्कृतिक उद्विकास को जानने के लिये इसका प्रयोग किया है। प्रारम्भिक मानवशास्त्री, जिन्होंने इसका प्रयोग किया है वे हैं, मोर्गन, वैकोफिन, टेगार्ट, हेनरीमेन, टाइलर, फ्रेजर, लेवी आदी के नाम उल्लेखनीय है। विकासवादी समाज वैज्ञानिकों ने ऐतिहासिक और तुलनात्मक पद्धति का साथ–साथ प्रयोग किया है। कुछ समाज वैज्ञानिकों के कार्य अग्रलिखित हैं–

हरवर्ट स्पैन्सर–इन्होंने समाज व सावयव की तुलना की और दोनों के बीच कई समानताओं का उल्लेख किया। इसी आधार पर आपने समाज को एक सावयव कहा। उन्होंने विभिन्न समाजों की परस्पर तुलना की। दुर्खीम ने अपनी पुस्तक ''द रूल्स ऑफ सोशियोलाजिकल मेथड'' में इस पद्धति का प्रयोग किया तथा उन्होंने यूरोप के विभिन्न देशों में आत्महत्या की दर व कारणों का तुलनात्मक अध्ययन किया तथा आत्महत्या का सामाजिक सिद्धान्त प्रस्तुत किया।

मैक्स वेवर–आपने पुॅजीवाद और प्रोटेस्टेट धर्म के सह–सम्बन्धों को दर्शाने के लिये दुनिया के छः महान धर्मों का तुलनात्मक अध्ययन किया और बताया कि केवल प्रोटेस्टेट धर्म में ही कुछ ऐसे आर्थिक विचार है जिन्होंने आधुनिक पुॅजीवाद को जन्म दिया।

रेडक्लिफ ब्राउन–ब्राउन ने तुलनात्मक पद्धति को अपनाकर समाज व सावयव की तुलना की है, वे इस निष्कर्ष पर पहुॅचते हैं कि, समाज सावयतव की भ्रांति है, दोनों का विकास कुछ निश्चित स्तरों से सरलता से जटिलता की ओर हुआ है। समाज व सावयव के तुलनात्मक अध्ययन द्वारा ही इन्होंने कुछ आधारभूत विशेषताओं का अध्ययन किया है। ब्राउन कहते हैं कि तुलनात्मक पद्धति के द्वारा ही सामाजिक विकास की प्रक्रिया को समझा जाता है। समाज गत्यात्मकता के नियमों को तुलनात्मक विधि द्वारा ही स्पष्ट रुप से ज्ञात किया जा सकता है व समाज में होने वाले परिवर्तनों का भी पता इस विधि के द्वारा चल सकता है। तुलनात्मक विधि द्वारा व्यक्ति, तथ्यों को स्पष्ट ही नहीं करते अपितु उस तथ्य

की परिस्थितियों को भी स्पष्ट कर सकते हैं। इनका मानना है कि जो सामान्य प्रस्तावना है उसी के आधार पर हम मानव समाज की सामान्य विशेषताओं के तुलनात्मक स्वरूप को स्पष्ट कर सकते हैं, सामान्य से विशेष तथा विशेष से सामान्य की ओर ले जाने वाली इस प्रक्रिया को इस पद्धति में प्रयोग नहीं किया जाता। इस पद्धति द्वारा सामाजिक अनुसंधानकर्ता तुलना करके अपने अनवेषण की परख कर अवधारणाओं की पुष्टि कर सकता है। परिवर्तनशील समाज में विभिन्न प्रक्रियाओं का अध्ययन करने में यह विधि अत्यन्त उपयोगी है।ब्राउन का मानना है कि सामाजिक विज्ञानों में तुलनात्मक पद्धति के माध्यम से हम किसी आदि–मानवीय समाज के विषय मे कोई जानकारी चाहते हैं तो असफलता ही हाथ लगेगी क्योंकि तुलना इस आधुनिक समाज से मानव समाज की, की जायेगी। इसके लिये हमें ऐतिहासिक पद्धति को काम में लेना पड़ेगा।

7.2.2 तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण के उपयोग की विधि

तुलनात्मक पद्धति के द्वारा जब सामाजिक घटनाओं का अध्ययन किया जाता है तो एक विशेष कार्य–विधि को व्यवहार में लाना पड़ता है, इसक अन्तर्गत–

1. सर्वप्रथम, अध्ययन से सम्बंधित विषय अथवा इकाइयों का अवलोकन करक यह जानने का प्रयास किया जाता है कि अध्ययन के अन्तर्गत आने वाली अधिक महत्वपूर्ण सामाजिक इकाइयॉ कौन–कौन सी हैं।
2. दूसरे स्तर पर, उनसे सम्बंधित सामाजिक तथ्यों का संग्रह करना आरम्भ किया जाता है। ये तथ्य प्राथमिक रूप से एकत्रित किए जा सकते हैं और द्वैतीयक स्रोतों के माध्यम से भी।
3. तथ्यों के संकलन के बाद समान सामाजिक तथ्यों को एक–एक वर्ग में रखकर उनका इस प्रकार वर्गीकरण कर लिया जाता है जिससे प्रत्येक वर्ग में एक–दूसरे से भिन्न प्रकृति वाले सामाजिक तथ्य संकलित हो जाएं।
4. चौथे स्तर पर, विभिन्न सामाजिक वर्गों की समानताओं और असमानताओं की तुलना करके उनके सह–सम्बंध या पृथक्कता का मूल्यांकन करने का प्रयत्न किया जाता है। यह तुलना जितनी अधिक सावधानीपूर्वक की जाती है, तुलनात्मक पद्धति द्वारा उतने ही अधिक वैज्ञानिक निष्कर्ष निकालना संभव हो जाता है।
5. पांचवे स्तर पर, विभिन्न सामाजिक इकाइयों की समानताओं या असमानताओं के संबंधित उन कारकों को ज्ञात करने का प्रयत्न किया जाता है जो एक विशेष स्थिति में किसी घटना को एक विशेष ढंग से प्रभावित करते हैं। इस स्थिति के समुचित विष्लेशणसे ही तुलनात्मक विवेचना को अधिक वैज्ञानिक बनाया जा सकता है।
6. अन्य पद्धतियों के समान तुलनात्मक पद्धति का अन्तिम चरण भी सामाजिक तथ्यों का सामान्यीकरण करना है, यह सामान्यीकरण मूलरूप से तुलना के आधार पर ही किया जाता है।

तुलनात्मक पद्धति की इस कार्य–विधि का उपयोग सर्वप्रथम प्रारम्भिक मानवशास्त्रियो ने दो विभिन्न स्थानों की सांस्कृतिक विशेषताओं या एक ही संस्कृति की विभिन्न विशेषताओं का अध्ययन तुलनात्मक आधार पर करने के लिये किया था। इसके कुछ समय बाद ही हरबर्ट स्पेंसर ने सामाजिक जीवन का अध्ययन करने के लिये तुलनात्मक पद्धति को सर्वाधिक महत्वपूर्ण आधार के रूप में स्वीकार किया। स्पेन्सर ने समाज और जीवन रचना के बीच तुलना करके यह स्पष्ट किया कि इन दोनों के बीच अनेक समानतायें विद्यमान हैं कि यदि समाज को एक सावयव कहो जाए तो गलत नहीं होगा। इसी समय से सामाजिक घटनाओं के अध्ययन मे तुलनात्मक पद्धति को अत्यधिक महत्वपूर्ण समझा जाने लगा और बाद में अनेक समाज वैज्ञानिकों ने व्यवस्थित आधार पर इस पद्धति के उपयोग से सम्बंधित नयीं प्रविधियों को विकसित किया। इस समय समाजशास्त्र के जनक ऑगस्त कॉम्ट ने विभिन्न युगों में मानव के

बौद्धिक विकास की एक–दूसरे से तुलना करते हुए ''तीन स्तरों का नियम'' प्रतिपादित किया तथा यह स्पष्ट किया कि सामाजिक तथ्यों का वैज्ञानिक अध्ययन केवल अवलोकन, प्रयोग और तुलना के द्वारा ही किया जा सकता है। तुलनात्मक पद्धति के उपयोग का सर्वप्रथम उदाहरण दुर्खीम द्वारा किया गया ''आत्महत्या का सिद्धान्त'' है। दुर्खीम ने विभिन्न सामाजिक समूहों में आत्महत्या की दर का तुलनात्मक अध्ययन करके यह स्पष्ट किया कि सामाजिक दशाएँ ही आत्महत्या का प्रमुख कारण होती है।मैक्स वेबर ने आर्थिक संस्थाओं के विकास पर धार्मिक आचारों के प्रभाव को स्पष्ट करने के लिये न केवल तुलनात्मक प्रद्धति का वृहद रूप् से उपयोग किया बल्कि इस पद्धति की सफलता के लिये एक निश्चित कार्य विधि को भी स्पष्ट किया। मैक्स वेबर ने यह भी बताया कि सामाजिक घटनाओं के बीच पाये जाने वाले कार्य कारण सम्बन्ध को तब तक स्पष्ट नहीं किया जा सकता जब तक विभिन्न सामाजिक घटनाओं को समानता के आधार पर कुछ सैधांतिक श्रेंणियों में विभाजित न कर लिया जाए। इस प्रकार जब हम तर्कसंगत आधार पर कुछ वास्तविक सामाजिक घटनाओं, व्यक्तियों या इकाइयों को इस प्रकार चुन लेते हैं जो अपने–अपने सामाजिक वर्गों का प्रतिनिधित्व करते हों तो इनके द्वारा एक ऐसे प्रारूप का निर्माण होता है जिसे हम आदर्श प्रारूप कह सकते हैं। इन विभिन्न आदर्श प्रारूपों के बीच तुलना करने से हमें वह आधार प्राप्त हो जाता है जिसकी सहायता से एक सामान्य निष्कर्ष प्रस्तुत किया जा सकता है। इस प्रकार आदर्श प्रारूपों का चयन करना तुलनात्मक पद्धति के सफल उपयोग के लिए सबसे अधिक आवश्यक है। वर्तमान समय में सामाजिक घटनाओं के अध्ययन के लिए तुलनात्मक पद्धति का उपयोग इतना अधिक होने लगा है कि प्रत्येक शोध में किसी न किसी स्तर पर इसका उपयोग अवश्य देखने को मिलता है। छोटे स्तर पर की गई तुलनाओं के द्वारा परिकल्पना की सत्यता की जांच करने के लिये भी तुलनात्मक पद्धति को विशेष रूप से उपयोगी समझा जाता है। उदाहरण के तौर पर यदि हम देखे तो नगरीय जीवन तथा विवाह–विच्छेद की प्रकृति, परिवार का आकार तथा सामाजिक गतिशीलता, शैक्षणिक उपलब्धियॉं तथा विभिन्न सामाजिक वर्ग आदि तुलना के वे प्रमुख विषय हैं जिनसे सम्बन्धित अनुभव सिद्ध निष्कर्ष देना इस पद्धति के द्वारा सम्भव हो गया है। इसी आधार पर वैज्ञानिक फ्रीमैन ने यह दावा किया है कि ''अध्ययन के लिये तुलनात्मक पद्धति की अभिकल्पना हमारे युग की महानतम बौद्धिक उपलब्धि है।''

बोध प्रश्न–1 टिप्पणी : (क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।
(ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

बताइए कि निम्नलिखित सही है या गलत और संबंधित खाने में टिक (✓) का निशान लगाइए।

	सही	गलत
1. तुलनात्मक पद्धति एक प्रविधि है।	☐	☐
2. तुलनात्मक पद्धति विभिन्न वर्गों मे पाये जाने वाले रीति–रीवाजों का तुलनात्मक अध्ययन करती है।	☐	☐
3. तुलनात्मक पद्धति की कार्य विधि विश्लेषणात्मक है।	☐	☐
4. ब्राउन ने तुलनात्मक पद्धति को अपनाकर समाज व सावयव की तुलना नहीं की है।	☐	☐
5. तुलनात्मक पद्धति या विष्लेशणका प्रयोग समाजशास्त्र और मानवशास्त्र के अनेक विद्वानों ने किया है।	☐	☐
6. आदर्श प्रारूपों का चयन करना तुलनात्मक पद्धति के सफल उपयोग के लिए सबसे अधिक आवश्यक है।	☐	☐

अभ्यास प्रश्न–1

तुलनात्मक पद्धति के बारे में एक संक्षिप्त ब्यौरा तैयार कीजिए।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

बोध प्रश्न–2

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण के उपयोग की विधि के बारे में लिखिये और उत्तर लिखने से पहले मुख्य शब्दों पर निशान लगाइयें।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

7.2.3 तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण की उपयोग से पूर्व आवश्यकतायें

तुलनात्मक पद्धति का वैज्ञानिक तरीके से उपयोग तभी किया जा सकता है कि जब शोधकर्ता इसके उपयोग से सम्बंधित कुछ पूर्व–आवश्यकताओं को पूरा करता हो। इन पूर्व आवश्यकताओं को संक्षेप में अग्रलिखित रूप से समझा जा सकता है–

1. **अध्ययन** विषय **का समुचित ज्ञानः** तुलनात्मक पद्धति के आधार पर वैज्ञानिक अध्ययन करने के लिये यह आवश्यक है कि शोधकर्ता को अपने अध्ययन–विषय का पर्याप्त ज्ञान हो। विषय का पर्याप्त ज्ञान होने से ही शोधकर्ता विभिन्न पक्षों से सम्बंधित तथ्यों का समुचित रूप से संकलन करके उनकी तुलनात्मक व्याख्या करने में सफल हो सकता है।
2. **सूक्ष्म अवलोकन की क्षमताः** सूक्ष्म अवलोकन के बिना न तो शोध से संबंधित विभिन्न सामाजिक घटनाओं और तथ्यों का गहराई में जाकर अध्ययन किया जा सकता है और न ही उन सामाजिक वर्गों का निर्माण किया जा सकता है जिनकी तुलना में महत्वपूर्ण निष्कर्ष प्राप्त हो सकते हैं।
3. **विश्लेषण की क्षमताः** विष्लेशणकी क्षमता से ही विभिन्न सामाजिक तथ्यों के निहित अर्थों को स्पष्ट करना सम्भव होता है। यह अर्थ जितना अधिक स्पष्ट और संगत या सापेक्ष होता है, सामाजिक तथ्यों के बीच तुलना करना भी उतना ही अधिक सरल हो जाता है। विष्लेशणकी क्षमता ही वह आधार है जिसकी सहायता से प्रत्येक सामाजिक घटना की पृष्टभूमि या परिस्थितियों को समुचित रूप से स्पष्ट किया जा सकता है।
4. **तार्किक व्याख्या की कुशलताः** सामाजिक तथ्यों तथा घटनाओं की प्रकृति इस प्रकार की होती है कि उन सभी का प्रत्यक्ष अवलोकन करना संभव नहीं होता। अने तथ्यों की व्याख्या के लिये शोधकर्ता मे तार्किक कुशलता का होना आवश्यक है। तार्किक कुशलता की सहायता से ही यह ज्ञात किया जा सकता है कि कौन से सामाजिक तथ्य आवश्यक हैं और कौन से अनावश्यक। इसके साथ ही साथ विभिन्न तथ्याके के सह सम्बन्ध को ढूंढकर उनकी अर्थपूर्ण व्याख्या करना भी तार्किक कुशलता पर निर्भर करता है।
5. **प्रतिवेदन में वस्तुनिश्ठताः** तुलनात्मक पद्धति के प्रयोग का उद्देश्य सामाजिक तथ्यों को तुलनात्मक आधार पर विष्लेशणकरना ही नहीं होता बल्कि तुलना करके एक वस्तुनिष्ठ प्रतिवेदन भी प्रस्तुत करना होता है। तथ्यों तुलना तब तक अर्थहीन है जब तक उसके आधार पर निकाले गये निष्कर्षों को व्यवस्थित रूप से प्रस्तुत न कर दिया जाये।

7.2.4 तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण का महत्व

उन्नीसवीं शताब्दी तक तुलनात्मक पद्धति का प्रयोगा विभिन्न सामाजिक समूहों के बीच तुलना करने तक ही सीमित था लेकिन आज इस पद्धति की व्यापक व्यावहारिक उपयोग को ध्यान में रखा जाय तो इसका आज कल बहुत उपयोग हो रहा है। सामाजिक घटनाओं के अध्ययन में तुलनात्मक पद्धति के महत्व या इसकी उपयोगिता को अग्रलिखित बिनदुओं के माध्यम से समझा जा सकता है–

1. **परिकल्पना की परीक्षा में सहायकः** किसी भी सामाजिक शोध की वैज्ञानिकता प्रमाणित करने के लिए आवश्यक है कि अध्ययन विषय से संबंधित परिकल्पना की पूरी जॉच कर ली जाये। समाजशास्त्री रेडक्लिफ ब्राउन ने परिकल्पना की परीक्षा के एक साधन के रूप में तुलनात्मक पद्धति को सबसे अधिक महत्वपूर्ण माना है। इसका कारण यह है कि विभिन्न समाजों, संस्थाओं, समूहों या अन्य तथ्यों का तुलनात्मक विवेचन करके अध्ययन से सम्बंधित परिकल्पना की परीक्षा सरलता के की जा सकती है।
2. **प्रयोगात्मक पद्धति की पूरकः** सामाजिक घटनाओं की प्रकृति इतनी जटिल है कि उनके बीच कार्य–कारण के सम्बंध को ज्ञात करना अक्सर बहुत कठिन हो जाता है। भौतिक विज्ञानों में कार्य–कारण के सम्बन्ध को जानना इसलिए सरल है क्योंकि प्रयोगात्मक विधि द्वारा किसी भी तथ्य के आन्तरिक रूप को समझा जा सकता है। इसके विपरीत सामाजिक अध्ययनों में प्रत्यक्ष प्रयोग की कोई सम्भावना नहीं होती। ऐसी स्धिति में वैज्ञानिक दुर्खीम

का कथन है कि हम केवल 'अप्रत्यक्ष प्रयोग की विधि' के रूप में तुलनात्मक पद्धति के द्वारा ही सामाजिक घटनाओं के कार्य–कारण सम्बन्ध को समझ सकते हैं। इसका अर्थ यह नहीं है कि तुलनात्मक पद्धति पूर्णतया प्रयोगात्मक पद्धति के समान है लेकिन विभिन्न घटनाओं के बीच व्यवस्थित तुलना करने से यह अवश्य जाना जा सकता है कि कौन–कौन से सामाजिक तथ्य किन दूसरे तत्वों से अधिक सम्बंधित हैं और उनकी पुनरावृत्ति का क्रम क्या है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि सामाजिक अध्ययनों में तुलनात्मक पद्धति के महत्व की अवहेलना नहीं की जा सकती है।

3. **सांख्यिकीय विश्लेषण में सहायकः** तुलनात्मक पद्धति एक ऐसी पद्धति है जिसकी सहायता से सामाजिक घटनाओं का सांख्यिकीय विष्लेशण करना भी सम्भव हो सकता है। इसके अन्तर्गत जब हम विभिन्न गुणात्मक तथ्यों की आवृति को समझने में सफल हो जाते हैं तो सरलता से उन तथ्यों की प्रकृति को प्रतिशत या अनुपात के रूप में स्पष्ट किया जा सकता है। इस आधार पर अनेक विद्वान परिमाणात्मक अध्ययनों के लिए तुलनात्मक पद्धति को अत्यधिक महत्वपूर्ण मानते हैं।
4. **परिवर्तन की दिशा का ज्ञानः** वर्तमान परिवर्तनशील समाजों में तुलनात्मक पद्धति की सहायता से यह सरलतापूर्वक ज्ञात किया जा सकता है कि विभिन्न सामाजिक घटनायें किस रूप में परिवर्तित हो रही हैं तथा तुलनात्मक रूप से विभिन्न्न तथ्यों के बीच परिवर्तन की दर या सीमा क्या है? वर्तमान में, परिवर्तन स्चयं में एक तुलनात्मक अवधारणा है। हम एक तथ्य में उम्पन्न होने वाले परिवर्तन को दूसरे तथ्य की तुलना में ही समझ सकते हैं। इसी के बारे मे समाज वैज्ञानिक राउन्ट्री और बाउले ने काफी समय के अन्तर से एक ही समुदाय की विशेषताओं का तुलनात्मक आधार पर अध्ययन करके यह स्पष्ट कर दिया कि केवल तुलनात्मक पद्धति के द्वारा ही सामाजिक परिवर्तन की प्रकृति और दिशा का सही ज्ञान किया जा सकता है।
5. **छोटे अध्ययनों में सहायकः** आज शोध की नयी प्रविधियों के विकास होने के साथ ही यह अनुभव किया जाने लगा है कि कुछ विशेष समाजों में छोटे स्तर पर किये जाने वाले अध्ययनों में इस पद्धति का व्यापक रूप से उपयोग किया जा सकता है। वास्तव में छोटे क्षेत्र या छोटे स्तर पर जो अध्ययन किये जाते हैं उनमें अध्ययन विषय से संबंधित विभिन्न इकाइयों का तुलनात्मक विष्लेशणकिये बिना कोई भी उपयोगी निष्कर्ष नहीं दिये जा सकते। यही कारण है कि विभिन्न उद्योगों, व्यावसायिक प्रतिष्ठानों, सरल समाजों तथा शिक्षा व्यवस्था आदि पर समाजशास्त्रीय शोध करने के लिये तुलनात्मक पद्धति का विशेष उपयोग है।

7.2.5 तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण के उपयोग में कठिनाइयॉ

सामाजिक अध्ययन में तुलनात्मक पद्धति महत्वपूर्ण अवश्य है लेकिन इस पद्धति के उपयोग मे अनेक कठिनाइयॉ हैं जिनका निवारण करके ही इसे एक उपयोगी पद्धति बनाया जा सकता है। इस पद्धति की सीमा को स्पष्ट करके समाजशास्त्री रेडक्लिफ ब्राउन ने लिखा है ''तुलनात्मक पद्धति अकेले ही आपको कुछ नहीं दे सकती। भूमि से तब तक कुछ पैदा नहीं हो सकता जब तक आप पहले उसमें बीज नहीं बोयेंगे। इस प्रकार तुलनात्मक पद्धति भी परिकल्पना के परिक्षण का एक तरीका मात्र है।'' इसका अर्थ यह है कि एक ओर तुलनात्मक पद्धति स्वयं कुछ सीमाओं से युक्त है और दूसरी ओर इसके उपयोग में भी अनेक कठिनाइयॉ हैं। इन कठिनाइयों को निम्नलिखित रूप से समझा जा सकता है–

1. **परिकल्पना का अभावः** वैज्ञानिक बोटोमोर का कथन है कि '' तुलनात्मक पद्धति के उपयोग मे आने वाली एक प्रमुख कठिनाई यह है कि इसके अन्तर्गत या तो परिकल्पनाओं का अभाव होता है या किसी परिकल्पना का निर्माण करना आवश्यक नहीं समझा जाता है।'' किसी भी वैज्ञानिक शोध के लिए परिकल्पना का निर्माण करना अत्यधिक आवश्यक होता है। क्योंकि परिकल्पना ही शोध को वास्तविक दिशा प्रदान करती है। यदि अध्ययन में परिकल्पना का अभाव होता है तो अक्सर महत्वपर्ण अध्ययन भी दार्शनिक बनकर रह जाते हैं। उदाहरण स्वरूप ऑगस्त काम्ट ने अपने 'तीन स्तरों के नियम' को स्पष्ट करने के लिये तुलनात्मक पद्धति का उपयोग अवश्य किया लेकिन इसमें एक वैज्ञानिक परिकल्पना का अभाव होने के कारण यह सम्पूर्ण व्याख्या 'मानवता के विकास का दर्शन' बनकर रह गई।

2. **इकाइयों के निर्धारण में कठिनाईः** तुलनात्मक पद्धति के उपयोग के लिये अध्ययन के संबंधित कुछ ऐसी इकाइयों का चयन करना आवश्यक होता है जिनके बीच तुलना करके उपयोगी निष्कर्ष दिये जा सकें। इस कार्य के लिये एक ओर ऐसी इकाइयों का चयन करना पड़ता है जो एक दूसरे से पूर्णतया असमान न हों तथा साथ ही उनकी समुचित विवेचना भी की जा सके। इस कार्य में सबसे बड़ी कठिनाई यह आती है कि शोध के अनतर्गत जिन बहुत–सी इकाइयों अथवा तथ्यों का समावेश होता है उनमें से तुलना के लिये उपयुक्त इकाइयों का चयन करना बहुत कठिन हो जाता है। सामाजिक तथ्य इतने विविध एवं परिवर्तनशील होते हैं कि कभी–कभी जो इकाइयॉ शुरू में बहुत महत्वपूर्ण दिखाई देती हैं, कुछ समय बाद तुलना के दृष्टिकोण से उनका कोई महत्व प्रतीत नहीं होता। इस प्रकार तुलना के लिये चुनी गई इकाइयों का चयन दोषपूर्ण हो जाने की सम्भावना हमेशा बनी रहती है।

3. **इकाइयों की तुलना में कठिनाइयॉः** समाजशास्त्री मैलिनोवास्की ने कहा है कि '' विभिन्न इकाइयों की तुलना करना और उन्हें समुचित रूप से परिभाषित करना भी एक कठिन कार्य है। एक ओर यह अत्यधिक कठिन है कि दो समाजों के सभी पक्षों की एक दूसरे से तुलना की जा सके और दूसरी ओर विभिन्न समाजों से सम्बंधित किन्हीं दो संस्थाओं या इकाइयों के बीच तुलना करना भी एक कठिन कार्य होता है। सभी इकाइयों का स्वरूप एक दूसरे से काफी भिन्न होता है तथा उनके बाह्य और आन्तरिक स्वरूप में भी एक स्पष्ट भिन्नता विद्यमान होती है। जो संस्थायें ऊपर से विल्कुल समान प्रतीत होती हैं, विभिन्न समाजों में उनका आन्तरिक रूप एक दूसरे के बिल्कुल भिन्न हो सकता है। यदि हम किसी संस्था या इकाई को उसकी सामाजिक पृष्ठभूमि से अलग करके देखने लगें तो ऐसी व्याख्या पूर्णतया भ्रामक हो जाती है।''

4. **विश्लेषण की समस्याः** तुलनात्मक पद्धति के अन्तर्गत जिन सामाजिक संस्थाओं, तथ्यों या इकाइयों को लेकर तुलना की जाती है उन्हें साधारणतया उस सम्पूर्ण समाज से अलग करके देखा जाता है जिसमें कि उस संस्था या इकाई की एक निश्चित भूमिका होती है। इसके फलस्वरूप उनके वास्तविक स्वरूप को समझ सकना बहुत कठिन हो जाता है। तुलनात्मक पद्धति के अन्तर्गत किसी संस्था या इकाई की सामाजिक पृष्ठभूमि को समुचित महत्व न मिलने के कारण अक्सर सम्पूर्ण विष्लेशणके दोषपूर्ण और अवैज्ञानिक बन जाने की सम्भावना हो जाती है।

उपर्युक्त कठिनाइयों के बाद यह सत्य है कि प्रयोगात्मक पद्धति के एक विकल्प के रूप में तुलनात्मक पद्धति अत्यधिक उपयोगी सिद्ध हुई है। यदि एक सीमित क्षेत्र में इस पद्धति का प्रयोग किया जाए तो इसकी सहायता से अनेक उपयोगी निष्कर्ष प्राप्त किये जा सकते हैं।

7.3 सारांश

प्रिय विद्यार्थियों प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आप लोग तुलनात्मक पद्धति के बारे में वृहद जानकारी प्राप्त कर चुके होगें। अब आप तुलनात्मक पद्धति के अर्थ एवं परिभाषाओं के बारे में ज्ञान अर्जित कर लिया होगा। वास्तव में तुलनात्मक पद्धति या विष्लेशण अध्ययन की वह पद्धति है जिसके अन्तर्गत दो या दो से अधिक सामाजिक तथ्यों, इकाइयों या समुदायों को अध्ययन का आधार मानते हुए उनकी एक दूसरे से तुलना की जाती है एवं तुलना के दौरान पायी गयी समान अथवा असमान विशेषताओं के आधार पर सामान्य निष्कर्ष प्रस्तुत किये जाते हैं। यदि इस दृष्टिकोण से देखा जाय तो स्पष्ट होता है कि सामाजिक अध्ययनों में तुलनात्मक पद्धति प्रयोगात्मक पद्धति का ही विकल्प है। सामाजिक घटनाओं को किसी प्रयोग या परीक्षण के लिए पूरी तरह नियंत्रित नहीं किया जा सकता। ऐसी स्थिति में हमारे सामने केवल यही विकल्प रह जाता है कि हम दो सामाजिक तथ्यों के बीच तुलना करके एक सामान्य प्रवृति को ज्ञात करने का प्रयत्न करें। इस आधार पर यह स्पष्ट होता है कि तुलनात्मक पद्धति या विष्लेशणअध्ययन का वह तरीका है जिसमें एक से अधिक सामाजिक घटनाओं के बीच तुलना करके उनका इस प्रकार विष्लेशणऔर व्याख्या है जिसमें एक सामान्य प्रवृति का ज्ञात किया जा सकें।

इस इकाई के आधार पर आप लोग तुलनात्मक पद्धति या विष्लेशणका प्रयोग भलि भांति कर सकेगें एवं तुलनात्मक पद्धति या विष्लेशणके उपयोग की विधि की प्रक्रिया पर प्रकाश डाल सकेगें। यह इकाई आपको इस योग्य बनाती है जिससे आप तुलनात्मक पद्धति या विष्लेशणकी उपयोग से पूर्व आवश्यकताओं को जान सकेगें। आशा ही नहीं वरन् पूर्ण विश्वास है कि प्रस्तुत इकाई आप के ज्ञान में उत्तरोत्तर वृद्धि करायेगी जिससे आप लोग तुलनात्मक पद्धति का प्रयोग आसानी से कर सकेगें।

7.4 शब्दावली

तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण – तुलनात्मक पद्धति या विष्लेशण अध्ययन का वह तरीका है जिसमें एक से अधिक सामाजिक घटनाओं के बीच तुलना करके उनका इस प्रकार विष्लेशण और व्याख्या है जिसमें एक सामान्य प्रवृति का ज्ञात किया जा सकें।

ऐतिहासिक पद्धति– यह वह विधि है जिसक द्वारा वर्तमान काल में घटित होने वाली घटनाओं को अतीत में घटित घटनाओं के क्रमिक विकास की एक कड़ी के रूप में देखकर उनका अध्ययन किया जाता है।

7.5 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1 का उत्तर–

1. सही
2. सही
3. सही
4. गलत
5. सही
6. सही

7.6 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. गिन्सबर्ग, द प्रोब्लेम्स एण्ड मेथड्स ऑफ सोशियोलाजी इन रीजन्स एण्ड अनरिजन्स इन सोसाइटी।
2. कोटेड इन बाटमोरे सोशियोलाजी, पेज नं0 55।
3. फ्री मैन, इ0 ए0, कम्परेटिव पालिटिक्स।
4. रेडक्लिफ ब्राउन, ए नेचुरल साइंस ऑफ सोसाइटी।
5. मैलिनोवस्की, कल्चर, इन दी इनसाइक्लोपीडिया ऑफ सोशल साइंसेज।
6. गोयल, डॉ0 सुनील एवं गोयल, संगीता, 'प्रारम्भिक सामाजिक अनुसंधान, आर0 बी0 एस0 ए0 पब्लिशर्स, जयपुर, वर्ष 2005, पेज सं0 54–61।

7.7 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. सोशियोलाजी रिटेन बाई बाटमोरे।
2. कम्परेटिव पालिटिक्स रिटेन बाई फ्री मैन।
3. नेचुरल साइंस ऑफ सोसाइटी रिटेन बाई रेडक्लिफ ब्राउन।

7.8 निबंधात्मक प्रश्न

1. तुलनात्मक पद्धति या विष्लेशण के अर्थ एवं परिभाषा के बारे में प्रकाश डालिये।
2. तुलनात्मक पद्धति या विष्लेशण के प्रयोग के बारे में लिखिये।
3. तुलनात्मक पद्धति या विष्लेशण के उपयोग की विधि की व्याख्या कीजिएं
4. तुलनात्मक पद्धति या विष्लेशण की उपयोग से पूर्व आवश्यकताओं की विवेचना कीजिये।
5. तुलनात्मक पद्धति या विष्लेशण के महत्व पर प्रकाश डालिये।
6. तुलनात्मक पद्धति या विष्लेशणके उपयोग में कठिनाइओं के बारे में लिखिये।

इकाई– 8 टेक्चुअल विश्लेषण, मीडिया एवं अन्तर्वस्तु विश्लेषण
Textual Analysis,Media & Content Analysis

8.0 इकाई का उद्देश्य
8.1 प्रस्तावना
8.2 टेक्चुअल विश्लेषण,
8.3 मीडिया विश्लेषण
8.4 अन्तर्वस्तु विष्लेशणकी परिभाषा
8.4.1 अन्तर्वस्तु विश्लेषण की विशेषताएँ
8.4.2 अन्तर्वस्तु विश्लेषण के उद्देश्य
8.4.3 अन्तर्वस्तु विश्लेषण के उपयोग
8.4.4 बेरेलसन द्वारा किये गये अन्तर्वस्तु विश्लेषण के उपयोग के विभिन्न उपागम
8.4.5 अन्तर्वस्तु विश्लेषण के प्रकार
8.4.6 अन्तर्वस्तु विश्लेषण वर्गीकरण के आधार
8.4.7 अन्तर्वस्तु विश्लेषण की रूपरेखा के निर्माण में प्रमुख सोपान
8.4.8 अन्तर्वस्तु विश्लेषण की रूपरेखा का निर्माण
8.4.9 विश्लेषण की रूपरेखा का उपयोग
8.4.10 अन्तर्वस्तु विश्लेषण की प्रमुख समस्याएँ
8.5 सारांश
8.6 शब्दावली
8.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
8.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
8.9 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
8.10 निबंधात्मक प्रश्न

8.0 इकाई का उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य टेक्चुअल विश्लेषण, मीडिया विश्लेषण एवं अर्न्तवस्तु विश्लेषण की अवधारणा तथा उपयोगों को स्पष्ट करना है जिसमें अर्न्तवस्तु विश्लेषण के प्रकारों के बारे में भी बताने का प्रयास किया गया है।

इस इकाई पढ़ने के बाद आप –

- टेक्चुअल विश्लेषण के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेगें।
- मीडिया विश्लेषण पर प्रकाश डाल सकेगें।

- अन्तर्वस्तु विश्लेषण की परिभाषा के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेगें।
- अन्तर्वस्तु विश्लेषण की विशेषताओं के बारे में लिख सकेगें।
- अन्तर्वस्तु विश्लेषण के उद्देश्यों के बारे में ज्ञान प्राप्त कर सकेगें।
- अन्तर्वस्तु विश्लेषण का उपयोग अपने शोध में कैसे करे के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेगें।
- बेरेलसन द्वारा किये गये अन्तर्वस्तु विश्लेषण के उपयोग के विभिन्न उपागमों के बारे में लिख सकेगें।
- अन्तर्वस्तु विश्लेषण के प्रकारों के बारे में जान सकेगें।
- अन्तर्वस्तु विश्लेषण वर्गीकरण का वर्णन कर सकेगें।
- अन्तर्वस्तु विश्लेषण की रूपरेखा के निर्माण में प्रमुख सोपानों के बारे में बृहद जानकारी प्राप्त कर सकेगें।
- अन्तर्वस्तु विश्लेषण की रूपरेखा का निर्माण कैसे किया जाता है के बारे में पूर्ण जानकारी प्राप्त कर सकेगें।
- विश्लेषण की रूपरेखा का उपयोग कैसे किया जाता है के बारे में ज्ञान प्राप्त कर सकेगें।
- अन्तर्वस्तु विश्लेषण की प्रमुख समस्याओं को जान सकेगें।

8.1 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थियों आपने पूर्व की इकाई में तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण के बारे में जानकारी प्राप्त की तथा जाना की किस प्रकार से तुलनात्मक पद्धति का प्रयोग किया जाता है। इसी क्रम में प्रस्तुत इकाई आपके सामने प्रस्तुत है जिसके माध्यम से आप लोग टेक्चुअल विश्लेषण, मीडिया विश्लेषण एवं अन्तर्वस्तु विष्लेशणके बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे। वास्तव में सामाजिक घटनाओं की प्रकृति भौतिक घटनाओं की प्रकृति से सर्वथा भिन्न होती है। भौतिक घटनाएं प्रायः स्वभावतः मात्रात्मक तथा मूर्त होती है। इसके प्रतिकूल सामाजिक घटनाएं स्वभावतः गुणात्मक तथा अमूर्त होती है। गुणात्मक घटनाएं अपेक्षाकृत अस्पष्ट तथा जटिल होती है। कुछ समय पहले यह मान लिया गया था कि सामाजिक घटनाओं की प्रकृति गुणात्मक होने के कारण उन्हें मात्रात्मक रूप में व्यक्त करना अथवा परिमापन सम्भव नहीं है। अतः सामाजिक अनुसंधान में उपलब्ध सामग्री का मात्रात्मक प्रदर्शन नहीं किया जा सकता। परन्तु आधुनिक काल में यह स्वीकार कर लिया गया है कि सामाजिक गुणात्मक सामग्री का प्रस्तुतीकरण मात्रात्मक रूप में किया जा सकता है।

जब सामाजिक अनुसंधानकर्ता प्राकृतिक सामाजिक घटनाओं के अभिलेखों अथवा एक अनुसंधान परियोजना से गुणात्मक सामग्री के समूह को प्राप्त करता है, वह अन्तर्वस्तु को उपयुक्त श्रेणियों में वर्गीकृत करना चाहेगा ताकि वह इसका एक व्यवस्थित एवं क्रमबद्ध रूप में वर्णन कर सके। श्रेणियों में वर्गीकरण की इस प्रक्रिया को सामान्यतः ''अन्तर्वस्तु विश्लेषण '' अथवा ''सांकेतीकरण'' के नाम से सम्बोधित किया जाता है। पहला पारिभाषिक शब्द अन्तर्वस्तु विष्लेशणका प्रयोग प्रायः स्वाभाविक रूप से अभिलेखित की गई गुणात्मक सामग्री के सन्दर्भ में किया जाता है। पिछला (सांकेतीकरण) सामान्यतः अनुसंधान द्वारा उत्पन्न सामग्री के विष्लेशणके सन्दर्भ में प्रयुक्त किया जाता है। सांकेतीकरण का प्रयोग विशेष रूप से उस प्रक्रिया को सम्बोधित करने के लिए किया जाता है जिसके द्वारा साक्षात्कारों के उत्तरों को श्रेणीबद्ध किया जाता है। इसके प्रतिकूल ''सुव्यवस्थित अन्तर्वस्तु विश्लेषण, अन्तर्वस्तु के

कारणात्मक वर्णनों का अधिक परिष्कार करने का प्रयास करता है, जिससे कि पाठकों अथवा श्रोताओं से सम्बन्धित उत्तेजनाओं की प्रकृत्ति तथा सापेक्षिक शक्ति को वैषयिक रूप में प्रदर्शित किया जा सके।''

यह सत्य है कि आधुनिक अन्तर्वस्तु विश्लेषण अनुसंधान उद्देश्यों के लिए सम्प्रेषण अन्तर्वस्तु के उपयोग में नूतन विशेषताओं को सम्मिलित किया गया है। जैसे सामग्री के मात्रात्मिककरण या परिणामन हेतु विस्तृत प्रविधियों का विकास। अन्तर्वस्तु विश्लेषण के प्रयोग पर विशेष बल देने वालों में एच0डी0 लसवेल तथा उनके सहयोगियों के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं, जिन्होंने इसक प्रयोग जनमत व प्रचार सम्बन्धी सहयोगियों के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं, जिन्होंने इसका प्रयोग जनमत व प्रचार सम्बन्धी अध्ययनों में किया था। क्लेयर सेलटिज, मेरी जहोदा तथा उनके सहयोगियों के अनुसार विष्लेशणकी प्रक्रिया कुछ निश्चित नियंत्रकों से होकर गुजरती है जिससे कि अभिसामयिक (परम्परागत) पुनरावलोकन अथवा सम्प्रेषण अन्तर्वस्तु की समीक्षा की तुलना में इसे व्यवस्थित तथा वैषयिक रूप में प्रस्तुत किया जाता है, वे निम्नलिखित हैं –

1. विश्लेषण की श्रेणियाँ, जो अन्तर्वस्तु को वर्गीकृत करती हैं, को स्पष्टतः परिभाषित किया जाता है ताकि अन्य लोग उसी अन्तर्वस्तु पर निष्कर्षो को सत्यापित कर सकें।
2. विश्लेषक को इसमें यह स्वतंत्रता नहीं रहती कि वह जो चाहे अन्तर्वस्तु में से चुन ले, अथवा उसे जो रोचक लगे उसे ही प्रतिवेदित कर दे। वास्तव में उसे अपने निर्देशन में समस्त संगतपूर्ण सामग्री का पद्धति अनुसार वर्गीकृत करना होता है।
3. विभिन्न महत्वपूर्ण विचारों को परिमापन प्रदान करने के लिए मात्रात्मक प्रणाली को प्रयोग में लाना होता है। उदाहरणस्वरूप यदि हम अखवारों के सम्पादकियों का एक व्यवस्थित निदर्शन लें तथा उनकी सापेक्ष संख्या की गिनती करें जो किसी विदेशी राष्ट्र के बारे में अनुकूल, प्रतिकूल तथा तटस्थ मनोवृत्तियों को व्यक्त करें तो यह मात्रात्मिककरण का एक सरल स्वरूप है जो व्यावहारिक एवं विश्वसनीय है।

प्रस्तुत इकाई में मात्रात्मक एवं गुणात्मक तथ्यों को ध्यान में रखते हुए टेक्चुअल विश्लेषण, मीडिया विष्लेशणएवं अन्तर्वस्तु विष्लेशणके बारे में जानकारी प्रदान की गयी है जिसके बारे में ज्ञान प्राप्त कर इनका सही उपयोग आप लोग अनुसंधान विष्लेशणमें कर सकेगें।

8.3 टेक्चुअल विश्लेषण

आज के युग में जहॉ एक तरफ विभिन्न प्रकार के अनुसंधानों में विभिन्न प्रकार के एकत्रित तथ्यों के विष्लेशणहेतु विभिन्न प्रकार के विश्लेषण प्रविधियों का प्रयोग किया जा रहा है वहीं पर टेक्चुअल विष्लेशणका भी प्रयोग वहुतायत मात्रा में देखने को मिल रहा है। वास्तव में टेक्चुअल विश्लेषण वह प्रविधि है जिसके माध्यम से किसी भी लेखक द्वारा लिखे गये टेक्स्ट का वास्तविक अर्थ निरूपण उसके द्वारा लिखे गये भाषा में ही करने का प्रयास किया जाता है।

बहुत से अनुसंधानकर्ता समाज विज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों में अनुसंधान का कार्य कर रहे हैं जो वास्तव में विभिन्न प्रकार के भाषा एवं भाषायी सामग्री पर एक मत नहीं हैं। वे अपने–अपने विषयों के आधार पर टेक्स्ट, संवाद एवं शोध साक्षात्कार का विश्लेषण करते हैं। अतः इन सभी प्रकार के सामाजिक विज्ञानों के तथ्यों के विष्लेशणमें कोई विरोधाभाष न हो, इसके लिये यदी हम टेक्चुअल विश्लेषण का प्रयोग करें तो विश्लेषण आसान व तथ्यानुकूल होगा। वास्तव में टेक्चुअल विश्लेषण के आधार पर हम यह पता लगा सकते हैं कि उत्तरदाता अपनी भाषा में क्या कहना चाहता है या किस समस्या के बारे में बताना चाहता है। देखा जाय तो टेक्चुअल विश्लेषण किसी व्यक्ति के द्वारा लिखे या दिये गये वक्तव्यों का वास्तविक अर्थ निरूपण है। यदि किसी व्यक्ति के द्वारा कहे या लिखे गये भाषा का वास्तविक अर्थ प्राप्त हो जाये व उसका विश्लेषण सही शब्दों में हो जाये तो अनुसंधान का अनुमापन किया जा सकता है।

टेक्चुअल विश्लेषण को हम आज के समय के परिप्रेक्ष्य में देखे तो हमें ज्ञात होगा कि यह विश्लेषण भाषा, हाव–भाव, प्रतीकों एवं परिस्थितियों का वास्तविक निरूपण करने पर जोर देता है। ऐसा इसलिये क्योंकि व्यक्ति जब किसी प्रश्न का उत्तर देता है तो उस समय उसके चेहरे की प्रतिक्रिया उसके द्वारा दिये गये उत्तर की प्रतिपुष्टि कर देती है। कभी–कभी हम कोई दृश्य देखते हैं तो उसके साथ किसी प्रकार की भाषा नहीं लिखी रहती है फिर भी हम उस दृश्य का वास्तविक अर्थ निकालने का प्रयास करते हैं एवं उसका अपने भाषा में वर्णन भी करने में समर्थ होते हैं। उदाहरण स्वरूप मान लिया जाय कि किसी बार में कोई नौजवान पुरूष प्रवेश करना चाहता है और वह गेट पर खड़े दरवान से अन्दर जाने के लिये कहता है और दरवान नौजवान से उसकी उम्र के बारे में पुछता है जिसके उत्तर में नौजवान कहता है कि उसकी उम्र 22 साल है। जब दरवान नौजवान की उम्र के बारे मे। आस्वस्त हो जाता है जाता है तो नौजवान को बार में जाने की अनुमति दे देता है। वास्तव में इस उदाहरण से स्पष्ट है कि बार में जाने के लिये दरवान ने नौजवान से उम्र क्यों पुछा? तो हम यहॉ पर टेक्चुअल विष्लेशणके आधार पर देखते हैं कि दरवान ने नौजवान से उम्र इसलिये पूछा क्योंकि बार में वही लोग प्रवेश कर सकते हैं जो वयस्क हो और जिनकी आयु 22 वर्ष से उपर की हो। अतः टेक्चुअल विष्लेशणहमें वास्तविक परिस्थितियों के बारे में जानने के लिये बाध्य करती है।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि टेक्चुअल विश्लेषण वह विश्लेषण है जिसके माध्यम से हम वास्तविक परिस्थियों के बारे ज्ञान प्राप्त करने का प्रयास करते हैं। वह परिस्थितियॉ प्रतीकों, भाव–भंगिमाओं, प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष किसी भी रूप में हों।

8.4 मीडिया विश्लेषण

गैर वित्तिय सहायता प्राप्त संगठन एवं अन्य संस्थानों को अपनी स्थिति को समाज में परखने के लिये मीडिया विष्लेशणकी आवश्यकता होती है। चूँकि ये संस्थायें समाज से सीधे संमपर्क में रहती हैं तो समाज से संबंधित विभिन्न प्रकार के मुद्दों पर इनको राय देनी पड़ती है। अतः किसी भी मुद्दे को किस प्रकार से रखना है तथा उसको समाज के सामने किस प्रकार प्रस्तुत करना है जिससे ज्यादा से ज्यादा मीडिया कवरेज प्राप्त हो के लिये ये संस्थायें मीडिया विश्लेषण के माध्यम का सहारा लेती हैं। वास्तव में मीडिया विष्लेशणवह विष्लेशणहै जिसके माध्यम से कोई भी अनुसंधानकर्ता यह पता लगाने में पारंगत हो सकता है कि किस प्रकार के प्रश्नों से मीडिया कवरेज ज्यादा प्राप्त होगी तथा किस प्रकार के संदेशों का समाज से जुड़े मुद्दों पर अधिक प्रसंशा प्राप्त होगी। मीडिया विष्लेशणके द्वारा यह भी पता लगाया जा सकता है कि वर्तमान में जो मीडिया कवरेज प्राप्त हो रही है वह कितनी है तथा इसको किस प्रकार और बढ़ाया जा सकता है। इस प्रकार की मीडिया विश्लेषण को किसी एक प्रकार के समाचार बुलेटिन या समाचार प्रत्रों में प्रकाशित खबर के पृष्टांकन एवं खबर की विशेषता से पता लगाया जा सकता है जो एक समयाबद्ध समय में ही होनी चाहिए। इस प्रकार का विश्लेषण किसी मुद्दे से संबंधित मीडिया कवरेज को विभिन्न भागों में बांटकर उसकी स्थिति का अध्ययन करता है तथा विभिन्न प्रकार के संचार व्यवहार के अवसरों की खोज करता है जिसके आधार पर विभिन्न प्रकार के संस्थान अपनी कमियों को दूर कर पुनः नयी रणनीतियों का निर्माण करते हैं जिसके आधार पर मुद्दों को हल करने में आसानी हो सके तथा संगठनों के संदेशों को जनमानस तक पहुचाने में आसानी हो सके।

जब कोई संचार करने वाली संस्था या मीडिया विश्लेषक किसी भी मुद्दे पर वृहद् विश्लेषण करना चाहता है तो उसे चाहिए कि वह अग्रलिखित बिन्दुओं को अपने ध्यान में रखे। अगर वह इन बिन्दुओं को ध्यान में रखेगा तो निश्चित ही एक अच्छा मीडिया विष्लेशणकर सकेगा।

एक मीडिया विश्लेषण अग्रलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकती है–

1. सार्वजनिक मुद्दे को मीडिया में प्रस्तुत किस प्रकार किया जाय? (विभिन्न प्रकार के कहानी के तत्वों को बार–बार दोहराकर, विभिन्न प्रकार के सामान्य विश्लेषण का प्रयोग करके, एक समान लोगों का बार–बार नाम लेकर इत्यादि)।
2. एक विशिष्ट शीर्षक पर कौन सा व्यक्ति प्रमुख वक्ता होगा और किस पद नाम से उसको सम्बोधित किया जायेगा। क्या वे नीति निर्माता, ऐकेडेमिक विशेषज्ञ होंगें इत्यादि?
3. प्रायः विभिन्न प्रकार के वक्ता किस प्रकार सम्बोधित करेंगे तथा किन संदर्भों में ।
4. किन शीर्षकों को बहस का मुद्दा बनाया जायेगा तथा किन मुद्दों को छोडा जायेगा?
5. किन क्षेत्रों को लिया जायेगा तथा किन क्षेत्रों को छोडा जायेगा? तथा कौन–कौन से मुद्दों कौन–कौन सी संस्थाये देखेगी?
6. क्या उन मुद्दो हेतु कोई समय सीमा निर्धारित की जायेगी?
7. क्या जो शीर्षक बहस के लिये चुने गये हैं? वे समाचार के प्रथम पृष्ट पर प्रकाशित होंगे या किसी और पृष्ट पर?
8. कौन से संवाददाता या संस्था इन मुद्दों पर लिखेंगे?
9. किस प्रकार के संदेश का प्रयोग किया जायेगा?

एक समसामयिक मीडिया विश्लेषण का त्वरित उदाहरण अमेरिका में कार्य करने वाले श्रमिकों पर किया गया। जिसका उद्देश्य श्रमिकों की कम आय का विष्लेशण करना था। इस उदाहरण का अग्रलिखित लिंक पर खोजा जा सकता है। (Between A Rock and a Hard Place: An Analysis of Low-Wages Workers in the Media).

अभ्यास प्रश्न–**1**

टिप्पणी : (क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

(ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

टेक्चुअल विश्लेषण के बारे में एक संक्षिप्त ब्यौरा तैयार कीजिए।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

....
....
....
....
....
....
....
....

बोध प्रश्न–**1**

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

मीडिया विश्लेषण के उपयोग की विधि के बारे में लिखिये और उत्तर लिखने से पहले मुख्य शब्दों पर निशान लगाइयें।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

8.5 अन्तर्वस्तु विश्लेषण की परिभाषा

अन्तर्वस्तु विष्लेशणकी प्रमुख परिभाषाएँ निम्नलिखित हैं –

बरनाई बेरेलसन के अनुसार 'अंतर्वस्तु विश्लेषण सम्प्रेषण के प्रकट अंतर्वस्तु के वैषयिक, व्यवस्थित तथा गुणात्मक वर्णन के लिए अनुसंधान की प्रविधि है।''

ए. कपलान के भाब्दों में ''अन्तर्वस्तु विश्लेषण एक दी हुई बातों के अर्थो की व्यवस्थित तथा मात्रात्मक रूप में व्याख्या करने का प्रयास करता है।''

एल. एल. जेनिस के अनुसार ''अन्तर्वस्तु विश्लेषण को संकेत वाहकों के वर्गीकरण हेतु प्रविधि के रूप में उल्लिखित करके परिभाषित किया जा सकता है .... जो मात्र निर्णय पर निर्भर करता है।''

विलियम जे. गुडे तथा पाल के. हाट के अनुसार ''जब गुणात्मक सांकेतीकरण की विभिन्न सम्प्रेषण साधनों, जेसे पत्रिका, समाचार–पत्र, रेडियो प्रोग्राम अथवा इसी तरह की सामग्रियों की अन्तर्वस्तु के सन्दर्भ में प्रयुक्त किया जाता है, यह अन्तर्वस्तु विश्लेषण कहलाता है।''

पी. वी. यंग के अनुसार ''अन्तर्वस्तु विश्लेषण साक्षात्कारों, प्रश्नावलियों, अनुसूचियों तथा अन्य भाषा विषयक अभिव्यक्तियों, लिखित अथवा मौखिक द्वारा प्राप्त अनुसंधान दत्त की अन्तर्वस्तु के व्यवस्थित, वैषयिक तथा मात्रात्मक वर्णन हेतु अनुसंधान की एक प्रविधि है।''

उपर्युक्त परिभाषाओं में बेरेलसन द्वारा प्रस्तुत की गई परिभाषा सामाजिक अनुसंधान के लेखकों द्वारा सर्वोत्कुष्ट एवं प्रामाणिक मानी जाती है। डार्विन पी. कार्टराइट के अनुसार – ''यदि उदारतापूर्वक इसकी व्याख्या की जाय तो यह एक सन्तोषजनक परिभाषा है।''

8.5.1 अन्तर्वस्तु विश्लेषण की विशेशताएँ

उपर्युक्त विवरणों एवं परिभाषाओं के आधार पर अन्तर्वस्तु विश्लेषण की निम्नलिखित विशेषताएँ उल्लेखित की जा सकती है –

1. अन्तर्वस्तु विश्लेषण अनुसंधान की एक प्रविधि है।
2. इसके अन्तर्गत अनुसंधान की गुणात्मक सामग्री को विभिन्न उचित श्रेणियों में वर्गीकृत किया जाता है।
3. इसके आधार पर गुणात्मक सामग्री का वैषयिक अध्ययन सम्भव होता है।
4. इसके अन्तर्गत सामग्री का व्यवस्थित अध्ययन किया जाता है।
5. इसके अन्तर्गत गुणात्मक सामग्री को मात्रात्मक सामग्री में परिणित करके परिमापन योग्य बनाया जाता है।
6. इसके अन्तर्गत गुणात्मक सामग्री का वैज्ञानिक ढंग से विष्लेशणतथा निर्वचन किया जाता है।

8.5.2 अन्तर्वस्तु विश्लेशण के उद्देश्य

अन्तर्वस्तु विष्लेशणका प्रधान उद्देश्य गुणात्मक सामग्री को वैज्ञानिक स्वरूप प्रदान करना है। डार्विन पी. कार्टराइट के अनुसार ''अन्तर्वस्तु का उद्देश्य अपरिष्कृत घटना को ऐसे दत्तों में परिवर्तित करना है जो वैज्ञानिक ढंग में आवश्यक रूप से प्रस्तुत की जा सके ताकि ज्ञान के निकाय की रचना की जा सके।'' डारविन पी. कार्टराइट के ही अनुसार – ''अधिकांशतः अन्तर्वस्तु विश्लेषण का संचालन इस प्रकार करना चाहिए ताकि (1) पुनरोत्पादन योग्य अथवा वैषयिक दत्तों की उत्पत्ति सम्भव हो सके जो (2) परिमापन तथा मात्रात्मक क्रिया के प्रति संवेदनशील हों, (3) कुछ व्यवस्थित सिद्धांत के लिए महत्वपूर्ण हों तथा (4) जो विश्लेषण सामग्री के विशिष्ट समूह के परे सामान्यकृत की जा सके।'' तथापि विवेचनागत अध्ययन की सुमगता हेतु अन्तर्वस्तु विश्लेषण के प्रमुख उद्देश्यों को निम्नलिखित बिन्दुओं में प्रस्तुत करके प्रदर्शित किया जा सकता है।

1. **गुणात्मक अध्ययनों को मात्रात्मक रूप में परिवर्तित करना** – सामाजिक घटनाओं की प्रकृति मूलतः गुणात्मक होती है परन्तु गुणात्मक तथ्यों को जब तक मात्रात्मक रूप में प्रदर्शित नहीं किया जाता तब तक न तो उसका वैज्ञानिक विश्लेषण प्रस्तुत किया जा सकता है और न ही सांख्यिकीय पद्धतियों के द्वारा निर्वचन किया जा सकता है, अतः अन्तर्वस्तु विश्लेषण प्रविधि के द्वारा गुणात्मक सामग्री को ऐसी सामग्री में परिवर्तित किया जाता है जिससे उसको वर्गीकृत एवं श्रेणीबद्ध करके सारणियों में रखकर प्रस्तुत करने योग्य हो जाता है तथा उनका वैज्ञानिक व सांख्यिकीय विश्लेषण आसानी से हो जाता है।

2. **गुणात्मक अध्ययनों को वैशयिक बनाना** – अन्तर्वस्तु विश्लेषण का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य गुणात्मक अध्ययनों को वैषयिक बनाना है। कहना न होगा कि वैषयिकता के अभाव में अनुसंधान की विश्वसनीयता तथा प्रामाणिकता लुप्त हो जाती है।

3. **गुणात्मक तथ्यों को परिमापन के योग्य बनाना** – अन्तर्वस्तु विश्लेषण का तृतीय महत्वपूर्ण उद्देश्य गुणात्मक तथ्यों को इस योग्य बनाना है, जिससे कि उनका परिमापन सरलता से किया जा सके।

4. **सम्प्रेशण के साधनों के अध्ययन को सुगम बनाना** – आजकल सम्प्रेषण के साधन पर्याप्त विकसित हो गये हैं। अन्तर्वस्तु विश्लेषण के द्वारा सम्प्रेषण के साधनों के प्रभावों का अध्ययन किया जा सकता है। साथ ही इस प्रविधि के द्वारा सम्प्रेषण के विभिन्न साधनों के प्रभाव का भी तुलनात्मक अध्ययन सम्भव है।

5. **प्रचार के साधनों का विस्तार करना** – वास्तव में इस प्रविधि की सहायता से प्रचार के अच्छे साधनों का विकास किया जा सकता है। प्रचार के साधनों के प्रभाव को जानने के लिए भी अन्तर्वस्तु विश्लेषण प्रविधि अत्यन्त सहायक होती है।

6. **वैज्ञानिक विश्लेषण तथा निर्वचन को सरल बनाना** – अन्तर्वस्तु विश्लेषण का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य गुणात्मक तथ्यों का वैज्ञानिक विष्लेशणतथा निर्वचन सरलता से करना है।

7. **व्यवस्थित सिद्धांत का निर्माण करना** – अन्तर्वस्तु विश्लेषण का सप्तम महत्वपूर्ण उद्देश्य व्यवस्थित सिद्धांत का निर्माण करना है।

8. **तथ्यों का सामान्यकरण करना** – अन्तर्वस्तु विश्लेषण का एक मुख्य उद्देश्य तथ्यों का सामान्यकरण करना भी है। इस प्रविधि के द्वारा तथ्यों को इस रूप में प्रस्तुत किया जाता है कि उन्हें सामान्यकरण के कार्य में लाया जा सके तथा उनके आधार पर अध्ययन के क्षेत्र से परे अन्य समूहों के विषय में भी सामान्यकरण किया जा सके।

बोध प्रश्न–2

टिप्पणी : (क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।
(ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

बताइए कि निम्नलिखित सही है या गलत और संबंधित खाने में टिक (✓) का निशान लगाइए।

	सही	गलत
7. अन्तर्वस्तु विष्लेशणअनुसंधान की एक प्रविधि है।	☐	☐
8. अन्तर्वस्तु विष्लेशणके अन्तर्गत अनुसंधान की गुणात्मक सामग्री को विभिन्न उचित श्रेणियों में वर्गीकृत किया जाता है।	☐	☐
9. अन्तर्वस्तु विष्लेशणके आधार पर गुणात्मक सामग्री का वैषयिक अध्ययन सम्भव होता है।	☐	☐
10. अन्तर्वस्तु विष्लेशणके अन्तर्गत सामग्री का व्यवस्थित अध्ययन किया जाता है।	☐	☐
11. अन्तर्वस्तु विष्लेशणके अन्तर्गत गुणात्मक सामग्री को मात्रात्मक सामग्री में परिणित करके परिमापन योग्य बनाया जाता है।	☐	☐
12. अन्तर्वस्तु विष्लेशणके अन्तर्गत गुणात्मक सामग्री का वैज्ञानिक ढंग से विष्लेशणतथा निर्वचन किया जाता है।	☐	☐

अभ्यास प्रश्न–2

टिप्पणी : (क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

(ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

अन्तर्वस्तु विश्लेषण की परिभाषा एवं उद्देश्यों के बारे में एक संक्षिप्त ब्यौरा तैयार कीजिए।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

8.5.3 अन्तर्वस्तु विश्लेषण के उपयोग

अन्तर्वस्तु विश्लेषण के अनेकानेक उपयोगों का एक विस्तृत विवरण स्वयं बेरेलसन ने प्रस्तुत किया है। बेरेलसन ने शाब्दिक सामग्री के अन्तर्वस्तु विश्लेषण के 16 उपयोगों की एक सूची प्रस्तुत की है। यद्यपि इसके विभिन्न वैकल्पिक तरीके हैं, जिसमें क्षेत्रीय कार्य को वर्गीकृत किया जा सकता है। परन्तु बेरेलसन द्वारा प्रस्तुत की गई सूची पूर्णतया सन्तोषजनक है। हम यहाँ प्रयोगों व उपयोगों का वर्णन पारिभाषित शब्दावली के मानकीकरण के हित में प्रस्तुत कर रहे हैं। अन्तर्वस्तु विश्लेषण के सन्दर्भ ग्रन्थों के प्रकाशनों के सम्बन्ध में विस्तृत अध्ययन के लिए वाचक बेरेलसन की पुस्तक का अनुशीलन करने के लिए प्रोत्साहित किये जा सकते हैं।

बेरेलसन द्वारा प्रतीकात्मक सामग्री के विश्लेषण के तीन विस्तृत उपागमों के नामों का उल्लेख किया गया है। प्रथमतः अनुसंधानकर्ता प्राथमिक रूप से स्वयं अन्तर्वस्तु में अभिरूचि लेता है। द्वितीयतः अन्तर्वस्तु के उत्पादकों अथवा इसके कारणों की विशेषताओं में अभिरूचि का अन्तर्वस्तु की प्रकृति से वैध अनुमानों को बनाने का प्रयत्न करता है। तृतीयतः वह अन्तर्वस्तु की व्याख्या इस प्रकार करता है ताकि इसके श्रोतागण इसके परिणामों की प्रकृति के बारे में कुछ उदघाटित कर सकें। कोई एकल अध्ययन के अन्तर्गत इन उपागमों में से एक से अधिक उपागमों का वरण किया जा सकता है, अथवा नहीं भी किया जा सकता है। बेरेलसन ने तीन विस्तृत उपागमों के अन्तर्गत अनेक उप–उपागमों का भी उल्लेख किया है। विवेचनागत अध्ययन की सुगमता हेतु इसको निम्नांकित चार्ट द्वारा प्रदर्शित किया जा सकता है।

यद्यपि अन्तर्वस्तु विश्लेषण प्रविधि का उपयोग प्राथमिक रूप से जनसंचार साधनों के सम्बन्ध में ही किया गया है। यह अन्य सामग्री के सन्दर्भ में भी समान रूप से प्रयोज्य है। उदाहरणार्थ, वैषयिक प्रलेखों, असंरचित साक्षात्कारों, प्रक्षेपण परीक्षणों, रोगी चिकित्सक अन्तर्क्रियाओं के अभिलेखों इत्यादि के सन्दर्भ में अन्तर्वस्तु विश्लेषण का प्रयोग किया जाता है।

8.5.4 बेरेलसन द्वारा किये गये अन्तर्वस्तु विश्लेषण के उपयोग के विभिन्न उपागम

1. **अन्तर्वस्तु** विश्लेषण **की विशेशताएँ**

   i) सम्प्रेषण अन्तर्वस्तु में पाई जाने वाली प्रवृत्तियों का वर्णन करना।

   ii) विद्वता के विकास का पता लगाना।

   iii) सम्प्रेषण अन्तर्वस्तु के अन्तर्गत अन्तर्राष्ट्रीय भिन्नताओं को स्पष्ट करना।

   iv) सम्प्रेषण के माध्यमों अथवा स्तरों की तुलना करना।

   v) सम्प्रेषण मानदण्डों का निर्माण करना तथा प्रयोग में लाना।

   vi) प्रविधिक अनुसंधान क्रियाओं में सहायता प्रदान करना।

   vii) प्रचार की प्रविधियों को स्पष्ट करना।

   viii) सम्प्रेषण सामग्री की पठनीयता का परिमापन करना।

   ix) शैली सम्बन्धी विशेषताओं का अन्वेषण करना।

2. **अन्तर्वस्तु के उत्पादक अथवा कारण**

   i) सम्प्रेषकों के अभिप्रायों तथा अन्य विशेषताओं का ज्ञान करना।

   ii) व्यक्तियों तथा समूहों की मनोवैज्ञानिक स्थिति का निर्धारण करना।

   iii) प्रचार के अस्तित्व का (प्राथमिक रूप से वैधानिक उद्देश्यों के लिए) पता लगाना।

   iv) राजनीतिक तथा सैनिक समाचार प्राप्त करना।

3. **अन्तर्वस्तु के श्रोतागण अथवा परिणाम**

   i) जनसंख्या समूहों की अभिवृत्तियों, अभिरूचियों तथा मूल्यों (सांस्कृतिक प्रतिमानों) को परिवर्तित करना।

   ii) ध्यान के केन्द्र बिन्दु को स्पष्ट करना।

   iii) सम्प्रेषण के अभिवृत्यात्मक तथा व्यवहारात्मक प्रत्युत्तरों का वर्णन करना।

8.5.5 अन्तर्वस्तु विश्लेषण के प्रकार

प्रसिद्ध मनोविज्ञानवेत्ता डी. सी. मैकक्लेलैण्ड ने अन्तर्वस्तु विष्लेशणके विभिन्न रूपों का उल्लेख किया है, जो निम्नलिखित हैं –

1. **अन्तर्क्रिया–प्रक्रिया विश्लेषण** – अन्तर्वस्तु विष्लेशणके इस प्रकार के अन्तर्गत सामाजिक अन्तर्क्रिया के सन्दर्भ में अन्तर्वस्तु को वर्गीकृत एवं श्रेणीबद्ध किया जाता है। इसके अन्तर्गत लघु–समूहों के अनुसंधानों का विश्लेषण किया जाता है।
2. **मूल्य विश्लेषण** – इसके अन्तर्गत अन्तर्वस्तु का वर्गीकरण तथा सम्प्रत्ययीकरण, व्यवहार इकाइयों में उल्लेखित विभिन्न मूल्यों के अनुसार करने का प्रयास किया जाता है।
3. **प्रयोजन अनुक्रम विश्लेषण** – इसके अन्तर्गत जब विषयी अभिप्रेरित स्थितियों के प्रभाव के आधीन होते हें, तो दत्त में जो परिवर्तन घटित होते हैं, को प्राप्तांक प्रदान करने का प्रयास किया जाता है।

4. **प्रतीकात्मक विश्लेषण** – विशेषकर मनोवैश्लेषिक सामग्री ''प्रकट अन्तर्वस्तु के पीछे अप्रकट अर्थ'' के विष्लेशणहेतु इस प्रविधि का प्रयोग किया जाता है।

इस प्रकार के अतिरिक्त कुछ अन्य समाज वैज्ञानिक अन्य प्रकार के सामाजिक विश्लेषण की चर्चा प्रस्तुत करते हैं।

बोध प्रश्न–3

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

अर्न्तवस्तु विष्लेशणके उपयोगों को बिन्दुवत लिखिये और उत्तर लिखने से पहले मुख्य शब्दों पर निशान लगाइयें।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

अभ्यास–3

अर्न्तवस्तु विश्लेषण के प्रकारों के बारे में एक संक्षिप्त ब्यौरा तैयार कीजिए।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

....
....
....
....
....
....
....
....
....

8.5.6 अन्तर्वस्तु विश्लेषण वर्गीकरण के आधार

अन्तर्वस्तु विष्लेशणवर्गीकरण के निम्नलिखित आधार होते हैं –

1. **दो वर्गीय विभाजन** – इसके अन्तर्गत किसी परिवर्त्य की उपस्थिति अथवा अनुपस्थिति।
2. **स्तरीय विभाजन** – यह वर्गीकरण किसी कम की श्रेणी अथवा उसके स्तर को बताता है, जैसे – उच्च, मध्यम तथा निम्न स्तर। इसके अन्तर्गत तीन अथवा तीन से अधिक स्तर भी हो सकते हैं।
3. **परिदर्त्यी वर्गीकरण** – इस वर्गीकरण के अन्तर्गत वर्गान्तर में परिवर्त्य विभाजित होते हैं। इसमें शून्य भी हो सकता है तथा नहीं भी। यह परिवर्त्य की प्रकृति पर निर्भर करता है।

8.5.7 अन्तर्वस्तु विश्लेषण की रूपरेखा के निर्माण में प्रमुख सोपान

एक दी गई परियोजना के लिए सन्तोषजनक अन्तर्वस्तु विश्लेषण की रूपरेखा के निर्माण में डार्विन पी. कार्टराइट ने छः प्रमुख सोपानों का उल्लेख किया है जो निम्नलिखित हैं –

1. **आवश्यक दत्तों का विशिश्ट विवरण देना** – एक विश्लेषण की रूपरेखा की रचना करने के संदर्भ में यह आवश्यक है कि जो दत्त अनुसंधानकर्ता के सम्पूर्ण अनुसंधान अभिकल्प के लिए अपेक्षित है उसको विशेष रूप से अपने मस्तिष्क में धारण किये रहना चाहिये तथा उसका विशिष्ट विवरण प्रस्तुत करना चाहिये।

   सम्पूर्ण अनुसंधान के लिए आवश्यक दत्तों का विशिष्ट रूप से विवरण दिया जाना चाहिए। ऐसे पूर्ण निर्धारित दत्त विष्लेशणको एक निश्चित दिशा प्रदान करते हैं तथा आवश्यक तथ्यों के संकलन में सहायता प्रदान करते हैं।

2. **सारणीकरण हेतु योजनाओं का निर्माण करना** – विश्लेषण रूपरेखा की रचना करने के पूर्व सांकेतिक दत्तों के सारणीकरण के लिए स्पष्ट आयोजन कर लेने से बाद में आने वाली कठिनाइयों को परिहार किया जा सकता है। यह निश्चित कर लेने से कि सांकेतिक दत्तों का यांत्रिक प्रक्रियाकरण के लिए कार्ड़ो पर छिद्रित किया जाना है, विश्लेषण प्रक्रिया में सहायता प्राप्त होती है। सारणीकरण हेतु ऐसी योजनाओं के निर्माण से सारणीकरण की क्रिया अत्यन्त सरल हो जाती है। साथ ही साथ वर्गीकरण में भी सहायता प्राप्त होती है।
3. **रूपरेखा का ढाँचा तैयार करना** – इस सोपान स्तर पर परिवर्त्यो की सूची तैयार करना अत्यन्त उपयोगी होगा जिसके आधार पर अन्तर्वस्तु का सांकेतीकरण किया जाता है। यदि अनुसंधान में साक्षात्कारों का विश्लेषण करना है तो इन परिवत्यों का प्रयोग न केवल उत्तरदाताओं के मनोवैज्ञानिक संगठन के बारे में प्रश्नों के उत्तरों की विभिन्न विशेषताओं को

वर्गीकृत करने में किया जाएगा, प्रत्युत ऐसे तथ्यों, जैसे उसकी आयु, वैवाहिक परिस्थिति तथा जन–सांख्यिकीय अथवा व्यवहारात्मक विशेषताओं के वर्गीकरण में भी किया जा सकता है।

4. **परिवर्त्य की श्रेणियों को भरतना** – श्रेणियों की अनेक व्यवस्थाएं हैं, जिनका प्रयोग किसी दिए गए परिवर्त्य के संदर्भ में किया जा सकता है। इनका चयन अध्ययन के उद्देश्य तथा किये जाने वाले परिमापों के प्रकार पर निर्भर करता है। जिस प्रकार की व्यवस्था का चयन किया जाय, विष्लेशणको लेजार्सफिल्ड तथा बारटन के इस वक्तव्य ''तार्किक शुद्धता की अपेक्षा'' की पूर्ति करनी चाहिए। प्रत्येक परिवर्त्य के अनुरूप ही श्रेणियों का निर्माण किया जाता है। श्रेणियों की संख्या इतनी पर्याप्त होनी चाहिए ताकि तथ्यों को उनमें सुगमतापूर्वक रखा जा सके। प्रत्येक परिर्वत्य को पृथक श्रेणी में रखा जाना चाहिए।

5. **सामग्री को इकाईबद्ध करने के लिए कार्य प्रणाली की स्थापना करना** – अन्तर्वस्तु विष्लेशणके अन्तर्गत तीन प्रकार की इकाइयों – (1) अभिलेख इकाई, (2) संदर्भ इकाई तथा परिगणन इकाई को सम्मिलित किया जाता है। अन्तर्वस्तु विष्लेशणकी रूपरेखा के निर्माण में इस सोपान के अन्तर्गत अध्ययन में प्रयोग की जाने वाली इकाइयों की कार्यकारी परिभाषा प्रस्तुत करनी चाहिए ताकि विविध सांकेतिक समान सामग्री का प्रयोग समान ढंग से करने में सक्षम तथा समर्थ हो सकें।

6. **विश्लेषण रूपरेखा की परीक्षा लेना तथा कार्य–प्रणाली को इकाईबद्ध करना** – विष्लेशणरूपरेखा तथा इकाईबद्ध कार्यप्रणाली को विकसित कर लेने के उपरान्त, उन्हें प्रारम्भिक रूप में अन्तर्वस्तु के संदर्भ में प्रयुक्त करना चाहिए ताकि यह स्पष्ट रूप से ज्ञात किया जा सके कि किस प्रकार के संशोधनों की आवश्यकता है। ऐसा करने से विष्लेशणकार्य व्यवस्थित हो जाता है।

8.5.8 अन्तर्वस्तु विश्लेषण की रूपरेखा का निर्माण

बेरेल्सन के अनुसार अन्तर्वस्तु विश्लेषण की रूपरेखा के अन्तर्गत निम्नलिखित बातों को सम्मिलित करना चाहिए –

(क) क्या कहा गया है ?

1. विषय–वस्तु : सम्प्रेषण किस विषय में है ?
2. निर्देशन : विषय के प्रति किया गया बर्ताव अनुकूल अथवा प्रतिकूल है ?
3. मानदण्ड : वह आधार या पृष्ठभूमि क्या है जिस पर निर्देशन का वर्गीकरण किया गया है ?
4. मूल्य : कौनसे उद्देश्य स्पष्ट अथवा अस्पष्ट रूप से सामने आए है ?
5. ढंग : उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए किन ढंगों अथवा कार्यो का प्रयोग किया गया है ?
6. लक्षण : व्यक्तियों की कौनसी विशेषताएँ स्पष्ट की गई हैं ?
7. कर्त्ता : क्रिया को कौन आरम्भ करता है ?
8. अधिकार : किसके नाम में कथन जारी किये जाते हैं ?
9. उत्पत्ति : सम्प्रेषण की उत्पत्ति का क्या स्थान है ?
10. लक्ष्य : सम्प्रेषण किसक प्रति विशिष्ट रूप से निर्देशित है ?

इसे किस प्रकार कहा गया है ?

1. सम्प्रेषण का स्वरूप : यह कथा, समाचार, टेलीविजन इत्यादि क्या है ?
2. कथन का स्वरूप : विष्लेशणकी इकाई का व्याकरणात्मक अथवा वाक्यीय स्वरूप क्या है ?
3. तीव्रता : सम्प्रेषण में कितनी शक्ति अथवा उत्तेजनात्मक मूल्य पाया जाता है ?
4. युक्ति : सम्प्रेषण की सैद्धान्तिक अथवा प्रचारात्मक प्रकृति क्या है ?
5. प्रत्येक परिवर्त्य की श्रेणियों को भरा जाना चाहिए।
6. सामग्री को इकाईबद्ध करने की कार्य रीति की स्थापना की जानी चाहिए।
7. विश्लेषण : रूपरेखा एवं इकाईबद्ध करने की कार्यरीति को प्रयोग में लाया जाना चाहिए।

8.5.9 विश्लेषण की रूपरेखा का उपयोग

यदि अन्तर्वस्तु विश्लेषक उपर्युक्त बताये गये सोपानों का निपुणता से प्रयोग करता है, तब उसे उसके अनुसंधान उद्देश्यों, अन्तर्वस्तु को उपयुक्त, कार्यकुशल सारणीयन तथा सांख्यिकीय व्यवहार के उपयुक्त एक विष्लेशणरूपरेखा बनाने की आवश्यकता होती है। वास्तव में इस स्तर पर निम्नलिखित सोपानों से होकर गुजरने का प्रयास करना चाहिए –

1. सांकेतकों का चयन
2. सांकेतकों का प्रशिक्षण
3. सांकेतीकरण की क्रियाविधि

इन तथ्यों का उल्लेख हमने अध्याय 'दत्त प्रक्रियाकरण' में किया है। अतः यहाँ इनकी पुनरावृत्ति करना अनुपयुक्त प्रतीत होता ळें

8.5.10 अन्तर्वस्तु विश्लेषण की प्रमुख समस्याएँ

अन्तर्वस्तु विश्लेषण प्रविधि के अन्तर्गत यद्यपि सामाजिक घटना के गुणात्मक तथ्यों को वैज्ञानिक तथ्यों में रूपान्तरित करने का अथक प्रयास किया जाता है, तथापि इस कार्य को सम्पादित करने में कुछ व्यावहारिक समस्याएँ अवरोध उत्पन्न करती है जो निम्नलिखित है –

1. **वैशयिकता की समस्या** – अन्तर्वस्तु विश्लेषण के अन्तर्गत गुणात्मक दत्त सामग्री को वैषयिक दत्तों में परिवर्तित करने का प्रयास किया जाता है। परन्तु समस्या यह है कि यह दत्त वैषयिक हैं अथवा नहीं, इसकी जाँच किस आधार पर की जाय। वास्तव में सामग्री के परिवर्तन करने के कुछ मौलिक सिद्धांत होने चाहिएए जिसके आधार पर अन्य व्यक्ति भी इसकी जाँच कर सके। उदाहरणस्वरूप, माना कि एक अनुसंधानकर्ता ने एक राजनीतिक नेता द्वारा दिये गये व्याख्यान को दत्त सामग्री के रूप में संकलित किया है जो किसी प्रतिष्ठित समाचार–पत्र में प्रकाशित हो चुका है अथवा निदर्शन साक्षात्कार में उत्तरदाताओं द्वारा दिये गये प्रत्युत्तरों को संकलित किया गया है। इस विवरणात्मक सामग्री को किस प्रकार विश्लेषित किया जाय कि अन्य अनुसंधानकर्ता भी इसको स्वतन्त्रता से सत्यापित कर सकें। इस समस्या के चार पहलू स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होते हैं–

   (क) विश्लेशणकी रूपरेखा के अन्तर्गत प्रयोग किए जाने वाले परिवर्त्य – वैषयिकता के लिए यह आवश्यक है कि स्पष्ट रूप से उन परिवर्त्य का विशिष्ट विवरण प्रस्तुत किया जाय जिनके सम्बन्ध में उपलब्ध सामग्री का वर्णन किया जाना है। लेकिन कभी–कभी किसी संक्षिप्त विवरण के बारे में परिवर्त्यों का विशिष्ट विवरण जो अनुसंधानकर्ता प्रस्तुत करते हैं उनमें

अनुरूपता नहीं रहती है, अथवा किसी विशिष्ट विवरण के बारे में परिवर्त्यों का विवरण प्रस्तुत करना कठिन हो जाता है।

(ख) प्रत्येक परिवर्त्य के लिए श्रेणियों – परिवर्त्य के अनुरूप श्रेणियों का निर्माण करना आवश्यक होता है, परन्तु कभी–कभी इस सम्बन्ध में कठिनाई आ जाती है। अतः ऐसी स्थिति में प्रत्येक परिवर्त्यों की प्रथम श्रेणी में रखने में असुविधा प्रतीत होती है, परन्तु पुनरोत्पादन योग्य अन्तर्वस्तु विष्लेशणके लिए यह आवश्यक है कि प्रत्येक परिवर्त्य के लिए प्रयोग की जाने वाली श्रेणियों का विशिष्ट विवरण प्रस्तुत किया जाय।

(ग) प्रत्येक श्रेणी हेतु परिचालनात्मक परिभाशा – विभिन्न विश्लेषकों द्वारा किए गये विष्लेशणमें सहमति प्राप्त करने के लिए उन नियमों का स्पष्ट उल्लेख किया जाना चाहिए जो यह निर्देश देते हैं कि सामग्री में किन लक्षणों के पाये जाने पर इसे एक विशिष्ट श्रेणी में स्थान प्रदान किया जाय। इन नियमों से सम्बन्धित वक्तव्यों को ही श्रेणी की परिचालनात्मक परिभाषा के नाम से सम्बोधित करते हैं।

परिचालनात्मक परिभाषाओं का निर्माण करते समय सर्वप्रथम प्रयोग में लायी जाने वाली विष्लेशणकी इकाइयों का नामांकन आवश्यक होता है परन्तु वास्तव में ऐसा नहीं हो पाता है।

(घ) अनुभवात्मक अन्तर्वस्तु से विश्लेशणरूपरेखा का अनुकूलन – अत्यधिक तार्किक रूप से निर्मित तथा सैद्धांतिक रूप से सौन्दर्यात्मक विष्लेशणकी योजना भी वैषयिक परिणाम प्रदान नहीं कर सकती जब तक कि वह विश्लेषित की जाने वाली सामग्री के लिए उपयुक्त न हो। अन्तर्वस्तु विष्लेशणके अन्तर्गत अनुभवात्मक अन्तर्वस्तु से विष्लेशणरूपरेखा का अनुकूलन होना एक महत्वपूर्ण समस्या है।

2. **परिमापन की समस्या** – अन्तर्वस्तु विष्लेशणके अन्तर्गत गुणात्मक सामग्री को मात्रात्मक सामग्री में परिवर्तित करने का प्रयास किया जाता है। परन्तु परिमाणन करते समय कई प्रकार की कठिनाइयाँ आती है जिनमें मुख्य ये हैं–

(क) परिगणन की इकाइयाँ – प्रथम महत्वपूर्ण समस्या इकाइयों के निर्धारण की है। वास्तव में परिमाणन के लिए इकाई का निर्धारण सम्पूर्ण अन्तर्वस्तु विष्लेशणके उद्देश्यों के आधार पर किया जाना चाहिए परन्तु ऐसा करना एक कठिन कार्य होता है।

(ख) श्रेणीकरण की व्यवस्था – परिमाणन के सन्दर्भ में द्वितीय समस्या श्रेणीकरण की व्यवस्था है। वास्तव में परिमाणन न केवल परिगणन की इकाइयों पर ही निर्भर करता है प्रत्युत श्रेणियों के अन्तर्गत क्रमबद्ध सम्बन्धों की उपस्थिति पर भी निर्भर करता है। परन्तु श्रेणीकरण की व्यवस्था करना सहज नहीं है, जैसा कि साधारणतः सोचा जाता है।

(ग) मात्रात्मक सम्बन्धों को निर्धारित करने के लिए प्रमुख कारण – परिमाणन के सन्दर्भ में अनुसंधानकर्ता को प्रतीकात्मक गुणात्मक सामग्री को मात्रात्मक सामग्री में परिवर्तित करते समय विभिन्न प्रकार के वैज्ञानिक प्रस्तावों का अनुगमन करना पड़ता है, जैसे उसका मुख्य उद्देश्य कार्यकारण सम्बन्धों को ज्ञात करना होता है। परन्तु गुणात्मक सामग्री का कार्य कारण सम्बन्ध ज्ञात करने में अनेक कठिनाइयाँ आती है।

3. **सार्थकता की समस्या** – अनुसंधान में अन्तर्वस्तु विष्लेशणकी प्रमुखता के सन्दर्भ में एक गंभीर आलोचना यह की जा सकती है कि इसके द्वारा प्राप्त ''उपलब्धियों'' के सिद्धान्त अथवा प्रयोग हेतु कोई स्पष्ट सार्थकता नहीं है। इस क्षेत्र में हुए कार्यो का सिंहावलोकन करने पर एक व्यक्ति इस तथ्य से प्रभावित हो सकता है कि अधिकांश अध्ययन परिशुद्ध गणन आकर्षण द्वारा निर्देशित किये गये हैं। डार्विन पी0 कार्टराइट ने उचित ही लिखा है – ''दुर्भाग्यवश अन्तर्वस्तु प्रयोग

विष्लेशणके लिए सिद्धान्त अथवा प्रयोग के सन्दर्भ में बिना किसी सराहनीय योगदान के उपर्यक्त परिगणन की वैषयिकता तथा परिमापन की आवश्यकताओं की पूर्ति करना सम्भव है।''

4. **सामान्वीकरण की समस्या** – सिद्धान्ततः अन्तर्वस्तु विष्लेशणअपने परिणामों अथवा उपलब्धियों को वास्तविक रूप में विश्लेषित सामग्री तक ही सीमित करने में रूचि नहीं लेता है। वह अपने विष्लेशणपरिणाम को दत्तों के सामान्य समग्र पर सामान्यीकृत करता है। परन्तु एक दत्तों के सीमित समूह के अध्ययन परिणामों तथा उपलब्धियों को अधिक समग्र पर लागू व सामान्यीकृत करना तर्कसंगत तब तक नहीं होगा जब तक निश्चित स्थितियों की पूर्ति न की जाय तथा निश्चित कार्य प्रणालियों का अनुगमन न किया जाय। परन्तु सार्वभौमिक प्रस्तावों की स्थापना तभी वैध मानी जायेगी जबकि ये प्रस्ताव समग्र के वास्तविक प्रतिनिधित्वपूर्ण निदर्शन पर अवलम्बित हों। यदि ये प्रस्ताव प्रतिनिधित्वपूर्ण निदर्शन के आधार पर स्थापित नहीं किए गए तो ये सार्वभौमिक रूप से सामान्यीकृत नहीं किए जायेंगे। अन्तर्वस्तु विष्लेशणके अन्तर्गत प्रतिनिधित्वपूर्ण निदर्शन का चयन करना एक मुख्य समस्या है।

5. **विश्वसनीयता की समस्या** – अन्तर्वस्तु विश्लेषणात्मक अध्ययन के सम्बन्ध में एक मुख्य समस्या विश्वसनीयता की भी है। अन्तर्वस्तु विष्लेशणके अन्तर्गत चूँकि गुणात्मक दत्त सामग्री को मात्रात्मक दत्त सामग्री में परिवर्तित किया जाता है परन्तु यह दत्त सामग्री विश्वसनीय है अथवा नहीं ? इसकी जाँच का आधार क्या है ? इसका समुचित एवं तर्कसंगत उत्तर अन्तर्वस्तु विश्लेषक नहीं पाता है।

अन्तर्वस्तु विश्लेषण की उपर्युक्त समस्याओं के बावजूद भी यह कहने में कोई संकोच नहीं होना चाहिए कि गुणात्मक सामग्री के विश्लेषण के सन्दर्भ में अन्तर्वस्तु विश्लेषण अत्यन्त उपयोगी है। इसके माध्यम से हमें किसी श्रेणी विशेष को प्रदान किए गए विशिष्ट अर्थ का ज्ञान हो सकता है तथा विभिन्न प्रकार की नई अन्तर्दृष्टियाँ प्राप्त हो सकती है। नई अन्तर्दृष्टियों के सन्दर्भ में मर्टन ने लिखा है– ''साक्षात्कार का विष्लेशणसुराग प्रदान करता है'' तथा बेटेलहिम तथा जैनोविच ने यह उद्गार व्यक्त किया है कि साक्षात्कार अभिलेखों की परीक्षा अभिरूचिपूर्ण प्राकल्पनाओं को सुझाती है जो आंशिक रूप से यह स्पष्ट कर सकती है कि कुछ व्यक्ति सामान्य प्रचलित प्रतिमानों से क्यों विचलित होते हैं।

8.6 सारांश

इस इकाई में प्रस्तुत किये तथ्यों के आधार पर आप लोग टेक्चुअल, मीडिया एवं अन्तर्वस्तु विष्लेशणके बारे में जानकारी प्राप्त कर लिये होगें। वास्तव में टेक्चुअल विष्लेशणको हम आज के समय के परिप्रेक्ष्य में देखे तो हमें ज्ञात होगा कि यह विष्लेशणभाषा, हाव–भाव, प्रतीकों एवं परिस्थितियों का वास्तविक निरूपण करने पर जोर देता है। ऐसा इसलिये क्योंकि व्यक्ति जब किसी प्रश्न का उत्तर देता है तो उस समय उसके चेहरे की प्रतिक्रिया उसके द्वारा दिये गये उत्तर की प्रतिपुष्टि कर देती है। कभी–कभी हम कोई दृश्य देखते हैं तो उसके साथ किसी प्रकार की भाषा नहीं लिखी रहती है फिर भी हम उस दृश्य का वास्तविक अर्थ निकालने का प्रयास करते हैं एवं उसका अपने भाषा में वर्णन भी करने में समर्थ होते हैं। उसी प्रकार आज के समय में मीडिया विष्लेशणज्वलंत मुद् दों के बारे में हमें ज्ञान प्रदान करता है।

प्रस्तुत इकाई में अन्तर्वस्तु विष्लेशणके बारे में विस्तृत ब्यौरा प्रस्तुत किया गया जिसमें अन्तर्वस्तु विष्लेशणकी परिभाषा प्रस्तुत की गई है। वास्तव में अन्तर्वस्तु विष्लेशणसम्प्रेषण के प्रकट अन्तर्वस्तु के वैषयिक, व्यवस्थित तथा गुणात्मक वर्णन के लिए अनुसंधान की प्रवृधि है। प्रस्तुत इकाई में अन्तर्वस्तु की विशेषताएं, उद्देश्य, उपयोग, प्रकार तथा समस्याओं के बारे में बृहद चर्चा की गई है।

आशा ही नहीं अपितु पूर्ण विश्वास है कि प्रस्तुत इकाई के द्वारा प्रस्तुत किये गये ज्ञान आप के द्वारा किये जाने वाले अनुसंधानों में अत्यधिक महत्वपूर्ण साबित होंगे।

8.7 शब्दावली

टेक्चुअल विश्लेषण –टेक्चुअल विश्लेषण वह विश्लेषण है जिसके माध्यम से हम वास्तविक परिस्थियों के बारे ज्ञान प्राप्त करने का प्रयास करते हैं। वह परिस्थितियॉ प्रतीकों, भाव–भंगिमाओं, प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष किसी भी रूप में हों।

मीडिया विश्लेषण – किसी भी मुद्दे को किस प्रकार से रखना है? तथा उसको समाज के सामने किस प्रकार प्रस्तुत करना है जिससे ज्यादा से ज्यादा मीडिया कवरेज प्राप्त हो, मीडिया विश्लेषण कहलाता है।

अन्तर्वस्तु विश्लेषण – अन्तर्वस्तु विश्लेषण का वास्तव में स्वाभाविक रूप से अभिलेखित की गई गुणात्मक सामग्री के रूप के किया जाता है। यह सामग्री के मात्रात्मिककरण या परिमाणन हेतु विस्तृत प्रविधियों का विकास करता है।

सांकेतीकरण – अनुसंधान द्वारा उत्पन्न सामग्री के विश्लेषण के सम्बन्ध प्रयुक्त किया जाता है।

बेरेलसन – एक समाजशास्त्री थे जिन्होनें शाब्दिक सामग्री के अन्तर्वस्तु विश्लेषण के 16 उपयोगों की एक सूची प्रस्तुत की।

8.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

7. सही
8. सही
9. सही
10. सही
11. सही
12. सही

8.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. सिंह, डॉ. एस.डी., वैज्ञानिक सामाजिक अनुसंधान एवं सर्वेक्षण के मूल तत्व, कमल प्रकाशन, इन्दौर, पेज 471–482, वर्ष 1995.
2. मुखर्जी, आर.एन., सामाजिक अनुसंधान तथा सांख्यिकी।
3. मैलिनोवस्की, कल्चर, इन दी इनसाइक्लोपीडिया ऑफ सोशल साइंसेज।
4. गोयल, डॉ0 सुनील एवं गोयल, संगीता, 'प्रारम्भिक सामाजिक अनुसंधान, आर0 बी0 एस0 ए0 पब्लिशर्स, जयपुर, वर्ष 2005, पेज सं0 54–61।

8.10 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1- Between A Rock and a Hard Place: An Analysis of Low-Wages Workers in the Media.
2. www.google.co.in
3. Learning material of Master of Social Work of Indira Gandhi National Open University.

8.11 निबंधात्मक प्रश्न

1. टेक्चुअल विश्लेषण के बारे में प्रकाश डालिये।
2. मीडिया विश्लेषण पर एक निबंध लिखियें
3. अन्तर्वस्तु विश्लेषण की अवधारणा के बारे में लिखिए।
4. अन्तर्वस्तु विश्लेषण की विशेषताएं कौन–कौन सी है?
5. अन्तर्वस्तु विश्लेषण के वर्गीकरण के आधार कौन–कौन से है?
6. अन्तर्वस्तु विश्लेषण के प्रकारों के बारे में लिखिए ?
7. अन्तर्वस्तु विश्लेषण की रूपरेखा का निर्माण कैसे किया जाता है ?

इकाई– 9 मूल्यांकनात्मक, कियात्मक तथा सहभागी अनुसंधान
Evaluative, Action & Participatory Research

9.0 इकाई का उद्देश्य
9.1 प्रस्तावना
9.2 मूल्यांकनात्मक अनुसंधान का अर्थ एवं परिभाषा
9.2.1 मूल्यांकनात्मक अनुसंधान की प्रविधियां
9.2.2 मूल्यांकनात्मक अनुसंधान की समस्यायें
9.3 क्रियात्मक अनुसंधान का अर्थ एवं परिभाषयें
9.3.1 क्रियात्मक अनुसंधान की विशेषताएँ
9.3.2 क्रियात्मक अनुसंधान के उद्देश्य
9.3.3 क्रियात्मक अनुसंधान के प्रकार
9.3.4 क्रियात्मक अनुसंधान के विभिन्न सोपान
9.3.5 क्रियात्मक अनुसंधान का महत्व व गुण
9.4 सहभागी अनुसंधान की अवधारणा
9.4.1 सहभागीी अनुसंधान एवं प्रत्यक्ष अनुसंधान
9.4.2 सहभागी अनुसंधान तकनीक के गुण
9.4.3 सहभागी अनुसंधान के दोष
9.4.4 सहभागी अनुसंधान के प्रकार
9.5 सारांश
9.6 शब्दावली
9.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
9.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
9.9 सहायक / उपयोगी पाठ्य सामग्री
9.10 निबंधात्मक प्रश्न

9.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप–

7. मूल्यांकनात्मक अनुसंधान का अर्थ एवं परिभाषा की जानकारी प्राप्त कर सकेगें।

8. मूल्यांकनात्मक अनुसंधान की प्रविधियों के बारे में चर्चा प्रस्तुत कर सकेगें।
9. मूल्यांकनात्मक अनुसंधान की समस्याओं को जान सकेगें।
10. क्रियात्मक अनुसंधान का अर्थ एवं परिभाषाओं पर प्रकाश डाल सकेगें।
11. क्रियात्मक अनुसंधान की विशेषताओं के बारे में लिख सकेगें।
12. क्रियात्मक अनुसंधान के उद्देश्यों पर प्रकाश डाल सकेगें।
13. क्रियात्मक अनुसंधान के प्रकारों का वर्णन कर सकेगें।
14. क्रियात्मक अनुसंधान के विभिन्न सोपानों का वृहद अध्ययन कर सकेगें।
15. क्रियात्मक अनुसंधान के महत्व व गुणों की व्याख्या कर सकेगें।
16. सहभागी अनुसंधान की अवधारणा के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेगें।
17. सहभागी अनुसंधान एवं प्रत्यक्ष अनुसंधान के बीच अन्तर स्पष्ट कर सकेगें।
18. सहभागी अनुसंधान तकनीक के गुणों की व्याख्या कर पायेंगें।
19. सहभागी अनुसंधान के दोषों पर प्रकाश डाल सकेगें।
20. सहभागी अनुसंधान के प्रकारों का वर्णन कर सकेगें।

9.1 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थियों प्रस्तुत इकाई आप लोगों के सामने प्रस्तुत है, जो आप लोगों को मूल्यांकनात्मक, क्रियात्मक एवं सहभागी अनुसंधान के बारे में जानकारी प्रदान करेगी। वास्तव में जब कोई अनुसंधान कर्ता योजना कार्यक्रमों का मूल्यांकन करना चाहता है तो वह मूल्यांकनात्मक अनुसंधान का प्रयोग कर कार्यक्रमों का मूल्यांकन करता है। इसी इकाई में किया अनुसंधान के बारे में भी वर्णन प्रस्तुत किया गया है। वास्तव में क्रियात्मक या क्रिया अनुसंधान वह है जो किसी समस्या या घटना के क्रियात्मक पक्ष की ओर अपना ध्यान केन्द्रित करता है, साथ ही अनुसंधान में प्राप्त निष्कर्षों को सामाजिक परिवर्तन के सम्बन्ध में भविष्य की योजनाओं से सम्बन्धित करता है। इकाई के अंत में सहभागी अनुसंधान के बारे में भी चर्चा प्रस्तुत की गई है जिसमें बताया गया है कि सहभागी अनुसंधान तकनीक में एक मानवशास्त्री को उन लोगों के बीच जाकर सामाजिक सदस्य के रूप में रहना पड़ता है जिनका वह अध्ययन करना चाहता है। एक मानवशास्त्री को सहभागी अनुसंधान के प्रयोग हेतु सम्बन्ध स्थापन का सहारा लेना पड़ता है। वह अध्ययन समूह के बीच जाकर निवास स्थान की खोज करता है।

वास्तव में ज्ञान प्राप्ति के उपागम के आधार पर सामाजिक अनुसंधान का तीसरा प्रकार मूल्यांकनात्मक अनुसंधान है। प्रसिद्ध समाजशास्त्री अगस्त कॉम्टे का कहना था कि समाज का विकास स्वतः होता है और अंत में समाज ऐसी अवस्था में पहुॅच जाता है जहॉ विकास की प्रक्रिया मानव द्वारा नियंत्रित, निर्देशित एवं संचालित होती है। मानव अपने योजना कार्यक्रमों का मूल्यांकन करना चाहता है। मानव के इस उद्देश्य की पूर्ति मूल्यांकनात्मक अनुसंधान करता है। इस प्रकार आप लोग प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद मूल्यांकनात्मक, क्रियात्मक तथा सहभागी अनुसंधान के बारे में वृहद जानकारी प्राप्त कर सकेगें तथा विभिन्न प्रकार के शोधों में इनका उचित रूप से प्रयोग कर सकेगें।

9.2 मूल्यांकनात्मक अनुसंधान का अर्थ एवं परिभाशा

मूल्यांकनात्मक अनुसंधान उस अनुसंधान को कहा जाता है जिसके द्वारा समाज में व्याप्त गुणात्मक प्रकृति के तथ्यों एवं प्रवृतियों के अध्ययन एवं उसके विष्लेशणके साथ ही साथ उनकी उपयोगिता को भी मूल्यांकित किया जाता है। इस प्रकार का अनुसंधान स्वाभाविक सामाजिक परिवर्तनों एवं नियोजित सामाजिक परिवर्तनों इन दोनों के ही स्वरूप को समझने के लिए उपयोगी है। विभिन्न सरकारें अपने

विभिन्न संगठनों के द्वारा अनेक तरह के कार्यक्रमों को लागू करती हैं। ऐसे कार्यक्रमों की सफलता एवं प्रगति को जानना आवश्यक प्रतीत होता है। इस आवश्यकता की पूर्ति मूल्यांकनात्मक अनुसंधान के द्वारा की जाती है।

मूल्यांकनात्मक अनुसंधान को विभिन्न विद्वानों ने परिभाषित किया है जो अग्रलिखित हैं–

मूल्यांकनात्मक अनुसंधान को परिभाषित करते हुए विलियमसन, कार्प एवं डालफिन ने 'दी रिसर्च क्राफ्ट में लिखा है, '' मूल्यांकनात्मक अनुसंधान वास्तविक संसार में सम्पादित की गई ऐसी गवेषणा है जिसके द्वारा यह मूल्यांकन किया जाता है कि व्यक्तियों के किसी विशिष्ट समूह के जीवन में सुधार में सुधार लाने के लिए जो कार्यक्रम बनाया गया, वह अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने में कहाॅ तक सफल रहा।''

यह परिभाषा स्पष्ट रूप से इंगित करती है कि इस अनुसंधान के द्वारा कार्यक्रमों के लक्ष्यों एवं उपलब्धियों का अध्ययन किया जाता है। साथ ही यह अंतर भी मालूम किया जाता है कि लक्ष्य एवं उपलब्धियों में कितना अंतर रहा एवं अंतर के क्या कारण रहे।

मनदीम ने मूल्यांकनात्मक अनुसंधान को परिभाषित करते हुए लिखा है,'' मूल्यांकनात्मक शोध इस प्रकार की शोध हेतु प्रयोग किया गया एक सामान्य पद है, जो व्यक्तिगत कार्यक्रम के उद्देश्यों के संदर्भ में सामाजिक कार्यक्रमों के प्रभावों के मूल्यांकन हेतु की जाती है।''

9.2.1 मूल्यांकनात्मक अनुसंधान की प्रविधियां

मूल्यांकनात्मक अनुसंधान हेतु व्यक्तिगत स्तर पर गुणात्मक तथ्यों का मूल्यांकन करने के लिए अनुमापन की अनेक मापन प्रविधियां निर्धारित की गई हैं जो प्रमुख रूप से अदृश्य सामाजिक तथ्यों को समाजमितीय क्षेत्र में मूल्यांकित करती हैं। सामाजिक परिवर्तनों एवं सुधारात्मक कार्यक्रमों की सफलता के मापन के लिए बड़े स्तर पर अनुसंधान चलाए जाते हैं। इसमें अनुसंधान के मूल्यांकन की निम्नलिखित प्रक्रियायें अपनायी जाती हैं–

1. सर्व प्रथम समग्र के आकार को ध्यान में रखते हुए निदर्शन का चयन किया जाता है।
2. निदर्शन के चयन के बाद संबंधित इकाइयों से साक्षात्कार, निरीक्षण एवं अवलोकन के द्वारा सम्पर्क स्थापित किया जाता है।
3. मूल्यांकनात्मक अनुसंधान प्रविधि में मूल्यांकन अनुसूची का भी प्रयोग किया जाता है। इस बात की पुष्टि पी0 वी0 यंग ने भी की है। उन्होंने इस संदर्भ में अमेरिका के जनस्वास्थ्य संगठन की मूल्यांकनात्मक अनुसूची का उल्लेख किया है।
4. इस प्रविधि में अनुमाप–मूल्यों का भी प्रयोग किया जाता है। मूल्यांकनात्मक अनुसंधान में माप–मूल्यों का निर्धारण करके ही मूल्यांकन किया जाता है।

9.2.2 मूल्यांकनात्मक अनुसंधान की समस्यायें

मूल्यांकनात्मक अनुसंधान की कुछ समस्यायें भी हैं जो अग्रलिखित हैं–

1. मूल्यांकनात्मक अनुसंधान की पहली समस्या यह है कि कार्यक्रम की परिवर्तनशील प्रकृति के कारण मूल्यांकन करने में निश्चितता नहीं आ पाती है।

2. मूल्यांकनात्मक अनुसंधान की दूसरी समस्या यह है कि अनुसंधान द्वारा परिणामों का मूल्यांकन किया जाता है लेकिन कार्यक्रम की संगठनात्मक संरचना का परिणामों पर जो प्रभाव पड़ता है उनमें समस्यायें उत्पन्न हो जाती हैं।
3. मूल्यांकनात्मक अनुसंधान की तीसरी समस्या यह है कि कार्यक्रम को संचालित करने वाले तथा मूल्यांकनकर्ताओं में संबंधों की समस्या खड़ी हो जाती है।

बोध प्रश्न–1

टिप्पणी : (क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

(ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

बताइए कि निम्नलिखित सही है या गलत और संबंधित खाने में टिक (✓) का निशान लगाइए।

	सही	गलत
13. मूल्यांकनात्मक अनुसंधान की एक प्रविधि है।	☐	☐
14. ज्ञान प्राप्ति के उपागम के आधार पर सामाजिक अनुसंधान का तीसरा प्रकार मूल्यांकनात्मक अनुसंधान है।	☐	☐
15. मूल्यांकनात्मक अनुसंधान प्रविधि में मूल्यांकन अनुसूची का भी प्रयोग किया जाता है।	☐	☐
16. मूल्यांकनात्मक अनुसंधान प्रविधि में अनुमाप–मूल्यों का प्रयोग नहीं किया जाता है।	☐	☐
17. मूल्यांकनात्मक अनुसंधान प्रविधि में कार्यक्रम की परिवर्तनशील प्रकृति के कारण मूल्यांकन करने में निश्चितता नहीं आ पाती है।	☐	☐
18. समाजशास्त्री अगस्त कॉम्टे का कहना था कि समाज का विकास स्वतः होता है	☐	☐

अभ्यास प्रश्न–1

मूल्यांकनात्मक अनुसंधान की प्रविधियों के बारे में एक संक्षिप्त ब्यौरा तैयार कीजिए।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

....
....

बोध प्रश्न–2

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

मूल्यांकनात्मक अनुसंधान की समस्यायें लिखिये और उत्तर लिखने से पहले मुख्य शब्दों पर निशान लगाइयें।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

अभ्यास प्रश्न–2

अग्रलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए तथा अपने उत्तर का मिलान दिये पाठ्य सामग्री से कीजिए। उत्तर लिखने के लिये दिये गये स्थान का प्रयोग कीजिए।

1. मूल्यांकनात्मक अनुसंधान से आप क्या समझते है?

   ....
   ....
   ....
   ....
   ....
   ....
   ....
   ....
   ....
   ....
   ....

....
....

2. मूल्यांकनात्मक अनुसंधान की समस्याओं का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

9.3 कियात्मक अनुसंधान का अर्थ एवं परिभाशयें

क्रियात्मक अनुसंधान का सूत्रपात अमेरिका में हुआ है। इस नये अनुसंधान का आन्दोलन आज से लगभग चार दशक पूर्व प्रारम्भ हुआ। इस आन्दोलन को गति प्रदान करने में टीचर्स कालेज कोलम्बिया विश्वविद्यालय के होरेसमन लिंकन इन्स्टीट्यूट ऑफ स्कूल एक्सपेरिमेन्टेशन का योगदान प्रशसंनीय है। आन्दोलन का नेतृत्व वहीं के स्टेफन एम0 कोरी ने किया। अब क्रियात्मक अनुसंधान का प्रयोग हमारे देश में भी अत्यधिक मात्रा में होने लगा है। सामाजिक समस्याओं के अपेक्षित समाधान के लिये क्रियात्मक अनुसंधान एक अमोघ अस्त्र है।

भारत जैसे विकासशील देश में जहॉ मानवीय जीवन के विविध क्षेत्रों में प्रगति के लिये अनेक प्रकार के नवीन प्रयोग किये जा रहे हैं, क्रिया अनुसंधान महत्वपूर्ण है, क्योंकि अर्थ व्यवस्था के अन्तर्गत क्रिया अनुसंधान सामाजिक तथा आर्थिक विकास के लिये पाइलट प्रयोगों के माध्यम से नवीन विचार के प्रयोग के लिए उज्ज्वल संभावना उपस्थित करता है। क्रिया अनुसंधान के माध्यम से क्षेत्रिय समस्याओं का समुचित रूप से चुनाव किया जा सकता है, विस्तृत स्तर पर सफल विचारों एवं कार्यक्रमों को लोकप्रिय बनाने के लिए आवश्यक ढ़ंगों एवं प्रविधियों का विकास किया जा सकता है तथा इसके मार्ग में आने वाली विभिन्न समस्याओं का निराकरण किया जा सकता है। विकास की गति को तीव्र बनाने हेतु विभिन्न क्षेत्रों में अपूर्ण आवश्यकताओं की प्रभावपूर्ण पूर्ति तथा इस पूर्ति के मार्ग में आने वाली समस्याओं

के समाधान के लिये पहले से चले आ रहे कार्यक्रमों में आवश्यक संशोधन करने तथा नये कार्यक्रमों को चलाने के समुचित अवसर क्रिया अनुसंधान द्वारा प्रदान किये जाते हैं।

वास्तव में क्रिया अनुसंधान का विकास वर्तमान शताब्दी के मध्य में हुआ है। क्रियात्मक या क्रिया अनुसंधान वह है जो किसी समस्या या घटना के क्रियात्मक पक्ष की ओर अपना ध्यान केन्द्रित करता है, साथ ही अनुसंधान में प्राप्त निष्कर्षों को सामाजिक परिवर्तन के सम्बन्ध में भविष्य की योजनाओं से सम्बन्धित करता है। **गुडे तथा हाट** ने लिखा है, '' क्रियात्मक अनुसंधान उस कार्यक्रम का भाग होता है, जिसका उद्देश्य समाज में विद्यमान परिस्थितियों में परिवर्तन लाना है, चाहे वे गन्दी बस्तियों की दशाएँ हों या प्रजातीय तनाव तथा पक्षपात हो या एक संगठन की प्रभावशीलता हो।''

गन्दी बस्तियों के बारे में क्रियात्मक अनुसंधान के उपयोग पर **गुडे तथा हॉट** ने बहुत अच्छा प्रकाश डाला है। इनके अनुसार गन्दी बस्तियों में तथ्यों का संकलन करना, उनकी प्रमाणिकता की जॉच करना और इन गन्दी बस्तियों में सुधार के लिये योजना प्रस्तुत करना क्रियात्मक अनुसंधान का उदाहरण है। सामाजिक जीवन में व्याप्त किसी भी समस्या का अध्ययन करके उस समस्या से प्राप्त निष्कर्षों को क्रियात्मक स्वरूप प्रदान करना ही क्रियात्मक अनुसंधान कहलाता है।

क्रियात्मक अनुसंधान करते समय अग्रलिखित विन्दुओं पर ध्यान देना चाहिए–

1. अध्ययन के दौरान सामाजिक समस्या या घटना के क्रियात्मक पक्ष की ओर ध्यान देना।
2. समस्या या घटना के सम्बन्ध में ज्ञान।
3. सहयोग प्राप्त करना, तथा
4. प्रतिवेदन को एकदम ही अन्तिम रूप न प्रदान करना।

क्रियात्मक अनुसंधान की परिभाषा **स्टीफन एम0 कोरी** ने अग्रलिखित दी है। उनके अनुसार, ''एक अध्ययनकर्ता अपने निर्णयों तथा क्रियाओं के दिशा निर्धारण करने, उन्हें सही बनाने अथवा उनका मूल्यांकन करने के लिये जिस प्रक्रिया के द्वारा अपनी समस्याओं का वैज्ञानिक रूप से अध्ययन करता है, उसी को क्रियात्मक अनुसंधान कहा जाता है।''

जी0 डंकन मिचैल के शब्दों में–''प्रायः क्रियात्मक अनुसंधान का सम्बन्ध सामाजिक परिवर्तन, व्यक्तियों अथवा एक लघु सामाजिक समूह के उपचार से होता है अथवा इसका उद्देश्य एक संगठन की कुशलता की वृद्धि होता है।''

मैकग्रथ तथा अन्य के अनुसार– '' क्रियात्मक अनुसंधान संगठित खोजपूर्ण क्रिया है जिसका उद्देश्य व्यक्ति अथवा समूह की क्रियाओं में परिवर्तन तथा विकास करने के लिए अध्ययन करना रचनात्मक सुझाव प्रस्तुत करना है।''

उपर्युक्त परिभाषाओं के आलोक में यह कहा जा सकता है कि क्रियात्मक अनुसंधान से तात्पर्य उस प्रक्रिया से है जिसके द्वारा किसी व्यावसायिक क्षेत्र में कार्यरत व्यक्ति स्वयं की समस्याओं का वैज्ञानिक पद्धति से अध्ययन करते हैं ताकि वे अपने क्रियाकलापों एवं निर्णयों का मूल्यांकन कर सकें एवं उनमें सुधार ला सकें। क्रियात्मक अनुसंधान का सबसे महत्वपूर्ण लक्षण है, क्षेत्र में कार्य करने वाले व्यक्तियों द्वारा अनुसंधान। इसमें मान्यता यह है कि अनुसंधान केवल विश्वविद्यालयों एवं महाविद्यालयों में स्थित प्राध्यापकों अथवा अनुसंधानकर्ताओं का सर्वाधिकार नहीं हो सकता। क्षेत्र में कार्य करने वाला प्रत्येक कार्यकर्ता अपनी समस्याओं को पहचान कर उन्हें वैज्ञानिक विधि से हल कर सकता है अथवा यह कहा जा सकता है कि क्षेत्र में कार्य करने

वाले कार्यकर्ता द्वारा अपनी समस्या का खोजा हुआ हल दूर स्थित किसी उच्च कोटि के अनुसंधानकर्ता द्वारा सुझाये गये हल की अपेक्षा अधिक उपयोगी सिद्ध होगा।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि क्रियात्मक अनुसंधान का सम्बन्ध सामाजिक अनुसंधान अध्ययन के निष्कर्षों को क्रियात्मक रूप देने की किसी तात्कालिक या भावी योजना से होता है।

9.3.1 क्रियात्मक अनुसंधान की विशेषताएँ

क्रियात्मक अनुसंधान की विशेषताएँ निम्नवत हैं–

1. क्रियात्मक अनुसंधान क्षेत्रीय परिस्थितियों में संचालित किया जाता है।
2. क्रियात्मक अनुसंधान की प्रकृति उपयोगितावादी होती है।
3. क्रियात्मक अनुसंधान के अनतर्गत मौलिक ज्ञान द्वारा उपलब्ध किये गये सत्यों के उपयोग के लिये आवश्यक ढ़ंगों एवं प्रविधियों का विकास किया जाता है तथा व्यावहारिक अनुसंधान द्वारा प्रस्तुत किये गये विभिन्न समाधानों को सामुदायिक परिस्थितियों की विशिष्ट आवश्यकताओं के अनुसार संशोधित एवं परिवर्तित करते हुए इन्हें समुदाय द्वारा स्वीकृत कराने का प्रयास किया जाता है।
4. क्रियात्मक अनुसंधान पाइलट परियोजनाओं को कुछ चुने हुए क्षेत्रों में चलाते हुए सम्पादित किया जाता है।
5. क्रियात्मक अनुसंधान पाइलट परियोजनाओं से प्राप्त अनुभवों के आधार पर इन परियोजनाओं को अधिक विस्तृत क्षेत्र में लागू करना तथा अंतिम रूप से सम्पूर्ण मानव समाज को इससे लाभान्वित कराना होता है।
6. क्रियात्मक अनुसंधान का संबंध प्रत्यक्ष रूप से तात्कालिक समस्याओं से संबंधित रहता है। इसमें समस्याओं का समाधान करने के लिए वैज्ञानिक प्रयत्न किये जाते हैं।
7. क्रियात्मक अनुसंधान के अन्तर्गत समस्याओं का वैज्ञानिक पद्धति के आधार पर अध्ययन किया जाता है।
8. क्रियात्मक अनुसंधान के अन्तर्गत व्यावसायिक कार्यकर्ता अपनी समस्याओं को पहचान कर उनका वैज्ञानिक हल समाधान खोजते हैं। इस पद्धति को आत्म विष्लेशणकी पद्धति भी कहा जाता है।
9. क्रियात्मक अनुसंधान के अन्तर्गत व्यक्ति या समूह की क्रियाओं में परिवर्तन तथा विकास करने के लिए अध्ययन किया जाता है।

9.3.2 क्रियात्मक अनुसंधान के उद्देश्य

क्रियात्मक अनुसंधान की प्रकृति के आधार पर इसके निम्नांकित उद्देश्य हो सकते हैं–

1. क्रियात्मक अनुसंधान परिवर्तन को नियोजित करता है।
2. क्रियात्मक अनुसंधान व्याधिकीय परिस्थितियों को नियंत्रित करता है।
3. क्रियात्मक अनुसंधान सुधार एवं कल्याण को आगे बढ़ाता है।

9.3.3 क्रियात्मक अनुसंधान के प्रकार

क्रियात्मक अनुसंधान के प्रमुख प्रकार निम्नलिखित हैं–

1. **निदानात्मक क्रियात्मक अनुसंधान–** इसके अन्तर्गत अधिकांशतः समूह अथवा समुदाय के तनावों पर बल दिया जाता है तथा यह प्रयास किया जाता है कि तनाव किस प्रकार समाप्त किये जा सकते हैं।
2. **सहकारी क्रियात्मक अनुसंधान–** क्रियात्मक अनुसंधान के इस प्रकार के अन्तर्गत अनुसंधान कार्य अनुसंधानकर्ताओं, कार्यकर्ताओं व अनुसंधान विशेषज्ञों के सहयोग से किया जाता है।
3. **अनुभवात्मक क्रियात्मक अनुसंधान–** इसके अन्तर्गत व्यक्तियों व समूहों के दिन प्रतिदिन की कठिनाइयों के अनुभवों के आधार पर अनुसंधान कार्य सम्पादित किया जाता है, समस्याओं को निर्धारित किया जाता है तथा समाधानों की खोज की जाती है।
4. **प्रयोगात्मक क्रियात्मक अनुसंधान–** इसके अन्तर्गत प्रयोगात्मक विधियों का प्रयोग किया जाता है।

अभ्यास प्रश्न–3

क्रियात्मक अनुसंधान की विशेषताओं के बारे में एक संक्षिप्त ब्यौरा तैयार कीजिए।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

अभ्यास प्रश्न–4

अग्रलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए तथा अपने उत्तर का मिलान दिये पाठ्य सामग्री से कीजिए। उत्तर लिखने के लिये दिये गये स्थान का प्रयोग कीजिए।

1. क्रियात्मक अनुसंधान के प्रकारों का वर्णन कीजिए।

....
....
....
....
....

9.3.4 क्रियात्मक अनुसंधान के विभिन्न सोपान

अनुसंधान का कार्य प्रारम्भ करने से पूर्व उद्देश्यों एवं लक्ष्यों का स्पष्ट रूप से विशिष्ट विवरण प्रस्तुत किया जाता है जिससे क्रियात्मक अनुसंधान में भाग लेने वाले अनुसंधानकर्ता इन उद्देश्यों को अपने सामने निरन्तर रखते हुए क्षेत्र में अपना शोध कार्य करने में समर्थ हो सकें। उद्देश्यों की स्पष्ट परिभाषा के बाद क्रियात्मक अनुसंधान के दौरान अपनाए जाने वाले विभिन्न चरण निम्न हैं–

1. **आधार रेखा सर्वेक्षण**– किसी भी प्रकार का क्रियात्मक अनुसंधान परियोजना शुरू करन से पहले यह अपवश्यक है कि परियोजना से सम्बंधित सभी आवश्यक एवं सार्थक सूचना को एकत्रित कर लिया जाये। सूचना के एकत्रीकरण के बाद स्थानीय परिस्थितियों की विशिष्टता को समझने के लिये आवश्यक होता है कि सामुदायिक परिस्थिति का सर्वेक्षण किया जाय। इस सर्वेक्षण में समुदाय के व्यक्तियों की आर्थिक स्थिति, सांस्कृतिक साधनों, प्राविधिक ज्ञान, लोंगों की संग्रहणशीलता, सामुदायिक समितियों, संगठनों एवं संस्थाओं, लोंगों के विचारों, मनोवृतियों, विश्वासों एवं क्रियाओं, समुदाय की शक्ति की स्थापना, नेतृत्व एवं गुटबंदी, संचार के विभिन्न साधनों एवं प्रतिमानों आदि का सर्वेक्षण किया जाता है। आधार रेखा सर्वेक्षण क्रियात्मक अनुसंधान को संचालित करने वाली संस्था को इस प्रकार की मौलिक सामग्री प्रदान करता है जो आरम्भिक स्थिति में किये गये इस सर्वेक्षण तथा पाइलट परियोजना के क्षेत्र में कुछ दिनों तक क्रियाशील रहने के बाद हुए परिवर्तनों के तुलनात्मक मूल्यांकन में सहायता देती है। आधार रेखा सर्वेक्षण यह सूचना प्रदान करते है कि वह क्षेत्रीय परिस्थिति जिसमें पाइलट परियोजना को चलाने का विचार है, इसके संचालन के लिये आवश्यक आवश्यकताओं की पूर्ति करती है या नहीं।
2. **क्रियात्मक अनुसंधान परियोजना का आरम्भ**– परियोजना के संचालन के लिए आवश्यक सामान्य सूचना एवं परिस्थिति संबंधित तथ्यों को एकत्रित करने के बाद क्रिया की एक योजना तैयार की जातीी है और इसके निर्माण के बाद प्रशिक्षित कर्मचारियों को सेवयोजित कर उनकी विशेषज्ञ सेवाओं की सहायता से परियोजना को शुरू किया जाता है।
3. **क्रियात्मक अनुसंधान परियोजना का सामयिक सूल्यांकन**– गुणात्मक एवं परिमाणात्मक दृष्टिकोणों से क्रियात्मक अनुसंधान परियोजना की इच्छित दिशा में में प्रगति के मूल्यांकन के लिए समय–समय पर आवश्यक आंकड़ों की सहायता से मूल्यांकन कार्य किया जाता है। मूल्यांकन हमें यह बताता है कि जिन लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु यह परियोजना चलाई गई थी उनकी पूर्ति हो रही हे या नहीं।
4. **परियोजने की किया विधि में आवश्यक परिवर्तन एवं संशोधन**– मूल्यांकन से प्राप्त परिणामों के आधार पर मौलिक परियोजना में आवश्यक संशोधन एवं परिवर्तन किये जाते हैं और इस प्रकार इसे पुनः वर्तमान सामुदायिक परिस्थितियों में ऐच्छिक उद्देश्यों की प्राप्ति की दृष्टि से समंजित किया जाता है।
5. **परियोजना का अंतिम मूल्यांकन**– परियोजना का मूल्यांकन पर्याप्त समय के बाद किया जाना चाहिए। यह मूल्यांकन परियोजना के क्षेत्र में चलते रहने के पश्चात् इसका क्रमबद्ध मूल्यांकन प्राप्त किये गये परिणामों एवं व्यक्तियों पर इसके द्वारा डाले गये प्रभावों को ध्यान में रखते हुए किया जाता है। व्यक्तियों की संग्रहणशीलता, उनको प्राप्त होने वाले लाभ तथा व्यक्तियों के परियोजना में सम्मिलन का पता लगया जाता है। इसकी शक्तियों एवं दुर्बलताओं पर प्रकाश डाला जाता है। असफलताओं के कारणों का विशेष उल्लेख किया जाता है। अंतिम रूप से यह निर्णय लिया जाता है कि क्या इस परियोजना को अन्य

क्षेत्रों पर लागू करना उपयुक्त होगा अथवा नहीं। यह भी निश्चित किया जाता है कि अन्य क्षेत्रों में इसे लागू करने के मार्ग में क्या कठिनाइयाँ आ सकती हैं तथा इसका निवारण किस प्रकार हो सकता है। योजना को विस्तृत स्तर पर लागू करने के लिए आवश्यक संगठनात्मक संरचना, कर्मचारियों एवं अन्य प्राविधिक आवश्यकताओं के विषय में संस्तुतियां की जाती हैं।क्रियात्मक अनुसंधान के विभिन्न सोपानों को अग्रलिखित चित्र संख्या–01 की सहायता से प्रस्तुत किया जा रहा है–

कियात्मक अनुसंधान के विभिन्न सोपान

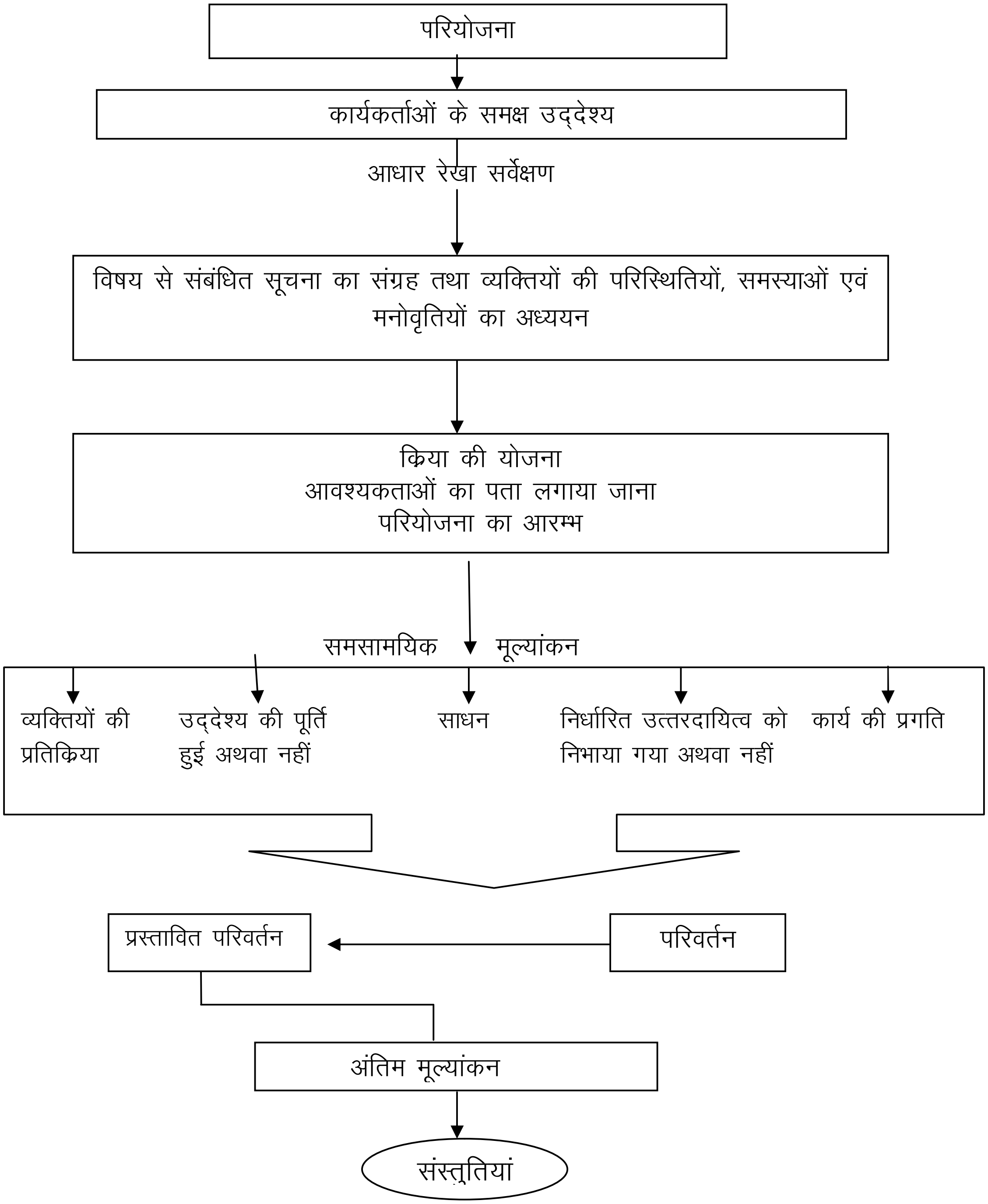

चत्र संख्या–01, **Source: P.R.A.I., Action Research and its importance in underdeveloped economy, p. 13**

क्रियात्मक अनुसंधान की योजना का उदाहरण

उदाहरण के रूप में एक क्रियात्मक अनुसंधान योजना यहॉ प्रस्तुत की जा रही है–
समस्या– छात्रों में वाचन की आदत विकसित करना।
सम्भावित कारण–

1. छात्रों के पास स्वयं की पुस्तकें न होने के कारण वे पढ़ने में रूचि नहीं लेते।
2. छात्रों को कौन सी पुस्तक पढ़नी चाहिए इसका ज्ञान न होने से वे पढ़ने में रूचि नहीं लेते।
3. छात्रों को पुस्तकालय से पुस्तकें सुविधा से उपलब्ध नहीं हो पाती।

क्रियात्मक परिकल्पना–

1. यदि छात्रों को उनके स्तर के लिए उपयुक्त पुस्तकों की सूची प्राप्त हो सके तो उनमें पढ़ने की आदत विकसित हो सकती है।
2. यदि अध्यापक अध्ययन के दौरान छात्रों को संदर्भ साहित्य के संबंध में अवगत करावें एवं ऐसे कार्य दें जिनमें पाठ्यपुस्तकों को पढ़ने की आवश्यकता हो तो छात्रों वाचन की आदत विकसित की जा सकती है।

अनुसंधान प्ररचना

प्रथम सोपान– क्रियात्मक अनुसंधान कार्य प्रारम्भ होने के पूर्व जिस कक्षा के छात्रों पर प्रयोग किया जा रहा है, उन्होंने पिछले वर्ष औसतन एक माह में कितनी पुस्तकें पढ़ी, यह पता लगाया जाएगा। पुस्तकालय से यह सूचना प्राप्त की जायेगीं

द्वितीय सोपान– विभिन्न विषयों के अध्यापक अपने विषयों अपने विषयों में उपलब्ध पुस्तकों का स्तरानुकूल वर्गीकरण कर सूचियॉ तैयार करेंगे। ये सूचियॉ छात्रों में वितरित की जायेंगी।

तृतीय सोपान– अध्यापक पढ़ाते समय सन्दर्भ पुस्तकों की ओर छात्रों का ध्यान आकर्षित करेंगे तथा ऐसी अध्यापन विधाऍ काम में लेंगे एवं कार्य देंगे जिनमें पाठ्य पुस्तकों के अतिरिक्त पुस्तकें पढ़नी पढ़ें।

चतुर्थ सोपान– पठन–पाठन के कार्यक्रम में स्वाध्याय के लिए एक पीरिएड प्रतिदिन का प्रावधान होगा तथा इसमें छात्रों को पुस्तकें देने का प्रबंध होगा।

पंचम सोपान– छात्र अपने पास एक डायरी रखेंगे। उनमें वे जो पुस्तकें पढ़ते हैं उनका सारांश लिखेंगे।

षश्टम् सोपान– प्रयोगा समाप्त होने के उपरांत छात्रों ने औसतन एक माह में कितनी पुस्तकें पढ़ी, यह ज्ञात किया जायेगा।

मूल्यांकन– प्रयोग के पूर्व एक छात्र औसतन एक माह में कितनी पुस्तकें पढ़ता था और प्रयोग के फलस्वरूप एक छात्र की औसतन एक माह में पढ़ी हुई पुस्तकों की तुलना की जायेगी तथा यह ज्ञात किया जायेगा कि पुस्तकों की संख्या में कितनी वृद्धि हुई है तथा क्या यह वृद्धि सार्थक है? इन अंकों के आधार पर यह निष्कर्ष निकल जायेगा कि क्या उपर्युक्त समस्या प्रयोग में अपनाए गए तरीकों से हल हो सकती है।

9.3.5 क्रियात्मक अनुसंधान का महत्व व गुण

तात्कालिक सामाजिक समस्याओं का समाधान करने के लिए क्रियात्मक अनुसंधान एक नया विचार है। प्रजातन्त्रात्मक राष्ट्र की आवश्यकताओं को पूरा करले के लिए एक महत्वपूर्ण तरीका है। आज के तीव्र परिवर्तनशील समाज में इसकी अत्यन्त आवश्यकता है। यह एक सजीव अनुसंधान है जो समस्याओं को हल करने का प्रयास करता है।

हमारे देश के विश्वविद्यालयों एवं महाविद्यालयों में प्रगति एवं सुधार लाने की दृष्टि से क्रियात्मक अनुसंधान एक ठोस कदम है। इसके द्वारा जो कुछ भी सुधार अथवा परिवर्तन लाए जायेंगे वे पर्याप्त स्पष्ट व ठोस होंगे। विश्वविद्यालयों एवं महाविद्यालयों की प्रत्येक समस्या जो विश्वविद्यालयों एवं महाविद्यालयों की गतिविधि में बाधक सिद्ध हो सकती है, उसका समाधान ढूँढ़ा जा सकता है। आजकल हमारे विश्वविद्यालयों एवं महाविद्यालयों में जो ऊहापोह की स्थिति उपस्थित हो गई है, उसका निराकरण सम्भव हो सकता है। श्वविद्यालयों एवं महाविद्यालयों में अध्यापकों द्वारा विभागाध्यक्ष या प्रधानाचार्य की निन्दा या विभागाध्यक्ष या प्रधानाचार्य द्वारा अध्यापकों का मीन–मेख निकालना, अध्यापकों में परस्पर असहयोग, छात्रों द्वारा शिक्षकों की आलोचना या शिक्षकों द्वारा छात्रों की भर्त्सना आदि की जप प्रवृति प्रचण्ड रूप धारण करती चली जा रही है उसका लोप क्रियात्मक अनुसंधान के अवलम्बन से ही सम्भव है।

क्रिया अनुसंधान ने सैद्धांतिक व्यवहार के बजाय प्रयोग पर अधिक बल दिया है। अनुसंधान में प्राप्त परिणामों के आधार पर भावी व्यवहार निर्भर करता है। इससे समस्या समाधान के अवसर प्राप्त होते हैं। मूले ने इसलिए कहा है कि,'' क्रियात्मक अनुसंधान समस्याओं को समाधान से उत्पन्न करता है। शिक्षक इनको सरलता से समझकर प्रयोग कर सकता है। इससे शिक्षक के व्यवहार तथा अभिमत में परिवर्तन होता है।''

वास्तव में क्रियात्मक अनुसंधान को महत्व निम्नलिखित दृष्टियों के विशेष है–

1. जनतन्त्रात्मक मूल्यों की सुरक्षा हेतु।
2. वैज्ञानिक आविष्कारों के कारण उत्पन्न नयी परिस्थितियों का सामना करने के लिए।
3. सामाजिक व्यवस्था की यांत्रिकता एवं रूढ़िवादिता का पर्यावरण समापन करने के लिए।
4. विश्वविद्यालयों एवं महाविद्यालयों मे की कार्य–पद्धति में जितना हो सके सुधार लाने के लिए।
5. छात्रों की बहुमुखी प्रगति हेतु विश्वविद्यालयों एवं महाविद्यालयों मे की क्रियाओं का प्रभावोत्पादक रीति से आयोजन करने के लिए।
6. अध्यापकों, विभागाध्यक्षों, प्रधानाचार्यों, प्रबंधकों तथा निरीक्षकों में वैज्ञानिक या वैषयिक दृष्टि से अपनी कार्य–प्रणालियों का मूल्यांकन करने एवं उनमें समयानुसार परिवर्तन लाने के लिए समर्थ बनाना।
7. विश्वविद्यालयों एवं महाविद्यालयों की अनेक समस्याओं का महज समाधान प्राप्त करने हेतु।
8. छात्रों की उपलब्धियों का स्तर बढ़ाने के लिए।

9.4 सहभागी अनुसंधान की अवधारणा

सहभागाी अनुसंधान तकनीक में एक मानवशास्त्री को उन लोगों के बीच जाकर सामाजिक सदस्य के रूप में रहना पड़ता है जिनका वह अध्ययन करना चाहता है। एक मानवशास्त्री को सहभागाी अनुसंधान के प्रयोग हेतु सम्बन्ध स्थापन का सहारा लेना पड़ता है। वह अध्ययन समूह के बीच जाकर निवास

स्थान की खोज करता है। वह अपने उद्देश्यों से लोगों को परिचित कराता है तथा जब एक अजनबी के रूप में अपने बारे में प्रचलित भ्रांतियां दूर हो जाती हैं, तब अनुसंधानकर्ता तथा अध्ययन समूह के सदस्यों के बीच सम्बन्ध स्थापित हो जाता है। उस समाज के सदस्य अनुसंधानकर्ता को अपने समाज के सदस्य के रूप में स्वीकार कर लेते हैं।

9.4.1 सहभागी अनुसंधान एवं प्रत्यक्ष अनुसंधान

छात्रहित में सहभागी अनुसंधान एवं प्रत्यक्ष अनुसंधान के बीच अंतर स्पष्ट करना आवश्यक है। सहभागी अनुसंधान में अनुसंधानकर्ता की सहभागिता एध्ययन समूह के सदस्यों के साथ बनी रहती है, जबकी प्रत्यक्ष अनुसंधान में अध्ययन समूह तथा अनुसंधानकर्ता के बीच सहभागिता का अभाव पाया जाता है। एक सहभागी अनुसंधानकर्ता सहभागिता के साथ–साथ प्रत्यक्ष अनुसंधान भी करता है, लेकिन एक प्रत्यक्ष अनुसंधानकर्ता सहभागी अनुसंधान नहीं कर पाता है। इस प्रकार सभी सहभागी अनुसंधान प्रत्यक्ष अनुसंधान के उदाहरण हो सकते हैं, लेकिन सभी प्रत्यक्ष अनुसंधान सहभागी अनुसंधान नहीं हो सकते।

मानवशास्त्र में सहभागी अनुसंधान का प्रयोग– मानवशास्त्री अध्ययन में सहभागी अनुसंधान तकनीक का प्रयोग सर्वप्रथम ब्रिटिश मानवशास्त्री बी0 के0 मैलिनोवस्की द्वारा ट्रोब्रिएंड द्वीप वासियों के अध्ययन में किया गया था। मैलिनोवस्की प्रकार्यवाद सिद्धांत के जनक थे। उन्होंने मानव जाति वर्णनशास्त्र में सहभागी अनुसंधान तकनीक का प्रमुख स्थान स्थापित कराने में सफलता प्राप्त की थी। मैलिनोवस्की ने लगातार चार वर्षो तक (1914–18) ट्रोब्रिएंड द्वीप वासियों के बीच उस समाज के सदस्य के रूप में रहकर सहभागी अनुसंधान तकनीक के माध्यम से अनुभवाश्रित तथ्यों का पता लगाया था। सहभागी अनुसंधान तकनीक के प्रयोग के आधार पर उन्होंने ट्रोब्रिएंड द्वीप वासियों की सांस्कृतिक, सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक तथा राजनीतिक व्यवस्था के रूप में सूचनाओं का भण्डार स्थापित करने में सफलता पाई थी। सहभागी अनुसंधान तकनीक के प्रयोग के आधार पर उन्होंने यह दिखाने का प्रयास किया कि किस प्रकार ट्रोब्रिएंड द्वीप समाज समग्रता के रूप में कार्य करता है। ट्रोब्रिएंड द्वीप वासियों की संस्कृति, सामाजिक संगठन, अर्थव्यवस्था, राजनीति व्यवस्था इत्यादि के बारे में उन्होंने जो कुछ भी लिखा है वह उनके सहभागी अनुसंधान तकनीक से प्राप्त तथ्यों एवं अनुभवों पर आधारित है।

मैलिनोवस्की के बाद मानवशास्त्र में सहभागी अनुसंधान तकनीक के माध्यम से क्षेत्र कार्य की परंपरा स्थापित हुई। आजकल सभी मानवशास्त्री मैलिनोवस्की द्वारा स्थापित इस परंपरा का पालन करते हैं। अतः सहभागी अनुसंधान तकनीक मानवशास्त्री शोध की आत्मा का रूप धारण कर चकी है।

9.4.2 सहभागी अनुसंधान तकनीक के गुण

सहभागी अनुसंधान तकनीक में अग्रलिखित गुण पाये जाते हैं–

1. **सूचनादाताओं से संबंध स्थापना**– सहभागी अनुसंधान में एक अनुसंधान कर्ता को अपने सूचनादाताओं से संबंध स्थापित करना पड़ता है। बिना संबंध स्थापन के एक सहभागी अनुसंधान कर्ता अपने लक्ष्य प्राप्ति में सफल नहीं हो सकता है। संबंध स्थापन के आधार पर एक अनुसंधान कर्ता सूचनादाताओं के बीच अपनी सहभागिता दर्शा पाता है तथा सहभागी अनुसंधान करने में सफल होता है। अतः सूचनादाताओं से संबंध स्थापन सहभागी अनुसंधान का एक प्रमुख गुण है। संबंध स्थापन के द्वारा एक सहभागी अनुसंधान कर्ता बेहिचक अपने सूचनादाताओं से सब कुछ जान पाने में सफल होता है।

2. **सूचनादाताओं के सुख–दुःख में भागीदारी**– एक सहभागी अनुसंधानकर्ता को अपने अध्ययन समूह के सदस्यों द्वारा अपने समाज के सदस्य के रूप में मान्यता प्राप्त हो जाती है। अनुसंधानकर्ता एवं सूचनादाता के बीच की दूरी समाप्त हो जाती है। इनके बीच अपनापन का भाव विकसित हो जाता है। सूचनादाताओं द्वारा अनुसंधानकर्ता की भावना की कद्र की जाती है तथा अनुसंधानकर्ता भी सूचनादाताओं की भावनाओं का आदर करता है। दोनों एक दूसरे के सुख–दुःख के भागीदार भी बन जाते हैं। ऐसे घनिष्ट संबंधों का लाभ एक सहभागी अनुसंधान कर्ता को प्राप्त होता है।
3. **प्राकृतिक व्यवहार का अध्ययन**– सहभागी अनुसंधान में सूचनादाताओं एवं शोधकर्ता के बीच संकोच का भाव खत्म हो जाता है। अतः शोधकर्ता एवं सूचनादाता एक–दूसरे से बीना हिचक के बातचीत करते हैं। ऐसी स्थिति में एक अनुसंधानकर्ता अपने सूचनादाताओं के प्राकृतिक व्यवहार का अनुसंधान करने में सफल होता है। सूचनादाताओं के प्राकृतिक व्यवहार का अध्ययन अन्य मानवशास्त्रीय शोध तकनीक से संभव नहीं है। अन्य मानवशास्त्रीय तकनीक के प्रयोग में सूचनादाता तथा अनुसंधान कर्ता के बीच दूरी बनी रहती है। सूचनादाता अनुसंधान कर्ता को जवाब देते समय बिल्कुल सतर्क रहता है। अतः सूचनादाताओं के प्राकृतिक व्यवहार का अध्ययन संभव नहीं हो पाता है।
4. **सामाजिक किया–कलापों का अध्ययन**– एक सहभागी अनुसंधान कर्ता अपने सूचनादाताओं के समाज का अभिन्न अंग बन जाता है। सूचनादाताओं के समाज का सदस्य होने के कारण एक सहभागी अनुसंधान कर्ता उस समाज के क्रिया–कलापों में भाग लेने लगता है तथा उस समाज के क्रिया–कलापों का अध्ययन करने में सफल होता है। वह दिन–रात उस समाज के बीच रहता है जिसका वह अध्ययन करता है। वह इस तथ्य का अनुसंधान करने में सफल होता है कि किस प्रकार उस समाज में विभिन्न प्रकार के सामाजिक क्रियाकलापों का निर्वहन किया जाता है। एक अनुसंधानकर्ता उस समाज की विभिन्न संस्थाओं तथा उसके प्रकार्य को समझने में सफल होता है।
5. **सामाजिक संबंधों का अध्ययन**– एक सहभागी अनुसंधानकर्ता तथा सूचनादाताओं के बीच भावनात्मक संबंध का विकास होता है। वह सूचनादाताओं के साथ संबंध विकसित कर लेता है। साथ ही साथ वह उस समाज के विभिन्न व्यक्तियों के बीच प्रचलित सामाजिक संबंध से अवगत होता है। वह परिवार, वंश, गोत्र तथा ग्राम समुदाय में प्रचलित सामाजिक संबंधों को बहुत नजदीक से देखता है तथा सामाजिक सच्चाई से अवगत होता है।
6. **सामाजिक समस्या की जानकारी**– एक सहभागी अनुसंधानकर्ता उन लोगों के समाज में जाकर रहता है जिसका वह अध्ययन करता है। वह उस समाज का एक सदस्य बन जाता है। अतः वह उस समाज की विभिन्न समस्याओं से अवगत होता है। वह उन समस्याओं से संबंधित सच्चाई को जानने में सफल होता है।
7. **बातचीत की सुविधा**– सहभागी अनुसंधान में एक अनुसंधानकर्ता हमेशा सूचनादाताओं के मध्य रहता है। अतः वह सूचनादाताओं से हमेशा सूचना प्राप्त करने की स्थिति में रहता है। वह बिना हिचक किसी सूचनादाता से बातचीत कर लेता है। इस सुविधा के कारण एक शोधकर्ता अपने उद्देश्यों की प्राप्ति में जल्द सफल हो जाता है।
8. **समस्याओं के समाधान के उपाय**– एक सहभागी अनुसंधानकर्ता केवल अपने सूचनादाताओं के समाज की समस्याओं से ही अवगत नहीं होता है, बल्कि वह उस समाज की समस्याओं को सुलझाने में भी सहायक होता है। उस समाज के सदस्य अनुसंधानकर्ता के ऊपर भरोसा करने लगते हैं तथा अपनी विभिन्न प्रकार की समस्याओं के समाधान में उसकी मदद लेते हैं।

समस्याओं को सुलझाकर एक सहभागी अनुसंधानकर्ता अपनी स्थिति और मजबूत कर लेता है तथा सूचनादाताओं से सूक्ष्म जानकारी प्राप्त कर लेता है।

9. **अंतरदृश्टि का विकास**– सहभागी अनुसंधानकर्ता सूचनादाताओं के समाज में दिन–रात रहता है। अतः वह उस समाज की सच्चाई के बारे में उसके मस्तिष्क में एक अंतरदृष्टि का विकास होता है। उसी अंतरदृष्टि के आधार पर वह सामाजिक सच्चाई का विवरण प्रस्तुत करता है।
10. **सूक्ष्म से सूक्ष्म घटनाओं की जानकारी**– चूंकी एक सहभागी अनुसंधानकर्ता अपने सूचनादाताओं के साथ–साथ रहता है, अतः वह उस समाज के सूक्ष्म से सूक्ष्म घटनाओं के बारे में जानकारी प्राप्त करने में सफल होता है। वह कुछ वैसी सामाजिक घटनाओं के संबंध में भी जानकारी प्राप्त कर लेता है जिसे समाज के सदस्य एक अनजान व्यक्ति के सामने प्रकट नहीं होने देना चाहते हैं। लेकिन सहभागी अनुसंधान में अनुसंधानकर्ता तथा सूचनादाता के बीच संकोच समाप्त हो जाता है। यही कारण है कि एक सहभागी अनुसंधानकर्ता सूक्ष्म से सूक्ष्म घटनाओं की जानकारी प्राप्त करने में सफल होता है।
11. **ज्यादा सत्य सूचनाओं का संकलन**– एक सहभागी अनुसंधानकर्ता सूचनादाताओं के प्राकृतिक व्यवहार तथा सामाजिक सच्चाई को प्रत्यक्ष रूप से देखने में सफल होता है। अतः वह ज्यादा सत्य सूचनाओं को संकलित करने में सफल होता है।
12. **परम्पराओं एवं रीति– रिवाजों का गहराई से अध्ययन**– एक सहभागी अनुसंधानकर्ता उस समाज की परम्पराओं एवं रीति–रिवाजों को गहराई से अध्ययन करने में सफल होता है। चूंकि वह रीति–रिवाजों में भाग लेकर उसका क्रमबद्ध ढ़ंग से शोध करता है। अतः वह सामाजिक सच्चाई की गहराई तक पहुॅच पाने में सफल होता है।
13. **सूचनादाताओं से स्पश्टीकरण की सुविधा**– चूॅकि एक सहभागी अनुसंधानकर्ता सूचनादाताओं के सम्पर्क में रहता है, अतः वह किसी भी विषय पर सूचनादाताओं से स्पष्टीकरण प्राप्त करने में सफल होता है। वह स्पष्टीकरण के आधार पर सामाजिक सच्चाई को अच्छे ढ़ंग से समझ पाता है।
14. **समाजीकरण प्रकिया की जानकारी**– एक सहभागी अनुसंधानकर्ता समाज के सदस्य के रूप में मान्यता मिलने के कारण समाजीकरण प्रक्रिया को बहुत समीप से देख तथा समझ पाता है। वह समाज के विभिन्न सदस्यों के व्यवहार तथा सामाजिक गुण से परिचित होता है। वह यह भी बहुत आस–पास से देख पाता है कि किस प्रकार समाज में एक व्यक्ति को जीवन की एक अवस्था से दूसरी अवस्था में प्रवेश कराया जाता है।
15. **कुरीति तथा कुप्रथाओं के संबंध में जानकारी**– सहभागी अनुसंधानकर्ता समाज के बीच रहने का अवसर प्राप्त करता है। अतः वह उस समाज में व्याप्त विभिन्न प्रकार की कुरीतियों तथा कुप्रथाओं से परिचित होता है तथा सही जानकारी प्राप्त करने में सफल होता है। जैसे– डायन, कुदृष्टि, बाल विवाह इत्यादि।
16. **संघर्श एवं सहयोग की जानकारी**– समाज के बीच रहने के कारण एक सहभागी अनुसंधानकर्ता लाभप्रद स्थिति में रहता है। वह समाज में प्रचलित संघर्ष तथा सहयोग की प्रक्रियाओं से परिचित होता है तथा सामाजिक सहयोग एवं संघर्ष पर सामाजिक सच्चाई से अवगत होता है।
17. **प्रतियोगिता की जानकारी**– प्रतियोगिता भी एक सामाजिक प्रक्रिया है तथा सभी समाज में प्रतियोगिता किसी न किसी रूप में पाई जाती है। चूॅकि एक सहभागी अनुसंधानकर्ता समाज के बीच रहता है तथा सामाजिक क्रिया–कलापों का अंग बन जाता है, अतः उसे समाज में प्रचलित प्रतियोगिता प्रक्रिया की जाकारी प्राप्त होती है।

18. **स्थानीय भाशा जानने में सहायक**– एक सहभागी अनुसंधानकर्ता अपने सूचनादाताओं से काफी लंबे समय तक सम्पर्क में रहता है। अतः वह सूचनादाताओं से बातचीत करते–करते उनकी स्थानीय भाषा की जानकारी भी प्राप्त कर लेता है। स्थानीय भाषा का ज्ञान प्राप्त कर एक सहभागी अनुसंधानकर्ता अपने सहभागी अनुसंधान में विशेष सफलता प्राप्त करने में सफल होता है।
19. **कमबद्ध अनुसंधान मे सहायक**– एक सहभागी अनुसंधानकर्ता सूचनादाताओं के मध्य हमेशा रहता है। अतः वह सामाजिक सच्चाईयों का क्रमबद्ध शोध करने में सफल होता है। अगर उसे किसी प्रकार की समस्या का सामना करन पड़ता है, तब वह सूचनादाताओं से मिलकर उसे आसानी से दूर कर लेता है।
20. **स्थिर अभिलेखन में सहायक**– सहभागी शोध एक शोधकर्ता को सामाजिक सच्चाई के स्थिर अभिलेखन में सहायक होता है। सहभागी अनुसंधानकर्ता धीरे–धीरे सभी सामाजिक सच्चाईयों का क्रमबद्ध शोध कर उसे लिखित रूप प्रदान करने में सफल होता है।
21. **भाारीरिक भाशा के अध्ययन में सहायक**– शारीरिक अंगों की गति के अध्ययन द्वारा सहभागी शोधकर्ता सूचनादाताओं की शारीरिक भाषा को समझ पाने में सफल होता है। जब कोई सहभागी अनुसंधानकर्ता सहभागी अनुसंधान करता है तो उसे विभिन्न प्रकार की तकनीकों का भी सहारा लेना पड़ता है, क्योंकि सहभागी अनुसंधानकर्ता को समय व परिस्थति के अनुरूप तकनीकों का भी प्रयोग कर समस्या के बारे में जानकारी प्राप्त कर लेता है।

इस प्रकार प्रकार उपरोक्त बिन्दुओं के माध्यम से आप लोग सहभागी अनुसंधान तकनीक के गुणों के बारे में जानकारी प्राप्त किया। जब कभी भी इस प्रकार के गुण आपके सामने प्रस्तुत होंगे तो आप लोग समझ सकते हैं कि वह तकनीक सहभागी अनुसंधान तकनीक है।

बोध प्रश्न 4

टिप्पणी : (क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।
(ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।
बताइए कि निम्नलिखित सही है या गलत और संबंधित खाने में टिक (✓) का निशान लगाइए।

	सही	गलत
1. एक मानवशास्त्री को सहभागी अनुसंधान के प्रयोग हेतु सम्बन्ध स्थापन का सहारा नहीं लेना पड़ता है।	☐	☐
2. बी0 के0 मैलिनोवस्की द्वारा ट्रोब्रिएंड द्वीप वासियों का अध्ययन किया गया था।	☐	☐
3. सहभागी अनुसंधान स्थानीय भाषा जानने में सहायक होता है।	☐	☐
4. सहभागी अनुसंधान द्वारा सामाजिक समस्या की जानकारी नहीं प्राप्त की जा सकती।	☐	☐
5. मैलिनोवस्की के बाद मानवशास्त्र में सहभागी अनुसंधान तकनीक के माध्यम से क्षेत्र कार्य की परंपरा स्थापित हुई।	☐	☐
6. सभी सहभागी अनुसंधान प्रत्यक्ष अनुसंधान के उदाहरण हो सकते हैं, लेकिन सभी प्रत्यक्ष अनुसंधान सहभागी अनुसंधान नहीं हो सकते।	☐	☐

अभ्यास 3

सहभागी अनुसंधान तकनीक के गुणों के बारे में एक संक्षिप्त ब्यौरा तैयार कीजिए।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

9.4.3 सहभागी अनुसंधान के दोष

हालांकि सहभागी अनुसंधान तकनीक को मानवशास्त्रीय शोध की आत्मा के रूप में मान्यता प्राप्त हुई है, लेकिन सहभागी अनुसंधान तकनीक की भी अपनी कुछ सीमायें हैं जिसके कारण सभी प्रकार के अध्ययन एवं सभी प्रकार की सूचना पाने के लिए सहभागी अनुसंधान तकनीक का प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सहभागी अनुसंधान तकनीक के निम्नलिखित दोष प्रकट होते हैं–

1. **भावनात्मक संबंध केकारण सूचना प्रभावित**– एक सहभागी अनुसंधान कर्ता अपने सूचनादाताओं के समूह के साथ भावनात्मक रूप से जुड़ जाता है। उसके तथा सूचनादाताओं के बीच भावनात्मक संबंध का विकास हो जाता है। भावनात्मक संबंध के कारण एक सहभागी अनुसंधान कर्ता दृष्टि दोष का शिकार हो जाता है। इसके कारण वह सच्चाई जानने में वह विफल हो जाता है। इस प्रकार शोधकर्ता तथा सूचनादाता के बीच भावनात्मक संबंध के विकास के कारण सूचनाएं प्रभावित हो जाती हैं।
2. **पक्षपातपूर्ण निर्णय**– एक मानवशास्त्री को सामातिक मूल्य निर्धारण में बड़ी सावधानी बरतनी पड़ती है। सामाजिक मूल्य निर्धारण में उसे सांस्कृतिक सापेक्षवाद की अवधारणा मो आचारशास्त्रीय नियम के रूप में पालन करना पड़ता है। वह किसी समाज की संस्कृति का वर्णन पक्षपातरहित ढ़ग से प्रस्तुत करता है। वह अपनी सांस्कृतिक मूल्यों के साथ तूलना नहीं करता है तथा उस संस्कृति को ऊँच–नीच, विकसित–अविकसित, अमीर–गरीब इत्यादि सापेक्षिक शब्दों के माध्यम से व्यक्त नहीं करता है। लेकिन जब एक सहभागी अनुसंधान कर्ता अपने सूचनादाताओं से भावनात्मक संबंध काज विकास कर लेता है, त बवह सूचनादाताओं का पक्ष लेना शुरू कर देता है जिसके कारण उसके द्वारा संकलित तथ्य पक्षपात पूर्ण हो जाते हैं। वह सही सूल्य निर्धारण में विफल हो जाता है।
3. **अनेक महत्वपूर्ण घटनाओं की अनदेखी**– एक सहभागी अनुसंधान कर्ता सूचनादाताओं के बीच हमेशा रहता है तथा सूचनादाताओं तथा उस अनुसंधानकर्ता के बीच की दूरी समाप्त हो जाती है। एक सहभागी अनुसंधान कर्ता उस समाज का सदस्य बन जाता है। सूचनादाताओं एवं अनुसंधानकर्ता के बीच इतनी घनिष्टता बढ़ जाती है कि अनुसंधानकर्ता अनेक महत्वपूर्ण घटनाओं को नजरअंदाज कर देता है। वह उन सूचनाओं की महत्ता को भूल जाता है। इस

प्रकार एक सहभागी अनुसंधान कर्ता द्वारा अनेक महत्वपूर्ण घटनाओं की अनदेखी कर दी जाती है।

4. **मूल्य निर्धारण में पक्षपात की संभावना**– सूचनादाताओं तथा एक सहभागी अनुसंधान कर्ता के बीच ऐसे भावनात्मक संबंध विकसित हो जाते हैं जिसके कारण अनुसंधानकर्ता की दृष्टि प्रभावित हो जाती है। उसकी दृष्टि तटस्थ नहीं रह पाती। उसकी दृष्टि सूचनादाताओं का पक्ष लेना शुरू कर देती है। इसके कारण मूल्य निर्धारण में पक्षपात की संभावना बढ़ जाती है।
5. **संकीर्ण अनुभव**– एक सहभागी अनुसंधान कर्ता का अनुभव संकीर्ण हो जाता है। उसका अनुभव उन्हीं लोगों तक सीमित हो जाता है जिनके बीच रहकर वह अपना अध्ययन करतह है। उसी स्थान पर निवास करने वाले अन्य लोगों के ऊपर वह ध्यान नहीं देता हैं। अतः एक सहभागी अनुसंधान कर्ता अपना संकीर्ण अनुभव लेकर वापस लौटता है।
6. **सहभागिता की अनुमति नहीं मिलने पर विफलता**– एक सहभागी अनुसंधान कर्ता को अगर सूचनदाताओं द्वारा सहभागिता की अनुमति नहीं मिलती है, तब उसे अपने लक्ष्य में विफल होना पड़ता है। सहभागी अनुसंधान के लिये सहभागिता की अनुमति अनिवार्य होती है, क्योंकि बिना अनुमति के एक सहभागी अनुसंधान कर्ता अपनी सहभागिता नहीं दिखा सकता है। कुछ ऐसे सामाजिक क्रियाकलाप होते हैं जिनमें बाहरी व्यक्तियों की उपस्थिति अशुभ मानी जाती है। उन क्रियाकलापों में केवल समाज के लोग ही भाग ले सकते हैं। उदाहरण के लिये, गर्भाधारण अनुष्ठान, नामकरण अनुष्ठान, अन्न प्रासन अनुष्ठान, मुंडन इत्यादि। इन क्रियाकलापों में भाग लेने के लिये एक अनुसंधानकर्ता को सामाजिक अनुमति नहीं मिल पाती है। अतः वह इस प्रकार के सामाजिक क्रियाकलापों का अनुसंधान अपनी सहभागिता के आधार पर नहीं कर पाता है।
7. **सामाजिक निशेधों के कारण अध्ययन सम्भव नहीं**– प्रत्येक समाज में कुछ ऐसे नियम होते हैं जिन्हें निषेध के रूप में पालन किया जाता है। उदाहरण के लिये प्रसवगृह में प्रवेश वर्जित होता है, देवता घर में बाहरी लोगों का प्रवेश निषेध होता है, जादू करते समय किसी का होना वर्जित होता है, नामकरण के समय बाहरी लोगों का प्रवेश वर्जित होता है। इसी प्रकार समाज में कई निषेधात्मक नियक प्रचलित रहते हैं। हालांकि एक सहभागी अनुसंधान कर्ता को उस समाज के सदस्य के रूप में मान्यता प्राप्त होती है तथा उसके एवं सूचनादाताओं के बीच की दूरी समाप्त हो जाती है, लेकिन एक सामाजिक सदस्य के रूप में उसे भी उन सभी निषेधात्मक नियमों का पालन करना पड़ता है। अतः निषेधात्मक नियमों के पालन के कारण एक सहभागी अनुसंधान कर्ता को अपनी सहभागिता नहीं दर्शाने के लिये बाध्य होना पड़ता है।
8. **व्यक्तिगत सम्बन्ध का अध्ययन सम्भव नहीं**– समाज में व्यक्ति–व्यक्ति के बीच कुछ गुप्त सम्बन्ध होते हैं। उन गुप्त सम्बन्धों का अध्ययन सहभागी अनुसंधान द्वारा सम्भव नहीं है, क्योंकि दो व्यक्तियों के गुप्त सम्बन्धों के बीच तीसरे व्यक्ति की सहभागिता को बर्दाश्त नहीं किया जा सकता है। अतः व्यक्तिगत सम्बन्धों का अध्ययन सहभागी अनुसंधान द्वारा सम्भव नहीं है।
9. **सामाजिक सहमति पर निर्भरता**– सहभागी अनुसंधान की सफलता समाज की सहमति पर निर्भर करती है। मान लिया जाये कि एक अनुसंधानकर्ता किसी समाज के विवाह सम्बंधी रीति–रिवाजों का अपनी सहभागिता द्वारा अध्ययन करना चाहता है, लेकिन समाज ने न तो एसे रीति–रिवाजों में भाग लेने के लिए आमंत्रित किया है आ|र न ही एसे समाज ने भाग लेने की अनुमति प्रदान की है, इस परिस्थिति में एक अनुसंधान कर्ता सहभागी अनुसंधान तकनीक के आधार पर सूचना संकलित कर सकता है। अतः एक सहभागी अनुसंधान की सुफलता सामाजिक आमंत्रण या सहमति पर निर्भर करता है।

10. **अतीत की घटनाओं के अध्ययन में विफल**– मान लिया जाये कि कोई घटना पहले ही घटित हो गई है, तब उस स्थिति में उस घटना का अध्ययन सहभागी अनुसंधान द्वारा सम्भव नहीं है। अतः अतीत की घटनाओं के अध्ययन में सहभागी अनुसंधान तकनीक को विफलता का सामना करता पड़ता है।
11. **यौन जीवन का अध्ययन सम्भव नहीं**– यौन जीवन एक सामाजिक सच्चाई है। यौन जीवन जीने के लिए समाज में विवाह नामक प्रथा प्रचलित है लेकिन साथ ही समाज में कुछ अवैध यौन सम्बन्ध की घटना भी प्रकाश में आती हैं। वैध यौन सम्बन्ध दो व्यक्ति तक ही सीमित होते हैं। यौन जीवन को प्रत्येक व्यक्ति अपने तक सीमित रखना चाहता है। इस गुप्त व्यवहार में किसी तीसरे व्यक्ति की सहभागिता सम्भव नहीं है। अतः सहभागी अनुसंधान तकनीक द्वारा यौन जीवन से सम्बंधित सूचनाओं को संकलित नहीं किया जा सकता है।
12. **वेश्यावृत्ति का अध्ययन सम्भव नहीं**– वेश्यावृत्ति एक सामाजिक रोग है। कोई भी समाज वेश्यावृत्ति को मान्यता नहीं देता है। लेकिन वेश्यावृत्ति गुप्त रूप से एक व्यवसाय के रूप में प्रचलित रहती है। समाज में अवैध यौन सम्बन्ध में लिप्त महिलाओं को वेश्या, छिनार, रखनी, रखैल इत्यादि नामों से जाना जाता है। ऐसी महिलायें अपनी यौन सेवा के माध्यम से पुरूष ग्राहकों को संतुष्ट कर पैसा कमाती हैं। समाज में इन्हें हेय दृष्टि से देखा जाता है। चूँकि समाज में वेश्यावृत्ति गुप्त दैहिक धंधा के रूप में प्रचलित है तथा वेश्यागामी पुरूषों को भी हेय दृष्टि से देखा जाता है, अतः वेश्यावृत्ति का अध्ययन सहभागी अनुसंधान तकनीक से सम्भव नहीं है।
13. **अपराधियों के अध्ययन में असफल**– अपराधियों के कृत्य समाज विरोधी होते हैं, यही कारण है कि समाज अपराधियों को हेय दृष्टि देखता है। चोरी, डकैती, हत्या, बलात्कार, आगजनी, दंगा इत्यादि में शामिल व्यक्तियों को अपराधी कहा जाता है। अपराधियों तथा अपराधिक घटनाओं का सहभागी शोध तकनीक के आधार पर अध्ययन नहीं किया जा सकता है।
14. **सामाजिक राजनीति में निर्लिप्तता**– एक सहभागी अनुसंधान कर्ता के ऊपर यह आरोप लगाया जाता है कि वह उस समाज की राजनीति तथा गुटबाजी में शामिल हो जाता है जिसका वह अध्ययन करता है। ऐसी स्थिति में वह निष्पक्ष नहीं रह जाता हैं। वह किसी गुट से प्रभावित होकर उसका पक्ष लेने लगता है। कभी–कभी गुटबाजी के कारण एक सहभागी अनुसंधान कर्ता को अपमानित भी होना पड़ता है।
15. **गुप्त व्यवहारों के अध्ययन में विफल**– प्रत्येक समाज में कुछ संकेतों के माध्यम से सूचनाओं का आदान–प्रदान होता है तथा कई प्रकार के सामाजिक क्रिया–कलाप सम्पन्न होते हैं। गुप्त व्यवहारों में किसी वाह्य व्यक्ति का हस्क्षे बर्दाश्त नहीं किया किया जाता है। हालॉकि एक सहभागी अनुसंधान कर्ता` को समाज के सदस्य के रूप में स्वीकार कर लिया जाता है, फिर भी अनेक प्रकार के गुप्त व्यवहारों में उसे सहभागी नहीं बनाया जाता है। अतः गुप्त व्यवहारों का अध्ययन सहभागी अनुसंधान तकनीक से सम्भव नहीं है।
16. **काला जादू के अध्ययन में असफल**– काला जादू का सम्बन्ध हानि पहुॅचाने वाली जादुई क्रियाओं से है। काला जादू करने वालों को डायन, कमाईन इत्यादि नामों से जाना जाता है। काला जादुई क्रियाएं सुनसान स्थान में सम्पन्न की जाती हैं। वहॉ किसी अन्य व्यक्ति की सहभागिता सम्भव नहीं है। अतः काला जादू का अध्ययन सहभागी अनुसंधान कर्ता द्वारा सम्भव नहीं है।
17. **पत्रकारिता दृश्टिकोण**– एक सहभागी अनुसंधान कर्ता के ऊपर पत्रकारिता का दृष्टिकोण अपनाने के कारण आलोचना की जाती है।

9.4.4 सहभागी अनुसंधान के प्रकार

सहभागी अनुसंधान को तीन श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है–

(अ) पूर्ण सहभागी अनुसंधान

(ब) अर्द्ध सहभागी अनुसंधान

(स) असभागी अनुसंधान

उपरोक्त तीनों प्रकारों की व्याख्या करना आवश्यक प्रतीत होता है, जिससे आप लोगों के समझ में इन तीनों प्रकारों का वास्तविक अर्थ पता चल सके। अतः इन तीन प्रकारों का वर्णन अग्रलिखित प्रस्तुत किया जा रहा है–

(अ) पूर्ण सहभागी अनुसंधान– यह अनुसंधान वह अनुसंधान है जिसमें एक अनुसंधानकर्ता की पूर्ण भागीदारी रहती है। मान लिया जाये कि एक अनुसंधान कर्ता किसी समाज में प्रचलित विवाह सम्बन्धी अनुष्ठानों का अध्ययन करना चाहता है तथा वह प्रारम्भ से अंत तक सभी प्रकार के अनुष्ठानों का अध्ययन अपनी सहभागिता के आधार पर करता है, तब उसका सहभागी अनुसंधान पूर्ण सहभागी अनुसंधान कहलाता है। लेकिन जब वह सभी प्रकार के अनुष्ठानों में अपनी सहभागिता न दर्शाकर कुछ महत्वपूर्ण अनुष्ठानों में अपनी सहभागिता दर्शाता है, तब इस प्रकार के सहभागी अनुसंधान को अपूर्ण सहभागी अनुसंधान कहा जाता है।

(ब) अर्द्ध सहभागी अनुसंधान– इस प्रकार के अनुसंधान में एक अनुसंधान कर्ता की भागीदारी पूर्ण नहीं रहती है, बल्कि उसकी भागीदारी अर्द्ध होती है। इस प्रकार की स्थिति तब उत्पन्न होती है जब एक सहभागी अनुसंधान कर्ता किसी कारणवश बीच में ही अपनी सहभागिता छोड़कर चला जाता है। बाद में बचे हुए तथ्यों की जानकारी वह उन लोगों से प्राप्त करता है जिनकी सहभागिता रहती है। इस प्रकार एक अनुसंधान कर्ता का अपना सहभागी अनुसंधान, अर्द्ध सहभागी अनुसंधान कहलाता है। आकस्मिक घटना, सामाजिक निषेध, दो अनुसंधान कर्ताओं द्वारा एक ही अध्ययन, बड़ी–बड़ी शोध परियोजनाओं में अर्द्ध सहभागी अनुसंधान तकनीक का सहारा लिया जाता है।

(स) असभागी अनुसंधान– असहभागी अनुसंधान वह अनुसंधान है जिसमें एक अनुसंधान कर्ता की सहभागिता नहीं होती है। अपने लक्ष्य पूर्ति हेतु एक अनुसंधान कर्ता उस व्यक्ति से सम्पर्क स्थापित करता है तथा पूछताछ करता है जिसकी सहभागिता उस घटना से रहती है। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि एक सहभागी अनुसंधान कर्ता एक असहभागी अनुसंधान कर्ता के लिए सूचनादाता का काम करता है। यही कारण है कि सहभागी अनुसंधान के गुण असहभागी अनुसंधान के दोष असहभागी अनुसंधान के गुण में बदल जाते हैं। जहॉ सहभागी अनुसंधान विफल हो जाता है वहॉ असहभागी अनुसंधान सफल होता है।

9.5 सारांश

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप यह जान चुके हैं कि मूल्यांकनात्मक, क्रियात्मक एवं सहभागी अनुसंधान क्या होते हैं तथा इनका प्रयोग कहॉ किया जाता है? वास्तव में ये तीनों प्रकार के अनुसंधानों की प्रासंगिकता वर्तमान समय में बहुत ही महत्वपुर्ण है। जब हम किसी कार्यक्रम की सफलता एवं असफलता का मूल्यांकन करना होता है तब मूल्यांकनात्मक अनुसंधान का प्रयोग करते हैं। तथापि क्रिया

अनुसंधान के माध्यम से क्षेत्रिय समस्याओं का समुचित रूप से चुनाव किया जा सकता है, विस्तृत स्तर पर सफल विचारों एवं कार्यक्रमों को लोकप्रिय बनाने के लिए आवश्यक ढ़ंगों एवं प्रविधियों का विकास किया जा सकता है तथा इसके मार्ग में आने वाली विभिन्न समस्याओं का निराकरण किया जा सकता है। विकास की गति को तीव्र बनाने हेतु विभिन्न क्षेत्रों में अपूर्ण आवश्यकताओं की प्रभावपूर्ण पूर्ति तथा इस पूर्ति के मार्ग में आने वाली समस्याओं के समाधान के लिये पहले से चले आ रहे कार्यक्रमों में आवश्यक संशोधन करने तथा नये कार्यक्रमों को चलाने के समुचित अवसर क्रिया अनुसंधान द्वारा प्रदान किये जाते हैं। अतः हम कह सकते हैं कि क्रिया अनुसंधान के माध्यम से कार्यक्रमों की रूपरेखा का निर्माण करने एवं नये कार्यक्रमों को चलाने में सहायता प्राप्त होती है। इसी इकाई में सहभागी अनुसंधान के बारे में भी प्रकाश डाला गया है जिसके आधार पर आप लोग सहभागी अनुसंधान की बारीकियों के बारे में जानकारी प्राप्त कर अपना अनुसंधान कार्य पुरा कर सकते है। सहभागी अनुसंधान एवं प्रत्यक्ष अनुसंधान के अन्तर को स्पष्ट कर सकते है। इस इकाई के माध्यम से आप लोग सहभागी अनुसंधान तकनीक के गुणों की व्याख्या कर पायेंगे तथा सहभागी अनुसंधान के दोषों एवं सहभागी अनुसंधान के प्रकारों पर प्रकाश भी डाल सकेंगे।आशा ही नहीं वरन् पूर्ण विश्वास है कि प्रस्तुत इकाई आपके ज्ञान में अत्यधिक वृद्धि करेगी जिससे आप अपने जीवन में आने वाले अनुसंधानों का अध्ययन बहुत ही सरलता से कर पाने में समर्थ होंगे।

9.6 शब्दावली

मूल्यांकनात्मक अनुसंधान– इस अनुसंधान के द्वारा कार्यक्रमों के लक्ष्यों एवं उपलब्धियों का अध्ययन किया जाता है। साथ ही यह अंतर भी मालूम किया जाता है कि लक्ष्य एवं उपलब्धियों में कितना अंतर रहा एवं अंतर के क्या कारण रहे।

कियात्मक अनुसंधान– कियात्मक अनुसंधान संगठित खोजपूर्ण किया है जिसका उद्देश्य व्यक्ति अथवा समूह की क्रियाओं में परिवर्तन तथा विकास करने के लिए अध्ययन करना रचनात्मक सुझाव प्रस्तुत करना है।

सहभागी अनुसंधान– सहभागी अनुसंधान तकनीक में एक मानवशास्त्री को उन लोगों के बीच जाकर सामाजिक सदस्य के रूप में रहना पड़ता है जिनका वह अध्ययन करना चाहता है। एक मानवशास्त्री को सहभागी अनुसंधान के प्रयोग हेतु सम्बन्ध स्थापन का सहारा लेना पड़ता है।

9.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1. मूल्यांकनात्मक अनुसंधान की एक प्रविधि है। **सही**
2. ज्ञान प्राप्ति के उपागम के आधार पर सामाजिक अनुसंधान का तीसरा प्रकार मूल्यांकनात्मक अनुसंधान है। **सही**
3. मूल्यांकनात्मक अनुसंधान प्रविधि में मूल्यांकन अनुसूची का भी प्रयोग किया जाता है। **सही**
4. मूल्यांकनात्मक अनुसंधान प्रविधि में अनुमाप–मूल्यों का प्रयोग नहीं किया जाता है। **गलत**
5. मूल्यांकनात्मक अनुसंधान प्रविधि में कार्यक्रम की परिवर्तनशील प्रकृति के कारण मूल्यांकन करने में निश्चितता नहीं आ पाती है। **सही**

6. समाजशास्त्री अगस्त कॉम्टे का कहना था कि समाज का विकास स्वतः होता है **सही**

बोध प्रश्न 4

1. एक मानवशास्त्री को सहभागी अनुसंधान के प्रयोग हेतु सम्बन्ध स्थापन का सहारा नहीं लेना पड़ता है। **गलत**
2. बी0 के0 मैलिनोवस्की द्वारा ट्रोब्रिएंड द्वीप वासियों का अध्ययन किया गया था। **सही**
3. सहभागी अनुसंधान स्थानीय भाषा जानने में सहायक होता है। **सही**
4. सहभागी अनुसंधान द्वारा सामाजिक समस्या की जानकारी नहीं प्राप्त की जा सकती। **गलत**
5. मैलिनोवस्की के बाद मानवशास्त्र में सहभागी अनुसंधान तकनीक के माध्यम से क्षेत्र कार्य की परंपरा स्थापित हुई। **सही**
6. सभी सहभागी अनुसंधान प्रत्यक्ष अनुसंधान के उदाहरण हो सकते हैं, लेकिन सभी प्रत्यक्ष अनुसंधान सहभागी अनुसंधान नहीं हो सकते। **सही**

9.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. विलियमसन, कार्प एण्ड डाल्फिन, दी रिसर्च क्राफ्ट, पेज, 382.
2. गुडे एण्ड हॉट, (1952) मेथड्स इन सोशल रिसर्च, मैक्ग्रा हील बुक कम्पनी, न्यूयार्क,
3. स्टीफन, एम0 कोरी, (1953) एक्शल रिसर्च टू इम्प्रूव स्कूल प्रेक्टिसेज, न्यूयार्क ब्यूरो ऑफ पब्लिकेशन्स कोलम्बिया यूनिवर्सिटी टीचर्स कालेज प्रेस.
4. मिशेल, जी0 डी0, (1968) ए डिक्शनरी ऑफ साँशियोलोजी, लंदन, रोटलेज एण्ड केगन पॉल, प्रेस.
5. मैकग्रेथ एण्ड अदर्श, एजूकेशनल रिशर्च मेथड्स.
6. जॉन, डब्लू0 बेस्ट, (1963) रिसर्च इन एजूकेशन, न्यू देलही.
7. अहमद, मिर्जा रफीउद्दीन, (1967) समाज कार्य दर्शन एवं प्रणालियां, ब्रिटिश बुक डिपो, लखनऊ.
8. आगवर्न एण्ड निमकॉफ, (1957) ए हैण्डबुक ऑफ साशियोलाजी, राउटलेज एण्ड केगनपाल लिमिटेड, लंदनः
9. आप्टेकर, हरबर्ट, (1941) बेसिक कान्सेप्ट्स इन सोशल वर्क, यूनिवर्सिटी आवनार्थ कैरोलिना प्रेस, चैपेल हिल.
10. आर्थर, हिलमैन, (1957) कम्युनिटी आर्गेनाइजशन एण्ड प्लानिंग, दी मैकमिलन कम्पनी, न्यूयार्क.
11. आसबर्न, एल0 डी0 एण्ड न्यूमेयर, एम0 एच0, दी कम्यूनिटी एण्ड सोसाइटी.
12. इण्डियन कान्फ्रेन्स ऑफ सोशल वर्क, स्पेशल ऐन्निवर्सरी, नवम्बर–दिसम्बर, 1957.
13. इण्डिया–कम्यूनिटी डेवलपमेण्ट प्रोग्राम इन इण्डिया, दिल्ली गवर्नमेण्ट प्रेस, 1963.
14. इण्डिया–कम्यूनिटी डेवलपमेण्ट ऐट ए ग्लान्स, दिल्ली, दिल्ली गवर्नमेण्ट प्रेस, 1962.
15. इण्डिया–कम्यूनिटी डेवलपमेण्ट एण्ड कोआपरेशन, गाइड टू कम्युनिटी डेवलपमेण्ट, सेकेण्ड रेव0 इड0, दिल्ली गवर्नमेण्ट प्रेस, 1957.

16. इण्डिया– ए रिपोर्ट आन दी ऐनुअल कान्फ्रेन्स आन कम्युनिटी डेवलपमेण्ट एण्ड पंचायत राज, न्यू दिल्ली, जुलाई, 1964, दिल्ली गवर्नमेण्ट प्रेस, 1964.
17. इण्यिा–दी स्कोप ऑफ एक्सटेन्सन इन कम्युनिटी डेवलपमेण्ट, दिल्ली गवर्नमेण्ट प्रेस, 1961.
18. ऐण्डरसन, जे0, सोशल वर्क ऐज ए प्रोफेशन, सोशल वर्क ईयर बुक, रसेज सेज फाउन्डेशन, न्युयार्क.

9.9 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. डब्लू0डब्लू0डब्लू.गूगल.को.इन
2. गोयल, सुनिल एवं गोयल, संगीता, प्रारम्भिक सामाजिक अनुसंधान
3. सिंह, डा0 सुरेन्द्र, सामाजिक अनुसंधान भाग–एक

9.10 निबंधात्मक प्रश्न

1. मूल्यांकनात्मक अनुसंधान का अर्थ एवं परिभाषा लिखिए तथा इसकी प्रविधियों का वर्णन कीजिए।
2. मूल्यांकनात्मक अनुसंधान को परिभाषित कीजिए तथा इसकी समस्याओं पर प्रकाश डालिये।
3. क्रियात्मक अनुसंधान का अर्थ एवं परिभाषाओं पर प्रकाश डालते हुए इसकी विशेषताओं की चर्चा कीजिए।
4. क्रियात्मक अनुसंधान के उद्देश्यों का वर्णन करते हुए इसके प्रकारों की व्याख्या कीजिए।
5. क्रियात्मक अनुसंधान का एक उदाहरण प्रस्तुत करते हुए इसके विभिन्न सोपानों पर प्रकाश डालिये।
6. क्रियात्मक अनुसंधान के महत्व व गुणों की चर्चा कीजिए।
7. सहभागी अनुसंधान की अवधारणा लिखिए तथा सहभागगी अनुसंधान एवं प्रत्यक्ष अनुसंधान में अन्तर स्पष्ट कीजिए।
8. सहभागी अनुसंधान तकनीक के गुण एवं दोषों का वर्णन कीजिए।

इकाई 10 मापन के स्तर एवं अनुमापन का उपयोग
Level of Measurement & Use of Standrad Scale

10.0 उद्देश्य
10.1 प्रस्तावना
10.2 मापन का अर्थ
10.3 मापन के प्रकार
10.3.1 नामीय मापनी
10.3.2 क्रम सूचक मापनी
10.3.3 अन्तराल मापनी
10.3.4 अनुपाती मापनी
10.4 अच्छे माप की कसौटी
10.4.1 विश्वसनीयता
10.4.2 वैधता
10.4.3 संवेदनशीलता
10.5 अनुमापकों का मापन
10.5.1 अनुमापको की उपयोगिता
10.5.2 अनुमापकों के निर्माण में कठिनाई
10.6 अनुमापक के प्रकार
10.6.1 थर्स्टन मापनी
10.6.2 लिर्कट मापनी
10.6.3 गाटमैन मापनी
10.6.4 बोगार्डस मापनी
10.7 सारांश
10.8 परिभाषिक शब्दावली
10.9 अभ्यास–प्रश्नों के उत्तर
10.10 संदर्भ ग्रंथ सूची
10.11 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री
10.12 निबंधात्मक प्रश्न

10.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आपके द्वारा संभव होगा;

1. माप के अर्थ को समझ पाना,
2. माप के प्रकार को समझ पाना,
3. अच्छी माप की कसौटियों को समझ पाना,
4. अनुमापन मापनी को समझ पाना,
5. अनुमापन की उपयोगिता तथा कठिनाई को समझ पाना,
6. अनुमापन मापनी के प्रकारों को बताना।

10.1 प्रस्तावना

किसी भी अध्ययन को यर्थाथता तथा वैज्ञानिकता प्रदान करने के लिए निश्चित अनुमापन नितान्त आवश्यक होता है। परिशुद्ध एवं सही माप करने की क्षमता इस बात का द्योतक है कि एक विज्ञान कितनी प्रगति कर चुका है। मानवीय व्यवहारों जैसे मनोवृति, विचार, सामाजिक स्थिति, सामाजिक दूरी आदि अमूर्त व गुणात्मक घटनाओं का मापना पड़ता है और इनका प्रत्यक्ष व सही माप सम्भव नही है। जहां तक भौतिक प्राकृतिक तथ्यों की माप करना सरल होता है इन माप के द्वारा परिशुद्ध निष्कर्ष भी प्राप्त होते हैं। वही सामाजिक घटनाओं अपनी जटिल और परिवर्तशील प्रकृति की होने के कारण गुणात्मक प्रकृति की होती है। इनकी प्रकृति गुणात्मक होने के कारण उनका वस्तुनिष्ठ और गणनात्मक माप करना कठिन और सम्भव नही होता। इन विशेषताओं की सही सही माप करनें के लिए मापने के पैमानों को विकसित किया जिस कारण समाजशास्त्र अपनी वैज्ञानिक प्रकृति को बनाये रखने में सम्भव रहा। भविष्य में समाज वैज्ञानिक व्यक्तिगत व्यवहारों एवं मनोवृत्तियों की माप कहीं अधिक यथार्थ रूप में कर सकेंगे।

10.2 मापन का अर्थ

वस्तुओं व घटनाओं को तर्क संगत रूप में मान्य नियमों के अनुसार संख्या निरूपण को माप कहा जाता है। वर्तमान सामाजिक विज्ञानों में माप का अधिकाधिक प्रयोग किया जा रहा है। माप का अर्थ है कि सम्बन्धों की संख्यात्मक अभिव्यक्ति तथा जो इन समकों के विभिन्न मानों के बीच तुलनात्मक संबंध स्थाजिपत करने में सक्षम हो। जब वैज्ञाानिक मापन के संबंध में कोई कथन प्रस्तुत करते है तो उनका अर्थ प्रेक्षित आंकडों या समकों का नियमबद्ध प्रस्तुतीकरण करना होता है।यह प्रस्तुतीकरण इस प्रकार किया जाता है जिसमें कि एक निश्चित नियम के अंतर्गत यह संख्याएं दक्षतापूर्वक विष्लेशणकरने में सक्षम हो तथा यह **विश्लेषण**, मापन के उद्देश्य से संबंधित अर्थपूर्ण परिणाम और सूचना प्रदान कर सके। आंकड़ों में इस प्रकार की विशेषता का विष्लेशणकरने के लिए एक मापन यन्त्र का होना आवश्यक है जिससे कि विभिन्न वस्तुओं के निर्दिष्ट संख्याओं में अन्तर प्राप्त किया जा सके।

10.3 मापन के प्रकार

सांख्यिकीय आंकड़ों का विष्लेशणकरने वाले वैज्ञानिकों ने आंकड़ों के आधार पर किये जाने वाले परीक्षण में आंकड़ों के मापन के लिए विभिन्न सांख्यिकीय पैमानों का प्रयोग किया। यह पैमाने, मापन के विभिन्न स्तर पर प्रयोग किए जा सकते है। इसके चार मुख्य प्रकार हैं–

10.3.1 नामीय या अंकित मापनी (nominal scale)

जब वस्तुओं के समूह को दो या अधिक श्रेणियों में विभेद करने के लिए गुणात्मक अन्तर को आधार बनाए तो नामीय माप का प्रयोग करते हैं। यह सबसे निम्न स्तर का माप होता है, जैसे किसी शहर की जनसंख्या को हिन्दुओं, मुसलमानों, ईसाईयों में बांट कर सारणी बना दे तो इसे नामीय या नियत मापनी

का प्रयोग कहा जाता है अर्थात् यह अनुमाप व्यक्तियों को दो या दो से अधिक वर्गों में वर्गीकृत करता है जिनके सदस्य अलग–अलग विशेषताऐं रखते हैं। यह स्केल आदिकाल की माप है और गिनती पर आधारित सांख्यिकी तकनीक इस प्रकार के माप में अनुमेय है।

उदाहरण– महाविद्यालय के समाजशास्त्र विभाग में 100 व्यक्तियों के समूह को, इसमें दो अलग अलग गुणों के आधार पर वर्गीकृत किया जा सकता है।

लिंग (sex)	संख्या (number)
स्त्री पुरूश	72 28
कुल	100

10.3.2 क्रम सूचक मापनी (Ordinal scale)

क्रम सूचक मापनी द्वारा हम न केवल व्यक्तियों को वर्गों में विभाजित करते हैं वरन् इन वर्गों का क्रम भी निर्धारित करते हैं। जैसे सर्वोच्च से निम्नतम, महानतम से तुच्छतम, प्रथम से अंतिम आदि में कोटिबद्व किया जाता है। उदाहरणार्थ– जब व्यक्तियों को सामाजिक, आर्थिक स्थिति पर उच्च वर्ग, मध्य वर्ग तथा निम्न वर्ग में विभाजित करते हैं।

कोटि अक्षीय अनुमाप या क्रम सूचक वर्ग की श्रेणियां बनाता है और वस्तुओं को व्यवस्थित सम्बन्धों में उनकी तीव्रता के अनुसार व्यवस्थित करता है। फिर भी यह अन्तर की मात्रा का पता नहीं लगाता। जैसे उच्च वर्ग की आय, शिक्षा या सामाजिक, आर्थिक स्थिति मध्य वर्ग से अधिक है यह नहीं बताती की कितनी अधिक है।

मान निर्धारित किये गए मदों को प्रदत्त की गई संख्या को मान मूल्य कहते हैं। कोटि संख्याऐं केवल मान क्रम बताती हैं। सामान्य अंकगणितीय क्रियाऐं जोड़, घटाना, गुणा, भाग क्रमसूचक मापनी से वैध रूप से प्रयोग नहीं किए जा सकते परन्तु कोटियों पर आधारित सांख्यिकी विधियाँ संगत हैं। नामीय पैमाना और क्रम सूचक पैमानों में मौलिक अन्तर यह है कि नामीय पैमानों में गुण और इसके प्राप्त समंक के बीच बराबर (=) का चिन्ह होता है जबकि क्रम सूचक पैमाने में गुण और प्राप्तांकों के बीच बराबर (=) के चिन्ह के अतिरिक्त 'से अधिक' (>) 'से कम' (<) का चिन्ह प्रयुक्त किया जा सकता है।

उदाहरणः व्यक्तियों के समूह को मासिक आय के आधार पर हम उन्हें उच्च आय वर्ग, कर्मचारी वर्ग तथा मजदूर वर्ग में विभाजित करते हैं।

वर्ग	मासिक आय
उच्च वर्ग कर्मचारी वर्ग मजदूर वर्ग	25000 से अधिक 15000 से कम 15000 से अधिक 5000 से कम 5000 से अधिक 2000 से कम

10.3.3 अन्तराल मापनी (Interval scale)

इस अनुमाप में न केवल चीजों को क्रम में रख सकते हैं वरन् उनके बीच का ठीक–ठीक अन्तर भी बता सकते है। इसका अर्थ है कि इस अनुमाप में इकाईयों को प्रत्येक संख्या के बीच अन्तर अनुमाप समान होता है और दिशा ज्ञात हो जाती है। अन्तराल मापनी के लिए माप को भौतिक इकाई की आवश्यकता होती है। उदाहरणार्थ–दो व्यक्ति हैं, एक की आय 25000 और दूसरे की आय 20000 रू0 है। नियत मापनी के अनुसार इनकी आय अलग–अलग है। क्रम सूचक मापनी के अनुसार पहले की आय दूसरे की आय से अधिक है। अन्तराल मापनी में पहले व्यक्ति की आय दूसरे व्यक्ति की आय से 5000 रू0 अधिक है।

अन्तराल मापनी पर हम जोड़ व घटाने की संक्रियाएं कर सकते हैं। इन अंकगणितीय संक्रियाओं पर आधारित सांख्यिकी तकनीक अनुज्ञेय है। गुणा व भाग की संक्रियाएं अन्तराल स्केल के साथ वैध रूप से प्रयोग नहीं की जा सकती क्योंकि इन संक्रियाओं में वास्तविक शून्य बिन्दु के अस्तित्व की पूर्वकल्पना की जाती है।

अन्तराल स्केल में दो क्रमागत बिन्दुओं के बीच का अन्तर पूरे स्केल पर एक समान होता है परन्तु उसमें वास्तविक शून्य बिन्दु नहीं होता। पानी जमने का तापमान सेंटीग्रेड मापनी में शून्य है जबकि फारेनहाइट मापनी में 32 डिग्री। इससे स्पष्ट होता है कि शून्य स्वेच्छ है। इसी प्रकार सामाजिक विज्ञान में भी आदर, स्थिति, अभिवृत्ति आदि के शून्य होने का कोई निरपेक्ष अर्थ नहीं है। उदाहरणार्थ–यह सच है कि कोई विद्यार्थी यदा–कदा सामान्य विज्ञान में शून्य अंक पाए परन्तु इस का यह अभिप्राय नहीं कि वह सामान्य विज्ञान में कुछ भी नहीं जानता।

अतः अन्तराल पैमाने में प्राप्त समंकों को न केवल श्रेणी बद्ध किया जा सकता है बल्कि मानों के मध्य अन्तर भी ज्ञात किया जा सकता है। अधिकतर सांख्यिकीय मापन में इस पैमाने का प्रयोग किया जाता है।

10.3.4 अनुपाती मापनी (Ratio scale)

चौथा और सर्वोच्च माप स्तर अनुपाती मापनी होती है। यह पैमाना अन्तराल पैमाने के सभी गुणों को समायोजित करने के साथ–साथ अपने मूल बिन्दू से वास्तविक अन्तर प्रदर्शित हो तो इस प्रकार के पैमाने को अनुपाती पैमाना या मापनी के रूप में दर्शाया जा सकता है। यदि दो मापन यन्त्रों से प्राप्त मानों के बीच गुणात्मक संबंध हो तो विभिन्न वस्तुओं के लिए दोनों ही मापन यन्त्रों से प्राप्त मानों में समान अनुपात प्राप्त होगा। इस मापनी के साथ जोड़, घटाना, गुणा व भाग की चारों संक्रियाऐं प्रयोग की जा सकती हैं। ऐसी मापनी के साथ समस्त सांख्यिकी तकनीकि अनुज्ञेय है। इसमें पूर्ण शून्य बिन्दु मूल में होता है और जो एक मूल्य के अनुपात की व्याख्या दूसरे मूल्य से करता है। इसमें शून्य निरपेक्ष होने के कारण हम अनुपात लेकर भी तुलना कर सकते हैं। भार, लम्बाई आदि का माप अनुमाप मापनी द्वारा होता है।

अनुपात मापनी के अंक आनुपातिक संबंधों में व्यक्त किए जा सकते है। उदाहरण के लिए, 4 ग्राम का भार 8 ग्राम का आधा है। 10 सेमी0 की ऊँचाई 30 सेमी0 की तिहाई है। अनुपाती स्केल हमें मात्राओं की समानता अन्तरों की समानता तथा अनुपातों की समानता संक्रियाएं करने की अनुमति देते हैं।

यहाँ ध्यान देने योग्य है कि प्रत्येक उच्च स्तर मापनी को निचली मापनी में परिवर्तित किया जा सकता है परन्तु निचली मापनी को उच्च मापनी में नहीं बदला जा सकता। उच्च श्रेणी में अनुज्ञेय

सांख्यिकी में निचली श्रेणी के स्केल पर अनुज्ञेय साांख्यिकी भी सम्मिलित है। मापनी का स्तर जितना ऊँचा जाता है उतनी अधिक प्रासंगिक सूचना प्राप्त होती है।

बोध–प्रश्न 1

(i) अन्तराल मापनी को संक्षिप्त रूप में उल्लेख कीजिए ?

....
....
....
....
....
....

10.4 अच्छे माप की कसौटी

माप के मूल्यांकन के लिए तीन कसौटियां है–

1. विश्वसनीयता
2. वैधता
3. संवेदनशीलता।

10.4.1 विश्वसनीयता

आंकड़े एकत्र करने का परीक्षण विश्वसनीयता होना चाहिए अर्थात् समान स्थितियों व इन ही व्यष्टियों पर बार–बार परीक्षण करने पर वही परिणाम मिलने चाहिए। उदाहरण के लिए यदि कोई व्यापारी एक मीटर से कपड़े की सही लम्बाई जानता है इसलिए माप के इन साधनों के लिए विश्वसनीयता आवश्यकता है। विश्वसनीयता शब्द के परीक्षण में, दो परस्पर संबंधित परंतु भिन्न–भिन्न अर्थ निहित हैं।

पहला प्रदर्शित करता है कि परीक्षण किस सीमा तक आन्तरिक रूप से संगत है अर्थात् एक बार के माप में कितनी संगति है। दूसरा विश्वसनीयता यह बताती है कि माप युक्ति किस सीमा तक बार–बारा परीक्षण के संगत परिणाम देती है।

किसी भी उपकरण की विश्वसनीयता का परीक्षण करने की चार विधियाँ है–

1–परीक्षण पुनर्परीक्षण विश्वसनीयता।

2–अन्तराल स्थायित्व विश्वसनीयता।

3–विच्छेदीय विश्वसनीयता।

4–समरूपी विश्वसनीयता।

1–परीक्षण पुर्नपरीक्षण विश्वसनीयता– इस रीति के एक परीक्षण के कुछ ही समय बाद वही परीक्षण दोबारा किया जाता है और दोनों बार के संमकों के सेटों के सहसंबंध से परीक्षण की विश्वसनीयता प्राप्त की जाती है।

परीक्षण पुनर्परीक्षण विश्वसनीयता में कुछ सीमाएं होती है।

1–इस रीति को अन्तर्गत यदि दोनों परीक्षणों के बीच अन्तराल कम होता है तो स्मृति का प्रभाव, अभ्यास व परीक्षण से परिचित होने का विश्वास सभी परीक्षण की विश्वसनीयता का अधिआकलन कर सकते हैं।

2– उत्तर द्वारा इन प्रश्नों पर पुनः विचार कर सकते है और भिन्न लेकिन सही और सत्य उत्तर दे सकते हैं।

3– यदि अंतराल अधिक है तो व्यवहार में प्रगति के रूप में वास्तविक परिवर्तन परीक्षण की विश्वसनीयता का अवआंकलन कर सकते हैं। दूसरे परीक्षण में स्थितियों को यथावत नियंत्रित करने में कठिनाई के कारण, जिसका परिणामों पर प्रभाव पड़ता।

2– **अन्तराल स्थायित्व विश्वसनीयता–** अन्तराल स्थायित्व विश्वसनीयता इसका अर्थ है एक से प्रश्न पूछना या एक से पैमाने के मदों को प्रस्तुत करना।

3– **विच्छेदीय या अर्धन विश्वसनीयता–** इसके अनुसार किसी उपकरण के मदों को दो तुल्य आधे भागों में विभाजित किया जाता है। आधी इकाईयों पर परीक्षण के समंको को दूसरी आधी इकाईयों के समंको से सहसंबंधित किया जाता है। सहसम्बन्ध की मात्रा माप की विश्वसनीयता की मात्रा को दर्शायेगी। परीक्षण की इकाईयों को अनेक प्रकार से दो भागों में विभाजित किया जा सकता है।

4– **समरूपी विश्वसनीयता**– इसका प्रयोग तब किया जाता है जब दो वैकल्पिक साधनों को हर सम्भव एक सा अभिकल्पित किया जाता है। दोनों में से प्रत्येक माप अनुमापक व्यक्तियों के एक ही समूह पर प्रयोग किया जाता है। यदि दोनों रूपों के बीच उच्च सहसम्बन्ध है तब अनुसंधानकर्ता मान लेता है कि अनुमापक विश्वसनीय है।

बोध–प्रश्न 2

(i) विश्वसनीयता के संदर्भ में संक्षिप्त रूप में उल्लेख कीजिए ?

....
....
....
....
....
....

10.4.2 वैधता

किसी उपकरण से जो वस्तु जैसी है उसका उतना ही मापन करने को कहते हैं अर्थात् वैध सूचना प्रदान करनी चाहिए। सामान्य रूप से वही परीक्षण वैध है जो वही माप करे जिसका वह दावा करता है। कोई भी परीक्षण की वैधता विश्वव्यापी व अनन्त तक नहीं होती। वह एक स्थिति में प्रयोग हेतु वैध हो सकता है पर दूसरी स्थिति में अवैध।

माप के परीक्षण को वैधता का आकलन करने के लिए विविध तरीके हैं जैसे–

1–स्पष्ट वैधता

2–सामग्री वैधता/अंतर्वस्तु वैधता

3–कसौटी वैधता

4—रचना वैधता

1—स्पष्ट **वैधता**— स्पष्ट वैधता का अर्थ है वही मापन करना जो अपेक्षित है। लिंग भेद (स्त्री तथा पुरूष) का अध्ययन करने के उद्देश्य से बनाई गई एक प्रश्नावली से स्पष्ट वैधता तभी होगी। यदि इसके प्रश्न केवल लिंग भेद के कारण किए गए भेदभाव से सम्बद्ध हैं। यहाँ निर्णय के मानक साक्ष्य पर आधारित न होकर अनुसंधानकर्ता के आत्मपरक निर्णय पर है।

2—**सामग्री/अन्तर्वस्तु वैधता**— सामग्री वैधता का तात्पर्य यह है कि तर्कसंगत रूप में यह दर्शाती मालूम पडती है कि यह क्या माना चाहती है क्योंकि विशेषज्ञों को सामग्री ऐसी दर्शायी देती है कि यह मदों को पूर्ण रूप में समाहित करती है। वैधता का यह स्वरूप अनेक विषय शास्त्रियों तथा परीक्षण विशेषज्ञों के निर्णय व वास्तविक किए गए अध्ययन विषय के सावधानीपूर्वक विष्लेशणपर आधारित होता है। यह विष्लेशण परिमेय व निर्णयात्मक होता है। अंतर्वस्तु वैधता को कभी कभी परिमेय या तर्कसंगत वैधता भी कहते हैं। एट एल. कैले के अनुसार अंतर्वस्तु वैधता एक प्रतिदर्श सामग्री के कुशल विष्लेशणपर और दूसरे प्रारम्भिक चुनी हुई मदों के शोधन हेतु उपलब्ध सांख्यिकी प्रक्रियाओं के उपयोग पर निर्भर करती है।

3— **कसौटी वैधता**— सामग्री वैधता का अर्थ एक समान रचना के मापों को अन्य मापों से सह सम्बन्धित करना। कसौटी वैधता का वर्गीकरण इस प्रकार किया जाता है।

1—**समवर्ती वैधता**— यह समय के अलावा अन्य बातों में पूर्वकथनीय प्रामाणिकता के समान होती यह प्रमाणिकता विभिन्न स्त्रोतों के मध्य अन्तर स्पष्ट करती है।

2—भविष्य **सूचक वैधता**— इस का अर्थ जो कसौटी और नवीन माप अनुमापक के जोड़ने के समय क्रम पर निर्भर करता है यह तब होती है जब अभिरूचि माप भविष्य की घटना को भविष्यवाणी करता है।

4—**रचना वैधता**— इसे सैद्धान्तिक वैधता भी कहते है क्योंकि इसका सम्बन्ध वैधता के मापन के साथ—साथ सिद्धान्त से भी होता है। अर्थात् यह उस स्तर तक स्थापित है जहां तक माप अवधारणाओं पर आधारित सिद्धांत से उत्पन्न प्राक्कल्पना की पुष्टि करती है।

वैधता अध्ययनों की विश्वसनीयता एवं वैधता के संबंध में दो बातें प्रमुख हैं— आन्तरिक वैधता तथा बाह्य वैधता। आन्तरिक वैधता का संबंध अनुसंधान की विश्वस्तता से है। कारण एवं प्रभाव संबंधी अध्ययनों में इस प्रकार की वैधता को ज्ञात करना अत्यन्त महत्वपूर्ण माना जाता है। कारणत्व को दर्शाने हेतु तीन दशायं होना अनिवार्य है।

1. कारण का परिणाम से पहले होना अनिवार्य है
2. प्रभाव का आकार कारण संबंधी तत्वों के आकार से प्रभावित होता है।
3. परिणाम की प्रतिद्वन्द्वी कारणत्व व्याख्याएं नियम विरूद्ध घोषित की जा सकती है।

वाह्य वैधता का संबंध परिणामों के अन्य निदर्शनों के संदर्भ में सामान्यीकरण करने की सीमा से है। यह भी दो प्रकार की होती है।

1. **जनसंख्यात्मक वैधता**— जनसंख्यात्मक वैधता का संबंध निदर्शन के अध्ययन के निष्कर्षों के आधार पर उस समग्र के बारे में सामान्यीकरण करने, जिसका कि वह भाग है।
2. **पारिस्थितिकीय वैधता**— पारिस्थितिकीय वैधता का संबंध निष्कर्षों के आधार पर अन्य पारिस्थितियों के बारे में सामान्यीकरण करने से है।

जिक्मण्ड ने विश्वसनीयता और वैधता के मध्य अन्तर स्पष्ट करने के लिए एक पुरानी राइफल तथा एक नयी राइफल का उदाहरण दिया। पुरानी राइफल से शूटर द्वारा मारे गये शॉट लक्ष्य काफी

इधर–उधर लगे लेकिन नयी राइफल से लक्ष्य पर मारे गये शॉट धन चित्र थे जो यह स्पष्ट करता है कि पुरानी रायफल कम विश्वसनीय है। लक्ष्य में निशानेबाज के शॉट नयी राइफल से विश्वसनीय हो सकते है लेकिन यदि उसकी दृष्टि ठीक नहीं है तो शूटर सबसे सूक्ष्म लक्ष्य पर निशाना नहीं लगा सकता।

10.4.3 संवेदनशीलता– संवेदनशीलता का तात्पर्य यह होता है कि उत्तरों की विविधता के शुद्ध मापन की योग्यता। जैसे दो उत्तरों के वर्ग सहमत या असहमत अभिवृति परिवर्तन नहीं दर्शाते। इस स्थिति मेकं अधिसंख्य मदों के साथ एक अधिक संवेदनशील माप की आवश्यकता हो सकती है। उदाहरण 5 बिन्दु अनुमापक (अति सहमत सहमत, न तो सहमत और न असहमत, असहमत और अति सहमत) अपुमापक की संवेदनशीलता बढा देते हैं जैसे उक्त सारणी से समझा जा सकता है।

अनुमापक	अंक
1. अति सहमत	+2
2. सहमत	+1
3. न तो सहमत और न असहमत	0
4. असहमत	–1
5. अति सहमत	–2

इन पांच बिन्दु अनुमापक को उपरोक्त अंक देकर हम + अंक तथा – अंक को गिनती कर सकते हैं और इस प्रकार अभिवृति का माप कर सकते हैं।

10.5 अनुमापकों का मापन

आज अनेक अनुमापक यन्त्रों का विकास किया जा चुका है जिनके द्वारा मनोवृत्तियों जैसे अमूर्त तथ्यों एवं सामाजिक व्यवहारों का माप करना सम्भव हो गया है। पैमाने गुणात्मक तथ्यों को गणनात्मक तथ्यों में परिवर्तित करने की प्रविधियां हैं और क्रम का निर्धारण करने में इनका विशेष महत्व है। अतः पैमाना किसी घटना अथवा वस्तु को मापने का एक यन्त्र है। अध्ययन वस्तु की प्रकृति के अनुसार ही पैमानों का निर्माण किया जाता है। जिस प्रकार प्राकृतिक विज्ञानों में विभिन्न वस्तुओं को मापने के यन्त्र भिन्न भिन्न होते है, उसी प्रकार सामाजिक घटना की विशिष्ट प्रकृति को ध्यान में रखते हुए उसी के अनुसार पैमानों का निर्माण किया जाता है। पैमाने सामाजिक घटना को वस्तुनिष्ठ रूप में समझने तथा उनके विषय में निश्चित तथा सही ज्ञान प्राप्त करने के लिए आवश्यक हैं। इनका उपयोग न होने के कारण अधिकाशतः गुणात्मक तथ्य एकत्रित हो पायेगें तथा केवल इसके आधार पर हम सामाजिक घटना को पूर्णतः वस्तुनिष्ठ रूप में नही समझ सकते। परन्तु किसी घटना का गणनात्मक वर्णन ही उसे समझने के लिए वस्तुनिष्ठ माप और निश्चितता ला सकता है। सामाजिक विज्ञानों में पैमानों के प्रयोग का उद्देश्य प्रमुख रू‍प से इन विषयों को अधिक परिशुद्धता द्वारा वैज्ञानिक बनाना, गुणात्मक तथ्यों को गणनात्मक तथ्यों में परिवर्तित तथा अध्ययन को अधिक सूक्ष्म बनाना है।

सरान्ताकोस के अनुसार अनुमापकों के प्रयोग का प्रमुख कारण है–

1– उच्च सीमा अवधारणा के सभी प्रमुख पद समाहित होते हैं।

2–उच्च संक्षिप्तता और विश्वसनीयता–इसमें उच्च किस्म की विश्वसनीयता और सूक्ष्मता होती है।

3–उच्च तुलनात्मक– अनुमापकों के प्रयोग से आधार सामग्री के विभिन्न समूहों में तुलना करना।

4–सरलता– अनुमापक आधार सामग्री के संग्रह और विष्लेशणको सरल बनाना।

किसी वस्तु के प्रति हमारी अभिवृत्ति उसके विषय में हमारी जानकारी, विश्वासों, भावनाओं और कर्म प्रवृत्तियों का तन्त्र है। अभिवृत्ति का एक महत्वपूर्ण लक्षण है कृषण शक्ति। कृषण शक्ति का अर्थ है अभिवृत्ति का धनात्मक तथा ऋणात्मक होना अर्थात् हमारी अभिवृत्ति इस वस्तु के पक्ष में है या विपक्ष में। अभिवृत्ति को मापने का अर्थ है कि उसको कर्षण शक्ति को नापना। माप द्वारा हम उसे मात्रात्मक रूप दे देते है और प्रकार विभिन्न लोगों की तुलना का सकते हैं। अनुमापन प्रविधियां का तात्पर्य उन प्रणालियों से हैं जिनके द्वारा शोधकर्ता गुणात्मक सामाजिक तथ्यों की माप करके उनकी गणना सांख्यिकी निष्कर्षों के रूप में प्रस्तुत करता है। किसी अभिवृत्ति और दूसरे किसी चर में साहचर्य है या नहीं । मान ले कि हम जानता चाहते है कि शिक्षा तथा धर्म को मानने में कोई संबंध है या नहीं। सर्वप्रथम हम एक निदर्शन में आए लोगोंक की धर्म के प्रति अभिवृत्ति की नाप करेगें और प्रत्येक की शिक्षा को भी पता लगा लेगें। फिर सांख्यिकी के उपयोग से देखेगें कि इनमें साहचर्य है या नहीं। यदि साहचर्य ऋणात्मक हुआ तो हम कह सकते है कि जितने ही लोग शिक्षित होते है उतने ही धर्म को कम मानने वाले होते है। अतएव सामाजिक अनुसंधान के संदर्भ में अनुमापन का तात्पर्य पैमाइश की उस विधि से है जिसे गुणात्मक तथा अमूर्त सामाजिक तथ्यों या घटनाओं को गणनात्मक या परिमाणात्मक स्वरूप दिया जाता है। गुडे तथा हाट ने लिखा है कि अनुमापन प्रविधियों में अन्तर्निहित समस्या इकाइयों की श्रेणियों को क्रम के अंतर्गत व्यवस्थित करने की है । अर्थात गुणात्मक तथ्यों की श्रेणियों को गणनात्मक श्रेणियों में बदलने की पद्धतियां हैं।

10.5.1 अनुमापों की उपयोगिता

अनुमापों की आवश्यकता तथा उपयोगिता सभी विज्ञानों के लिए है और विकासशील सामाजिक विज्ञान के रूप में समाजशास्त्र के लिए तो अनुमापों की उपयोगिता और अधिक है।

1.वैज्ञानिक परिपक्वता की प्राप्ति के लिए— इसकी प्रथम उपयोगिता यह है कि ये विज्ञान को इस योग्य बना देते हैं कि वह अपने अध्ययन विषय के अंतर्गत आने वाली घटनाओं का सही व प्रामाणिक माप कर सके। इसके बिना कोई भी विज्ञान परिपक्वता तथा प्रगति की ओर नही बढ सकता। प्रगतिशील व विकासशील होना प्रत्येक विज्ञान की एक उल्लेखनीय आवश्यकता है और इसकी पूर्ति तब तक नहीं हो सकती जब तक अनुमापन प्रविधियों की भी उत्तरोत्तर वृद्धि होती जाए। गुडे तथा हाट ने लिखा है कि सभी विज्ञान अधिकतम परिशुद्धता की दिशा में अग्रसर होते हैं। इस परिशुद्धता के अनेक रूप होते हैं पर उसका एक आधारभूत क्रमबद्ध श्रेणियों की माप।

2. वस्तुनिष्ठ **माप के लिए**— सामाजिक अनुसंधान में सामाजिक घटनाओं की वास्तकि अध्ययन और उस अध्ययन द्वारा यर्थाथ निष्कर्ष निकालना तभी सम्भव होता है जब हम घटना विशेष का वस्तुनिष्ठ माप कर सके। अनुमापन प्रविधियां अनुसंधान को वैषयिक बनाने में अत्यधिक सहायक होता है क्योंकि इसकी सहायता से वास्तविक स्थिति का पता लगाने के लिये गणनात्मक विवेचना की जा सकती है।

यदि सामाजिक घटनाओं का वस्तुनिष्ठ माप न किया जाए तो सदैव ही यह भय बना रहता है कि सामाजिक घटनाएं गुणात्मक होने के कारण प्रत्येक अनुसंधानकर्ता उनका अलग अलग वर्णन या अर्थ निकालता है जिससे घटनाओं के विष्लेशणमें किसी भी प्रकार की सुस्पष्टता पनप ही नही सकेगी। जबकि विभिन्न सामाजिक घटनाओं को मापने के सुनिश्चित पैमाना हमारे पास है।

बोध–प्रश्न 3

(i) अनुमापकों की किन्ही दो उपयोगिताओं का संक्षिप्त रूप में उल्लेख कीजिए ?

....

....

....

....

....

....

10.5.2 अनुमापन की कठिनाइयां–

आज सामाजिक अनुसंधान में मनोवृत्तियों की माप करने में अनेक महत्वपूर्ण प्रणालियों का विकास हो चुका है तथा उन्ही के कारण सामाजिक अध्ययनों को विज्ञान की श्रेणी में रखा जाता है। पैमानों के निर्माण में अनेक कठिनाइयों का सामना भी करना पडता है। जो इस प्रकार हैं–

1. सामाजिक घटनाओं की जटिलता–जटिल प्रकृति के कारण सामाजिक घटनाओं का एक ओर आसानी से अध्ययन नहीं किया जा सकता और दूसरी ओर ऐसे अध्ययन से प्राप्त निष्कर्षों को प्रामाणिक नही कहा जा सकता। इसका कारण है कि किसी एक सामाजिक घटना के लिए अनेक कारक या चल उत्तदायी होते हैं और इसलिए यह निश्चित करना कठिन होता है कि पैमाने के निर्माण में इनमें से किस कारक को महत्व दिया जाय। साथ ही ये कारक एक दूसरे से इतने घुले मिले होते हैं कि अनका अलग माप नही की जा सकती।

2. सामाजिक घटनाओं की अमूर्तता– सामाजिक घटनाओं की अमूर्तता पैमाने निर्माएा में आने वाली दूसरी कठिनाई है। सामाजिक घटनाओं की प्रकृति अमूर्त होती है अर्थात गुणात्मक प्रकृति की होती है और इने परिमाणात्मक रूप में माप करना कठिन होता है। सामाजिक तथ्यों जैसे– प्रेम, दुख, विचार, घृणा, पक्षपात आदि अमूर्त या गुणात्मक होते हे और इसलिए यह समस्या हो जाती है कि इनको गुणात्मक रूप में कैसे अभिव्यक्त किया जाए।

3. सामाजिक घटनाओं की असमानता–सामाजिक घटनाओं की असमानता के कारण सामाजिक विज्ञान के पैमानों का निर्माण करना कठिन होता है। मानव समाज में अनेक समूह पाये जाते है। और प्रत्येक समूह की अपनी संस्कृति, धर्म जाति, मूल्य, विश्वास, भाषा आदि होती है इन्ही के कारण अनेक प्रकार के विभेद पाये जाते है। इसके अतिरिक्त एक ही समूह के विभिन्न सदस्यों के विचार, भावना, आदर्श, विश्वास आदि के आधार पर विविधताएं होती हैं। इन सब के कारण किसी भी पैमाने पर पूर्णतया निर्भर नही किया जा सकता साथ ही एक समूह के लिए तैयार किया गए पैमाने को दूसरे समूह में लागू नही किया सकता।

4. मानवीय व्यवहार में परिवर्तनशीलता– मानव के व्यवहार परिवर्तनशील होते हैं और सामाजिक परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तित होते रहते हैं। एक परिस्थति विशेष में एक विचार तथा दूसरी परिस्थति विशेष में दूसरा विचार उत्पन्न होता है साथ ही एक विषय के संबंध में जो विचार आज है

कुछ दिनों बाद वह विचार स्थिर नही रहता। एक समय विशेष के लिए तैयार किया गया कोई भी पैमाने को दूसरे समय के पर लागू नही किया जा सकता।

5. सामाजिक मूल्यों के सार्वभौमिक माप का अभाव– आर्थिक मूल्यों के माप के लिए जहां एक और द्रव्य एक सार्वभैमिक माप है लेकिन सामाजिक मूल्यों को मापने के लिए कोई निश्चित पैमाना नही है।परिणाम यह होता है कि प्रत्येक समूह अपने अपने दृष्टिकोण से सामाजिक मूल्यों या तथ्यों का मूल्यांकन करते हैं। जिसके कारण पैमाने के निर्माण में कठिनाई उत्पन्न होती है।

पैमाने के निर्माण से संबंधित उपर्युक्त कठिनाइयों के अतिरिक्त भी कुछ अन्य कठिनाइयां है जो अनुसंधानकर्ता की कुशलता तथा सामाजिक घटनाओं से संबंधित है। आज सामाजिक शोध के अंतर्गत विभिन्न पैमानों का जिस तेजी से विकास हो रहा है उसे ध्यान में रखते हुए भविष्य में सामाजिक घटनाओं की कहीं अधिक विशुद्ध रूप में माप किया जा सकेगा।

10.6 अनुमाप के प्रकार

वर्तमान में सामाजिक अनुसंधानों में प्रमुख रूप से अभिवृत्ति के मापन के लिए प्रयुक्त चार महत्वपूंर्ण प्रकार निम्नलिखित है

1. अंक पैमाने
2. मूल्य मापक अथवा तीव्रता मापक पैमाने
3. श्रेणी सूचक मापक
4. सामाजिक दूरी मापक पैमाने

1. **अंक पैमाने**– इस प्रकार के पैमानों का प्रयोग मनोवृत्तियों अर्थात व्यक्तियों की राय जानने के लिए किया जाता है। इनमें कुछ विशिष्ट शब्द या स्थितियां ले ली जाती है और फिर प्रत्येक को एक अंक प्रदान कर दिया जाता है। इसके पश्चात् इन कथनो या स्थितियों के विषय में उत्तरणताओं की राय की जाती है। सूचनादाता से यह कहा जाता है कि वह जिस स्थिति या शब्द से सहमत हो उनके आगे सही () का निशान लगा दे। इस प्रकार हमें पता चल जाता हे उन विशिष्ट शब्दों अथवा स्थितियों के पक्ष में कितने मत प्राप्त हुए, परन्तु इनसे गहनता अथवा तीव्रता का पता नही चलता है।
2. **मूल्य मापक या तीव्रता मापक पैमाने**– इस प्रकार के पैमानों का प्रयोग लोगों की मनोवृत्तियों, मनोभावों, विचारों तथा रूचियों की तीव्रता या गहनता को मापने के लिये किया जाता है। ऐंसे पैमानों का उपयोग तब अधिक लाभदायक होता है जब किसी विशेष तथ्य के प्रति व्यक्ति की रूचि केवल दो विकल्पों तक सीमित नहीं होती बल्कि अनेक श्रेणियों में विभाजित हो सकती है। इनमें एक क्रम के अनुसार मूल्यांकन किया जाता है। लिकर्ट का पैमाना संकलित तीव्रता अनुमाप का उदाहरण है।
3. **श्रेणी सूचक पैमाना**– निर्णायकों के ऊपर निर्भर होने के कारण यह भी निर्धारण मापनी के ही समान है। एक निरपेक्ष मापनी पर निर्णय किये जाते हैं। अन्तर केवल श्रेणी के क्रम में स्थान निर्धारण करने से ही संबंधित हैं। थर्स्टन अनुमान इस श्रेणी का प्रमुख उदाहरण है।
4. **सामाजिक दूरी पैमाने**– सामाजिक अन्तर की धारणा एक सातत्य को सूचित करती है। उदाहरणार्थ, व्यक्तिगत तथा सामाजिक संबंधों की विशेषताओं के स्तर एवं गहनता को प्रदर्शित करने वाली मापनी को ले सकते है। जिस समूह का सामाजिक अन्तर मापन होता है, उसे एक सातत्य पर रखते हैं। बोगार्डस इसके प्रेणता थे। इसका प्रयोग विभिन्न समूहों में सामाजिक दूरी मापने के लिए किया जाता है।

सामाजिक अनुसंधान में सर्वाधिक प्रयुक्त पैमानों की ही संक्षिप्त वर्णन करते हैं। ये पैमाने निम्नलिखित हैं।

1. थर्स्टन पैमाने
2. लिकर्ट पैमाने
3. गटमैन पैमाने तथा
4. बोगार्डस पैमाने।

10.6.1 थर्स्टन पैमाना–

इस पैमाने का उपयोग किसी भी समूह के प्रति कुछ व्यक्तियों की मनोवृत्तियों रूचियों को जानने के लिए किया जा सकता है। थर्स्टन और उनके सहयोगियों ने अपनी मापनी चर्च के प्रति अभिवृत्ति से संबंधित थी। 1920 में अमेरिका में निर्मित थर्स्टन अनुमापक प्रदत्त चर के संकेतांकों के समूह बनाता है जो अनुभवाश्रय में प्रयोग किया जाता है।

इस विधि से अभिवृत्ति मापन के लिए मापन किये जाने वाले व्यक्ति, समूह, संस्था, विचार अथवा क्रिया के संबंध में 20 अथवा इससे अधिक कथन एकत्र किये जाते है जो उसके विभिन्न पक्षों से सम्बन्धित होते है फिर इन कथनों की बहुत सी प्रतियां बना ली जाती हैं। इन कथनों को लगभग 50 निर्णायकों को दिया जाता है। प्रत्येक निर्णायक को सब कथनों की एक प्रति और 11 पर्चियां दी गई। एक पर्ची पर A लिखा था दूसरी पर B, तीसरी पर C और इसी प्रकार अन्तिम पर्ची पर K लिखा था। इन पर्चियों को A से k तक के क्रम में निर्णायकों के सामने रख दिया गया। निर्णायकों से कहा जाता है कि कथनों को एक–एक करके पढ़ता जाये तथा वे इनको 11 वर्गों या पर्चियों में व्यवस्थित कर दे जो उच्चतम से निम्नतम सीमा की ओर हो अर्थात् जो सबसे अधिक अनुकूल है उसे A वाली पर्ची के ऊपर रखा जाए तथा सबसे अधिक प्रतिकूल पर्ची को k के ऊपर। वो कथन तटस्थ हो या जिनके सम्बन्ध एकमत नहीं होता उन कथनों को निकाल दिया जाता या फिर f वाली पर्चों के ऊपर आय। इस प्रकार सभी कथनों की अनुकूलता तथा प्रतिकूलता की मात्रा के आधार पर क्रम से लगा दिया जाता है। यदि A को 1,B को 2 आदि माने तो K 11 के बराबर है इस प्रकार यहाँ एक 11 बिन्दुओं वाली मापनी बन जाती है।

प्रत्येक कथन को प्रत्येक निर्णायककर्ता द्वारा A से K तक किसी भी पर्ची पर रखा और इस पर एक मूल्य प्रदान किया जाता है, किसी कथन को बराबर मूल्य प्रदान नहीं किया जाता। प्रत्येक चुने गये कथन के मध्यांक मापन मूल्य प्राप्त करते हैं जो 1 से 11 के मध्य होता है। कथनों का मूल्य निकालने के पश्चात उनमें से कुछ का चुनाव करके उन्हें मापनी में रखते हैं। कथन का चुनाव करने हेतु दो बातों का ध्यान रखना आवश्यक होता है कि विभिन्न मूल्यों वाले कथन चुने गये जिसमें 1 से 11 तक सभी मूल्यों वाले कथन आ जाने चाहिए। अन्त में चुने गए 20 से 22 कथनों को अनुसंधनकर्ता को देते है यथा जिनसे व सहमत होते हैं उन पर उचित का चिन्ह लगाने को कहा तथा जिन कथनों पर असहमत रहे उन्हे अस्पष्ट कहकर अस्वीकार कर दिया जाएगा।

आजकल थर्स्टन पैमाने का प्रयोग अधिक नहीं किया जाता क्योंकि 10 से 12 निर्णायककर्ता की आवश्यकता होने के साथ ही अत्यधिक समय लगता है।

बोध–प्रश्न 4

(i) थर्स्टन पैमाने का संक्षिप्त रूप में उल्लेख कीजिए ?

....

....

10.6.2 लिकर्ट पैमाना

इसे लिकर्ट की संकलित निर्धारण विधि कहते हैं। इसके अन्तर्गत थर्स्टन मापनी की भांति कथन होते हैं। दोनों में केवल यह अन्तर है कि जहाँ थर्स्टन मापनी में उत्तरदाता से कहा जाता है कि केवल उन कथनों पर निशान लगा दे जिनसे वह सहमत हैं। लिकर्ट मापनी में उत्तरदाता प्रत्येक कथन के सम्बन्ध में यह बताता है कि वह उससे किस सीमा तक सहमत या असहमत है। लिकर्ट ने थर्स्टन प्रणाली को नवीन स्वरूप प्रदान किया साथ ही थर्स्टन मापनी की तुलना में अधिक सरल है तथा इसके बनाने में कम लगता है। इस विधि को बिना निर्णायकों के समूह के ही प्रयोग में लाने पर थर्स्टन के समान ही अंक प्राप्त हुए हैं। लिकर्ट ने एक प्रविधि विकसित की जिसमें केवल सहमत या असहमत के स्थान पर अत्यधिक सहमत या अत्यधिक असहमत का संकेतांक बनाकर सम्मिलित अंकों में भिन्नता बढ़ाकर किया। लिकर्ट मापनी के प्रणाली के आधार पर मनोवृत्ति पैमाने का निर्माण करने से सम्बन्धित मुख्य स्तर निम्न प्रकार के हैं–

1. सर्वप्रथम जिस विषय में अभिवृत्ति की माप की जानी है उससे संबंधित अनेक कथनों का संकलन किया जाता है। कथन का उचित होना विशेष महत्वपूर्ण नहीं बल्कि महत्वपूर्ण यह है कि वे किसी विशेष दृष्टिकोण के लिए निश्चित रूप से अनुकूल अथवा प्रतिकूल हो। प्रतिकूल तथा अनुकूल कथन लगभग समान होने चाहिए।

2. इन कथनों के संग्रह करने के पश्चात इनका कुछ व्यक्तियों पर पूर्व परीक्षण किया जाता है तथा उन्हीं कथनों को रखा जाता है जो पूर्व परीक्षण से सम्बन्धित होते हैं। इस आन्तरिक स्थिरता की जांच द्वारा भ्रमपूर्ण तथा असम्बद्ध कथनों को निकाल देते हैं। प्रत्येक कथन के लिए एक अंक दिया जाता है तथा सभी अंकों का योग एक व्यक्तिगत अंक प्रदान करता है। इसके विष्लेशणके लिए सामान्यतः दो विधियां अपनाते हैं–

1–प्रत्येक कथन के लिए दिये गए अंको का प्रतिशत निकलना।

2–लिकर्ट को मूल विधि में प्रत्येक स्थिति के लिए एक मापन मूल्य निश्चित करते हैं और उसी के अनुसार अंक देते हैं।

कथन	**मापन मूल्य**	**विपरीत स्थिति संबंधी कथन में इसका उल्टा होगा**
पूर्णतया सहमत	5	1
सहमत	4	2
अनिश्चित	3	3
असहमत	2	4
पूर्णतया असहमत	1	5

3. उपर्युक्त ढ़ग से पैमाने का निर्माण कर लेने के पश्चात एक बड़ी संख्या में लोगों को संकलित कथनों की सूची देकर उन्हें निर्देश दिया जाता है कि वे अपने दृष्टिकोण के अनुसार प्रत्येक कथन की श्रेणी निर्धारित करने के लिए उत्तरों के विकल्पों में से किसी एक पर निशान लगाएं। इसके आधार पर उसे एक प्राप्तांक दिया जाता है।

4. अब प्रत्येक उत्तरदाता के सारे कथनों के प्राप्तांक जोड़ लिए जाते हैं और इसे उसका सम्पूर्ण प्राप्तांक कहा जाता है। इसे कथनों की संख्या से भाग देकर उसका सम्पूर्ण औसत प्राप्तांक निकाला जाता है।

5. इसके पश्चात् एक–एक कथन को लेकर सब कथनों के बीच आंतरिक संगति पता लगाने के लिए विष्लेशणकिया जाता है। इसकी एक विधि यह है कि प्रत्येक कथन के लिए एक तालिका का निर्माण करते है जिसमें उत्तरदाताओं के उस पर प्राप्तांक एक स्तम्भ है और सामने उन्हीं उत्तरदाताओं के सम्पूर्ण औसत प्राप्तांक दूसरे स्तम्भ में लिख देते हैं। अब इन दोनों स्तम्भों के बीच सांख्यिकीय सहसंबंध निकाल लेते हैं। यदि सहसंबंध उच्चतम होता है तो कथन को मापनी मे रख लिया जाता है अन्यथा छोड़ दिया जाता है। इन चुने हुए प्रश्नों से मापनी बन जाती है। अभिवृत्ति सदैव धनात्मक या ऋणात्मक होगी।

कथन का पैमाना मूल्य ज्ञात करना

कथन	भार	उच्चतम चतुर्थक			निम्नतम चतुर्थक		
	X	F	Fx	Fx^2	F	Fx	Fx^2
पूर्णतया सहमत	5	7	35	175	0	0	0
सहमत	4	8	32	128	1	4	16
अनिश्चित	3	10	30	90	3	9	27
असहमत	2	11	22	44	21	42	84
पूर्णतया असहमत	1	0	0	0	7	7	7
योग	–	36	119	437	32	62	134
माध्य	–	3.30			1.94		

पैमाना मूल्य का अन्तर 3.30–1.94= 1.36

वर्तमान में मनोवृत्तियों की तीव्रता का माप करने में लिकर्ट पैमाने का कहीं अधिक प्रयोग किया जाता है क्योंकि इससे विश्वसनीयता की जांच की जाती है तथा उपयोग विधि थर्स्टन पैमाने से कहीं अधिक सरल भी है।

बोध–प्रश्न 5

(i) लिकर्ट मापनी का उहारण सहित संक्षिप्त रूप में उल्लेख कीजिए ?

....
....
....
....

10.6.3. गटमैन पैमाना

लुई गटमैन पद्धति द्वारा यह पता लगाया जा सकता है कि विभिन्न कथन एक ही आयाम को नाप रहे हैं या नहीं। लिकर्ट अनुमापन के साथ–साथ अंक बनाने के दस या अधिक तरीके हो सकते हैं वहीं गाटमैन मापनी 2 अंक बनाने का केवल एक ही तरीका होता है।

गटमैन की पद्धति में अभिवृत्ति से सम्बन्धित कुछ कथन चुने जाते हैं। इनमे से प्रत्येक के प्रति सम्भव पाँच अनुक्रियाओं को 1 से लेकर 5 तक का मूल्य दे दिया जाता है फिर उत्तरदाताओं की अनुक्रियाऐं प्राप्त की जाती हैं। इसके पश्चात् कथनों के प्राप्तांको को जोड़कर प्रत्येक उत्तरदाता का सम्पूर्ण प्राप्तांक निकाला जाता है।

यह अपेक्षा की जाती है कि जो व्यक्ति प्रश्न 5 का सही उत्तर देता है तो वह प्रश्न 1 से 4 तक के प्रश्नों का भी उत्तर देगा। जो व्यक्ति 3 का उत्तर सही देगा तो वह प्रश्न 1 से 2 तक भी उत्तर देगा। धन और ऋण चिन्हों के प्रयोग से इसे एक आरेख द्वारा दर्शाया जा सकता है जिसे स्केलाग्राम कहते हैं।

गटमैन का स्केलोग्राम

1	2	3	4	5	स्कोर
+	+	+	+	+	5
+	+	+	+	–	4
+	+	+	–	–	3
+	+	–	–	–	2
+	–	–	–	–	1
–	–	–	–	–	0

यदि किसी उत्तरदाता का सम्पूर्ण प्राप्तांक किसी दूसरे उत्तरदाता से अधिक है किन्तु किसी कथन पर प्राप्तांक उसी उत्तरदाता से कम है तो माना जाता है कि वह कथन मापनी में नहीं आना चाहिए या उस पर प्राप्तांक दूसरी प्रकार दिए जाने चाहिए अर्थात् किसी उत्तरदाता के सम्पूर्ण प्राप्तांक के आधार पर सब कथनों के उसके प्राप्तांकों की पुनः प्रस्तुति सम्भव होनी चाहिए।

गाटमैन अनुमापन इस विचार पर आधारित है जो कोई किसी प्रकार के चर का मजबूत संकेत देता है वह सरल और कमजोर संकेत भी देगा। यह बात ध्यान देने योग्य है कि गाटमैन के अनुमापक में यदि सभी मद मापनीय हैं तो स्केलोग्राम में n+1 उत्तर स्वरूप निहित होंगे जिन्हें स्केल टाइप्स के नाम से जाना जाता है। व्यक्ति के प्राप्तांकों से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि वह किस मद से सहमत या असहमत था।

10.6.4 बोगार्डस पैमाना

बोगार्डस ने इस मापनी को व्यक्ति, समूह या राष्ट्र के लोगों के प्रति अभिवृत्ति और उसकी तुलना करने के उद्देश्य से बनाया था इसके द्वारा हम कुछ व्यक्ति अथवा समूह के लोगों के साथ उत्तरदाताओं का सामाजिक अन्तर पाया जाता है। एक ही व्यक्ति से हम एक विशेष परिस्थिति में बहुत घनिष्ठता का अनुभव करते है जबकि दूसरे समय पर उसी व्यक्ति के प्रति हमारे मन में सन्देह की भावना उत्पन्न हो जाने के कारण पारस्परिक दूरी बढ़ने लग जाती है। इसका तात्पर्य है जितना हो हम किन्हीं लोगों से दूर रहना चाहते है उतना ही हमारे बीच सामाजिक अन्तर कहा जाता है।हम कितनी दूर रहना चाहते है या पास आना चाहते है यह हमारी कर्म प्रवृत्ति हुई। कर्म प्रवृंत्तियों के आधार पर निकटता या दूरी को मापने के लिए जिस पैमाने का उपयोग किया जाता है उसे बोगार्डस का सामाजिक दूरी का पैमाना कहते है।

पैमाने के निर्माण के लिए बोगार्डस ने प्रारम्भिक चरण में 100 व्यक्तियों की राय के आधार पर कुछ ऐसी सामाजिक परिस्थितियों का चुनाव किया जिनके द्वारा विभिन्न समूहों के प्रति एक व्यक्ति विशेष या समूह की घटती हुई अथवा बढ़ती हुई सामाजिक दूरी को ज्ञात किया जा सके।

किसी राष्ट्रीयता के औसत व्यक्ति के साथ आप जिस प्रकार का व्यवहार रखना चाहते हैं उसके कथन के चारों ओर घेरा बना दें। प्रथम संवेगात्मक प्रतिक्रिया के अनुसार उत्तर दें, इसके पश्चात् उपर्युक्त समूहों के प्रति अमेरिकनों की मनोवृत्तियों का माप करने के लिए इस अनुसूची को 1725 अमेरिकनों को वितरित किया गया।

प्रत्येक राष्ट्रीयता (अंग्रेज, पोल, स्वीडिश, कोरियन) के लिए सात प्रकार की कर्म प्रवृत्तियां सामने रखी जाती हैं।

1—वैवाहिक सम्बन्ध द्वारा निकट सम्बन्ध के लिए।

2—अपने क्लब में व्यक्तिगत मित्र बनाने की स्वीकृति।

3—अपनी गली में पड़ोसियों की तरह स्वीकृति।

4—अपने व्यवसाय में रोजगार के लिए।

5—अपने देश में नागरिकता के लिए।

6—अपने देश में केवल यात्री के रूप में आने के लिए।

7—अपने देश से बाहर ही रखने योग्य।

उत्तर प्राप्त होते जाने के पश्चात् प्रत्येक वर्ग तथा प्रत्येक समूह का योग निकालकर उसे प्रतिशत में परिवर्तित करते हैं। इस प्रकार प्रत्येक वर्ग एवं समूह का जो प्रतिशत प्राप्त हुआ था वो इस प्रकार था।

वर्ग	विभिन्न वर्गों में अलग–अलग प्र�नों के उत्तरों का प्रति�ात						
	1	2	3	4	5	6	7
अंग्रेज	97.3	96.7	97.3	95.4	95.9	1.7	1.0
स्वीडिस	45.3	62.1	75.6	78.0	86.3	5.4	1.0
पोल	11.0	11.6	28.3	44.3	58.3	19.7	4.7
कोरियन	1.1	6.8	13.0	21.4	23.7	47.1	19.1

यदि उत्तरदाता उस प्रगति के व्यक्ति के साथ वैवाहिक संबंध बनाने को तैयार है तो दोनों के बीच सबसे कम सामाजिक अन्तर होगा। यदि उसे मित्र के तौर पर अपनाना चाहता है तो उससे कम सामाजिक अन्तर होगा। इसी प्रकार आने वाली कर्म प्रवृत्तियां अधिकाधिक सामाजिक अन्तर बताती है। बोगार्डस का मानना था कि यदि एक व्यक्ति पाँचवे प्रकार के सम्बन्धों को स्वीकारने को राजी है तो वह पहले चार प्रकार के सम्बन्धों के साथ रहना भी स्वीकार

बोगार्डस के पैमाने के द्वारा प्राप्त तथ्यों की माप गणितीय विधियों से करना भी सम्भव है। यह कार्य विभिन्न वर्ग के उत्तरों के लिए भार देखकर किया जाता है। बोगार्डस द्वारा प्रस्तुत उदाहरण में प्रारम्भ के पाँच वर्ग निकटता को और अन्तिम दो वर्ग पारस्परिक दूरी को प्रदर्शित करते हैं। प्रारम्भ की पाँच परिस्थितियां जो काफी सीमा तक सामाजिक घनिष्ठता को प्रदर्शित करती है गणितीय माप के लिए लिया जाता है। करेगा। यह मापनी आधार सामग्री कम करने के साधन के रूप में एक मितव्ययी साधन है।

बोध–प्रश्न 6

(i) बोगार्डस द्वारा चार राष्ट्रों की राष्ट्रीयता के लिए बनायी गई कर्म प्रवृत्तियां को लिखिए ?

....
....
....
....
....
....

10.7 सारांश–

अधिकतर विषयों, परिस्थिति आदि के प्रति मानव की मनोवृत्ति इतने जटिल रूप में प्रकट होती है कि उनको निशचित पैमाने के अंतर्गत सीमित नही किया जा सकता है। यदि पैमाने को उसी अनुपात में जटिल बना देते हैं तो उत्तर दाता समझ नही पाता है और बिना समझे जो कुछ उत्तर वह दे देता है साथ ही उसकी वास्तविक मनोवृत्ति को कदापि अभिव्यक्त नहीं करता है। साथ ही सामाजिक मूल्य सभी स्थानों पर एक समान नही है अतएव एक ही पैमाना सभी समाजो में लागू नही किया जा सकता

है। इन गुणात्मक तथा परिवर्तनशील सामाजिक घटनाओं की परिशुद्ध माप करने के लिए अनेक अनुमापन की प्रविधियों का विकास हो चुका है जिनके माध्यम से गुणात्मक तथ्यों को गणनात्मक तथ्यों में परिवर्तित कर यथार्थ तथा वस्तुनिष्ठ निष्कर्ष निकालना आसान हो चुका है। आज सुविकसित अनुमापन पैमाने की सहायता से सभी प्रकार की मनोवृत्तियों का माप करना सम्भव हो जाने के कारण सामाजिक शोध कार्य भी वस्तुनिष्ठ बनते जा रहे हैं। भविष्य में जैसे जैसे अनेक नवीन अनुमापन प्रविधियां और अधिक विकसित होती जायेगीं, सामाजिक अध्ययनों में भी परिपक्वता आती जायेगी।

10.8 परिभाषिक शब्दावली–

अमूर्त– जिन्हें हम प्रत्यक्ष रूप से देख या छू नही सकते या उनकी माप तोल या सूंघ नहीं सकते। अमूर्त होते है।

समंक– तथ्यों का वह समूह जो अनेक कारणें से, पर्याप्त सीमा तक प्रभावित होते है, जो अंकों में प्रकट किए जाते हैं।

प्रमाणिकता– किसी उपकरण से जो वस्तु जैसी है उसका उतना ही मापन करना प्रमाणिकता कहलाती है।

विश्वसनीयता– विश्वसनीयता का अर्थ यह है कि शोध के निष्कर्ष वस्तुपरक होने के साथ साथ स्वतंत्र अवलोकनकर्ता उनका सत्यापन कर सके।

पैमाना–पैमाना वह साधन है जिसके द्वारा हम किसी वस्तु को माप सकते हैं।

10.9 बोध–प्रश्नों के उत्तर

बोध–प्रश्न 1

विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर मापनी के प्रकार शीर्षक के अर्न्तगत दिये गये अन्तराल मापनी के विवरण में से लिखना है।

बोध–प्रश्न 2

विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर विश्वसनीयता शीर्षक के अर्न्तगत दिये गये विवरण में से लिखना है।

बोध–प्रश्न 3

विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर अनुमापकों की उपयोगिता शीर्षक के अर्न्तगत दिये गये के विवरण में से लिखना है।

बोध–प्रश्न 4

विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर थर्स्टन पैमाने शीर्षक के अर्न्तगत दिये गये विवरण में से लिखना है।

बोध– प्रश्न 5

विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर लिकर्ट पैमाने शीर्षक के विवरण में से लिखना है।

बोध– प्रश्न 6

विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर बोर्गाडस पैमाने शीर्षक के विवरण में से लिखना है।

10.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

जैन एम. बी. **रिसर्च मैथ्डोलॉजी**. रिसर्च पब्लिकेशन. जयपुर।

त्रिवेदी व शुक्ला. **रिसर्च मैथ्डोलॉजी**. कालेज बुक डिपो .जयपुर.

ज्योति वर्मा. 2007. सामाजिक सर्वेक्षण. डिस्कवरी पब्लिशिंग हाउस. नई दिल्ली।

Gardner, Lindzey and Elliott, (2nd ed.). (1975). The Handbook of Social Psychology. vol II. Amerind Publishing Co. New Delhi.

10.11 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री

Singh, K. (1983**).** Techinques of method of Social Survey Research and Statistics, Prakashan Kendra, Lucknow.

Best J. W. (1959). Research in Education. Prentice-Hall Inc. Englewood Cliffs, New Jercy.

Kothari, C.R. (2009). *Research Methodology Methods and Techniques*. 2nd Revised ed., New Delhi: New Age International (P) Limited, Publishers

गुडे एंड हाट. 1983. **मैथ्डस इन सोशियल रिसर्च**. मैकग्रू हिल इंटरनेशनल. ऑकलैण्ड.

राम आहूजा. 2005. **सामाजिक सर्वेक्षण एवं अनुसंधान**. रावत पब्लिकेशन्स. दिल्ली.

10.12 निबंधात्मक प्रश्न

- माप का अर्थ समझाते हुए माप के प्रकार का उदाहरण सहित वर्णन कीजिए।
- परिमाणत्मक अनुसंधान में विश्वसनीयता एवं वैधता की जांच किस प्रकार की जा सकती है ? विवेचना कीजिए।
- अनुमापन के अर्थ को समझाइए तथा थर्स्टन पैमाने की व्याख्या कीजिए।
- अनुमापन के अर्थ को समझाइए तथा लिकर्ट पैमाने की व्याख्या कीजिए।
- बोगार्डस तथा गाटमैन पैमाने की विवेचना कीजिए।
- पैमाने से आप क्या समझते हैं? इसके निर्माण की प्रमुख समस्याओं की विवेचना कीजिए।

इकाई 11 निदर्शन,निदर्शन के प्रकार- सम्भावना और असम्भावना निदर्शन
Samping, Types of Sampling-Probability & Non-Probability Sampling

इकाई की रूपरेखा

11.0 उद्देश्य

11.1 प्रस्तावना

11.2 निदर्शन का अर्थ व परिभाषाएं

11.2.1 निदर्शन के आधार

11.2.2 निदर्शन की विशेषताएं

11.2.3 निदर्शन के गुण

11.2.4 निदर्शन के दोष

11.3 निदर्शन के प्रकार

11.3.1 सम्भावना निदर्शन का अर्थ तथा प्रकार

11.3.2 असम्भावना निदर्शन का अर्थ तथा प्रकार

11.4 सम्भावना निदर्शन तथा असम्भावना निदर्शन में अंतर

11.5 निदर्शन की समस्या

11.6 निदर्शन की विश्वसनीयता की समस्या

11.7 सारांश

11.8 पारिभाषिक शब्दावली

11.9 संदर्भ ग्रंथ सूची

11.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

11.11 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री

11.12 निबंधात्मक प्रश्न

11.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आपके द्वारा संभव होगा;

- समग्र तथा निदर्शन में अतंर समझ पाना,
- निदर्शन के आधार, विशेषता तथा गुण व दोषों को बताना,
- निदर्शन के प्रकार को बताना,
- सम्भावना तथा गैर सम्भावना निदर्शन की चर्चा करना,
- सम्भावना तथा गैर सम्भावना निदर्शन में प्रयुक्त अनेक विधियों पर चर्चा करना,
- निदर्शन की समस्या तथा निदर्शन का विश्वसनीयता की समस्या बताना।

11.1 प्रस्तावना

सामाजिक अनुसंधान में निदर्शन प्रणाली का महत्वपूर्ण स्थान हैं जिसके अंतगर्त समाज या समग्र कि समस्त इकाइयो का चयन न करके कम से कम इकाइयों का चयन किया जाता है जो समूह की सभी

इकाइयों का प्रतिनिधित्व करता है। चुनाव की यह प्रक्रिया को प्रतिचयन /निर्दशन कहते है। प्रतिदिन के जीवन में निदर्शन का उदाहरण हैं गरम रेत में भूनी हुई मूंगफलियों का देखा जाना। जिस प्रकार मूंगफली भूनने वाला कुछ मूंगफलियों को चखकर यह अनुमान लगा देता है कि समस्त मूंगफली पक गई हैं या नही। उसी प्रकार किसी राज्य या जिले में कार्यरत अध्यापिकाओं की समस्याओं के विषय में अध्ययन करना हो तो राज्य में उनकी संख्या अत्यधिक होनें के कारण समस्त का अध्ययन कर पाना संभव नही हो सकता तो हम स्वीकृत प्रणाली के माध्यम से कुछ महिलाओं का चयन करते हैं जो समस्त महिलाओं का वास्तविक प्रतिनिधित्व करती हैं।

11.2 निदर्शन का अर्थ व परिभाशाएं

जब किसी विषय पर सामाजिक अनुसंधान आरम्भ करता है, तब अध्ययन से सम्बंधित इकाईयों का चयन करना एक मुख्य समस्या होती है। अध्ययन विषयक समग्र सीमित हो अथवा व्यापक, सभी इकाईयों का अध्ययन करना साधारणतया सम्भव नहीं हो पाता है। समग्र के अपेक्षाकृत विस्तृत होने की दशा में शारीरिक रुप उनके पास तक पहुँचना कठिन होता है, तब अनुसंधानकर्ता केवल एक प्रतिदर्श का ही सर्वेक्षण करते हैं। अनुसंधानकर्ता के लिए सामाजिक अध्ययनों की वैषयिकता, वैज्ञानिकता एवं वस्तुनिष्ठता को बनाये रखने में प्रतिदर्श का चयन सर्वाधिक महत्वपूर्ण होता है जो समग्र का वास्तविक प्रतिनिधित्व करता है। **गुडे तथा हाट** के अनुसार ''निदर्शन किसी विशाल समग्र का एक छोटा प्रतिनिधि है''। **हेनरी मेनहीम** के अनुसार ''एक प्रतिदर्श समग्रजन का अंश होता है जिसका अध्ययन पूर्ण समग्रजन के विषय में अनुमान निकालने के लिए किया जाता है''।

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट होता है कि किसी जनसंख्या में से कुछ इकाइयों को चुन लिया जाता है तो चुनने की क्रिया को न्यादर्शन कहते है तथा चुनी हुई इकाइयों के समूह को न्यादर्श कहते हैं जो समस्त इकाई समूह का प्रतिनिधित्व करते हैं। अर्थात निदर्शन समग्र में से चयनित कुछ इकाईयों के समूह को कहते हैं। दूसरे शब्दों में निदर्शन समग्र की समस्त इकाइयों में से चुनी गई ऐसी इकाईयाँ है जो सम्पूर्ण समूह का प्रतिनिधित्व करती है।

निदर्शन को अधिक विस्तृत रूप से समझने में निम्नलिखित धारणाएं सहायक है।

1. **चर**– चर का तात्पर्य उस गुण, विशेषता या अवस्था से है जिसका अध्ययन किया जाता है।
2. **इकाई**– चर की मात्रा को जिस किसी छोटे से छोछे घटक में ज्ञात करत हैं उसे इकाई कहते है।
3. **जनसंख्या या समग्र**– समग्रजन वे चर है जिनकी सहायता से जनसंख्या में चर के विवरण का स्वरूप निर्धारित किया जाता है।
4. **निदर्श**– निदर्श समूचे इकाई समूह में से चुनी गई कुछ ऐसी इकाइंषें का समूह है जो समूचे इकाई समूह का प्रतिनिधित्व करें।

11.2.1 निदर्शन के आधार

1. **समाज की सहभागिता** : निदर्शन विधि द्वारा अध्ययन की सफलता जनसंख्या के तत्वों की समानता पर निर्भर करती है। यदि अध्ययन विषय की समस्त इकाइयों में समानता है भी अध्ययन के लिए चयनित इकाइयां प्रतिनिधित्वपूर्ण होगीं और निदर्शन यथार्थ रूप में विश्वसनीय हो सकेगा। लुण्डवर्ग ने लिखा है कि यदि तथ्यों में अत्यधिक एकरूपता पायी जाती है अर्थात सम्पूर्ण तथ्यों की विभिन्न इकाइयों के अन्तर बहुत कम है तो सम्पूर्ण में से कुछ या कोई इकाई समग्र का उचित प्रतिनिधित्व करेगी। अतः निदर्शन में अत्यन्त आवश्यक है कि समाज में

अधिकाधिक समानता हो तथा चुनी गयी इकाइयां समग्र की विशेषताओं का प्रतिनिधित्व करने में सक्षम हो सकें।

2. **प्रतिनिधित्वपूर्ण चुनाव की सम्भावना** : निदर्शन की मान्यता यह है कि समाज मे से कुछ इकाइयों का चयन इस प्रकार किया जा सकता है कि वे समग्र का प्रतिनिधित्व कर सकें किन्तु इसके लिये आवश्यक है कि निदर्शन की इकाइयों में वे सभी विशेषताएं हो जो समग्र में हो।
3. **पर्याप्त परिशुद्धता** : अध्ययन में यह नहीं माना जा सकता कि निदर्शन शत प्रतिशत परिशुद्ध है क्योंकि इकाइयों का चयन कितना ही सावधानीपूर्वक क्यों न किया गया हो वे शत प्रतिशत प्रतिनिधित्व नहीं कर सकती। हमारा प्रयास होना चाहिए कि निदर्शन में इकाइयों की संख्या पर्याप्त हो ताकि वह प्रतिनिधित्वपूर्ण हो सके और उनके अध्ययन के निष्कर्ष यर्थाथ हों।

11.2.2 निदर्शन की विशेशताएं

1. **पर्याप्त आकार** : निदर्शन प्रणाली के अर्न्तगत कम से कम लोगों का चयन होना आवश्यक है। यदि निदर्शन प्रणाली के अपनाने के पश्चात भी ज्यादा से ज्यादा लोगों का चुनाव किया जाता है तो उससे सम्बन्धित समस्त इकाइयों का गहन और सूक्ष्म अध्ययन करना और कठिन हो जाता है अतः निदर्शन करते समय ध्यान रखना चाहिए कि समस्या एवं समग्र की प्रकृति तथा आकार के अनुरूप ही हमारा प्रयास यह होना चाहिए कि निदर्शन में इकाइयों की संख्या पर्याप्त हो ताकि वे समस्त इकाइयों का प्रतिनिधित्व कर सके।
2. **पर्याप्त प्रतिनिधित्व** : एक श्रेष्ठ निदर्शन के लिए यह आवश्यक है कि वह सम्पूर्ण /समग्र का सही प्रतिनिधित्व करे ऐसा तभी सम्भव हो सकता है जब समाज की प्रत्येक इकाई को निदर्शन में सम्मिलित होने के समान अवसर प्राप्त हों। कार्लिजर के अनुसार "शोध में प्रतिनिधिक निदर्श का अर्थ यह है कि निदर्श में समाज की लगभग सभी विशेषताएं होनी चाहिए जो शोध किए जाने वाले प्रश्न के लिए प्रासांगिक है।"
3. **अभिनति रहित** : एक श्रेष्ठ निदर्शन को पक्षपात एवं मिथ्या सुझाव से स्वतंत्र होना चाहिए अन्यथा यह प्रतिनिधित्वपूर्ण होने का दावा नहीं कर सकता।
4. **स्वतंत्रता** : निदर्शन की महत्वपूर्ण विशेषता यह भी है कि समाज के सभी इकाइयां आपस में स्वतंत्र होनी चाहिए अर्थात निदर्शन में किसी इकाई का सम्मिलित होना किसी अन्य इकाई के सम्मिलित होन पर निर्भर न हो। इसमें समग्र की प्रत्येक इकाई को निदर्शन में चुने जाने का स्वतंत्र व समान रूप से अवसर प्राप्त होता है।
5. **साधनों के अनुरूप** : निदर्शन में प्रयुक्त होने वाली प्रणाली का अध्ययनकर्ता के पास उपलब्ध साधनों तथा अध्ययन के उद्देश्यों के अनुरूप होना अत्यन्त आवश्यक है साधनों के अनुरूप निदशर्न न होने पर उसमें पक्षपात आने की संभावना रहती है।
6. **अनुभवों पर आधारित** : उत्तम निदर्शन का चयन करने के लिए अध्ययन करते समय सदैव अध्ययनकर्ता को स्वयं तथा अन्य विषय–विशेषज्ञों के अनुभवों का लाभ उठाना चाहिए। अनुभवों से व्यवहारिक ज्ञान अर्जित किया जा सकता है तथा प्रतिनिधित्वपूर्ण निदर्शन का चुनाव भी सरलता से हो पाता है।
7. **ज्ञान व तर्क पर आधारित** : एक उत्तम निदर्शन वह है जो सामान्य ज्ञान एवं तर्क पर आधारित हो। निदर्शन का चयन करते समय अध्ययनकर्ता को विभिन्न नियमों व सिद्धांतों का पालन करने के साथ–साथ स्वयं तथा अन्य विद्वानों के ज्ञान तथा तर्क का सही उपयोग करना चाहिए, जिससे परिणामों की सफलता के प्रति अधिक आशान्वित हुआ जा सके।

बोध–प्रश्न 1

(i) निदर्शन की किन्ही दो महत्वपूर्ण विशेषताओं का उल्लेख कीजिए ?

....

....

....

....

....

11.2.3 निदर्शन के गुण

1. **मितव्ययी विधि** : अनुसंधान की यह पद्धति काफी मितव्ययी है। क्योंकि इस पद्धति में समूह की कुछ प्रतिनिधि इकाइयों का ही अध्ययन किया जाता है। जिसमें धन, समय तथा परिश्रम कम खर्च होता है। अतः सम्पूर्ण जनसंख्या का शत प्रतिशत अध्ययन करने का श्रम, समय व धन व्यय नहीं करना पड़ता। निदर्शन की ऐसी विधि है जिसके द्वारा कम इकाइयों का अध्ययन करने के लिए कम अध्ययनकर्ताओं और कम साधनों की आवश्यकता होती है।
2. **परिणाम की** शुद्धता : परिणामों की शुद्धता निदर्शन के इकाइयों की संख्या सीमित होती तथा अध्ययन विस्तृत होता है अतः प्राप्त होने वाले परिणामों की शुद्धता और यर्थाथवादिता भी बढ़ जाती है।
3. **समग्र का प्रतिनिधित्व** : एक श्रेष्ठ निदर्शन की सर्वप्रथम विशेषता यह है कि वह समग्र का प्रतिनिधित्व करें। ऐसा तभी सम्भव हो सकता है कि समग्र की प्रत्येक इकाई को निदर्शन में सम्मिलित होने के समान अवसर होते हैं। इसका तात्पर्य है कि निदर्शन का चुनाव इस प्रकार किया जाना चाहिए जिसमें अध्ययन .... से संबन्धित सभी वर्गों और समूहों की विशेषताओं को स्पष्ट करने वाली इकाइयों का समावेश हो।
4. **निशपक्षता** : एक श्रेष्ठ निदर्शन को पक्षपात एवं मिथ्या सुझाव से स्वतंत्र होना चाहिए अन्यथा वह प्रतिनिधित्वपूर्ण होने का दावा नही कर सकता। निदर्शन का चुनाव करते समय इस बात का ध्यान रहे कि वह अनुसंधानकर्ता की रूचि, स्वार्थ, सुविधा एवं स्वेच्छा पर आधारित न हो, न ही उसमें पूर्ण धारणा का कोई प्रभाव नहीं होता।
5. **व्यवहारिक अनुभवों पर आधारित** : अध्ययनकर्ता को अध्ययन करते समय सदैव स्वयं तथा अन्य विद्वानों के अनुभवों का लाभ उठाना चाहिए। अनुभवों से व्यवहारिक ज्ञान को अर्जित किया जा सकता था तथा प्रतिनिधित्वपूर्ण निदर्शन का चुनाव भी सरलता से हो जाता है।
6. **ज्ञान व तर्क पर आधारित** : निदर्शन का चयन करते समय अध्ययनकर्ता को विभिन्न नियमों व सिद्धांतो का पालन करने के साथ–साथ स्वयं तथा अन्य विद्वानों के ज्ञान तथा तर्क का सही उपयोग करना चाहिए जिससे परिणामों की सफलता के प्रति अधिक आशान्वित हुआ जा सके।
7. **स्वतंत्रता** : निदर्शन की महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि समाज की समस्त इकाइयां स्वतंत्र होनी चाहिए अर्थात एक इकाई अन्य इकाई पर आश्रित नहीं होनी चाहिए दूसरे शब्दों में समाज की प्रत्येक इकाई को निदर्शन में चुने जाने का स्वतंत्र एवं समान अवसर प्राप्त होना चाहिए।
8. **गहन अध्ययन** : संगणना विधि में क्षेत्र विस्तृत एवं इकाइयां बिखरी हुई होती हैं अतः उनके बारे में मोटी मोटी बातें ही ज्ञात होती हैं जब किसी अध्ययन छोटे निदर्शन का उपयोग किया

जाता है तो प्रत्येक इकाई का अत्यधिक गहन और सूक्ष्म अध्ययन करने के साथ ही प्राप्त सूचनाओं की यर्थाथता को जांच करना भी सम्भव हो जाता है।

9. **तथ्यों की पुर्नपरीक्षा** : निदर्शन में सीमित इकाइयों का अध्ययन कियं जाने के कारण आवश्यकता पड़ने पर तथ्यों की पुनःपरीक्षा संभव है, परंतु अन्य विधियों में ऐसा संभव नहीं है। अतः अपेक्षाकृत कम संसाधनो के उपयोग से तथ्यों को पुनः जांच कर अध्ययन की प्रमाणिता में बृद्धि की जा सकती है।

11.2.4 निदर्शन के दोष

निदर्शन की उपयोगिता के साथ–साथ अनेक सीमाएं इस प्रकार हैं –

1. **पक्षपात की अधिक संभावना** : प्रवोध का सबसे बड़ा दोष यह है कि निदर्शन का चुनाव पक्षपात रहित नहीं हो पाता है। ऐसी स्थिति में निदर्शन प्रतिनिधित्वपूर्ण नही रह जाता है निदर्शन के चुनाव करते समय किसी न किसी रूप में अध्ययनकर्ता का प्रभाव एवं पक्षपात आ ही जाता है और हमारा निष्कर्ष भ्रमपूर्ण हो जाता है।
2. **निदर्शन चुनाव में कठिनाई** : प्रतिनिधित्वपूर्ण निदर्शन का चयन अत्यन्त महत्वपूर्ण है जिसमें अनुसंधानकर्ता को कठिनाई का सामना करना पड़ता है। इस संबंध में सबसे बड़ी कठिनाई तो इस लिए होती है कि सामाजिक इकाइयों में भिन्नता और विविधताएं जितनी अधिक होती हैं प्रतिनिधित्वपूर्ण निदर्शन का चुनाव उतना ही कठिन हो जाता है।
3. **विशेश ज्ञान की आवश्यकता** : प्रतिनिधित्वपूर्ण निदर्शन के चयन हेतु सूचना–संकलन के लिए पर्याप्त ज्ञान, प्रशिक्षण व अनुभव की आवश्यकता होती है। हर सामान्य अध्ययनकर्ता के लिए यह एक सरल विधि है।
4. **निदर्शन की असंभवता** : कई परिस्थितियों में निदर्शन अनिवार्य है तो अनेक ऐसी स्थितियां भी हैं जब निदर्शन अध्ययन के लिए असम्भव हो जाता है जब अध्ययन विषय छोटा हो, इकाइयों में भिन्नता हो, और सजातीयता का अभाव हो, तो भी निदर्शन प्रविधि के द्वारा अध्ययन से यथार्थ निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता।
5. **निदर्शन को कायम रखने में कठिनाई** : निदर्शन में इकाइयों की संख्या कम होन से चुनी गयी इकाइयों पर कायम रहना कई बार बहुत कठिन होता है क्योंकि कई बार चयनित लक्ष्य निदर्श सूचना या तो नहीं होते या मना कर देते हैं तो अध्ययन कठिन हो जाता है और अनुसंधानकर्ता का उस निदर्श पर टिके रहने में कठिनाई होती है।

11.3 निदर्शन के प्रकार

1. सम्भावना न्यादर्श (Random sampling)
2. गैर सम्भावना न्यादर्श (Non Random sampling)

शाब्दिक अर्थानुरुप सम्भावना न्यादर्श में समग्रजन का प्रत्येक इकाई की न्यादर्श में चयनित होने की समान सम्भावना होती है। ऐसी निदर्शन प्रक्रिया में एकांगों का चयन संयोग पर आधारित होता है तथा इसमें अत्यधिक प्रतिनिधित्व होता है।

गैर सम्भावना निदर्शन पद्धति अर्न्तगत प्रत्येक इकाई को चुने जाने का समान अवसर नहीं है तथा इसमें प्रतिनिधित्व नहीं होता है।

11.3.1 सम्भावित निदर्शन

सम्भावित निदर्शन वह निदर्शन है जिसके अन्तर्गत समग्र की समस्त इकाइयों के चुने जाने की समान सम्भावना होती है अर्थात् इकाइयों का चयन पूर्णतः संयोग पर निर्भर होता है। इसमें समग्र की इकाईयों के व्यक्तिगत महत्व को समाप्त कर उसके स्थान पर सम्भावना को प्रतिष्ठित कर दिया जाता है। इस निदर्शन प्रक्रिया के किसी न किसी स्तर पर चयन संयोगवश होता है।

सम्भावित निदर्शन में इकाइयों के चुनाव के अनेक प्रकार है। यहां पर हम मुख्य प्रकारों का वर्णन करेगें।

1. सरल दैव निदर्शन
2. स्तरीकृत दैव निदर्शन
3. व्यवस्थित निदर्शन
4. बहुचरणीय/बहुस्तरीय निदर्शन
5. गुच्छ निदर्शन

1.सरल दैव निदर्शन – इस निदर्शन को यादृच्छिकी न्यादर्शन भी कहते है यह विधि सर्वाधिक प्रचलित विधि है। इसके अर्न्तगत सम्पूर्ण समग्र में से कुछ इकाइयों का चयन अवस्थतित रूप से कर लिया जाता है । उदाहरण के रूप हम गोल बर्तन में 100 एक जैसे रंग के पत्थर रखे और फिर उनमें से कोई एक पत्थर निकाले तो प्रत्येक गोली के चयन की सम्भावना 1/100 होगी। इस प्रकार चुना हुआ निदर्शन दैव निदर्शन होगा क्योंकि प्रत्येक गोली के चयन की सम्भावना 1/100 है। दैव निदर्शन के लिये आवश्यक है कि इन सभी संयोगो को चयन का बराबर अवसर दिया जाए। दैव निदर्शन में प्रतिदर्श इकाइयों का चयन अनेक विधियां द्वारा होता है उनमें से कुछ अधिक प्रचलित विधियां हैं–

1. लॉटरी विधि 2. टिपेट विधि 3. कार्ड प्रणाली 4. ग्रिड प्रणाली

1. लॉटरी विधि – यह विधि दैव निदर्शन की सबसे सरल विधि है इसके अर्न्तगत अनुसंधानकर्ता समग्र की समस्त इकाईयों की क्रम संख्या/नाम वाली पर्चियां बना लेते हैं इसके पश्चात् इन्हे किसी बर्तन या जार में रखकर अच्छी तरह से हिला लेते हैं जब तक पर्चियां अच्छी तरह से नही मिल जाती है। फिर एक व्यक्ति की आंख में काली पट्टी बांध कर उनमें से एक पर्ची निकाल लेता है इस पर्ची में अंकित क्रमांक की इकाई को न्यादर्श में सम्मिलित कर लिया जाता है। यह प्रक्रिया तब तक चलती रहती है जब तक उत्तरदाताओं की वांछित संख्या प्राप्त न कर लें। मान ले हमें 2500 छात्रों को लेपटॉप वितरित करने है। हम समग्र के प्रत्येक सदस्य का नाम समान आकार की कागज की पर्ची पर लिखकर बॉक्स में डाल लेगें और उन्हे मिला दिया जाता है फिर व्यक्ति या बच्चें को 100 कागज की पर्ची निकालने के लिए आमंत्रित किया जाता है इस प्रकार उन 100 चयनित छात्रों को लेपटॉप वितरित कर दिये जाते हैं

2. कार्ड प्रणाली– यह लाटरी विधि का संशोधित रूप है। इस प्रणाली या विधि के अर्न्तगत समान आकार तथा रंग के कार्डो पर समग्र की समस्त इकाइयों का नाम अंकित कर लिया जाता हे फिर इन्हे एक बड़े से डम में डालकर जोर से हिलाया जाता है। इसके पश्चात् डम में से एक कार्ड को निकाल दिया जाता है। जितनी इकाईयों का चयन करना होता है उतनी बार डम को हिलाकर निकाला जाता है। इस विधि के अर्न्तगत जितने कार्ड निकाल जाते है उनसे सम्बधित इकाइयों का शोधकर्ता द्वारा अध्ययन किया जाता है।

3. टिपेट विधि या रेंडम अंक– इस प्रणाली को प्रो0 टिपेट ने 1927 में गणितीय अंको के आधार पर तैयार किया था। टिपेट ने चार अंकों वाला 10400 संख्याओं की एक सूची अनेक देशों के जनसंख्या

प्रतिवेदन के आधार पर तैयार की। यहां 5–5 के वर्गाकार खण्डों में यादृच्छिकी क्रम में अंक लिखे होते है ऐसी तालिकाएं बहुधा सांख्यिकी की पुस्तकों में भी दी रहती है।

	1		**3**			**6**		**8**		**10**
	10480		01536			21645		14194		36207
	22388		25595			89198		53402		34095
	24130		22527			64809		24830		32081
	42167		06243			16376		53537		57004
	37570		81837			91782		61305		60672

मान ले हमें 900 की समग्र/जनसंख्या में से 100 व्यक्तियों का एक प्रतिदर्श लेना है। इसके लिए सर्वप्रथम हम समग्र की सूची बनाकर प्रत्येक सदस्य को एक संख्या प्रदान करते है। निदर्शन द्वारा जो संख्याएं हमे मिलेगी उन संख्याओं वाले सदस्य हमारे प्रतिदर्श होगें। चूकि हमारी जनसंख्या में 900 सदस्य है इसलिए हमें 1 और 900 के बीच की यादृच्छिक संख्याएं चाहिए। कुछ संख्याएं 900 से अधिकतम क्रम संख्या से अधिक हैं जो उन्हे छोड़ दिया जाएगा और उनके आगे वाली संख्याएं ले ली जायेगी। टिपेट संख्याएं अधिक वैज्ञानिक मानी जाती है और उनका उपयोग बहुत अधिक होता है।

3. **ग्रिड विधि**– एस विधि का प्रयोग भौगोलिक क्षेत्र के चुनाव के लिये किया जाता है एस प्रणाली के अंतर्गत यह निर्धारित किया जाता है कि कोई विशेष अध्ययन किस क्षेत्र या किन क्षेत्रों के अंतर्गत किया जाएगा। इस प्रणाली के अंतर्गत सर्वप्रथम उस क्षेत्र का मानचित्र तैयार किया जाता है उस मानचित्र यस सेल्यूलॉइड की पारदर्शक ग्रिड प्लेट यख दी जाती है। इस प्लेट में वर्गाकार खाने बने रहते है जिन पर नम्बर अंकित होते है। सर्वप्रथम यह तय कर लिया जाता है कि निदर्शन हेतु कितनी इकाइयों का चयन करना है उतने ही वर्गो को पहले काट लिया जाता है। मानचित्र के जिन कटे हुए भागों पर

निर्धारित नम्बरों के वर्गाकार खाने आते हैं उन पर निशान लगाा दिया जाता है। उन्ही क्षेत्रों को अध्ययन के लिए चुन लिया जाता है।

4. नियमित अंकन प्रणाली– इस विधि में सर्वप्रथम समग्र की समस्त इकाइयों को किसी विशेष ढ़ग, काल या स्थान आदि के अनुसार व्यवस्थित कर लिया जाता है। तत्पश्चात यह निश्चय कर लिया जाता है कि समग्र में से कितनी इकाइयों का चयन निदर्शन हेतु करना होता है। साथ ही एक इकाई से दूसरी इकाई के बीच की संख्स्त्मक दूरी को भी तय कर लिया जाता है। यदि हमें 100 छात्राओं में से 10 छात्राओं का चयन करना है तो पहले हमें उन 100 छात्राओं की सूची बनानी होगी। तत्पश्चात चंकि हमे 10 छात्राओं का चयन करना है अतः हर 10वी छात्रा हमारे चुनाव में आयेगी। तो पहला, दसंवा, बीसंवा, तीसंवा और इसी क्रम में दस छात्राओं का चयन किया जाता है।

5. अनियमित अंकन प्रणाली– इस विधि में भ्धी समग्र की समस्त इकाइयों की एक सूची तैयार करके इस सूची में से प्रथम तथा अंतिम अंक छोड़कर शेष इकाइयों की सूची में अनुसंधानकर्ता अनियमित ढंग से विभिन्न इकाइयों में उतने ही निशान लगाता है जितनेकि निदर्शन का उसे चुनाव करना है। इसमें अनुसंधानकर्ता से आशा की जाती है कि वह प्रथम तथा अंतिम अंक छोड़कर बिना पक्षपात के अनियमित ढंग से निदर्शनों को चुन लेगा। फिर भी इस विधि में पक्षपात आने की सम्भावना रहती है।

दैव निदर्शन के गुण या लाभ –दैव निदर्शन प्रणाली के प्रमुख लाभ निम्नांकित हैं

1. इस विधि में समग्र की प्रत्येक इकाई के चुने जाने के समान अवसर होते हैं।
2. यह एक वैज्ञानिक विधि है।
3. यह निदर्शन को सबसे सरल विधि है क्योंकि अध्ययनकर्ता को जटिल अथवा कठोर सिद्वांत का पालन नही करना पडता है।
4. यह विधि मितव्ययितापूर्ण है क्योंकि इस विधि मे समय, धन तथा श्रम की भी पर्याप्त बचत होती है।
5. निदर्शन में त्रुटियां की संभावना कम ही होती है।
6. यह विधि इकाइयों के चयन संबंधी त्रुटि की पुनः परीक्षा करना सम्भव होता है।

दैव निदर्शन की हानियां या दोश

1. इस विधि में सर्वप्रथम समग्र की सूची का होना आवश्यक है व्यवहारिक रूप से यह कार्य बहुत कठिन होता है क्योंकि कई बार सूची की उपलब्धता नगण्य होती है।
2. इस विधि द्वारा विविधतापूर्ण समग्र में से इकाइयों का चयन करना असम्भव होता है। अतः असमान प्रकृति वाली इकाइयों के लिए यह विधि उपयुक्त नही होती।
3. इस विधि द्वारा समग्र की समस्त इकाइयों का चयन करने की समसन सम्भावना होती है। चयनित इकाइयां अगर दूर– दूर तक फैली हो अथवा विस्तार बहुत अधिक हो। तो उनसे सम्पर्क कर सकना कभी कभी असम्भव होता है। इस विधि द्वारा चयनित इकाइयों में परिवर्तन करने की स्वतन्त्रता प्राप्त नही होती है जिस कारण दैव निदर्शन अवैज्ञानिक और पक्षपातपूर्ण हो जाता है।
4. इस विधि द्वारा अध्ययन हेतु महत्वपूर्ण इकाइयों का समावेश नही हो पाता जो अध्ययन के दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण होती है क्योंकि इस विधि द्वारा समग्र में से इकाइयों का चयन पूर्णतयाः संयोग पर निर्भर होता है।

बोध–प्रश्न 2

(ii) दैव निदर्शन की ग्रिड विधि को समझाइए ?

....

....

....

....

....

....

2. स्तरीकृत या वर्गीकृत निदर्शन विधि– निदर्शन के इस स्वरूप में समग्र को विभिन्न स्तरों या उस समूहो में विभाजित किया जाता है और फिर प्रत्येक स्तर में से स्वतन्त्र प्रतिदर्श ले लेते हैं। प्रो0 सिन पाओ यांग ने लिखा है कि ''स्तरित निदर्शन का अर्थ है कि समग्र में से उप–निदर्शनों को लेना जिनकी कि समान विशेषताएं हैं जैसे खेती का प्रकार, खेतों का आकार, भूमि पर स्वामित्व, शिक्षा स्तर, आय, लिंग, सामाजिक वर्ग आदि। उप–निदर्शनों के अंतर्गत आने वाले इन तत्वों को एक साथ लेकर प्रारूप या श्रेणी के रूप में वर्गीकृत किया जाता है।'' यह महत्वपूर्ण है कि परिभाषा इस प्रकार दी जाए कि समग्रजन को समजातीय स्तरों में बांट लिया जाता है फिर प्रत्येक स्तर से सरल दैव निदर्शन की किसी भी उपयुक्त प्रणाली के द्वारा निर्धारित संख्या में इकाइयों को चुना जाता है। स्तरीकृत निदर्शन का यह सबसे सरल तथा सबसे अधिक प्रयुक्त होने वाला ढग है। स्तरीकृत निदर्शन में समग्रजन के विभिन्न स्तरों में से एक ही अनुपात में निदर्शन का अनुपात बराबर न हो।

उदाहरणार्थ यदि महिला प्राध्यापकों की समस्याओं का अध्ययन करने के लिए हम किसी जिले की 1000 महिला प्राध्यापकों में से 100 का चयन करना चाहते है तो सर्वप्रथम हम जिले की सभी महिला प्राध्यापकों को विभिन्न श्रेणियों में विभाजित कर लेते हैं इसके लिए हम सभी महिला प्राध्यापकाओं को प्राइमरी, एल0 टी0, प्रवक्ता, प्रोफेसर आदि श्रेणियों में विभाजित कर लेते है। यदि इन चारों श्रेणियों में महिला प्राध्यापिकाओं की कुल संख्या 480, 220, 200, 100 है तो प्रत्येक श्रेणी में से 10:1 के अनुपात में क्रमशः 48, 22, 20 तथा 10 का चयन दैव निदर्शन की उपयुक्त प्रणाली द्वारा किया जाता है। स्तरों में विभाजित होने के कारण इस प्रणाली को स्तरित निदर्शन विधि कहते है।

स्तरीकृत निदर्शन के तीन प्रकार होते हैं–

1. अनुपातीय या समानुपातिक स्तरीकृत निदर्शन
2. गैर अनुपातीय या असमानुपातिक स्तरीकृत निदर्शन
3. भारयुक्त स्तरीकृत निदर्शन

1. अनुपातीय स्तीकृत निदर्शन : निदर्शन की इकाइयों का चयन उसी अनुपात में किया जाता है जिस अनुपात में विभिन्न श्रेणियों की कुल संख्या समग्र के अन्तर्गत होती है। इसमें किसी स्तर से किये गये प्रतिदर्श में इकाइयों की संख्या उसी अनुपात में होती है जिसमें उस स्तर में जनसंख्या या समग्र की इकाइयां। उदाहरण : यदि समग्र में स्तर अ, ब, स में क्रमशः 500, 700, 900 इकाइयां हैं तो न्यादर्श में तीन स्तरों से इकाइयां 5 : 7 : 9 के अनुपात में होंगी।

2. असमानुपातिक स्तरीकृत निदर्शन : इस प्रविधि के अंतर्गत समग्र को विभिन्न श्रेणियों में से समान संख्या में इकाइयों को चुना जाता है तथा इस बात की कुछ परवाह नही की जाती कि सम्पूर्ण समग्र में विभिन्न श्रेणियों के अंर्तगत इकाइयां एक दूसरे की तुलना में कम है या अधिक। इस विधि का प्रयोग तब किया जाता है जब किसी एक उप समूह का आकार दूसरे उपसमूह की तुलना में बहुत छोटा है।

उदाहरण के रूप में मान लें किसी समग्र में कुल 1000 व्यक्ति हैं इनमें से 600 हिन्दू, 300 मुसलमान और 100 ईसाई हैं इनकी अभिवृत्ति की तुलना के दृष्टिकोण से यह अधिक प्रबल होगा कि सब धर्मों के लोग बराबर संख्या में हो इसके लिए हम निर्णय करते हैं कि प्रत्येक धर्म से 50 व्यक्ति लेंगे तब पहले स्तर का 12वां, दूसरे का 6वां और 3 का 1/2 भाग लेते हैं।

3. भारयुक्त स्तरीकृत निदर्शन : यह उक्त दोनों विधियों का सम्श्रिण है। इसमें पहले प्रत्येक वर्ग में से समान सख्याओं का चयन किया जाता है तत्पश्चात अधिक संख्या वाले वर्गों की इकाइयों को अधिक मदद प्रदान करके उनका प्रभाव बढ़ा दिया जाता है। यह भार इसी अनुपात में प्रदान किया जाता है जिस अनुपात में समग्र में वर्ग की इकाइयां होती है।

बोध–प्रश्न 3

(i) स्तरित निदर्शन के प्रकार लिखिए ?

....
....
....
....
....

स्तरीकृत निदर्शन के लाभ या गुणः

स्तरीकृत निदर्शन के प्रमुख लाभ निम्नलिखित हैं

1. इस प्रणाली के अंतर्गत शोधकर्ता को निदशर्न के चुनाव के ऊपर अधिक नियंत्रण होता है और प्रत्येक वर्ग की इकाइयों का प्रतिनिधित्व का अवसर मिलता है।
2. इकाइयों की संख्या का चुनाव होने पर भी प्रतिनिधि का निर्माण हो जाता है।
3. आवश्यकता पड़ने पर किसी इकाई को त्याग कर दूसरी इकाई चुनने की सुविधा भी रहती है तथा भौगोलिक आधार पर वर्ग विभाजन भी सरलता से किया जा सकता है।
4. समाज में विभिन्न प्रकार की संस्कृतियों के मानने वाले लोग रहते हैं वहॉ पर वर्गीय निदर्शन प्रणाली के आधार पर इस प्रकार के व्यक्तियों का प्रतिनिधित्व संभव हो पाता है।
5. इस प्रणाली के माध्यम से सभी प्रकार के व्यक्तिय इसमें स्वतः ही आ जाते हैं चाहे व्यक्ति भौगोलिक दृष्टि से अलग–अलग स्थानों में या एक ही स्थान पर अलग–अलग दूरी पर क्यों न रहते हों।

स्तरीकृत निदर्शन की हानियां या गुण दोश :

1. स्तरित निदर्शन में यदि दो वर्गों का निर्माण उचित नहीं हुआ तो अभिनति उत्पन्न हो सकती है। उसी प्रकार चुने हुए निदर्शन में किसी विशेष वर्ग की इकाइयां बहुत अधिक या बहुत कम हो सकती है। ऐसा होने पर निदर्शन प्रतिनिधित्वपूर्ण नही रह जाता।
2. यदि भिन्न भिन्न वर्गों के आकार में बहुत अधिक अन्तर है तो समान अनुपात में इकाइयों का चयन करना कठिन हो जाता है और इस प्रकार यदि निदर्शन समानुपातिक नही होता तो वह प्रतिनिधित्वपूर्ण भी नही हो सकता।

3. यदि वर्गो से इकाइयों का चुनाव असमानुपातिक आधार पर किया गया है तो बाद में भार का प्रयोग करना पड़ता है। इस काम में अनुसंधनकर्ता का पक्षपात व मिथ्या–झुकाव अपना प्रभाव डाल सकते हैं।
4. इस प्रणाली को ऐसे समाज में लागू नहीं किया जा सकता जहां विभिन्न संस्कृतियों के लोग निवास करते हैं ऐसे समाज को विभिन्न उपभागों में बराबर प्रतिनिधात्मक इकाइयों का चयन करने में व्यवहारिक रूप से कई कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।

3. व्यवस्थित प्रतिदर्शन : यह विधि उपयोग करने में सरल तथा आसान है प्रतिदर्शन के इस स्वरूप को अन्तराल प्रतिदर्शन भी कहा जाता है इसके अन्तर्गत पूर्व निर्धारित व्यक्तियों की सूची में से नियमित अन्तराल के पश्चात सदस्यों को चुन लेते हैं। सर्वप्रथम न्यादर्श का आकार एवं समग्र के आकार का अनुपात निश्चित कर लिया जायेगा। माना यह अनुपात 1:15 है। जैसे लक्ष्यित समग्रजन 6000 है और प्रस्तावित प्रतिदर्श का आकार 400 लेना हो तो समग्र की सूची में से 15वे व्यक्ति को लिया जायेगा। पहली संख्या का चयन हेतु लॉटरी या अन्य विधियों का व्यवस्थित उपयोग कर सकते है। व्यवस्थित निदर्शन सरल दैव निदर्शन विधि से इस अर्थ भिन्न है कि सरल दैव निदर्शन विधि में चयन संयोग पर निर्भर करता है जबकि व्यवस्थित निदर्शन में प्रतिदर्श इकाइयों का चयन पूर्ववर्ती इकाई के चयन पर निर्भर होता है।

4. बहुचरणीय निदर्शन : इस विधि का प्रयोग बहुत बड़े अध्ययन क्षेत्र से एक निदर्शन निकालने के लिए किया जाता है। इस विधि के अन्तर्गत इकाइयों के चुनाव की प्रक्रिया अनेक स्तरों में से होकर गुजरती है। प्रत्येक अवस्था या स्तर में प्रतिदर्शन दैव निदर्शन प्रणाली द्वारा ही होगा। अतः ऐसे निदर्शन में इकाइयों का चयन अनेक स्तरों द्वारा किया जाता है इसलिए इसे बहुचरणीय या बहुस्तरीय निदर्शन कहते हैं।

अतः यह सामान्य तौर पर तब उपयोग किया जाता है जब अध्ययन क्षेत्र अधिक बड़ा हो और चयनित इकाइयों की भौतिक दूरी अधिक हो या समाज की पूर्ण सूची उपलब्ध नहीं हो यह निम्न चरणों में पूर्ण किया जाता है–

1. सम्पूर्ण अध्ययन क्षेत्र को कुछ सजातीय क्षेत्रों में बांट लिया जाता है। ये क्षेत्र समान क्षेत्रफल के होते हैं तथा क्षेत्रवासियों में अधिकतम समानता का प्रयास किया जाता है।
2. प्रत्येक क्षेत्र में से कुछ ग्राम दैव निदेणन प्रणाली के आधार पर चुने जाते हैं
3. चयनित प्रत्येक ग्राम में से कुछ घरों का समूह दैव निदर्शन प्रणाली के आधार पर चुना जाता है।
4. अंतिम चरण में इन घरों के समूह में से कुछ परिवारों को दैव निदर्शन प्रणाली से चुन कर अध्ययन किया जाता है।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि बहुस्तरीय निदर्शन दैव निदर्शन तथा स्तरीकृत निदर्शन का सम्मिलित रूप है और यदि पर्याप्त सावधानी बाती जाय तो उनमें उक्त दोनो प्रणालियों के लाभ प्राप्त हो जाते हैं।

5. गुच्छ निदर्शन : इसके अंतर्गत समग्र को बहुत से समूहों में विभाजित करके इनमें से केवल कुछ समूहों का निदर्श लेकर उनके तत्वों का अध्ययन किया जाता है तो इसे गुच्छ निदर्शन कहते हैं। सामाजिक सर्वेक्षणों में इसका प्रयोग यात्रा व्यय को बचाने के उद्देश्य से होता है। गुच्छ जितने बड़े होंगे निदर्शन की लागत उतना कम हो। विस्तृत भौगोलिक क्षेत्रों में लाभदायक है। निदर्शन की इस विधि में गुच्छों या समूहों का ढ़ॉचा बनाया जाता है और इस ढ़ॉचे में से दैव प्रतिदर्श चुना जाता है फिर

चुने गये गुच्छों में पड़ने वाली स्वभाविक इकाई का अध्ययन किया जाता है समूह प्रतिदर्शन में प्रतिचयन दो प्रकार से होता है

1. **एक पद प्रतिचयन** : गुच्छ प्रतिचयन में यदि हम केवल एक बार प्रतिचयन करें तो उसे एक पद प्रतिचयन कहते हैं।
2. **बहुपद प्रतिचयन** :यदि एक से अधिक बार प्रतिचयन करे तो बहुपद प्रतिचयन कहते है।

गुच्छ निदर्शन के लाभ या गुण :

1. यह निदर्शन उस समय लाभदायक होता है जबकि इकाई तक पहुॅचने का व्यय अधिक एवं इकाई के अध्ययन का व्यय कम होता है।
2. विस्तृत भौगोलिक क्षेत्र पर बड़ी संख्या में समग्र का अध्ययन करना हो
3. इस निदर्शन में लोच का गुण होता है । एक बार चयनित प्रतिदर्श को प्रतिस्थापित किया जा सकता है।

गुच्छ निदर्शन की हानियां या दोशः

1. इसमें प्रतिनिधिकता की कमी होती है।
2. चयनित समूहों की इकाई /व्यक्ति दो या दो से अधिक समूहों से सम्बद्ध हो सकता है जिस कारण उसका दो बार अध्ययन हो सकता है।

बोध–प्रश्न 4

(i)गुच्छ निदर्शन के गुण व दोष लिखिए ?

....
....
....
....
....

11.3.2 गैर सम्भावना प्रतिदर्शन

असम्भावित निदर्शन में सम्भावना एवं संयोग का कोई महत्त्व नहीं होता है। इसमें शोधकर्ता अपने विवेक से इकाइयों का चयन करता है। यह प्रतिनिधित्व का दावा नहीं करता किन्तु न्यादर्श को प्रतिनिधि बनाने के लिए कुछ नियमों का उपयोग करता है। अतः इसमें न तो प्रत्येक इकाई के निदर्शन में सम्मिलत होने की संभावना और न उसके चुने जाने की संभावना होते हैं शोधकर्ता विषय के उद्देश्यों के अनुरूप ही इकाइयों का चयन करता है।

असम्भावित निदर्शन की तीन विधियां है जो निम्नांकित इस प्रकार हैं –

1. उद्देश्यपूर्ण निदर्शन
2. सुविधात्मक निदर्शन
3. कोटा या अभ्यंश निदर्शन

1. उद्देश्यपूर्ण निदर्शन : इस विधि को निर्णायत्मक निदर्शन या सुविचार निदर्शन से भी जाना जाता है। इसके अन्तर्गत अनुसंधानकर्ता का प्रयास रहता है कि वह ज्ञान और विवके के आधार नत्रपर प्रतिनिधित्वपूर्ण इकाइयों का चयन करता है। अनुसंधानकर्ता पहले से ही समग्र की इकाइयों के बारे में पूर्ण जानकारी रखता है। अनुसंधानकर्ता विशेष उद्देश्य ध्यान में रखते हुए समग्र में से उन्हीं इकाइयों का चयन जान बूझकर करता है जिसे वह पूर्व ज्ञान के आधार पर उस समग्र का प्रतिनिधि समझता है।

तो ऐसे निदर्शन को उद्देश्य पूर्ण निदर्शन कहा जाता है। उद्देश्यपूर्ण निदर्शन के अन्वेषक को पूर्ण स्वतंत्रता प्रदान नहीं होती, सर्वप्रथम अन्वेषक समग्र की समस्त इकाइयों का गहन अध्ययन करता है तत्पश्चात समग्र से उन्ही इकाइयों का चयन करता है जो समग्र की विशेषताओं का पूर्णतया प्रतिनिधित्व करे। इसमें अनुसंधानकर्ता समग्र की सभी इकाइयों की विशेषताओं तथा प्रकृति के संबंध में पूरा–पूरा ज्ञान हो। बड़े समग्र की समस्त इकाइयों के संबंध में ज्ञन इस विधि द्वारा संभव नहीं है इससे अनुसंधानकर्ता समग्र की प्रकृति, गुणों व इकाइयों की विशेषताओं से पूर्व परिचित या व्यक्ति होता है। जैन्सन के अनुसार ''उद्देश्यपूर्ण निदर्श से तात्पर्य इकाइयों के समूह को इस प्रकार चुनने से है कि चुने हुए वर्ग मिलकर जहां तक हो सके, वही औसत अथवा अनुपात प्रदान करें जो समग्र में है। '' इस प्रकार सविचार अथवा उद्देश्यपूर्ण निदर्शन में अनुसंधानकर्ता अपने उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए उन्हीं इकाइयों का चयन करता है जो क्षेत्र का सर्वाधिक प्रतिनिधित्व करती हों।

उदाहरण : किसी महाविद्यालय या विश्वविद्यालय के प्रोफेसर द्वारा छात्रों की समस्याओं से संबंधित शोध कार्य करना है तो वह महा0 में स्थित केन्टीन, पुस्तकालय, वाचनालय, मैदान तथा बारण्डा में जाकर शोध से संबंधित अध्ययन का लेता है।

उद्देश्यपूर्ण निदर्शन के लाभ या गुण :

1. निदर्शन का आधार बहुत छोटा होने क कारण यह विधि कम खर्चीला है।
2. यह विधि ऐसे अनुसंधान में विशेषरूप से उपयोगी होती है जिनमें समग्र की कुछ इकाइयों का चुना जाना विशेष रूप से उपयोगी होता है।
3. यह विधि पूर्वगामी अध्ययनों हेतु लाभकारी है।
4. यदि निदर्शन का चुनाव में अभिनति को दूर करने की चेष्टा की गई तो छोटा निदर्शन भी प्रतिनिधिपूर्ण हो जाता है।

उद्देश्यपूर्ण निदर्शन के हानियां या दोष :

1. समग्र का ज्ञान न होने पर प्रणाली दोषपूर्ण है।
2. इसमें निदर्शन संबंधी अशुद्धता का अनुमान लगाना कठिन होता है।
3. इसमें इकाइयों के चुनाव में पक्षपात आने की पूरी पूरी सम्भावना बनी रहती है। अतः परिणाम अवैज्ञानिक और अशुद्ध हो जाते है।
4. इस प्रणाली द्वारा निष्कर्षों में परिशुद्धता की मात्रा बहुत कम होती है।
5. इसके आधार पर समग्र की सम्पूर्ण विशेषताओं को नही समझा जा सकता।

बोध–प्रश्न 5

(i) उदृदेश्यपूर्ण निदर्शन पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए ?

....

....

....

....

....

2. **सुविधापूर्ण निदर्शन** :सुविधापूर्ण निदर्शन में जो कोई भी इकाई को व्यक्ति सुविधापर्वक उपलब्ध होती है उसका अध्ययन कर लिया जाता है या जो शोध के दौरान अचानक शोधकर्ता के सम्पर्क में आ जाते हैं। समग्र में से यदृच्छ चयन को अवैज्ञानिक तथा अप्रमाणिक प्रणाली है किन्तु अनेक शोध कार्यों हेतु इसका प्रयोग किया जाता है। इसे आकस्मिक, अवसरवादी तथा लापरवाहीपूर्ण पूर्ण निदर्शन भी कहते हैं। इस विधि के अवैज्ञानिक एवं पक्षपातपूर्ण होते हुए भी कई बार अध्ययन हेतु इसी का प्रयोग किया जाता है। इसका उपयोग तब किया जाता है–

1. समग्र पूर्णतया स्पष्ट न हो।
2. जब निदर्शन की इकाइयां स्पष्ट न हो।

3. जब स्रोत सूची अप्राप्त हो।

यह विधि सरल, मितव्ययी, गहन अध्ययन एवं यथार्थ निदर्शन की सम्भावना के गुण रखती है।

3. कोटा निदर्शन : यह वर्गीय निदर्शन का ही एक रूप है। इसके अन्तर्गत सर्वप्रथम समाज को कई वर्गों में विभाजित किया जाता है तत्पश्चात प्रत्येक वर्ग में से चुनी जाने वाली इकाइयों की संख्या तय कर ली जाती है इसके पश्चात प्रत्येक स्तर से आवश्यक अंश (कोटा) में इकाइयों का चुनाव अपने विवेक से करता है। इस पद्धति को भी वैज्ञानिक दृष्टिकोण से उपयुक्त नही माना जाता क्योंकि इस प्रणाली में इकाइयों का चयन अनुसंधानकर्ता की स्वेच्छा पर निर्भर करता है। कोटा निदर्शन का उपयोग करते समय अनुसंधानकर्ता यह ध्यान रखता है कि अध्ययन के दृष्टिकोण से किन–किन लक्षणों या विशेषताओं के आधार पर विभिन्न वर्गों में से इकाइयों का चयन करना उपयुक्त होगा तत्पश्चात प्रत्येक वर्ग में से कितनी इकाइयों से तथ्यों का संकलन करना है। इस संख्या को ही अभ्यंश या कोटा कहा जाता है। प्रत्येक वर्ग से इकाइयों की संख्या का चयन करने के पश्चात अनुसंधानकर्ता इन वर्गों में अपनी इचछानुसार इकाइयों का चयन करने हेतु पूर्णतः स्वतंत्र होता है।

कोटा निदर्शन के लाभ या गुण :

1. यह विधि कम खर्चीली है।

2. यह बहुत कम समय में पूर्ण किया जा सकता है।

कोटा निदर्शन की हानियां या दोश :

1. यह समाज का वास्तविक प्रतिनिधित्व नहीं कर पाता है।

2. चयन में साक्षत्कारकर्ता का पूर्वाग्रह हो सकता है

3. त्रुटियों की गणना सम्मत नहीं हो पाती ।

11.4 सम्भावना निदर्शन तथा असम्भावना निदर्शन में अंतर

1. सम्भावित निदर्शन की समस्त विधियों में निदर्शन के चुनाव के समय समग्र की प्रत्येक इकाई को निदर्शन में आने का समान अवसर मिलता है। जबकि असम्भावित निदर्शन में चूंकि समस्त इकाइयों को निदर्शन में सम्मिलित होने का अवसर नहीं मिलता।
2. सम्भावित निदर्शन द्वारा चुनी गई इकाइयां समग्र की प्रतिनिधि होती है क्योकि समग्र में पाई जाने वाली सभी विशेषताओं का उसी अनुपात में प्रतिनिधत्व होना चाहिए जिस अनुपात में वे विशेषताएं उस समग्र में उपस्थित हो। इसी कारण निदर्शन के अध्ययन के आधार पर जो परिणाम प्राप्त किये जाते हैं उन्हे समग्र पर लागू नहीं किया जा सकता, जबकि असम्भावित निदर्शन से प्राप्त परिणाम उस निदर्शन तक ही सही होते हैं, उन्हे समग्र पर लागू नहीं किया जा सकता।
3. सम्भावित निदर्शन वैज्ञानिक होता है क्योंकि निदर्शन की इकाइयों का चुनाव निष्पक्षता से होता है। जबकि असम्भावित निदर्शन में महत्वपूर्ण इकाइयों को निदर्शन में आवश्यक रूप से सम्मिलित किया जाता है।
4. सम्भावित निदर्शन में अपनाई गयी प्रणाली में इकाइयां विश्वसनीय होती है। अगर एक या एक से अधिक अनुसंधानकर्ता उसी समग्र में से निदर्शन का चुनाव करें तो वे समस्त निदर्शन एकसमान होगें। इसके विपरीत असम्भावित निदर्शन में इकाइयों का चयन अनुसंधानकर्ता की इच्छा पर निर्भर होने के कारण विश्वसनीय नही होता।
5. सम्भावित निदर्शन में इकाइयों के चयन दैव पर निर्भर रहता है अर्थात समग्र की समस्त इकाइयों के चयन की सम्भावना रहती है। लेकिन इसमें वह महत्वपूर्ण इकाइयां छूट जाती हैं जो अध्ययन के लिए उपयोगी होती हैं। जबकि असम्भावित निदर्शन में महत्वपूर्ण इकाइयों को निदर्शन में आवश्यक रूप से सम्मिलित किया जाता है।
6. ऐसे सामाजिक अनुसंधान जिनका संबंध सिद्धांतों के निर्माण, सिद्धांतों की पुनर्परीक्षण, उपकल्पनाओं के परीक्षण आदि में सम्भावित निदर्शन का उपयोग होता है क्योंकि यह

अनुसंधानकर्ता की इच्छा पर निर्भर नही होता। जबकि ऐसी किसी भी दशा में इस प्रकार के अध्ययनों में असम्भावित निदर्शन का उपयोग नहीं किया जा सकता।

11.5 निदर्शन की समस्या :

1. निदर्शन की आकार की समस्या : निदर्शन की सबसे सर्वप्रथम समस्या उसके उचित आकार की ही है। उत्तम निदर्शन के लिए पर्याप्त आकार का होना अत्यन्त महत्वपूर्ण है। अध्ययनकर्ता को इस संबंध में अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। अगर निदर्श का आकार बड़ा है तो अधिक धन, समय और श्रम का व्यय अध्ययनकर्ता के लिए समस्या है और अगर निदर्शन छोटा होता है तो उसकी विश्वसनीयता एवं प्रतिनिधित्वपूर्ण के संदर्भ में संदेह रहता है। अतः निदर्शन में सही आकार का होना अत्यन्त आवश्यक है जिसे निम्न कारण प्रभावित करते हैं–

1. **समाज की प्रकृति :** समाज से एकरूपी इकाइयों की अधिकता से छोटे आकार का निदर्शन भी प्रतिनिधिपूर्ण और विश्वसनीय होता किन्तु अगर समग्र में विषमताएं अधिक है तो निदर्शन का आकार बड़ा होना चाहिए।
2. **वर्गों की संख्या :** अगर समग्र में विभिन्न प्रकार के वर्ग है या उनमें भिन्नताएं अधिक हैं तो निदर्श का आकार बड़ा है।
3. **उपलब्ध साधन :** धन, समय, श्रम व अन्य संसाधनों की पर्याप्तता की स्थिति से निदर्शन का आकार बड़ा हो सकता है अन्यथा छोटा आकार साधनों की उपलब्धता के आधार पर लिया जाना चाहिए।
4. **परिशुद्धता की मात्रा :** सामान्तयः ऐसा माना जाता है कि बड़ा निदर्शन अधिक परिशुद्ध और प्रतिनिधित्वपूर्ण होता है। किन्तु यदि सही तरीके से चुनाव किया जाता है तो छोटा निदर्शन भी विश्वसनीय एवं प्रतिनित्वपूर्ण हो सकता है।
5. **अनुसंधान की प्रकृति :** अगर अध्ययन गहन तथा सूक्ष्म है तो निदर्श का आकार छोटा होना चाहिए अगर अध्ययन विषय विस्तृत है तो निदर्शन का आकार बड़ा होना चाहिए।
6. **अध्ययन के उपकरण :** अगर प्रश्नावली द्वारा किसी क्षेत्र का अध्ययन करते है तो निदर्शन आकार बड़ा भी हो सकता है इसमें भी अगर प्रश्न छोटा और सरल है तो निदर्शन में और वृद्धि की जा सकती है। किन्तु इसके स्थान पर यदि अनुसूची या व्यक्तिगत सम्पर्क स्थापित का सूचना एकत्र करनी है तो छोटा निदर्शन उपयुक्त रहता है।

2. पक्षपात निदर्शन की समस्या : निदर्शन के चयन से पक्षपातपूर्ण रवैया से निदर्शन प्रतिनिधित्वपूर्ण नही हो पाता।

अध्ययन के दौरान अभिमति मुक्त निदर्शन निम्न कारण से होता है–

1. **निदर्शन का छोटा आकार :** निदर्शन का आकार छोटा होने के कारण अनेक इकाइयों को चयन का अवसर नहीं मिलता और अनेक ऐसी इकाइयां भी हो सकती हैं जो महत्वपूर्ण हैं पर सम्मिलित न की गई हों, ऐसी स्थिति में निदर्शन प्रतिनिधित्वूर्ण नहीं हो सकता।
2. **उद्देश्यपूर्ण निदर्शन :** इस प्रकार के निदर्शन में अध्ययनकर्ता अपनी इच्छानुसार इकाइयों का चयन करता है। इसमें वह ऐसी ही इकाइयों का चयन कर सकता है जिनसे सम्पर्क करना सरल हो। वह असुविधाजनक और कठिनाई से मिलने वाली इकाइयों को छोड़ देता है। ऐसी स्थिति में निदर्शन अभिनतिपूर्ण होता है।

3. **सुविधानुसार निदर्शन** : अपनी सुविधानुसार इकाइयों का चयन करता है जो आवश्यक नहीं कि वह प्रतिनिधित्वपूर्ण इकाइयों का चयन ही करे। इसलिए अभिमति की सम्भावना बढ़ जाती है।
4. **दोशपूर्ण वर्गीकरण** : यदि वर्गीय निदर्शन में ऐसे वर्गों का चुनाव कर लिया जाता है। जो अस्पष्ट, असमान व अनुपयुक्त हों तब भी अभिनति आ सकती है। इसी तरह से यदि वर्ग में असमान संख्या वाली इकाइयों में से समान संख्या में इकाइयां चुन ली जाती हैं तब भी वह असंतुलित और दोषपूर्ण हो जाता है।
5. **अपूर्ण स्रोत सूची** : अगर स्रोत सूची पुरानी, अधूरी या अनुपयुक्त है तो भी निदर्शन पक्षपातपूर्ण होगा।
6. **कार्यकर्ताओं द्वारा चुनाव** : कई बार कार्यकर्ताओं को यह अनुमति दे दी जाती है कि वे निदर्शन की इकाइयों का चुनाव अपनी इच्छानुसार करें। ऐसी स्थिति में भी चयन में पक्षपात आ सकता है।
7. **त्रुटिपूर्ण देव निदर्शन** : त्रुटिपर्ण निदर्शन विधि द्वारा इकाइयों के चयन में भी पक्षपात की सम्भावना रहती है। अगर अध्ययनकर्ता जानबूझ कर कार्ड /पर्चियों का निर्माण इस प्रकार करता है कि वह पहचान बना सके तो सरलता से दैव निदर्शन भी अभिनति युक्त हो जाता है और इस स्थिति में निदर्शन पक्षपातपूर्ण हो जाता है क्योंकि उचित निदर्शन का चयन नहीं हो पाता।

बोध–प्रश्न 6

निदर्शन के आकार से संबंधित समस्याओं का उल्लेख कीजिए ?

....

....

....

....

11.6 निदर्शन की विश्वसनीयता की समस्या :

चयनित निदर्शन के विश्वसनीयता की जॉच करने के लिए निम्न उपाय अपनाये जा सकते हैं –

1. **सामान्तर निदर्शन** : प्राप्त निदर्शन कहां तक विश्वसनीय है इसकी परीक्ष करने के लिए सामान्तर उप–निदर्शन को प्राप्त करना अक्सर बहुत उपयोगी होता है यदि दोनों में पर्याप्त सीमा तक समानता है तो निदर्शन विश्वसनीय माना जाता है, अर्थात सामान्तर निदर्शन के अन्तर्गत आने वाली इकाइयों की विशेषताएं मुख्य निदर्शन से सम्बंधित इकाइयों की विशेषताओं से मिलती जुलती हैं।
2. **समाज की तुलना** : शोधकर्ता अपने ज्ञान तथा अनुभव के आधार पर निदर्शन की तुलना करके निर्णय दे सकता है। पर्याप्त समानता के आधार पर उसे विश्वसनीय माना जाता है।
3. **निदर्शन का निदर्शन** : निदर्शन की विश्वसनीयता की जांच करने का एक तरीका यह है कि चयनित निदर्शन में से कुछ इकाइयां दैव निदर्शन द्वारा चुनी जाती हैं और उसकी तुलना मूल निदर्शन से की जाती है। यदि उपनिदर्शन में मूल निदर्शन के गुण हैं तो निदर्शन विश्वसनीय माना जाता है।

4. **महत्व का परीक्षण** : निदर्शन की विश्वसनीयता क जांच करने के लिए यह वैज्ञानिक विधि है फिर भी इसका प्रयोग व्यवहारिक जीवन में सबसे अधिक महत्वपूर्ण है निदर्शन के उपयोग द्वारा प्राप्त सूचनाओं के प्रथम स्तर पर प्रमापीकरण किया जाता है अध्ययनकर्ता इस समय अपनी अर्न्तदृष्टि से ज्ञात करता है कि सूचनाएं किस सीमा तक उपयोगी हैं।
5. **सर्वेक्षण की पुनरावृत्ति** : यद्यपि यह एक कठिन कार्य है फिर भी सम्भव हो तो लगभग मिलते जुलते सर्वेक्षणों की पुनरावृत्ति करके उनमें लिए गये निदर्शनों की तुलना करके विश्वसनीयता की जांच की जा सकती है।

11.7 सारांश

किसी समूह के विषय में ज्ञान प्राप्त करने के उद्‌देश्य से उसमें से कुछ व्यक्तियों को अध्ययन के लिए चुन लेना निदर्शन कहलाता है। निदर्शन से धन, श्रम तथा समय की बचत होती है जिससे अध्ययन के निष्कर्ष यर्थाथ प्राप्त होते हैं। सम्भावित तथा असम्भावित निदर्शन के उपयोग से यमग्र के प्राचलों का आकंलन तथा सांख्यिकीय परिकल्पनाओं का परीक्षण किसी निश्चित सार्थकता स्तर पर हो सकता है। अभिनति कम से कम तथा दक्षता अधिक से अधिक करने के उददेश्य प्राप्ति के लिए समग्र कर सूची तथा निदर्शन के आकार का निश्चय दृढ़ आधार पर किया जायें। निदर्शन प्रणाली समग्र में से कुछ चुनी गई इकाइयों का अध्ययन करने के पश्चात जो निष्कर्ष प्राप्त होते हैं वह सार्वभौमिक रूप से सब को मान्य होते हैं।

11.8 पारिभाषिक **शब्दावली**

चर– चर किसी अनुसंधान में प्रेक्षित की जाने वाली वह विशेषता है जिसके विभिन्न मान हो सकते है।

समग्र– किसी विचाराधीन अनुसंधान क्षेत्र की सभी इकाइयों का समुदाय है।

प्रतिदर्श– एक समग्र का वह अंश जो किसी अनुसंधान के लिए चुना जाता है, एक प्रतिदर्श कहलाता है।

तथ्य–तथ्य वह घटना है जिसको हम वास्तविक रूप में देख या सुन सकते है तथा इनका अनुभव इन्द्रियों के माध्यम से किया जा सकता है।

11.9 संदर्भ ग्रंथ सूची

त्रिवेदी व शुक्ला. **रिसर्च मैथ्डोलॉजी**. कालेज बुक डिपो .जयपुर.
राय, पारस नाथ. **2004. अनुसंधान परिचय.** लक्ष्मी नारायण अग्रवाल. आागरा.
गुडे एंड हाट. 1983. **मैथ्डस इन सोशियल रिसर्च**. मैकग्रू हिल इंटरनेशनल. ऑकलैण्ड.

Manheim Henry L., (1977). Sociological Research : Philosophy & Methods. The Dorsey Press. Illinois.

Moser C .A. and G. Kalton. (2nd ed). (1980). Survey Methods in Social Investigation. Heinemann Educational Books . London.

11.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध–प्रश्न 1

विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर निदर्शन की विशेषताएं शीर्षक के विवरण में से लिखना है।

बोध–प्रश्न 2

विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर सरल दैव निदर्शन शीर्षक के अर्न्तगत दिये गये विवरण में से लिखना है।

बोध–प्रश्न 3

विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर स्तरित निदर्शन शीर्षक के अर्न्तगत दिये गये के विवरण में से लिखना है।

बोध–प्रश्न 4

विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर गुच्छ निदर्शन शीर्षक के अर्न्तगत दिये गये विवरण में से लिखना है।

बोध– प्रश्न 5

विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर उद्देश्यपूर्ण निदर्शन शीर्षक के विवरण में से लिखना है।

बोध– प्रश्न 6

विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर निदर्शन की समस्या शीर्षक के विवरण में से लिखना है।

11.11 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री

Singh, K. (1983**).** Techinques of method of Social Survey Research and Statistics, Prakashan Kendra, Lucknow.

Kothari, C.R. (2009). *Research Methodology Methods and Techniques*. 2nd Revised ed., New Delhi: New Age International (P) Limited, Publishers

Bailey, Kenneth D. (1982). Methods of Social Research. The Free Press. New York.

Mukundlal. (1958). Elementary Statistical Methods. Manoj Prakashan. Varanasi.

Sanders, Donald.(1955). Statistics. McGraw Hill. New York.

Singh, K. (1983**).** Techinques of method of Social Survey Research and Statistics, Prakashan Kendra, Lucknow

11.12 निबंधात्मक प्रश्न

- निदर्शन का अर्थ लिखते हुए एक अच्छे निदर्शन की विशेषताओं तथा गुणों व दोषों का वर्णन कीजिए।
- निदर्शन से आप क्या समझते हो? निदर्शन के प्रकारों का संक्षिप्त में वर्णन कीजिए।
- सरल दैव निदर्शन को परिभाषित कीजिए तथा सरल दैव निदर्शन में चुनने की विधियों का उल्लेख कीजिए।
- असम्भावित निदर्शन से आप क्या समझते हैं इनकी विधियों का सविस्तार उल्लेख कीजिए।
- निदर्शन को परिभाषित कीजिए तथा सम्भावित निदर्शन तथा असम्भावित निदर्शन में अंतर दर्शाइय।
- निदर्शन के अर्थ तथा परिभाषा को स्पष्ट करते हुए निदर्शन की विश्वसनीयता की जांच के उपाय बताइए।

इकाई 12 तथ्य के स्रोत - प्राथमिक एवं द्वितीयक तथ्य
Sources of Data- Primary & Secondary Data

12.0 उद्देश्य

12.1 प्रस्तावना

12.2 तथ्य का अर्थ एवं परिभाषा

12.3 प्राथमिक तथ्य

12.4 प्राथमिक सामग्री के संकलन के स्रोत

12.4.1 प्रत्यक्ष प्राथमिक स्रोत

12.4.2 अप्रत्यक्ष प्राथमिक स्रोत

12.5 प्राथमिक स्रोत के गुण व दोष

12.6 द्वितीयक तथ्य एवं स्रोत

12.6.1 व्यक्तिगत प्रलेख

12.6.2 सार्वजनिक प्रलेख

12.7 द्वितीयक स्रोत के गुण व दोष

12.8 प्राथमिक स्रोत तथा द्वितीयक स्रोत में अन्तर

12.9 सारांश

12.10 परिभाषिक शब्दावली

12.11 अभ्यास–प्रश्नों के उत्तर

12.12 संदर्भ ग्रंथ सूची

12.13 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री

12.14 निबंधात्मक प्रश्न

12.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आपके द्वारा संभव होगा;

- प्राथमिक तथ्य तथा प्राथमिक तथ्य के स्रोत को बताना,
- प्राथमिक स्रोतों के गुणों और दोषों की चर्चा करना,
- द्वितीयक तथ्य तथा द्वितीयक तथ्य के स्रोत को बताना,
- द्वितीयक स्रोतों के गुणों और दोषों की चर्चा करना,
- प्राथमिक स्रोत तथा द्वितीयक स्रोत में अन्तर की चर्चा करना।

12.1 प्रस्तावना

सामाजिक शोध कार्य की प्रथम आवश्यक तथ्यों का संग्रहण करना है क्योंकि सम्पूर्ण अनुसंधान कार्य तथ्यों पर ही आधारित होता है। तथ्य ही अनुसंधानकर्ता के ज्ञान की कसौटी है। तथ्य–सूचनाओं को एकत्रित करने तथा संग्रहित करने के लिए शोधकर्ता को कतिपय प्रमाण, सिद्ध तरीकों व प्रविधियों का चयन करना होता है क्योंकि सावधानी पूर्वक चयन तथा संकलन की प्रक्रिया ही अनुसंधान के लक्ष्यों

तक पहुँचाने में सहायक सिद्ध होती है। समाजशास्त्रीय अध्ययन में सूचनाओं एवं तथ्यों का अत्यन्त महत्वपूर्ण योगदान है। अध्ययन विषय से सम्बंधित अधिकतम वास्तविक सूचनाओं एवं तथ्यों का सफल एकत्रीकरण अनुसंधान की सफलता का मुख्य निर्धारक है। तथ्य संग्रहण के स्रोत के अर्न्तगत वह सभी भौतिक सूचनाएं अथवा आँकड़े, सम्मिलित किए जाते हैं जिन्हें अध्ययन क्षेत्र में जाकर तत्संबंधी इकाइयों अथवा उत्तरदाताओं से प्राप्त करना होता है।

12.2 तथ्य का अर्थ एवं परिभाशा

अवधारणा के भांति तथ्य भी सामाजिक अनुसंधान में अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। विज्ञान तथ्यों के आधार पर आगे बढते हैं क्योंकि सामाजिक विज्ञान सामाजिक सम्बन्धों का अध्ययन करता है। अर्थात वैज्ञानिक ज्ञान की सीमाओं के विस्तार हेतु शोध प्रयतनों के आधार पर संकलित की गई साधारण सी लगने वाली छोटी छोटी सूचनाएं भी काफी लाभदायक होती है। इन्ही संकलित सूचनाओं को तथ्य या सामग्री के नाम से पुकारते हैं। ऐसे ही तथ्यों के आधार पर वैज्ञानिक निष्कर्ष निकाले जाते है तथा नियमों का प्रतिपादन एवं सिद्धांतों का निर्माण किया जाता है। तथ्य संकलन से ही घटनाओं के कार्य कारण संबंध को जाना जा सकता है, गारण प्रभाव संबंधों का पता लगाया जा सकता है। अमेरिकन शब्दकोष के आधार पर तथ्य का अर्थ का तात्पर्य जो घटना वास्तव में घटित हुई है, जो कृछ घटा है, उसे तथ्य कहते हैं। तथ्यों को एकत्रित करने के सम्बंध में **कार्ल पियर्सन (1911)**[8] का कथन है कि ''सत्य तक पहुँचने का कोई संक्षिप्त मार्ग नहीं है। विश्व की घटनाओं के बारे में ज्ञान अर्जित करने के लिए वैज्ञानिक अध्ययन के द्वार से गुजरने के अलावा कोई अन्य विकल्प नहीं है।''

उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट है कि तथ्य का तात्पर्य ऐसे समस्त सूचनाओं, सामग्री व आंकड़ों से है जो क्षेत्रीय कार्य और द्वितीयक स्रोतों के माध्यम से प्राप्त किये जाते है।

सामाजिक शोध के क्षेत्र में शोधकर्ता मुख्यतः दो प्रकार के तथ्यों का संकलन करता है।

1. प्राथमिक तथ्य
2. द्वितीयक तथ्य

12.3 प्राथमिक तथ्य

प्राथमिक तथ्य वे मौलिक सूचनाएं हैं जिन्हे अनुसंधानकर्ता प्रथम बार स्वयं मूल्य तथ्यों या सूचनाओं को प्राप्त करता है। एक अनुसंधानकर्ता वास्तविक अध्ययन स्थल में जाकर विषय या समस्या से सम्बन्धित व्यक्तियों से साक्षात्कार करके अथवा अनुसूची या प्रश्नावली की सहायता से आवश्यकतानुसार तथ्यों को एकत्रित करता है। यह कहा जा सकता है कि जो तथ्य पूर्णतया नवीन होते हैं और किसी भी विधि द्वारा तथ्यों का संकलन क्षेत्र में जाकर स्वयं अनुसंधानकर्ता द्वारा किया जाता है उसे हम प्राथमिक तथ्य कहते हैं। इसे क्षेत्रीय सामग्री भी कहा जाता है। सामाजिक सर्वेक्षणों में द्वितीयक तथ्यों की अपेक्षा प्राथमिक तथ्यों पर अधिक प्रयोग किया जाता है क्योकि इसका मुख्य कारण सामजिक घटनाओं की परिवर्तनशीलता है।

12.4 प्राथमिक सामग्री के संकलन के स्रोत

प्राथमिक तथ्यों को जिन स्रोतों द्वारा एकत्रित किया जाता है, उन्हें प्राथमिक या क्षेत्रीय स्रोत कहते हैं। **पी0 वी0 यंग के अनुसार** प्राथमिक स्रोतों का तात्पर्य उन सभी मौलिक सूचनाओं अथवा आंकड़ों से है जिन्हें स्वयं अनुसंधानकर्ता प्राथमिक स्रोतों द्वारा प्राप्त करता है।'' इस संदर्भ में **पीटर मान** ने प्राथमिक स्रोत को परिभाषित करते हुए लिखा है कि ''प्राथमिक स्रोत वे स्रोत हैं जा प्राथमिक स्तर पर हमें विभिन्न प्रकार की आधार सामग्री प्रदान करते हैं।'' इन दोनो परिभाषाओं के आधार पर यह स्पष्ट रूप

से कहा जा सकता है कि प्राथमिक स्रोत वे साधन हैं जो अध्ययनकर्ता एवं उत्तरदाता के बीच में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष सम्पर्क स्थापित करके मौलिक सूचनाओं को एकत्रित करने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करता है। पी0 वी0 यंग ने प्राथमिक स्रोत को दो उप–भागों में विभाजित किया।

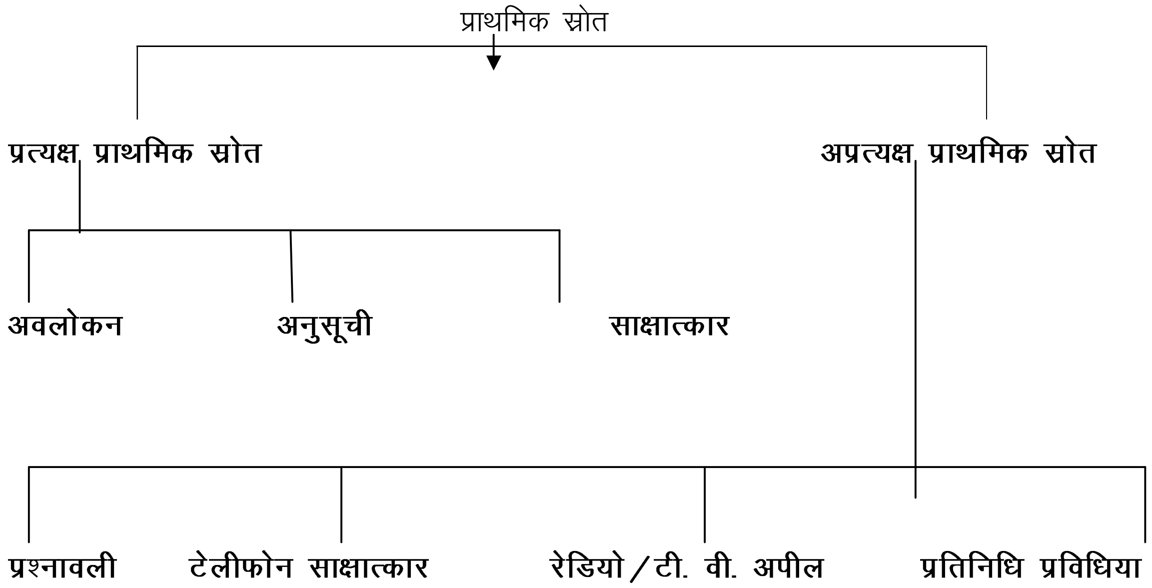

बोध प्रश्न–1

(i)- प्राथमिक तथ्य से आप क्या समझते है, तीन पंक्तियों में संक्षिप्त उत्तर दीजिए?

....

....

....

12.4.1 प्रत्यक्ष प्राथमिक स्रोत

प्रत्यक्ष स्रोत का तात्पर्य है कि अध्ययनकर्ता घटनााओं का स्वयं अवलोकन करके उनका संग्रह करता है अथवा अनुसूची के आधार पर उत्तरदाताओं से सम्पर्क सीापित विभिन्न प्रकार की सामग्री को एकत्रित करते हैं।

प्रत्यक्ष स्रोत की प्रविधियां– प्रत्यक्ष स्रोत में अनुसंधानकर्ता द्वारा कुछ प्रविधियों का प्रयोग किया जाता है, जैसे कि अवलोकन, साक्षात्कार, अनुसूची आदि। इन प्रविधियों के माध्यम से अध्ययनकर्ता प्रसथमिक तथ्य संकलित करता है। ये प्रविधियां जिनके द्वारा प्रत्यक्ष सम्पर्क स्थापित करता है, उन्हें हम सामग्री संकलन के प्रत्यक्ष स्रोत कहते हैं। पी0 वी0 यंग के अनुसार प्राथमिक सूचना के स्रोत निम्नलिखित हैं।

(i) अवलोकन– सामाजिक अनुसंधान की सर्वाधिक प्रचलित और प्राच्य प्रविधि अवलोकन के नाम से जानी जाती है। यह मानव द्वारा सहज ही में की जाने वाली एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके अन्तर्गत वह अपने आस–पास के पर्यावरण में घटित होने वाली क्रियाओं एवम् घटनाओं का सूक्ष्म या स्थूल अवलोकन करता रहता है। यह सभी ज्ञान–विज्ञान के प्रस्फुटन का एक महत्वपूर्ण आधार है उदाहरण स्वरूप न्यूटन

के द्वारा गुरूत्वाकर्षण का नियम और मैडम क्यूरी द्वारा रेडियोधर्मिता के सिद्धान्त को अवलोकन विधि के द्वारा ही अन्वेषित किया गया।

अवलोकन का अर्थ तथा परिभाषा– अवलोकन तथ्य संकलन की एक विधि है, जिसमें दृष्टि आधारित सामग्री संग्रह होता है। यह एक साधन प्रक्रिया है जिसमें कानों तथा ध्वनि की तुलना में नेत्रों का प्रयोग निहित होता है। यह विधि घटनाएं कैसे घटित होती है, उनका घटने का क्रम कारण तथा प्रभावों और उनके पारस्परिक संबंधों को देखती है और उन्हें आलेखित करती है। अवलोकन शब्द अंग्रेजी शब्द आब्जरवेशन (observation) का पर्याय है। शाब्दिक दृष्टि से इसका अर्थ है निरीक्षण करना, देखना, विचार करना। यह आब्जर्व शब्द से बना हुआ है जिसका अर्थ परीक्षा करना, ध्यान देना आदि। इस प्रकार इसका सीधा अर्थ है आँखों से देखना। सामान्य शब्दों में अवलोकन का तात्पर्य हे कि किसी विशेष विषय से संबंधित घटनाओं को व्यवस्थित रूप से देखना तथा घटनाओं के कार्य कारण संबंध को समझाना। किन्तु सामाजिक अनुसंधान की एक व्यवस्थित पद्धति के रूप में अवलोकन का अपना एक पृथक अर्थ है।

प्रो0 गुडे एवं हॉट के अनुसार, ''विज्ञान अवलोकन से प्रारम्भ होता है तथा उसे सत्यापन के लिए अन्ततः आवश्यक रूप से अवलोकन पर ही पुनः लौटना पड़ता है।

पी० वी० यंग के अनुसार "घटनाओं को स्वतः घटित होने के समय आँखों द्वारा एक व्यक्ति तथा सुविचारित रूप से अध्ययन करने को अवलोकन कहते हैं।" उपरोक्त परिभाषा से यह स्पष्ट होता है कि, अवलोकन की प्रक्रिया में नेत्रों का मुख्य रूप से प्रयोग होता है। असामाजिक अनुसंधान में द्वैतीयक स्रोतो का भी उतना ही महत्व होता है जितना कि तथ्य संकलन में प्राथमिक स्रोतों का है।

उपरोक्त परिभाषाओं से इस बात की पुष्टि होती है कि, अनुसंधान–सामग्री संग्रह करते समय प्राथमिक सूचनाओं को एकत्र करने हेतु अवलोकन प्रविधि एक प्रत्यक्ष और मुख्य विधि है। अवलोकन प्रणाली के अन्तर्गत अनुसंधानकर्त्ता घटनाओं को प्रत्यक्षतः नेत्रों की सहायता से देखता है, श्रवण करता है और जो कुछ भी ग्रहण करता है, उस समस्त सामग्री का संचयन करता है। इस प्रकार दृष्य एवम् श्रव्य दोनों प्रक्रियाओं द्वारा अवलोकनकर्त्ता प्रत्यक्ष एवम् अप्रत्यक्ष, दोनों ही प्रकार से अवलोकन की क्रिया कर सकता है। पर यह आवष्यक है कि, सभी स्थितियों मे अवलोकन की प्रक्रिया का व्यवस्थित रीति से किया जाना अनिवार्य है।

अवलोकन के प्रकार –समाज में घटित होने वाली घटनाओं की विविधता को दृष्टिगत रखते हुए अवलोकन को केवल एक विधि के माध्यम से क्रियान्वित किया जा सकता है। सामाजिक घटनाओं की जटिलता को समझने हेतु अवलोकन के अनेक प्रकारों का निर्माण हुआ, जिनको इस प्रकार प्रदर्षित किया जा सकता है–

अवलोकन के प्रकार

अनियन्त्रित अवलोकन | **नियन्त्रित अवलोकन** | **सामूहिक अवलोकन**

अनियन्त्रित अवलोकन
1. **सहभागी अवलोकन**
2. **असहभागी अवलोकन**
3. **अर्द्ध–सहभागी अवलोकन**

नियन्त्रित अवलोकन
1. **परिस्थिति व घटना पर नियन्त्रण**
2. **अवलोकनकर्त्ता पर नियन्त्रण**

1. अनियन्त्रित अवलोकन का अर्थ एवं परिभाषा – जब अवलोकन इस प्रकार किया जाए कि अध्ययन–विषय या अनुसंधानकर्त्ता पर अवलोकन की प्रक्रियान्तर्गत कोई नियन्त्रण करने का प्रयास न किया जाए, तब इसे अनियन्त्रित अवलोकन के नाम से सम्बोधित किया जाता है। घटनाओं को उनके प्राकृतिक एवम् यथार्थ स्वरूप में अध्ययन करना इस प्रविधि का अभिप्रेत होता है। यह अनौपचारिक रूप से नियोजित और साधारण संरचना युक्त होता है। गुडे एवम् हाट ने इसे साधारण अवलोकन की संज्ञा प्रदान की।

जहोदा एवम् कुक द्वारा इसे असंरचित अवलोकन कहा गया है। **पी वी यंग** के अनुसार अनियन्त्रित अवलोकन में हम वास्तविक जीवन से सम्बन्धित परिस्थितियों की सतर्कतापूर्वक जाँच करते हैं। इस अवलोकन में वास्तविकता उत्पन्न करने वाले यन्त्रों को प्रयुक्त किया जाता है और निरीक्षित घटना की जाँच करने का कोई प्रयास नहीं किया जाता।

उक्त परिभाषा से अनियन्त्रित अवलोकन की तीन विशेषताएं स्पष्ट होती हैं–

1) अनुसंधानकर्त्ता या अध्ययनकर्त्ता पर किसी प्रकार का नियंत्रण नहीं रखा जाता।

2) परिस्थितियों या घटनाओं का प्राकृतिक रूप से अध्ययन करता है एवम्

3) इस विधि में अनुसंधानकर्त्ता द्वारा घटनाओं की शुद्धता को अन्वेषित करने का प्रयत्न नहीं किया जाता।

अनियन्त्रित अवलोकन की प्रकृतिगत विशेषताओं को दृष्टिगत रखते हुए इसे मुख्यतया निम्न स्वरूपों में विभाजित किया गया है–

क. सहभागी अवलोकन– अवलोकन की इस प्रणाली के अन्तर्गत अध्ययनकर्त्ता पहले स्वयं अवलोकन हेतु चयनित समूह का एक सदस्य बन जाता है तत्पश्चात् समूह के सदस्य रूप में ही सबके साथ मिलकर रहते हुए उस समुदाय अथवा समूह की दिन–प्रतिदिन के व्यवहारों और अन्य कार्यों, व्यवस्थाओं एवम् क्रियाकलापों में सक्रिय प्रतिभागिता करता है और साथ ही साथ उनका निरीक्षण करते हुए अध्ययनकार्य की सामग्री संकलित करता है। उस समूह या समुदाय के सदस्यों को अध्ययनकर्त्ता का वास्तविक उद्देश्य ज्ञात नहीं होता।

अर्थ एवम् परिभाषा– सहभागी अवलोकन को कई समाजशास्त्रियों और मानवशास्त्रियों द्वारा प्रयुक्त किया गया है। प्रसिद्ध भारतीय समाजशास्त्री एम एन श्रीनिवास द्वारा मैसूर में संस्कृतीकरण की प्रक्रिया का अध्ययन करने हेतु इस विधि को माध्यम बनाया गया। इसी क्रम में तंजौर गांव के ग्रामीण क्षेत्रों में वर्ग प्रस्थिति और शक्ति को आधार मानते हुए सामाजिक असमानता का आन्द्रे बेतई द्वारा अध्ययन इस विधि का प्रयोग करते हुए किया गया। इसके अतिरिक्त जॉन हॉवर्ड द्वारा कैदियों, लीप्ले तथा बूथ द्वारा श्रमिक परिवारों और नेल्स एण्डसन द्वारा होबो समुदाय के व्यक्तियों पर किए गए अध्ययनों में भी सहभागी अवलोकन विधि की सहायता ली गई। सर्वप्रथम **लिण्डमैन** द्वारा सन् 1924 में अपनी पुस्तक '**सोशियल डिस्कवरी**' में सहभागी अवलोकन शब्द को प्रयुक्त किया गया।

गुडे एवम् हाट ने सहभागी अवलोकन कों इस प्रकार स्पष्ट किया है "इस कार्य प्रणाली का प्रयोग उस समय किया जाता है जबकि अनुसंधानकर्त्ता अपने को समूह के सदस्य के रूप में स्वीकृत हो जाने योग्य बना लेता है। "

लुण्डबर्ग के अनुसार ''अवलोकनकर्त्ता अवलोकित समूह के प्रति यथासंभव पूर्णतया घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित करता है अर्थात् वह समुदाय में बस जाता है तथा उस समूह के दैनिक जीवन में भाग लेता है।''

उपरोक्त परिभाषाएं इस तथ्य को रेखांकित करती हैं कि सहभागी अवलोकन में अवलोकन करने वाला चयनित समूह का एक भाग बनकर उसमें वास करते हुए तथ्यों को एकत्र करता है।

ख–असहभागी अवलोकन– असहभागी अवलोकन के अन्तर्गत चयनित अध्ययन–समूह का स्थायी सदस्य न बनकर अवलोकनकर्त्ता समूह के बीच केवल उपस्थित रहकर उनकी गतिविधियों में प्रतिभाग नहीं लेता है। वह समूह में दीर्घ अवधि तक निवास न करके केवल अवलोकन करता है। वह उनके क्रियाकलापों को मौन रहकर देखता है और गहनतापूर्वक तथ्यों के विषय में जानकारी प्राप्त करता है। अवलोकनकर्त्ता यह अवलोकन उन्हें बिना सूचित किए घटनाओं के घटित होने के समय उपस्थित होकर उनके व्यवहारों का अध्ययन कर सूचनाओं को संकलित कर लेता है। ऐसी अनेक परिस्थितियाँ सामाजिक जीवन में घटित होती हैं जोकि, सहभागी अवलोकन द्वारा नहीं ज्ञात की जा सकती अपितु वहाँ अवलोकन की असहभागी प्रविधि ही सर्वथा उपयुक्त होती है। परन्तु पूर्ण रूप से असहभागी अवलोकन करना असंभव है।

ग. अर्द्धसहभागी अवलोकन– इस तथ्य को नकारा नहीं जा सकता है कि, पूर्णतया सहभागी अथवा असहभागी अवलोकन करना सम्भव नहीं है। इसकी सीमाओं को देखते हुए गुडे एवम् हाट ने अर्द्ध सहभागी अवलोकन का सुझााव सामने रखा जोकि, दोनों प्रविधियों की सीमाओं के बीच स्थित हो और जिसमें उपरोक्त दोनों प्रविधियों की विशेषताऐं विद्यमान हों।

अर्द्ध सहभागी आन्दोलन के अन्तर्गत अवलोकनकर्त्ता उस समूह की कुछ दिन–प्रतिदिन की क्रियाओं का अंग बनता है, जिसका चयन अध्ययन हेतु किया गया हो। परन्तु समूह के विशेष सांस्कृतिक उत्सवों, संस्कारों , घटनाओं और समारोहों में वह भाग न लेकर दूर से उनका अवलोकन कर अध्ययन करता है। यह अवलोकन सहभागी व असहभागी दोनों प्रकार के अवलोकनों के गुणों से समन्वित होता है और दोनों के लाभ प्रदान कर सकता है।

बोध प्रश्न–2

(i)- सहभागी अवलोकन से आप क्या समझते है, पाँच पंक्तियों में संक्षिप्त उत्तर दीजिए?

....
....
....
....
....
....

(ii) अनुसूची–अनुसूची सूचना एकत्र करने की आधुनिक विधियों में से एक प्रमुख विधि हैं, जिसके अन्तर्गत उत्तरदाताओं के समक्ष कुछ चयनित प्रश्नों को प्रस्तुत किया जाता है और उनके उत्तरों के माध्यम से प्राप्त जानकारी के द्वारा अध्ययन कार्य को प्रमाणिक बनाने का प्रयत्न किया जाता हैं। यह मुख्यतः प्राथमिक सूचनाएं एकत्र करने की एक महत्वपूर्ण प्रविधि हैं। यह प्राथमिक तथ्य प्राप्त करने का एक विश्वसनीय और उपयोगी माध्यम हैं क्योकि, अनुसूची में किसी समस्या को प्रत्यक्ष तौर पर अवलोकन करते हुए सूचनाओं का संकलन किया जाता हैं। अनेक आधुनिक विधियों और यन्त्रों द्वारा सूचना प्रदान करने वालों से सामग्री संग्रहीत की जाती हैं, अनुसूची भी एक ऐसा ही यंत्र है जो कि अपनी विश्वसनीयता के कारण अत्यन्त महत्वपूर्ण विधि हैं।

अध्ययनकर्त्ता के द्वारा उत्तरदाताओं के समीप जाकर स्वयं सूचना एकत्र करने हेतु सर्वप्रथम एक सूची जिसमें अनेक प्रश्नों को पहले से निश्चित करने लिखित रुप में सुरक्षित कर लिया जाता हैं और इन प्रश्नों के उत्तर को स्वंय ही शोधकर्ता द्वारा भरा जाता हैं। यह साक्षात्कार का एक सरल माध्यम है जिसमें आमने सामने बैठकर सूचना एकत्र करनी होती है और इसे सूचनादाताओं को डाक के द्वारा नहीं भेजा जाता हैं। इस दृष्टि से प्रश्नावली भी एक प्रकार की अनुसूची ही होती हैं यद्यपि दोनो के प्रयोग करने के तरीके में अन्तर निहित हैं। प्रश्नावली विधि का प्रयोग तब किया जाता है जब सूचनाओं को विस्तृत क्षेत्र से एकत्र करना होता हैं, ऐसी स्थिति में प्रश्नावली को डाक के द्वारा भी भेजा जाता हैं। जब सूचनाएं समीप स्थित क्षेत्र से एकत्र करनी होती हैं तब अनुसूची को प्रयोग करते हुए स्वंय उस क्षेत्र में जाकर अध्ययन से सम्बन्धित सूचना की प्राप्ति की जाती हैं।

गुडे तथा हाट के अनुसार अनुसूची प्रश्नों के एक समूह के लिए प्रयुक्त किया जाने वाला नाम है जो साक्षात्कार करने वाले के द्वारा अन्य व्यक्तियों से आमने सामने की स्थिति में पूछा और पूर्ण किया जाता हैं।

बोगार्डस के अनुसार संक्षिप्त प्रश्नों की रचना को अनुसूची कहते है जिसे सामान्यतः सर्वेक्षणकर्त्ता अपने पास रखता हैं और अपने अन्वेषण कार्य में आगे बढ़ने के साथ साथ उसे पूर्ण करता जाता हैं।

उपरोक्त परिभाषाओं से यह स्पष्ट होता है कि अनुसूची अनेकानेक प्रश्नों से युक्त ऐसी सूची है जिसमें व्यवस्था और निश्चित क्रम आदि गुण समाहित होते हैं। उत्तरदाताओं से प्रत्यक्ष सम्पर्क स्थापित कर साक्षात्कार की प्रक्रिया के माध्यम से अध्ययनकर्त्ता द्वारा सूचनाओं का संकलन अनुसूची का उपयोग करके किया जाता हैं।

अनुसूची के प्रकार– अध्ययनकर्ता के द्वारा चयनित अध्ययन एवम् कार्य–क्षेत्र की प्रकृति–विशेष एवम् कार्य के उद्देश्यों और लक्षित समूह में भेद होने के कारण उनके निमित्त निर्मित अनुसूचियों के प्रकारों में भी भिन्नता परिलक्षित होती हैं। उपरोक्त भिन्नताओं को दृष्टिगत रखते हुऐ भिन्न भिन्न प्रकार की बनी हुई अनुसूचियों को अध्ययन की सुविधानुसार अधोलिखित भागों में बाँटा जा सकता हैं लुण्डबर्ग ने अनुसूचियों को तीन मुख्य भागों में विभक्त किया हैं।

1. ऐसी अनुसूचियां जिनके अन्तर्गत अभिवृत्तियों तथा मतों का निर्धारण और उनकी माप की गई हो।
2. ऐसी अनुसूचियां जो कि वस्तुनिष्ठ तथ्यों का आलेख करने हेतु प्रयुक्त हो।
3. ऐसी अनुसूचियां जो सामाजिक संगठनों तथा संस्थाओं की स्थिति और कार्यो की जानकारी रखने से सम्बन्धित हैं।

पी0 वी0 यंग ने अनुसूची को 5 भागों में विभाजित किया हैं।

1. अवलोकन अनुसूची
2. साक्षात्कार अनुसूची
3. मूल्यांकन अनुसूची
4. प्रलेख अनुसूची
5. संस्था सर्वेक्षण अनुसूची

उपरोक्त विद्वानों द्वारा उल्लिखित अनुसूची के प्रकारों को आधार मानते हुए अनुसूची को पॉच प्रमुख भागों में बॉटा जा सकता हैः–

1. **अवलोकन अनुसूची**– सामाजिक अनुसंधान की एक प्रमुख पद्धति है अवलोकन। अनुसूची के इस प्रकार के अन्तर्गत प्रश्नों का पहले से निर्धारण नहीं किया जाता हैं। अवलोकन अनुसूची का मुख्य लक्ष्य अध्ययन किये जाने वाले विषय से सम्बन्धित पक्षों को अधिक स्पष्ट करना होता हैं। इस प्रकार की

अनुसूची के अन्तर्गत प्रश्नों के उत्तर न प्राप्त कर, प्रत्यक्ष रुप में स्वयं वस्तुस्थिति का आकलन और विष्लेशणकरके सूचनाओं को एकत्र कर लिया जाता हैं। अतः अवलोकन अनुसूची में सूचनादाताओं से पूछकर सामग्री का संग्रह न करके प्रत्यक्ष अवलोकन के द्वारा सूचना संग्रहण कर लिया जाता हैं।

2. **साक्षात्कार अनुसूची–** इस अनुसूची के अन्तर्गत उत्तरादाताओं से साक्षात्कार के द्वारा सूचना एकत्र की जाती हैं। जब तथ्यों की विस्मृति की सम्भावना अधिक हो तथा आँकड़ों की प्रकृति गुणात्मक हो, तब ऐसी स्थिति में साक्षात्कार अनुसूची को प्रयुक्त किया जाता हैं। यह अनुसूची साक्षात्कार के लिए प्रयोग की जाती हैं। सामाजिक अनुसंधानों में यह पद्धति विशेष रुप से प्रचार में हैं। साक्षात्कार अनुसूची को बनाते समय अध्ययन विषय के समस्त संभावित पक्षों को समन्वित करते हुए तत्सम्बन्धी प्रश्नों को इसमें इस प्रकार समाविष्ट कर लिया जाता है कि सभी प्रकार के आँकड़े स्पष्ट रुप में प्राप्त हो सकें। इसमें प्रश्नों का निर्धारण करने के पश्चात् प्रत्येक प्रश्न के समक्ष रिक्त स्थान होता हैं जिसकी पूर्ति साक्षात्कारकर्त्ता के द्वारा स्वयं सुव्यवस्थित रीति से की जाती हैं। तथ्यों को वर्गीकृत करने और उनका सारणीयन करने हेतु यह विधि सर्वाधिक लाभप्रद सिद्ध होती हैं, यही इसका सबसे बड़ा गुण हैं।

3. **संस्था सर्वेक्षण अनुसूचीः**– विभिन्न संस्थाओं यथा धर्म, परिवार विवाह, शिक्षा आदि के विविध पक्षों को मूल्यांकित करने हेतु संस्था सर्वेक्षण अनुसूची को प्रयुक्त किया जाता हैं। इसके नाम से ही यह स्पष्ट हो जाता है कि, जिन अनुसूचियों के माध्यम से किसी संस्था विशेष का मूल्यांकन करने का प्रयत्न किया जाता हैं, वह संस्था सर्वेक्षण अनुसूची कहलाती हैं। जितने जटिल प्रकार की संस्था को सर्वेक्षण हेतु चयनित किया जाएगा उसके निमित्त निर्मित अनुसूची को भी तुलनात्मक रुप से विस्तृत आकार युक्त बनाया जाता हैं।

4. **प्रलेख अनुसूची** :– प्रलेख अनुसूची के अन्तर्गत ऐसी अनुसूची निर्मित करते है जिसे व्यक्तिगत जीवन अध्ययन पद्धति की सहायता से सामाजिक अनुसंधान में प्रयोग किया जाता हैं। प्रलेख अनुसूची में अन्य अनुसूचियों से कुछ भिन्न होती है, क्योकि, इसमें अन्य अनुसूचियों की भॉति आँकड़े या सूचनाएं प्राप्त करने हेतु प्रश्न बनाने का प्रावधान नहीं होता हैं अपितु अनेकानेक प्रलेख अनुसूची का उपयोग अधिकतर ऐतिहासिक, विकासात्मक तथा सर्वेक्षण प्रकार के अनुसंधानों में सामग्री प्राप्ति हेतु किया जाता हैं। पत्रों, अभिलेखों, पुस्तकों, पुस्तिकाओं एवं पत्रिकाओं के अध्ययन द्वारा प्राप्त सूचनाओं, सामग्री और आँकड़ों के आधार पर सूचनाओं का संग्रहण कर लिया जाता हैं।

5. **मूल्यांकन अनुसूचीः**– जब अनुसूची को मुख्य आधार बनाकर मूल्यांकन, गुण निर्धारण तथा उसकी तुलनात्मक समता को निर्धारित किया जाता है तब मूल्यांकन अनुसूची प्रयुक्त होती है। जब अध्ययन कार्य का विषय क्षेत्र अभिवृत्ति, मत, प्रथा, फैशन इत्यादि के अन्तर्गत आता हो तब मूल्यांकन अनुसूची सफलतापूर्वक प्रयोग में लाई जाती हैं।

मूल्यांकन अनुसूची के अन्तर्गत अध्ययन हेतु चयनित समस्या अथवा घटना को निर्धारक करने वाले चरों या कारकों के मूल्य को सुनिशिचित या उनको मूल्यांकित किए जाने का कार्य संपादित किया जाता हैं। यथा परिवार नियोजन, सामुदायिक विकास और विद्यालय संगम इत्यादि के सम्बन्ध में समाज के व्यक्तियों का मत व दृष्टिकोण जानने और समझने हेतु इस अनुसूची को आसानी से प्रयोग किया जाना सम्भव हैं।

(iii) साक्षात्कार– जिन सामाजिक समस्याओं का सर्वपक्षीय अध्ययन प्रायः अवलोकन प्रविधि से सम्भव नहीं हो पाता है, अनका अध्ययन सूचनादाताओं के साक्षात्कार के माध्यम से उत्तरदाताओं की मनोवृत्तियों एवं प्रवृत्तियों इत्यादि की वास्तविक जानकारी भी प्राप्त होती है, साथ ही शोधकर्ता तथ्यों से

भिज्ञ हो जाता है। इस विधि के द्वारा अध्ययनकर्ता तथा सूचनादाता के बीच आमने–सामने की स्थिति उत्पन्न होती है जो परस्पर सूचनाओं के आदान–प्रदान में सहायक होती है।

पी० वी० यंग (1960) के अनुसार ''अनुसंधानकर्ता कल्पनात्मक रूप से सूचनादाता के जीवन में प्रवेश करता है तथा उसके जीवन के भूत, वर्तमान तथा भविष्यकाल की सूचना एकत्र करता है।''

लिंडसे गार्डनर (1968) के अनुसार ''साक्षात्कार, साक्षात्कारकर्ता द्वारा अनुसंधान से सम्बन्धित जानकारी प्राप्त करने के विशेष उद्देश्य के लिए चलाया जाने वाला व्यक्तियों का वार्तालाप होता है।'' सभी विद्वानों के द्वारा प्रस्तुत विचारों एवं परिभाषाओं के अध्ययन से यह स्पष्ट किया जा सकता है कि किसी भी सामाजिक विज्ञान के क्षेत्र में वह अनुसंधान जिनकी प्रकृति वैज्ञानिक होती है, उनके अध्ययन में साक्षात्कार एक महत्वपूर्ण तथा आवश्यक यंत्र है।

ध्यातव्य है कि साक्षात्कार की प्रकृति के संबंध में वैज्ञानिकों ने कहा है कि इसमें आमने–सामने बैठकर प्राथमिक तथ्य एकत्रित करने में सहायता मिलती है, वहीं दूसरी तरफ इसका एक महत्वपूर्ण लाभ यह भी है कि साक्षात्कार के समय उत्तरदाता एवं उसके आस–पास के वातावरण व निरीक्षण करने का अवसर भी प्राप्त होता है।

12.4.2 अप्रत्यक्ष प्राथमिक स्रोत

प्राथमिक तथ्यों के संकलन के लिए कभी–कभी अध्ययनकर्ता अध्ययन क्षेत्र में जाये बिना ही अध्ययन सामग्री एकत्रित कर लेता है। पार्टेन ने इसक अंतर्गत रेडियो/टी. वी., अपील, टेलीफोन द्वारा साक्षत्कार तथा प्रतिनिधि प्रविधियों को अप्रत्यक्ष स्रोत माना है। अप्रत्यक्ष स्रोत चार प्रकार के होते हैं। अप्रत्यक्ष स्रोत का तात्पर्य है कि अध्ययनकर्ता विषय से संबंधित व्यक्तियों से स्वयं न मिले लेकिन डाक द्वारा भेजी गयी प्रश्नावली, मतपत्र अथवा किसी प्रकार की अपील के द्वारा तथ्यों का संग्रह करने का प्रयत्न करता है।

(i) प्रश्नावली

प्रश्नावली विधि अनुसंधान कार्य करते समय आँकड़ों का संकलन करने में अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करती है, जिसका प्रयोग अनुसन्धानकर्ता द्वारा सामाजिक अनुसन्धान करते समय सूचना एकत्र करने हेतु किया जाता है। जब सामाजिक अनुसन्धान करते समय ऐसे अध्ययन क्षेत्र को चयनित किया जाता है। जिसकी प्रकृति व्यापक होती है तब ऐसी स्थिति में अध्ययनकर्त्ता हेतु यह सम्भव नहीं होता कि, वह विस्तृत क्षेत्र में जाकर अनेक व्यक्तियों से व्यक्तिगत और आत्मीय सम्बन्ध स्थापित कर सके। ऐसी स्थिति में प्रश्नावली ही वह प्रविधि है जिसके माध्यम से उत्तरदाताओं से प्राथमिक सामग्री का संकलन किया जाता है। प्रस्तुत अध्याय में हम प्रश्नावली प्रविधि की प्रकृति, प्रारूप, प्रयोग की विधि और रचना का अध्ययन करेगें।

प्रश्नावली का अर्थ और परिभाषा–जब अनेक प्रकार के प्रश्नों को एक निश्चित क्रम से सूचीबद्ध कर दिया जाता है तब यह विधि प्रश्नावली कही जाती है, इसके अन्तर्गत अध्ययन विषय से सम्बद्ध विभिन्न पहलुओं के विषय में पूर्व निर्धारित/निर्मित प्रश्नों को सम्मिलित कर अनुसंधान किया जाता है। अनुसंधानित, विषय के समस्त पक्षों को समेटकर सम्बन्धित विषय की वांछित सूचना व ऑकड़े एकत्र करने में प्रश्नावली सहायक होती है। प्रश्नावली विधि का प्रयोग अनुसंधानकर्त्ता द्वारा अन्वेषित विषय से सम्बन्धित प्रश्नों की सूची को डाक द्वारा उत्तरदाताओं को प्रेषित करके किया जाता है। शोधित विषय के महत्व को उत्तरदाताओं को समझाने हेतु एक व्याख्या पत्र भी डाक द्वारा उत्तरदाताओं को भेजा जाता है। प्रश्नावली के माध्यम से संचालित विषय को समझते हुए उत्तरदाताओं द्वारा स्वयं पढकर, समझकर उसके प्रश्नों के उत्तर को पूरित कर डाक द्वारा पुनः अनुसंधानकर्त्ता को भेजा जाता है।

अध्ययनकर्त्ता डाक द्वारा प्राप्त प्रश्नावली एवं उस पर आधारित उत्तरों से प्राप्त सूचनाओं को व्याख्यातित एवं विश्लेषित कर अनुसंधानित विषय से सम्बन्धित निष्कर्ष निकलता है। अतः अनुसंधान की गुणवत्ता प्रश्नावली के प्रश्नों एवम प्राप्त उत्तरों की गुणवत्ता पर बहुक कुछ निर्भर करती है।

गुडे तथा हाट के अनुसार ''प्रश्नावली एक प्रकार का उत्तर प्राप्ति का साधन है जिसका स्वरुप ऐसा होता है कि, उत्तरदाता उसकी पूर्ति स्वयं करता है।''

लुण्डवर्ग के अनुसार ''मूलतः प्रश्नावली प्रेरणाओं का एक समूह है, जिसे शिक्षित लोगों के सम्मुख उन प्रेरणाओं के अन्तर्गत उनके मौखिक व्यवहारों का अवलोकन करने के लिए प्रस्तुत किया जाता है।''

बोगार्डस के अनुसार ''प्रश्नावली विभिन्न व्यक्तियों को उत्तर देने के लिए दी गई प्रश्नों की एक तालिका है।''

उपरिलिखित परिभाषाओं का सार यह है कि, प्रश्नावली विषय से सम्बन्धित आँकड़ों व तथ्यों को एकत्र करने हेतु एक प्रभावशाली माध्यम है जो अनुसंधानकर्त्ता एवं उत्तरदाताओं के मध्य प्रत्यक्ष एवं व्यक्तिगत सम्बंधों के आधार पर न बनकर सुदूरवर्ती क्षेत्रों में स्थित उत्तरदाताओं के द्वारा प्रश्नावली को भरकर अनुसंधानकर्त्ता को प्रेषित करने के द्वारा क्रियान्वित होती है। उत्तरदताओं द्वारा प्रदत्त उत्तरों के आधार पर व्यवस्थापन की प्रक्रिया एवम आँकड़ों पर आधारित सांख्यिकीय विष्लेशणकिया जाता है।

प्रश्नावली के प्रकार–लुण्डवर्ग ने प्रश्नवली को मुख्यतः दो प्रकारों में विभाजित किया है।

1. **तथ्य संबन्धी प्रश्नावलीः**– जिस प्रश्नावली के निर्माण का मुख्य उददेश्य किसी समूह विशेष की सामाजिक–आर्थिक पक्षों से सम्बन्धित सूचना–सामग्री व तथ्यों का संकलन करना होता है, वह तथ्य सम्बन्धी प्रश्नावली कहलाती है।
2. **मत और मनोवृत्ति सम्बन्धी प्रश्नावलीः**– जिस प्रश्नावली का लक्ष्य किसी विषय विशेष पर उत्तरदाताओं के अंतर्मन में विद्यमान विचारों, रुचियों अथवा अभिवृत्तियों को ज्ञात करना होता है वह मत और मनोवृत्ति सम्बन्धी प्रश्नावली कहलाती है।

पी. वी. यंग ने भी प्रश्नावली के दो प्रकारों को उल्लिखित किया हैः–

1. **संरचित प्रश्नावलीः**– जब शोधकार्य में प्रयुक्त करने हेतु प्रश्नावली को पहले से ही निर्मित कर लिया जाता है तब इसे संरचित प्रश्नावली कहते हैं। इस प्रकार की प्रश्नावली में अधिकांशतया किसी प्रकार के परिवर्तन की संभावना नहीं रहती है। संरचित प्रश्नावली विशाल क्षेत्र में फैले व्यक्तियों से उत्तर प्राप्त कर प्राथमिक तथ्यों व आँकडों को एकत्र करने के पश्चात् संग्रहीत तथ्यों का पुर्नविष्लेशणकरने में उपयोगी होती है। इसमें संकलित प्रश्नों की प्रकृति स्पष्ट, पूर्व–निर्धारित और एक विशेष क्रमानुसार होती है जिसके परिणामस्वरुप प्रश्नावली प्रत्येक उत्तरदाता के लिए बोधगम्य और एकसमान होती है।
2. **असंरचित प्रश्नावलीः**– असंरचित प्रश्नावली के अन्तगर्त अध्ययन–विषय के विषय में सूचनाएं एकत्र करने हेतु पूर्व निर्धारित प्रश्नों को समाविष्ट नहीं किया जाता है अपितु अनुसंधानित विषय का केवल उल्लेख कर उसे स्पष्ट कर दिया जाता है। अनुसंधान कार्य करते समय यह अनुसंधानकर्त्ता एवं उत्तरदाता का अपेक्षित सूचनाओं को एकत्र करने हेतु मार्ग–निदर्शन का कार्य करती है।
3. **खुली प्रश्नावलीः**– खुली प्रश्नावली के अन्तर्गत सूचनादाता व्यक्ति को इतनी स्वतन्त्रता प्राप्त होती है कि, वह प्रश्नों को पढ़कर उसके सम्बन्ध में अपने व्यक्तिगत विचारों को अपने शब्दों में प्रकट कर सके। खुली प्रश्नावली में प्रत्येक प्रश्न के रिक्त स्थान दिया गया होता है, जिससे कि, उत्तरदाता व्यक्ति उस रिक्त स्थान की पूर्ति अपने विचारानुसार करने हेतु युक्त होता है।

4. प्रतिबन्धित/बन्द प्रश्नावलीः– बन्द प्रश्नावली में खुली प्रश्नावली के विपरीत प्रत्येक प्रश्न के सम्मुख प्रश्न से संबन्धित कुछ सम्भावित उत्तरों को पहले से ही निर्धारित करके अंकित कर दिया जाता है जिससे यह स्पष्ट होता है कि, उत्तरदाता को अपना व्यक्तिगत मत अपने शब्दानुसार न व्यक्त करके दिए गए सम्भावित उत्तरों में से एक चुनकर अपने मत को प्रकट करना होता है। अर्थात सूचनादाता द्वारा प्रदत्त सूचना नियन्त्रित होती है, मुक्त नहीं।

उदाहरण–परिवार के सदस्यों द्वारा सहयोग किस रूप में दिया जाता है–

1. उत्पादन कार्यों में
2. बाजार में
3. गृह कार्यों में
4. बच्चों की देखभाल में
5. कोई अन्य

प्राप्त आकड़ों को सांख्यिकीय दृष्टि से विश्लेषित करने एवम अनुसंधानकर्ता के उददेश्य–पूर्ति में सहायक होने के कारण यह प्रश्नावली अनुसंधान कार्य हेतु सुविधाजनक होती है।

5. **चित्रमय प्रश्नावलीः–** चित्रमय प्रश्नावली के अन्तर्गत सीधे प्रश्न न देकर प्रश्नों को विषयानुसार चित्र रूप में ढालकर क्रमबद्ध रूप में सूची में दिया जाता है, उत्तरदाता को विषय के लिए मौखिक या वाचिक रूप में निर्देश देकर दिए गए चित्रों में से अपना उत्तर चयनित करना होता है। इस प्रविधि का प्रयोग विशेष रुप से बालको और अल्प–शिक्षित व्यक्तियों से सूचना प्राप्ति हेतु किया जाता है।

6. **मिश्रित प्रश्नावलीः–** मिश्रित प्रश्नावली के अन्तर्गत एक ही प्रकार प्रश्नों के स्थान पर अनेक प्रकृति के प्रश्नों का समावेश किया जाता है यथा कुछ प्रश्नों का उत्तर अपने मतानुसार दिया जाता है और कुछ प्रश्नों का उत्तर कुछ सम्भावित उत्तरों में से किसी एक को चयनित करना होता है। बन्द और खुली दोनों प्रकार की प्रश्नावली के समन्वय से मिश्रित प्रश्नावली का निर्माण होता है।

(ii) **रेडियो अथवा टेलीविजन अपील** : प्राथमिक सामग्री संकलन में रेडियो अथवा टेलीविजन का महत्वपूर्ण स्रोत है वर्तमान में विकसित तथा विकासशील देशों इन उपकरणों का उपयोग किया जाता है। इनके द्वारा किन्हीं विशेष अवसरों पर विभिन्न कार्यक्रमों का प्रसारण करके स्रोताओं से अपील की जाती है कि सम्बन्धित विषय से अपने विचारों अथवा प्रतिक्रियाओं का अमुक पते पर भेज दें इसके फलस्वरूप निश्चित अवधि के अन्दर विषय से सम्बन्धित बहुत अधिक उत्तर प्राप्त हो जाते हैं।

(iii) **टेलीफोन साक्षात्कार** : टेलीफोन साक्षात्कार में सूचनादाताओं से अप्रत्यक्ष सम्पर्क स्थापित कर प्राथमिक तथ्यों का संकलन किया जाता है वर्तमान समय में महानगरों शहरों तथा विस्तृत क्षेत्र के कारण उनके पास पहुंचना आसान नहीं होता टेलीफोन के द्वारा चुने गये सूचनादाताओं से सम्पर्क स्थापित करके एक विशेष विषय से सम्बन्धित तथ्यों को एकत्रित करने का प्रयत्न किया जाता है। इनके द्वारा प्राप्त सूचनाओं से प्राप्त निष्कर्षो का सत्यापन करना सम्भव नहीं होता।

(iv) प्रतिनिधि प्रविधियां– इस प्रविधि का प्रयोग विस्तृत अध्ययन क्षेत्र में किया जाता है। इस प्रविधि के अन्तर्गत समग्र में से कुछ प्रतिनिधि इकाइयों का चयन कर लिया जाता है और यह माना जाता है कि इनके द्वारा दी गई सम्पूर्ण समूह के विचारों, मनोवृत्तियों आदि का प्रतिनिधित्व करेगी।

बोध प्रश्न–3

(i)- प्रश्नावली के प्रकारों का संक्षिप्त में उत्तर दीजिए?

....

....

....
....
....
....

12.5 प्राथमिक स्रोत के गुण

तथ्य संकलन के प्राथमिक स्रोतों के गुण इस प्रकार हैं –

1. **विस्तृत एवं गहन सूचनाएं** : प्राथमिक तथ्यों के संकलन में अध्ययनकर्ता उत्तरदाता से सीधे सम्पर्क के माध्यम से सूचनाएं संकलित करता है। अवलोकन विधि में अध्ययनकर्ता सहभागी अवलोकन की सहायता से उस समुदाय या समूह का अभिन्न अंग बनकर अध्ययन विषय के बारे में विस्तृत एवं गहन सूचनाएं प्राप्त कर लेता है।
2. **अध्ययन में लोच के गुण** : चूंकि अध्ययनकर्ता स्वयं अध्ययन क्षेत्र में जाता है इसलिए यदि सामग्री संकलन के समय किसी प्रकार के परिवर्तन की आवश्यकता अनुभव की जाती हे तो यह परिवर्तन सम्भव है जिससे निष्कर्ष अधिक प्रभाविक बन सके। यह प्रति परिस्थिति के अनुरूप प्रश्नों में भी परिवर्तन करने का अवसर प्रदान करता है।
3. **वस्तुनिश्ठ एवं विश्वसनीय सूचना** : इसके द्वारा प्राप्त तथ्य अधिक यथार्थ एवं विश्वसनीय होते हैं क्योंकि अनुसंधानकर्ता स्वयं उपस्थित होने के कारण सूचनादाताओं पर सामान्यतः नियंत्रण रहता है और वे गलत सूचनाएं नहीं दे पाते। यहां पर प्राप्त सूचनाओं का सत्यापन की संभावना भी रहती है।
4. **समय एवं धन में कम खर्चीली** : प्राथमिक तथ्यों के माध्यम से तथ्यों का संकलन करने पर समय एवं धन दोनों की बचत होती है। इसमें उत्तरदाता एवं अध्ययनकर्ता के बीच प्रत्यक्ष सम्पर्क होने के करण सरलता एवं सहजता से सही एवं यथार्थ सूचनाओं को कम समय में एकत्रित किया जा सकता है।

प्राथमिक स्रोत के दोश

तथ्य संकलन के प्राथमिक स्रोतों में निम्नलिखित दोष हैं–

1. **पक्षपातपूर्ण अध्ययन की सम्भावना** : अध्ययनकर्ता की इसमें प्रमुख भूमिका रहती है। यदि अध्ययनकर्ता अपने व्यक्तिगत पूर्वाग्रहों को नहीं छोड़ सकता या नियंत्रण पाने में असमर्थ रहता है तो अध्ययन में व्यक्तिगत पक्षपात की पूर्ण सम्भावना रहती है।
2. **वस्तुनिश्ठता में कमी** : प्राथमिक स्रोत द्वारा तथ्य संकलन में सबसे कमी यह है कि इसके अन्तर्गत अध्ययनकर्ता को स्वतंत्रता मिली होती है जो अध्ययन की वस्तुनिष्ठता को प्रभावित करती है क्योंकि अनुसंधानकर्ता तथ्यों को तोड़–मरोड़ कर अपनी सुविधानुसार उनका प्रयोग करता है।
3. **अतीत की घटनाओं के अध्ययन संभव नहीं** : इस स्रोत द्वारा वर्तमान से संबंधित तथ्यों का संकल नही सम्भव है क्योंकि इसमें जीवित व्यक्तियों से सूचनाओं को एकत्रित किया जाता है परंतु इसमें अतीत की घटनाओं का अध्ययन करना सम्भव नहीं है।

प्राथमिक स्रोत की इन कमियों के बावजूद भी यथार्थ एवं विश्वसनीय सूचनाओं के संकलन के लिए प्राथमिक स्रोत की अहम भूमिका का निर्वाह करते हैं।

12.6 द्वितीयक तथ्य एवं स्रोत

द्वितीयक स्रोत या प्रलेखनीय स्रोत वे होते है जो कि प्रकाशित या अप्रकाशित समस्त लिखित सामग्री का प्रतिनिधित्व करते हैं और जिसके माध्यम से अनुसंधानकर्ता को अपने विषय से संबंधित अनेक महत्वपूर्ण सूचनाएं आंकडें आदि प्राप्त हो जाते है। द्वितीयक तथ्य से अभिप्राय उन सभी सूचनाओं से है जो इस अध्ययन के पूर्व किसी अन्य व्यक्ति या संस्था द्वारा एकत्रित किये गये हों तथा ऐसे विवरणों अथवा प्रलेखों से है जो अध्ययनकर्ता के अतिरिक्त किसी अन्य व्यक्ति या संगठन द्वारा प्रस्तुत किये जाते गये होते है। पी0 वी0 यंग ने भी द्वितीयक स्रोत के संदर्भ में लिखा है कि '' द्वितीयक स्रोत ऐसे तथ्य प्रदान करने वाले स्रोत होते हैं जो किसी पूर्व स्तर पर प्राथमिक स्रोतों द्वारा आलेखित अथवा संकलित होते हैं तथा जिनका उपयोग करने वाला व्यक्ति उनका संकलन करने वाले व्यक्ति से भिन्न होता है।'' अतः सरल शब्दों में द्वितीयक सामग्री वह है जिसका संकलन एक व्यक्ति करता है और प्रयोग अन्य व्यक्जि भी करता है।किसी भी ऐतिहासिक अध्ययन में द्वितीयक सामग्री का महत्वपूर्ण स्थान होता है। इनकी प्रकृति बृहत होती है।

द्वितीयक सामगी के संकलन के स्रोत–

द्वितीयक तथ्यों को जिन माध्यमों द्वारा प्राप्त किया जा सकता है, वे द्वितीयक स्रोत कहलाते हैं। इनके द्वारा प्राथमिक तथ्यों का परीक्षण किया जाता है जिस से अध्ययन की दिशा का निर्धारण करने मे सहायक होता है। तथ्य संकलन के द्वितीयक स्रोतों को प्रमुखतः दो भागों में विभाजित किया जाता है –

1. व्यक्तिगत प्रलेख
2. सार्वजनिक प्रलेख

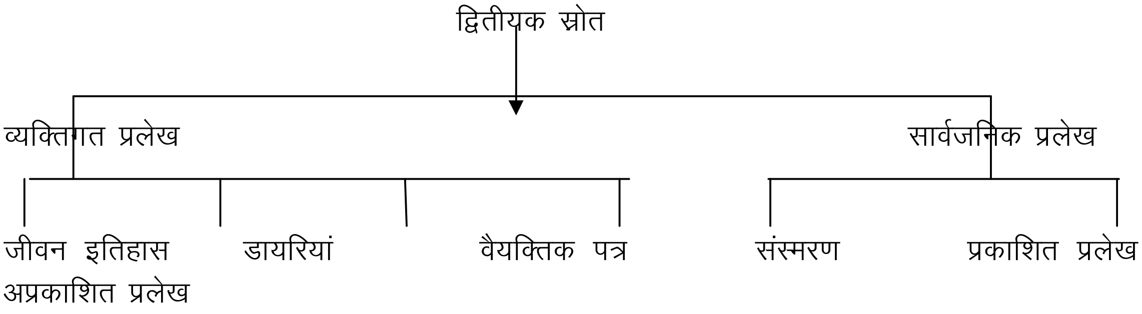

इस पर विचार करने से स्वतः ही स्पष्ट हो जायेगा कि शोधकर्ता किन–किन स्रोतों से द्वितीयक तथ्य एकत्रित कर अपने अध्ययन हेतु उपयोग में ले सकता है।

12.6.1 व्यक्तिगत प्रलेख

प्रत्यक्ष एवं लिखित सामाग्री के रूप में अभिलेखों का महत्वपूर्ण स्थान है। इसके अन्तर्गत व्यक्तिगत अथवा सामूहिक विकास सम्बन्धी जानकारी विद्यमान होती है व्यक्तिगत प्रलेख के अन्तर्गत वह सम्पूर्ण लिखित सामग्री या व्यक्ति अपने सम्पूर्ण जीवन में अपने स्वयं के बारे में या सामान्य घटनाओं की विशेष प्रकृति के अनुसार लिखित रूप में प्रस्तुत करता है। व्यक्तिगत प्रलेखों से अभिप्राय आत्मकथाओं, डायरियों, पत्रों तथा स्मरण आदि में लिखे गये कुछ लेखों से है इनके निम्न लक्षण हैं–

1. ये लिखित होते हैं।
2. इनकी रचना पूर्णतया लेखक की इच्छानुसार होती है।
3. इनमें लेखक अपने अनुभवों का वृतान्त करता है

अभिलेखों के अन्तर्गत विभिन्न कार्यालयों की कार्यवाही है। आयोगों की कार्यवाही, न्यायालयों के अभिलेख की सामाग्री प्रकाशित सामाग्री के अन्तर्गत केन्द्रीय तथा प्रांतीय सरकरों के प्रकाशासन अनुसंधान संस्थाओं के प्रकाशन, अभिलेख के प्रकार।

(i) **व्यक्तिगत पत्र** : भावपूर्ण अभिलेखों में व्यक्तिगत पत्रों का प्रथम स्थान है इनके माध्यम से व्यक्ति की आन्तरिक भावनाओं को सफलता से ज्ञात किया जा सकता है। पत्र वैयक्तिक होते हैं तथा अध्ययन के दृष्टिकोण से इतिहासकारों तथा लेखकों द्वारा लिखित पत्रों का विशेष उपयोग किया गया है। पत्र के माध्यम से व्यक्ति अपने विचारों को स्वतंत्र रूप से अभिव्यक्त करता हैं। अतः इसमें व्यक्ति अपने महत्वपूर्ण विचारों, भावनाओं, जीवन के अनुभव, घृणा, प्रेम, योजनाओं आदि को व्यक्त करता है। उदहारणार्थ भारत के स्वतंत्रता संग्राम के समय देश के बड़े–बड़े नेताओं के जो पत्रचार हुआ था आज उसके आधार पर अनेक महत्वपूर्ण राजनीतिक घटनाओं को समझ सकना सम्भव हुआ है। एक ओर व्यक्तिगत पत्र अध्ययन की दृष्टि से महत्वपूर्ण सामग्री है लेकिन व्यक्तिगत पत्रों को प्राप्त करना कठिन है क्योंकि यह व्यक्तिगत तथा गोपनीय होते हैं साथ ही इनको समझना तथा अर्थ ज्ञात करना एक कठिन प्रक्रिया है। पत्रों की कठिनाइयां किसी सीमा तक पैदा होती हैं पत्र दूसरों को प्रभावित करने की उद्देश्य से लिखे जाते हैं। इसलिए इनमें भी केवल घटनाओं का सत्य वृतान्त नही होता। पत्र की अर्न्तवस्तु लेखक तथा जिसे पत्र लिखा जा रहा उसके बीच के संबंध पर निर्भर करता है। इनके द्वारा व्यक्ति की उन सभी गुप्त सूचनाओं को प्राप्त करते हैं जिन्हें वह स्वयं किसी के समक्ष प्रकट नही करता, किन्तु शोध कार्य की दृष्टि से वे अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं।

(ii) **डायरियां** : डायरियां एक ऐसा व्यक्तिगत प्रलेख है जिसमें एक व्यक्ति अपने दिन प्रतिदिन की घटनाओं को डायरी के रूप में लिखता है इसके अन्तर्गत वह सभी प्रकार के अनुभुतियां या कटु अनुभवों एवं व्यवहारों को स्पष्ट रूप से लिखता है। **जॉन मेज ने लिखा है ''** डायरियां सबसे ज्यादा रहस्योद्घाटन करने वाली होती हैं क्योंकि एक व्यक्ति को इनका जनता के समाने प्रदर्शित होने का भय नहीं होता एवं दूसरी और घटनाओं एवं क्रियाओं के घटित एवं संपन्न होने क समय उनको बहुत स्पष्ट रूप में लिख दिया जाता है।'' डायरी व्यक्ति की पूर्णतः गोपनीय दस्तावेज है जिसमें बिना संकोच के नितान्त गोपनीय घटनाओं तथा महत्वपूर्ण तथ्यों को ज्यों का त्यों लिखता है। यही कारण है डायरियां अध्ययन कार्य में काफी सहायक सिद्ध होती हैं। डायरियों द्वारा वास्तविक सूचनाएं मिल जाती हैं क्योंकि इनमें सामान्यतः घटनाओं को यर्थाथ रूप से प्रस्तुत किया जाता है। डायरी गोपनीय एवं विश्वसनीय तथ्यों को प्राप्त करने का एक महत्वपूर्ण स्रोत है। सामाजिक अनुसंधान में डायरी की कुछ सीमाएं भी हैं व्यक्ति तनाव तथा संघर्ष के समय पर घटनाओं को बहुत विस्तार से प्रस्तुत करता है परन्तु कई महीनों के शान्तिपूर्ण एवं सुखद क्षणों को इनमें उचित मात्रा में स्थान नहीं देता। इसमें क्रमबद्ध विवरण नहीं मिलता। यदि डायरी को प्रकाशित करने की लेखक की अप्रकट इच्छा भी है तो उसमें अकल्पनाशीलता एवं घटनाओं को बढ़ा चढ़ा कर लिखने का भाव आ जाता है। कभी–कभी डायरी प्रकाशनार्थ के उद्देश्य से भी लिखी जाती है और तब उनमें भी प्रभाव उत्पन्न करने के प्रयत्न के कारण विकृति आ जाती है। ऐसे में डायरियों के माध्यम से प्राप्त तथ्यों के आधार पर वैज्ञानिक निष्कर्ष निकालना कठिन होता है।

(iii) **जीवन इतिहास** : इनका प्रयोग ऐतिहासिक अनुसंधानकर्ताओं द्वारा किया जाता है जीवन इतिहास किसी व्यक्ति द्वारा स्वयं लिखा जाता है या किसी व्यक्ति के जीवन सम्बन्धी घटनाओं के बारे में अन्य व्यक्ति द्वारा लिखा जाता है। जान मेज इसे परिभाषित करते हुए स्पष्ट करते है कि '' वास्तविक अर्थ में जीवन इतिहास शब्द का तात्पर्य किसी व्यापक आत्मकथा से होता है। परन्तु सामान्य अर्थों में इसका प्रयोग किसी भी जीवन संबंधी सामग्री के लिए किया जा सकता है।'' इसमें किसी महापुरूष के जीवन इतिहास के माध्यम से किसी विशेष समय की सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक तथा धार्मिक

घटनाओं को समझना भी सम्भव हो जाता है। जीवन इतिहासों से एक विशेष काल की सामाजिक परिस्थितियों एवं समस्याओं को भली प्रकार से समझा जा सकता है। सामाजिक अनुसंधान में जीवन इतिहास के अनेक प्रकारों का प्रयोग किया जाता है।

1. **स्वतः लिखित जावन इतिहास**– यह व्यक्ति द्वारा स्वेच्छा से अपने बारे में लिखी लिखी जाती है।
2. **प्रेरित जीवन इतिहास**– आत्मकथा के रूप में यह अभिलेख व्यक्ति किसी अन्य व्यक्ति या किसी सरकारी अथवाा गैर सरकारी संगठन प्रेरेणा के फलस्वरूप प्रस्तुत किये जाते है। इसमें व्यक्ति अपने बारे में लिखता है।
3. **संकलित जीवन इतिहास**– इसका तात्पर्य एक ऐसे जीवन इतिहास से है जिसकी रचना एक व्यक्ति द्वारा किसी अन्य महापुरूष के जीवन से संबंधित महत्वपूर्ण घटनाओं अथवा विवरणों को लेकर की जाती है।

जीवन इतिहास व्यक्ति के जीवन की विशिष्ट घटनाओं का संकलन मात्र नहीं होता है, अपितु यह उस व्यक्ति के काल के सभी सामाजिक पहलुओं को समझाने में मदद करता है। इसके साथ उस समय की सामाजिक समस्या के कारण एवं समाधान को जानकर वर्तमान परिस्थितियों को समझने में सहायक सिद्ध होते हैं। जीवन इतिहास के इस महत्व के पश्चात भी सामाजिक अध्ययनों में इनके उपयोग की कुछ सीमायें भी हैं। सच तो यह है कि आत्मकथाएं बहुदा प्रकाशन हेतु लिखी जाती हैं और उनका उद्देश्य प्रचार, सुधार या अपने कार्यों का औचित्य साधन हो सकता है और इससे विकृति आती है। दूसरे आत्मकथाओं में बहुत सी पुरानी घटनाएं होती हैं और जिस समय लेखक द्वारा लिखी जाती हैं हो सकता है कि लेखक को उनके विषय में ठीक से याद न हो लेखक अपने लम्बे जीवन में से कुछ घटनाओं का चयन करता है यह चुनाव उसके विचारों से प्रभावित होता है इन सब कारणों से जीवन इतिहास से प्राप्त ऐतिहासिक जानकारी विकृत हो जाने की सम्भावना बनी रहती है।

(iv) **संस्मरण** : संस्मरण व्यक्ति द्वारास्वयं के जीवन के रोमांचक अनुभव, यात्रा आदि पर लिखे जाते हैं। ये संस्मरण सामाजिक अनुसंधान में तथ्यों को संकलित करने के महत्वपूर्ण प्रति होते हैं। इतिहास में ऐसे कई उदाहरण मिलते हैं जहॉ संस्मरण अध्ययन के लिये आधारभूत रहे हैं। कोलम्बस, फाहियान, जैसे व्यक्तियों के लिखित सस्मरणों से अत्यधिक उपयोगी सूचनाओं को प्राप्त किया जा सका। ब्रिटिश काल में अनेक अधिकारियों द्वारा लिखे जाने वाले जनपद संस्मरण ऐतिहासिक पद्धति के आधार पर लिखे जाने के पश्चात भी आज तथ्य संकलन का महत्वपूर्ण स्रोत है।

इनके माध्यम से लोगों के रहन सहन, रीति रिवाजों, धर्म, संस्कृति एवं सम्पूर्ण जीवन विधि आदि को समझने में मदद प्राप्त होती है संस्मरण में कुछ दोष भी व्याप्त हैं वह यह है कि इनमें क्रमबद्धता एवं वस्तुनिष्ठता का अभाव पाया जाता है जिससे यर्थाथ निष्कर्ष प्राप्त करने में कठिनाई होती है इसके पश्चात भी संस्मरण जीवन संकलन में द्वैतीयक प्रति के रूप में उपयोगी साबित होते हैं।

बोध प्रश्न–4

(i)- जीवन इतिहास से आप क्या समझते हैं, पॉंच पंक्तियों में संक्षिप्त उत्तर दीजिए?

....
....
....
....

....

....

12.6.2 सार्वजनिक प्रलेख

सार्वजनिक प्रलेखों के अन्तर्गत ऐसी समस्त प्रकाशित तथा अप्रकाशित सामाग्री सम्मिलित की जाती है जिसका संकलन किसी सरकारी तथा गैरसरकारी संस्था द्वारा सार्वजनिक उपयोग के लिए किया जाता है। सार्वजनिक प्रेलख तथ्यों के संकलन का एक प्रमुख द्वितीय स्रोत है।

(i) **प्रकाशित प्रलेख** : इसके अन्तर्गत वे प्रलेख आते हैं जिनका प्रकाशन सार्वजनिक उपयोग के लिए किया जाता है अनेक सरकारी तथा गैर सरकारी संगठन जब प्राथमिक रूप से तथ्यों का संकलन करते हैं तथा अन्त में उन्हें जनसामान्य के उपयोग हेतु प्रकाशित किया जाता है। जब इन तथ्यों का अन्य अनुसंधानकर्ता द्वारा उपयोग किया जाता है तो उनके लिये ये तथ्य प्रकाशित प्रलेखों के रूप में तथ्य संकलन का द्वितीयक स्रोत बन जाते हैं। उदाहरण के लिए भारतीय योजना आयोग, लोक सेवा आयोग द्वारा प्रस्तुत प्रतिवंदन महत्वपूण्र स्रोत हैं। वर्तमान में अनेक गैर–सरकारी /सरकारी संस्थाओं द्वारा शोध कार्य किये जा रहा है इन शोध कार्यों का प्रकाशन भी सार्वजनिक प्रलेख का अंग है, ये प्रकाशित प्रलेख सामाजिके अनुसंधान में सहायक सिद्ध होते हैं। साथ ही परिकल्पना के निर्माण में सहायक होते हैं।

(ii) **अप्रकाशित प्रलेख** : अनेक शोध संस्थानों, अर्धसरकारी संस्थानों और सरकारी संस्थानों, सार्वजनिक प्रतिष्ठानों, विश्वविद्यालयों, महाविद्यालयों आदि में योग्य एवं अनुभवी व्यक्तियों द्वारा एकत्र बहुत से आंकड़े अप्रकाशित रह जाते हैं। यदि ये आंकड़े उपलब्ध हो जाये तो इन्हें द्वितीयक आंकड़ों के रूप में प्रयोग किया जा सकता है। कुछ सरकारी तथा गैरसरकारी संस्थाओं द्वारा एकत्रित कुछ सामग्री उनकी गोपनीयता भी बनाये रखने हेतु प्रकाशित नहीं करायी जाती, तथा कुछ सामग्री आर्थिक या अन्य कारणों से प्रकाशित नहीं हो पाती। रक्षा मंत्रालय से सम्बन्धित दस्तावेजों की गोपनीयता बनाये रखने के उद्देश्य ही उनका प्रकाशन नहीं कराया जाता। अर्थात इसके अन्तर्गत ऐसे सभी प्रलेख आते हैं जो सार्वजनिक होते हैं पर प्रकाशित नहीं होते हैं या नहीं हो पाते। चूंकि प्रकाशित न होने के कारण सहजता से प्राप्त नहीं होते।

अप्रकाशित प्रलेख के अन्तर्गत द्वितीयक सामग्री के निम्नलिखित स्रोत आते हैं–

1. **अभिलेख** : अप्रकाशित प्रलेख में अभिलेख महत्वपूर्ण है। अभिलेख वे सूचनाएं हैं जो सरकारी एवं गैरसरकारी संस्थाओं द्वारा प्रशासनिक कार्य के लिए संकलन की जाती हैं। ये अभिलेख किसी भी अनुसंधान के लिए महत्वपूर्ण हो सकते हैं।
2. **पाण्डुलिपियां** : कई बार स्थानीय समाज सुधारक, नेता, महापुरूष आदि अत्यधिक उपयोगी गहन सूचनाओं का समावेश करते हुए पाण्डुलिपियां तैयार करते हैं जिनका प्रकाशन कारणवश नहीं हो पाता है, जिन्हें सार्वजनिक उपयोग के लिए संग्रहालयों में रख दिया जाता है।
3. **अनुसंधानकर्ता के प्रतिवेदन** : अनेक शोधकर्ता अनुसंधान कार्यों के आधार पर महत्वपूर्ण प्रतिवेदन तैयार कर लेते हैं। अनुसंधान लेख तो लिख लेते हैं परंतु सभी शोध कार्य पाण्डुलिपियों की तरह प्रकाशित नहीं होते। शोध विद्यार्थी द्वारा प्रस्तुत प्रतिवेदन इस संदर्भ में महत्वपूर्ण है।
4. लोकगीत तथा लोक गाथाएंः अप्रकाशित लोक गीत, लोक संस्कृति, शिलालेख, लोकगाथा में द्वितीयक तथ्य संकलन क महत्वपूर्ण प्रति हैं। मानवशास्त्रियों द्वारा अनेक अध्ययन में इनका काफी उपयोग किया जाता है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि द्वितीयक प्रति हर रूप में अध्ययन के लिए महत्वपूर्ण होते हैं, लेकिन इनका उपयोग सावधानीपूर्वक किया जाना चाहिए।

12.7 द्वितीयक स्रोत के गुण

तथ्य संकलन के द्वितीयक स्रोतों के गुण इस प्रकार हैं

1. अध्ययन प्रारम्भ करने से अध्ययन विषय का ज्ञान, परिकल्पना निर्माण, मार्गदर्शन, प्राथमिक तथ्यों के संकलन के पश्चात विष्लेशणआदि में द्वितीयक सामग्री महत्वपूर्ण होती है।

2. द्वितीयक सामग्री की सहायता से किसी भी समाज, उसकी संरचना के इतिहास का को समझा जा सकता है।

3. द्वितीयक तथ्य तटस्थ और पक्षपातरहित होते हैं। द्वितीयक तथ्य जिस रूप में संकलित किये जाते हैं उनका उसी रूप में उपयोग किया जा सकता है।

4. गोपनीय सूचनाओं का संकलन करने के लिए भी द्वितीयक सामग्री का महत्व बहुत अधिक है जिन सूचनाओं को व्यक्ति कभी भी दूसरों को देना नहीं चाहता उन्हें सुरक्षित छोड़ जाता है जो बाद में एक विशेष अध्ययन के अन्तर्गत ऐसी सूचनाओं के आधार पर अत्यधिक उपयोगी निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं।

द्वितीयक स्रोत के दोष

तथ्य संकलन के द्वितीयक स्रोतों में निम्नलिखित दोष इस प्रकार हैं–

1. द्वितीयक स्रोत के आधार पर वैज्ञानिक सामान्यीकरण निकालना काफी कठिन होता है क्योंकि व्यक्ति, पत्र, डायरी, संस्मरण आदि लिखते समय अत्यधिक भावुक होने के कारण बढ़ा चढ़ा कर लिख देता है कई बार संस्मरण आदि में कल्पनाओं का उपयोग होता है।

2. द्वितीयक तथ्य अतीत से संबंधित होने के कारण इनकी पुनः परीक्षा करना संभव नहीं है।

3. द्वितीयक तथ्यों द्वारा प्राप्त तथ्यों से वैज्ञानिक निष्कर्ष दे पाना कठिन होता है क्योंकि द्वितीयक तथ्य क्रमबद्ध नहीं होते।

4. द्वितीयक स्रोतों में सार्वभौमिकता का अभाव होता है क्योंकि ऐतिहासिक प्रलेखों का लेखन इतिहासकार अपने दृष्टिकोण से करता है।

द्वितीयक स्रोत प्राथमिक स्रोत का स्थान तो नहीं ले सकती परंतु प्राथमिक स्रोत के रूप में अवश्य काम कर सकती है यह प्राथमिक स्रोत से प्राप्त तथ्यों के सत्यापन में योग दे सकती है।

बोध प्रश्न–5

(i)- द्वितीयक स्रोत के तीन गुणों और दोषों को बताइए।

....
....
....
....
....

12.8 प्राथमिक स्रोत तथा द्वितीयक स्रोत में अन्तर

अनुसूची और प्रश्नावली दोनों में साक्षात्कार एवं व्यक्तिगत सम्पर्क का समान महत्व है। यद्यपि प्रश्नावली में यह सम्पर्क दूर का भी विद्यमान हो सकता है जो कि अनुसूची में सम्भव नहीं तद्यपि बाह्य तौर पर दोनों के मध्य कोई स्पष्ट भिन्नता परिलक्षित होना असंभव सी प्रतीत होती है।

क्र.सं.	प्राथमिक स्रोत	द्वितीयक स्रोत
1	प्राथमिक तथ्य अधिक मौलिक होते है क्योंकि इनका संकलन स्वयं भोधकर्ता के द्वारा अध्ययन की आवयकता के अनुसार किया जाता है।	द्वितीयक तथ्यों में मौलिकता का सापेक्ष रूप से अभाव पाया जाता है।
2	अनुसंधानकर्ता द्वारा स्वयं एकत्र किये जाते है।	ये अन्य के द्वारा एकत्रित एवं उपयोग किये जाते हैं।
3	प्राथमिक स्रोतों का उपयोग सीमित अध्ययन क्षेत्र में तथ्यों के संग्रह के लिए किया जाता है	द्वितीयक स्रोतों का उपयोग दूर–दूर फैले या विस्तृत क्षेत्र में फैले हुए बहुत बड़ी संख्या वाले उत्तरदाताओं से सूचनाएं एकत्रित की जाती है
4	प्राथमिक तथ्य क्षेत्रीय कार्य के आधार पर प्रथम बार एकत्रित किये जाने के कारण नवीन होते है।	द्वितीयक तथ्य पूर्व में किये गये अन्वेशणों के अंतर्गत संकलित किये जाने के कारण पुराने होते हैं।
5	ये अधिक विवसनीय होते है क्योंकि इन्हें भोधकर्ता अपनी प्राक्कल्पनाओं के परीक्षण हेतु स्वयं अपने निदन में संकलित करता है।	ये कम विवसनीय होते हैं।
6	यह एक महँगी प्रविधि है। इसके उपयोग में समय और धन दोनो अधिक लगते है।	समय और धन दोनो कम लगते है।
7	प्राथमिक स्रोतों के अर्न्तगत उत्तरदाता और अध्ययनकर्त्ता के बीच प्रत्यक्ष सम्पर्क होने के कारण गोपनीय सूचनाओं का संकलन कर सकना बहुत कठिन होता है।	द्वितीयक स्रोतों के द्वारा अतः वह गोपनीय सूचनाएं भी दे सकते है।

बोध प्रश्न–6

(i)- प्राथमिक स्रोत तथा द्वितीयक स्रोत में अन्तर में स्पष्ट कीजिए?

....

....

....

....

....

....

12.9 सारांश

सामाजिक अनुसंधान में प्राथमिक एवं द्वैतीयक स्रोतो अपना अलग–अलग महत्व होता है। प्राथमिक स्रोतों द्वारा प्राथमिक सामग्री संकलित की जाती है, जबकि द्वितीयक स्रोतों द्वारा ऐतिहासिक सामग्री का संकलन किया जाता है।

12.10 परिभाषिक शब्दावली

अनुसूचीः प्रश्नो की सूची है जिसे अनुसंधानकर्ता स्वयं उत्तरदाताओं के पास ले जाकर भरता है।
प्रश्नावलीः प्रश्नो की सूची है जिसे डाक द्वारा सूचनादाता के पास भेजे जाती है तथा सूचनादाता इस पर प्रश्नों के उत्तर देकर अनुसन्धानकर्ता को वापस दे देता है।
अवलोकनः अवलोकन तथ्य संकलन की एक विधि है, जिसमें दृष्टि आधारित सामग्री संग्रह होता है।

12.11 बोध–प्रश्नों के उत्तर

बोध– प्रश्न 1

विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर प्राथमिक तथ्य शीर्षक के अर्न्तगत दिये गये विवरण में से लिखना है।

बोध–प्रश्न 2

विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर प्रत्यक्ष प्राथमिक स्रोत शीर्षक के अर्न्तगत दिये गये विवरण में से लिखना है।

बोध–प्रश्न 3

विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर अप्रत्यक्ष प्राथमिक स्रोत शीर्षक के अर्न्तगत दिये गये विवरण में से लिखना है।

बोध–प्रश्न 4

विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर व्यक्तिगत प्रलेख के आधार शीर्षक के अर्न्तगत दिये गये विवरण में से लिखना है।

बोध–प्रश्न 5

विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर द्वितीयक स्रोत के गुण और दोष शीर्षक के अर्न्तगत दिये गये विवरण में से लिखना है।

बोध–प्रश्न 6

विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर प्राथमिक स्रोत तथा द्वितीयक स्रोत में अन्तर के आधार शीर्षक के अर्न्तगत दिये गये विवरण में से लिखना है।

12.12 संदर्भ ग्रंथ सूची

त्रिवेदी व शुक्ला. **रिसर्च मैथ्डोलॉजी.** कालेज बुक डिपो .जयपुर.
राय, पारस नाथ. **2004. अनुसंधान परिचय.** लक्ष्मी नारायण अग्रवाल. आागरा.

गुडे एंड हाट. 1983. **मैथ्डस इन सोशियल रिसर्च**. मैकग्रू हिल इंटरनेशनल. ऑकलैण्ड.

ज्योति वर्मा. 2007. सामाजिक सर्वेक्षण. डिस्कवरी पब्लिशिंग हाउस. नई दिल्ली।

12.13 सहायक उपयोगी पाठ्य साम्रगी

राम आहूजा. 2005. **सामाजिक सर्वेक्षण एवं अनुसंधान**. रावत पब्लिकेशन्स. दिल्ली.

जैन एम. बी. **रिसर्च मैथ्डोलॉजी**. रिसर्च पब्लिकेशन. जयपुर।

Singh, K. (1983**).** Techinques of method of Social Survey Research and Statistics, Prakashan Kendra, Lucknow.
Kothari, C.R. (2009). *Research Methodology Methods and Techniques*. 2nd Revised ed., New Delhi: New Age International (P) Limited, Publishers.

Young P.V. (1960). Scientific Social Surveys and Research. Asia Publishing House. Bombay.

12.14 निबंधात्मक प्रश्न

1– प्राथमिक तथ्य किसे कहते हैं ? प्राथमिक तथ्य के संकलन के प्रमुख स्रोतों की विवेचना कीजिए।

2– द्वितीयक तथ्य का उल्लेख करतें हुए द्वितीयक सामग्री के संकलन के स्रोतों का वर्णन कीजिए।

3– द्वितीयक स्रोत का उल्लेख करतें हुए द्वितीयक स्रोत के गुण और दोषों का वर्णन कीजिए।

4– प्राथमिक स्रोत तथा द्वितीयक स्रोत में अन्तर स्पष्ट कीजिए।

इकाई 13 केन्द्रित समूह साक्षात्कार

Focussed Group Discussion

13.0 उद्देश्य

13.1 प्रस्तावना

13.2 केन्दित समूह साक्षात्कार का अर्थ

13.3 केन्दित समूह साक्षात्कार के चरण

13.4 केन्दित समूह साक्षात्कार की विशेषता

13.5 केन्दित समूह साक्षात्कार के उद्देश्य

13.6 केन्दित समूह साक्षात्कार के लाभ

13.7 केन्द्रीय समूह साक्षात्कार की सीमाएं

13.8 सारांश

13.9 परिभाषिक शब्दावली

13.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

13.11 बोध–प्रश्नों के उत्तर

13.12 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री

13.13 निबंधात्मक प्रश्न

13.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आपके द्वारा संभव होगा;

- केन्द्रित समूह साक्षात्कार के अर्थ को समझ पाना,
- केन्द्रित समूह साक्षात्कार के चरण को समझ पाना,
- केन्द्रित समूह साक्षात्कारकी विशेषता को समझ पाना,
- केन्द्रित समूह साक्षात्कार के उद्देश्य को समझ पाना,
- केन्द्रित समूह साक्षात्कार के लाभ को समझ पाना,
- केन्द्रित समूह साक्षात्कार की सीमाओं को बताना।

13.1 प्रस्तावना

इस प्रकार के साक्षात्कार का प्रयोग सामान्यतः किसी सामाजिक घटना या परिस्थिति, फिल्म, रेडियो, या टेलीविजन प्रोग्राम का सूचनादाताओं पर प्रभाव का अध्ययन करने के लिए किया जाता है। संचार अनुसंधान में इसका अधिकतर प्रयोग किया जाता है। उदाहरण के लिए किसी रेडियो प्रोग्राम के सुनने अथवा किसी फिल्म को देखने के पश्चात उसके प्रभाव को जानने के लिए स्रोताओं एवं दर्शकों का साक्षात्कार लिया जाता है। चूंकि इसमें किसी विशेष घटना, अवस्था या परिस्थिति के प्रभाव पर ही साक्षात्कार केन्द्रित होता है फिर सूचनादाताओं से उनका वर्णन करने को कहा जाता है। अलग अलग लोग उसी अनुभव का अलग अलग वर्णन करते हैं और इस प्रकार कुछ परिकल्पनाओं का निर्माण करता है।

13.2 केन्द्रित समूह साक्षात्कार का अर्थ

केन्द्रिया समूह साक्षात्कार तथ्य संकलन की एक प्रविधि है जिसे माध्यम से वर्णनात्मक अध्ययनों का गहन अध्ययन कर गुणात्मक तथ्यों को एकत्रित करने के लिए उपयोग में लाया जाता है। जैसे वैयक्तिक अध्ययन तथा नृजाति वर्णन आदि। इस प्रकार के साक्षात्कार का उपयोग सर्वप्रथम मर्टन तथा उनकी सहयोगी पेट्रीसिया केण्डाल ने 1946 में व्यक्तियों पर सार्वजनिक सन्देशवाहन के साधनों जैसे रेडियो, टी0वी0, समाचार पत्र आदि के सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक प्रभाव मापने के लिए गया इसका प्रधान उद्देश्य परिकल्पना के उस औचित्य का परीक्षण करना होता है जिसकी प्रतिस्थापना मानव व्यवहार की पूर्व विश्लेषित अवस्था के आधार पर हुई हो। इसके अन्तर्गत प्रेरणा के प्रति तथा अन्य गहन तथ्यों पर ध्यान केन्द्रित होता है। किस मूल प्रेरणा ने किसी व्यक्ति को एक विशेष प्रकार का व्यवहार करने के लिए प्रेरित किया।

ये अन्य साक्षात्कार से निम्नवत भिन्न होता है।

1. उन पर प्रयोग होता है जो परिस्थिति विशेष से पूर्व संबंध रखते हैं।
2. उन्ही स्थितियों से संबंधित है जिका पूर्व विष्लेशणप्राप्त है।
3. साक्षात्कार निर्देशिका से सम्पन्न कराया जाता है।
4. इसका संबंध आन्तरिक अनुभूतियों से होता है। इसके आधार पर नवीन परिकल्पनाओं का निर्माण करता है, साथ ही शोधकर्ता अपनी परिकल्पना की वैधता की परीक्षा करता है।

केन्द्रित साक्षात्कार वह है जो एक विशेष विषय पर केन्द्रित होता है तथा इसमें सभी घटना, परिस्थिति, समस्या आदि उत्तरदाताओं को एक सा अनुभव दिया जाता है। यह साक्षात्कार उत्तरदाओं के वास्तविक अनुभवों के प्रभाव पर केन्द्रित रहता है साक्षात्कार की प्रक्रिया में वह अध्ययन विषय से संबन्धित उन पक्षों को ध्यान में रखते हुए किसी भी क्रम में और किसी भी ढ़ंग से प्रश्न करने के लिए स्वतंत्र होता है। ऐसे साक्षात्कार में उत्तरदाता को उपने विचारों को एक विशेष ढ़ंग से व्यक्त करने की पूरी स्वतंत्रता होती है लेकिन प्रश्नकर्ता का प्रयत्न यह रहता है कि उत्तरदाता अध्ययनरत विषय पर केन्द्रित रहते हुए ही प्रश्नों का उत्तर दें। इस दृष्टिकोण से इसका उद्देश्य उत्तरदाताओं के अनुभवों के सन्दर्भ में परिकल्पनाओं को विकसित करना तथा कुछ नवीन पहलुओं का समावेश करने का अवसर प्राप्त करना होता है। उसी से संबन्धित प्रश्न पूछे जाते हैं।

उदाहरणार्थ विपणन के क्षेत्र में केन्द्रीय समूह नये उत्पादों के पृष्ठपोषण से संबंधी जानकारी प्राप्त करने के साथ–साथ अन्य विभिन्न विषयों हेतु एक महत्वपूर्ण साधन के रूप में प्रयुक्त होते हैं। जब कोई संगठन अपने सम्पूर्ण विपणन नेतृत्व हेतु दिशानिर्देश तैयार कर रहे होते हैं तो केन्द्रीय समूह मुख्यतया उत्पाद या सैद्धांतिक विकास के प्राथमिक चरण में उपयोगी सिद्ध होते हैं। विशिष्टतया केन्द्रीय समूह किसी भी कम्पनी को उसके विकास, व्यय, किसी नये उत्पाद की बाजार में जांच के संदर्भ में दृष्टिकोण अथवा ग्राहक या आम जनता के सामने उस उत्पाद के जाने से पूर्व सलाह देता है तथा उसे बाजार में उतारने या ना उतारने हेतु अपनी अनुमति प्रदान करता है।

केन्द्रीय समूह के विचार विर्मश हेतु मार्गदर्शन के लिए अनुसंधानकर्ता एक दिशा निर्देशिका साक्षात्कार प्रारम्भ करने से पूर्व ही तैयार कर लेता है। सामान्यतया यह विचार विर्मश किसी वस्तु या उत्पाद श्रेणी की संपूर्ण अवधारणाओं से प्रारम्भ होता है तथा अपनी सम्पूर्णता तक पहुचते पहुचते एक निश्चित धारणा को प्राप्त होता है। केन्द्रीय समूह में सूचनादाताओं का चयन जनांकिकी, समान मनोवृत्ति तथा समान विचार व व्यवहार वाले व्यक्तियों के आधार पर किया जाता है।

अतः केन्द्रीय समूह एक साक्षात्कार है जो छोटे छोटे उत्तरदायी समूहों में प्रशिक्षित मध्यस्थों द्वारा सम्पन्न कराया जाता है। यह साक्षात्कार एक अनौपचारिक तथा सामान्य तरीके से सम्पन्न होता है जहां हर सूचनादाता किसी भी पक्ष पर अपने विचार व्यक्त करने हेतु स्वतन्त्र होता है।

बोध–प्रश्न 1

(i) केन्द्रित समूह साक्षात्कार के अर्थ को संक्षिप्त रूप में उल्लेख कीजिए ?

....
....
....
....
....
....
....

13.3 केन्द्रित समूह साक्षात्कार के चरण

मर्टन के अनुसार इस साक्षात्कार को निम्नलिखित चरणों में सम्पन्न कराया जाता है–

1. **प्रथम चरण** : प्रथम चरण के अन्तर्गत उन व्यक्तियों का साक्षात्कार के लिए चयनित किया जाता है जिन्हें किसी विशिष्ट परिस्थिति या समस्या से ग्रसित देखा जाता है अर्थात विशेष परिस्थिति से पूर्व सम्बंध रखते हों। इसके अन्तर्गत व्यक्तियों से सामाजिक परिस्थितियों में आने वाले बदलाव का जांच करना होता है।
2. **दूसरा चरण** : प्रायेगिक कारक के प्रभाव को लेकर कुछ उपकल्पनाएं बना लेना तथा उन उपकल्पनाओं की जांच के लिए साक्षात्कार के लिए कुछ निर्दिष्ट प्रश्न तैयार किया जाना, साक्षात्कार करने से पहले ही काल्पनिक स्तर पर वार्तालाप का आधार इस प्रकार तैयार किया जाता है कि परिकल्पनाओं के सत्यापन में सहायक सिद्ध हो सके।
3. **तीसरा चरण** : इसका प्रयोग साक्षात्कार निर्देशिका के आधार पर होता है अर्थात साक्षात्कार निर्देशिका की रचना करने के पश्चात उसी अनुरूप में वार्तालाप को आगे बढ़ाया जाता है फिर संबन्धित प्रश्नों के बार–बार घुमा फिरा कर उसी समस्या पर लाया जाता है जिसके बारे में विस्तार से जानना है। यह अन्वेषक के प्रमुख क्षेत्रों पर परिकल्पनाओं के दिग्दर्शन करता है।
4. **चतुर्थ चरण** : इस चरण के अन्तर्गत संकेन्द्रित साक्षात्कार को आगे बढ़ाया जाता है और समाप्त भी होता है। इसमें विशिष्ट परिस्थितियों को प्रस्तुत करके प्रश्न पूछे जाते हैं। नवीन परिवर्तनों के अन्य कारण भी पूछे जाते हैं। प्राप्त उत्तरों का विष्लेशणकिया जाता है तथा जिस चर के मूल्य पर और जानकारी प्राप्त करनी है उसे भी उत्तरदाता से पूछा जाता है। यह अध्ययन विशेष एवं निश्चित स्थितियों के संबंध में आत्मनिष्ठ अनुभवों , आत्मकृतियों तथा भावनात्मक प्रति उत्तरों पर केन्द्रित होता है।

बोध–प्रश्न 2

(i) केन्द्रित समूह साक्षात्कार के चरण का संक्षिप्त रूप में उल्लेख कीजिए ?

....
....
....
....
....
....

13.4 केन्दित समूह साक्षात्कार की विशेशता :

1. संकेन्द्रित साक्षात्कार की यह विशेषता है कि इसके द्वारा वास्तविक परिस्थितियों का अनुभव करने वाले व्यक्तियों की व्यक्तिगत प्रक्रियाओं विशिष्ट संवेगों तथा उत्तेजनाओं से उठने वाले निश्चित मानसिक साहचर्यी इत्यादि का पता लगाया जा सकता है क्योंकि इस प्रकार के साक्षात्कार में उत्तरदाता इन बातों को छिपा नहीं पाता क्योंकि साक्षात्कारकर्ता ने परिस्थिति का पूर्व विष्लेशणकरके यह ज्ञात किया होता है कि उत्तरदाता को क्या–क्या बतलाना चाहिए इसलिए यदि उत्तरदाता के उल्टे सीधे उत्तरों को साक्षात्कारकर्ता तुरन्त पकड़ लेता है।
2. संकेन्द्रित साक्षात्कार इस प्रकार की विशेषता के कारण तनाव की परिस्थितियों का अध्ययन करने में विशेष रूप से उपयुक्त सिद्ध होता है।
3. यह साक्षात्कार केवल उन्ही व्यक्तियों का लिया जाता है जो उस विषय विशेष से संबंधित रह चुके हैं।
4. साक्षात्कार पथ प्रदर्शिका का सहारा साक्षात्कार हेतु लिया जाता है। जिसमें विषय से संबंधित ज्ञात की जाने वाली बातों का उल्लेख किया जाता है।
5. उस प्रकार का साक्षात्कार एक विशिष्ट परिस्थिति के प्रति सूचनादाता के अनुभवों, मनोवृत्तियों एवं भावनाओं को जानने के लिये किया जाता है।
6. इसमें सूचनादाता अपने विचार व्यक्त करने हेतु स्वतन्त्र होता है इसमें साक्षात्कारकर्ता सूचनादाताओं के उत्तरों को प्रभावित नही करता
7. इसमें घटना का पूर्व विष्लेशणकर प्रश्नों की एक सूची तैयार कर ली जाती है।
8. संकेन्द्रित साक्षात्कार इस प्रकार की विशेषता के कारण तनाव की परिस्थितियों का अध्ययन करने में विशेष रूप से उपयुक्त सिद्ध होता है।
9. मानव व्यवहार के संबध में कुछ परिकल्पनाओं की प्रमाणिकता की जांच के लिए केन्द्रित साक्षात्कार का प्रयोग किया जाता है।
10. संकेन्द्रित साक्षात्कार में प्रश्न एवं प्रश्न पूछने के ढ़ंग में लचीलापन होता है।
11. इसमें बंद वाले प्रश्नों के स्थान पर खुले प्रश्न साक्षात्कारकर्ता से पूछे जाते हैं जिनमें उत्तरदाता जो भी महसूस करता, उत्तर दे सकता है।

बोध–प्रश्न 3

(i) केन्द्रित समूह साक्षात्कार की किन्ही चार विशेषताओं को लिखिए ?

....
....
....
....

....

....

13.5 केन्दित समूह साक्षात्कार के उद्देश्य

मर्टन ने 1968 में संकेन्द्रित साक्षात्कार के उद्देश्य प्रतिपादित किए।

1. इसका प्रथम उद्देश्य यह है कि प्रचार माध्यमों तथा उपकरणों के प्रभावी पहलुओं को निर्धारित करने एवं जानने का प्रयास किया जाता है। श्रोतागण या दर्शकगण द्वारा देखे गये अनेक प्रकार के प्रचार माध्यमों से विज्ञापन के प्रति उनके विचारों को जानने का प्रयास रहता है।
2. दर्शकगणों तथा श्रोतागणों को उन प्रतिक्रियाओं के बहुआयामी पक्षों की प्रकृति का निर्धारण करना।
3. श्रोतागणों तथा दर्शकगणों के विज्ञापन के प्रति जो प्रभाव उत्पन्न होते हैं उनसे संबन्धित परिकल्पनाओं का निर्माण किया जाता है तथा उनसे संबन्धित जानकारी व्यक्तियों से प्राप्त की जा सकती है या नहीं।
4. ऐसी नवीन जानकारी या तथ्य ज्ञात करना जो सर्वेक्षण के प्रारम्भ में उपकल्पना के निर्माण के समय तक ज्ञात नहीं होते हैं।

मर्टन के अनुसार समकालीन समाजों में प्रचार प्रसार के माध्यमों की विविधता और अप्रत्याशित विस्तार के कारण सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक संरचनाओं के स्वरूपों को प्रभावित करता हैं तथा इन संरचनाओं के स्वरूपों से प्रभावित होती है इनके योगदान को सकेन्द्रित साक्षात्कार में ही जाना जा सकता है।

क. गहन अध्ययनः इसके अन्तर्गत साक्षात्कार के समय उत्तरदाता से किसी भी विषय पर गहन तथा गहराई के साथ पूछताछ की जाती है जिसमें विषय से संबन्धित प्रत्येक पक्ष पर उत्तरदाता के विचार जानने का प्रयास किया जाता है। इस प्रकार का साक्षात्कार तभी सफल हो सकता है जब–

- साक्षात्कारकर्ता इस कार्य में विशेष अनुभवी तथा प्रशिक्षित हो।
- सामाजिक परिस्थितियों तथा मनोवैज्ञानिक कारकों का सामान्य ज्ञान होना आवश्यक है।

इस प्रकार के साक्षात्कार में पूर्व में कोई निश्चित परिकल्पना नहीं होती साथ ही अनौपचारिक परिस्थितियों तथा औपचारिक परिस्थिति में भी ऐसे गहन साक्षात्कार सम्पन्न किये जा सकते हैं जिनमें उत्तरदाता से प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष तरीकों से तथा सूक्ष्म स्तर तक पूछ–पूछ कर नवीन जानकारी प्राप्त की जाती है। जटिल भावनाओं एवं विचारों को केवल ऐसे साक्षात्कार से ही मालूम किया जा सकता है।

ख. संचार साक्षात्कार : ऐसे साक्षात्कार के अन्तर्गत उत्तरदाता एवं साक्षात्कारकर्ता के बीच संदर्भ एवं माध्य के रूप में जनसंचार का काई भी साधन जैसे रेडियो, टीवी, प्रेस आदि हो सकता है। पत्रकारिता में कोई भी संचार विशेषज्ञ उत्तरदाताओं की सूची निर्धारित करके उनसे वार्तालाप करता है। वार्तालाप के द्वारा किसी भी विषय या जनसंचार माध्य की कोई भी समस्या को लिया जा सकता है तत्पश्चात उस पर गहन साक्षात्कार किया जाता है।

ग. पैनल साक्षात्कार : इस प्रकार के साक्षात्कार को निम्नलिखित तरीके से किया जाता है –

1. प्रथम उत्तरदाता की सूची बनायी जाती है
2. उत्तरदाताओं का दो या तीन बार साक्षात्कार किया जाता है

3. साक्षात्कार निर्धारित अवधि के अन्तराल के उपरांत उत्तरदाताओं से सम्पर्क स्थापित किया जाता है।

प्रथम बार साक्षात्कार तब किया जाता है जब वह कारक अनुपस्थित हो। ऐसे में जो उत्तरदाताओं से विचार या तथ्य प्राप्त होते हैं उन्हें लिख लिया जाता है, इसके पश्चात किसी कारक/घटना को उत्तरदाता महसूस करते है एक निर्धारित समय के अनुभव के उपरांत उन्हीं उत्तरदाता से पुनः साक्षात्कार लिया जाता है तथा नवीन कारकों के प्रभाव जानने के लिए उत्तरदाताओं से प्रश्न पूछे जाते हैं जिससे उनकी मानसिकता में आये परिवर्तनों की जानकारी प्राप्त हो सके। तीसरी बार भी इन्हीं उत्तरदाओं से पाश्च व्याख्या के साक्षात्कार हेतु सम्पर्क स्थापित कर प्रभावों की जानकारी प्राप्त की जाती है।

बोध–प्रश्न 4

(i) केन्द्रित समूह साक्षात्कार के उद्देश्यों को लिखिए ?

....
....
....
....
....
....

13.6 केन्दित समूह साक्षात्कार के लाभ

सारान्ताकोस के अनुसार इस साक्षात्कार के निम्न लाभ हैं, जिनका विवरण निम्नवत है–

(1) गहन एवं सूक्ष्म अध्ययन : इस पद्धति की मौलिक विशेषता यह है कि इसके माध्यम से किसी भी सामाजिक इकाई या समस्या का सूक्ष्म और गहन अध्ययन किया जा सकता है। यह पद्धति किसी समस्या या इकाई के एक पक्ष का अध्ययन नहीं करती बल्कि इकाई से सम्बन्धित सभी पहलुओं का अध्ययन किया जाता है इसीलिये इसे सामाजिक सूक्ष्मदर्शक यन्त्र माना है। साथ ही इस पद्धति में उत्तरदाता को प्रश्नों के उत्तर देने में अपेक्षाकृत अधिक स्वतन्त्रता रहती है।

(2) व्यवहार कुशलता– साक्षात्कार कर्ता की भूमिका सौम्य होती है। उसको बहुत सोच समझ कर कार्य करता है और अपने व्यवहार को परिस्थितियों के अनुकूल नियंत्रित करता है। केन्द्रित समूह साक्षात्कार में साक्षात्कारकर्ता व्यवहार कुशल होता है। जिस कारण वह दूसरों को अपनी ओर आकर्षित करके सदस्यों से पूर्ण सहयोग प्राप्त करता है।

(3) विशिष्ट पहलुओं का अध्ययन : इसमें प्रतिनिधि इकाइयों का गहन अध्ययन किया जाता है इसके माध्यम से इकाइयों के एक पत्र का अध्ययन न करके विशिष्ट पहलुओं जैसे पारिवारिक, आर्थिक, शैक्षणिक, धार्मिक तथा राजनैतिक आदि का अध्ययन किया जाता है। जानकारी अधिक विशिष्ट होती है।

(4) विस्तृत जानकारी– साक्षात्कार कर्ता का सामाजिक अनुसधान समस्या से सामग्री संकलन करने में साक्षात्कार निर्देशिका का प्रयोग करता है। साक्षात्कारकर्ता एक के बाद एक बिन्दु पर सूचनादाता को जितनी विस्तृत अथवा जितनी संक्षिप्त सूचना वह देना चाहता है, उसे देने के लिए प्रेरित करता है। इसमें सूचना संकलित करते समय सूचनादाता को उत्तर देने के पर्याप्त स्वतन्त्रता रहती है जिस कारण अधिक जानकारी प्राप्त होने के अवसर बढ़ जाते हैं।

बोध–प्रश्न 5

(i) केन्द्रित समूह साक्षात्कार के लाभों का संक्षिप्त रूप में उल्लेख कीजिए ?

....

....

....

....

....

....

13.7 केन्द्रीय समूह साक्षात्कार की सीमाएं

केन्द्रीय समूह साक्षात्कार में समस्या या घटना का गहन अध्ययन करने के पश्चात् भी यह विधि में निम्नांकित सीमाएं हैं जो इस प्रकार है।

1. प्रश्नावली तथा साक्षात्कार विधि के विपरीत केन्द्रीय समूह साक्षात्कार संख्यात्मक जानकारी प्राप्त करने की एक अच्छी विधि नही है।

2. केन्द्रीय समूह साक्षात्कार के माध्यम से किसी सामाजिक इकाई या समस्या के बारे एकत्र की गई जानकारी की व्याख्या करते हैं तो इसमें एक समूह में जो आम सहमति होती है वह सभी सदस्यों की राय का प्रतिनिधित्व नही करती है क्योकि कुछ च्यक्तियों को चर्चा में हावी हानो पड्ता है और कम मुखर लोग अपना योगदान नही करते हैं। इस प्रकार केन्द्रीय समूह साक्षात्कार आंकड़ाों के संग्रह की विधि का प्रतिनिघित्व नही कर सकती।

3. केन्द्रीय समूह साक्षात्कार में शोधकर्ता की निर्भारता रहती है जिस कारण केन्द्रीय समूह साक्षात्कार की वैधता पर सवाल उठाया जाता है क्योंकि केन्द्रीय समूह साक्षात्कार के माध्यम से प्राप्त किये गये परिणाम स्वयं शोधकर्ता के पढ़ने से प्रभावित होते हैं।

13.8 सारांश

इस इकाई में हमने सबसे पहले केन्द्रित समूह साक्षात्कार का अर्थ समझाते हुए उसके चरणों की चर्चा करते हुए स्पष्ट किया है कि किसी सामाजिक इकाई के गहन एवं विस्तृत अध्ययन करने तथा इस इकाई के बारे में सम्पूर्ण गुणात्मक आँकड़े एकत्रित करने की महत्वपूर्ण प्रविधि है। इसके पश्चात् केन्द्रित समूह साक्षात्कार की विशेषताओं तथा उद्देश्यों की चर्चा की है। केन्द्रित समूह साक्षात्कार द्वारा किसी भी संस्था या विषय का सम्पूर्ण अध्ययन करने के लिए व्यवस्थित प्रणाली का प्रयोग किया जाता है जिससे संस्था का गहन अध्ययन सम्भव हो सके। इस पद्धति में सूचनादाता को अपने विचार रखने की पूर्ण स्वतन्त्रता होती है जिस कारण गहन और विस्तृत जानकारी प्राप्त होती है।

13.9 परिभाषिक शब्दावली

साक्षात्कार– साक्षात्कार सोद्देश्य वार्तालाप है जिसमें एक व्यक्ति दूसरे से सूचना संकलित करता है।
परिकल्पना– उपकल्पना एक ऐसा पूर्व विचार होता है जो शोधकर्ता किसी भी विषय के संबंध में अपने प्रारम्भिक ज्ञान एवं सामान्य अनुभव पर बनाता है।
सामाजिक अनुसंधान– जब अनुसंधान के क्षेत्र एवं विषयवस्तु को सामाजिक प्रघटनाओं के क्रमबद्ध व व्यवस्थित अध्ययन तक सीमित कर दिया जाता है तो सामाजिक अनुसंधान कहलाता है।
बंद प्रश्न– ऐसे प्रश्न जिनके आगे सूचनादाताओं द्वारा दिए जाने वाले संभावित उत्तर होते हैं।

खुले प्रश्न– ऐसे प्रश्न जिनका उत्तर सूचनादाता अपने स्वयं के शब्दों में देता है।

13.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

राम आहूजा. 2005. **सामाजिक सर्वेक्षण एवं अनुसंधान**. रावत पब्लिकेशन्स. दिल्ली.

Singh, K. (1983**).** Techinques of method of Social Survey Research and Statistics, Prakashan Kendra, Lucknow.

Kothari, C.R. (2009). *Research Methodology Methods and Techniques*. 2nd Revised ed., New Delhi: New Age International (P) Limited, Publishers.

Young P.V. (1960). Scientific Social Surveys and Research. Asia Publishing House. Bombay.

त्रिवेदी व शुक्ला. **रिसर्च मैथ्डोलॉजी**. कालेज बुक डिपो .जयपुर.

राय, पारस नाथ. **2004. अनुसंधान परिचय.** लक्ष्मी नारायण अग्रवाल. आागरा.

13.11 बोध–प्रश्नों के उत्तर

बोध–प्रश्न 1

विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर केन्दित समूह साक्षात्कार का अर्थ शीर्षक के अर्न्तगत दिये गये के विवरण में से लिखना है।

बोध–प्रश्न 2

विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर केन्दित समूह साक्षात्कार के चरण शीर्षक के अर्न्तगत दिये गये विवरण में से लिखना है।

बोध–प्रश्न 3

विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर केन्दित समूह साक्षात्कार की विशेषताएं शीर्षक के अर्न्तगत दिये गये के विवरण में से लिखना है।

बोध–प्रश्न 4

विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर केन्दित समूह साक्षात्कार के उद्देश्य शीर्षक के अर्न्तगत दिये गये विवरण में से लिखना है।

बोध– प्रश्न 5

विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर केन्दित समूह साक्षात्कार के लाभ शीर्षक के विवरण में से लिखना है।

13.12 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री

- जहोडा, मेरी, मोर्टन, डी. और स्टुअर्ट, डब्ल्यू कुक, **1951,** रिसर्च मैथड्स इन सोशल रिलेशन्सश, ड्रायडन, न्यूयार्क।
- गुडे एंड हाट. 1983. **मैथ्डस इन सोशियल रिसर्च**. मैकग्रू हिल इंटरनेशनल. ऑकलैण्ड.
- जैन एम. बी. **रिसर्च मैथ्डोलॉजी**. रिसर्च पब्लिकेशन. जयपुर।
- ज्योति वर्मा. 2007. सामाजिक सर्वेक्षण. डिस्कवरी पब्लिशिंग हाउस. नई दिल्ली।

13.13 निबंधात्मक प्रश्न

1– केन्द्रित समूह साक्षात्कार किसे कहते हैं ? केन्द्रित समूह साक्षात्कार के प्रमुख चरणों की विवेचना कीजिए।

2 – केन्द्रित समूह साक्षात्कार की प्रणाली का उल्लेख करतें हुए केन्द्रित समूह साक्षात्कार की विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

3– केन्द्रित समूह साक्षात्कार की प्रणाली का उल्लेख करतें हुए केन्द्रित समूह साक्षात्कार के उद्देश्यों का वर्णन कीजिए।

4– समूह साक्षात्कार किसे कहते हैं ? केन्द्रित समूह साक्षात्कार के लाभ या सीमाओं की विवेचना कीजिए।

इकाई 14 वृतान्त तथा मौखिक इतिहास
Narratives & Oral Histories

14.0 उद्देश्य
14.1 प्रस्तावना
14.2 वृतान्त का अर्थ
14.3 मौखिक इतिहास का अर्थ
14.4 मौखिक इतिहस एवं वृतान्त प्रविधियों द्वारा तथ्य संकलन में कठिनाइयां
14.5 सारांश
14.6 परिभाषिक शब्दावली
14.7 बोध–प्रश्नों के उत्तर
14.8 संदर्भ ग्रंथ सूची
14.9 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री
14.10 निबंधात्मक प्रश्न

14.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आपके द्वारा संभव होगा;

4 वृतान्त के अर्थ को समझ पाना,
5 मौखिक इतिहास के अर्थ को समझ पाना,
6 गुणात्मक तथ्यों के संकलन में कठिनाई को समझ पाना,

14.1 प्रस्तावना

वृतान्त तथा मौखिक इतिहास दोनों ही ऐतिहासिक अनुसंधान का सबसे प्राचीन स्रोत माना जाता है क्योंकि इतिहास की लिखित परम्परा कई वर्षों पश्चात् प्रारम्भ हुई। आधुनिक स्वरूप प्रदान करने की दृष्टि से इन दोनों के अभिलेखन में टेपरिकार्डर पर प्रयोग किया जा रहा है। सामाजिक अनुसंधान ने गुणात्मक तथा गणनात्मक दोनों प्रकार की सामग्री का अपना अलग–अलग महत्व होता है। अनुसंधानकर्ता अनुसंधान पर अध्ययन की समस्या की प्रकृति के अनुरूप एकत्र की जाने वाली सामग्री के बारे में निर्णय लेता है। गुणात्मक सामग्री को एकत्रित करने में सहभागी अवलोकन, वैयक्तिक अध्ययन जीवन इतिहास, तथा अन्तर्वस्तु विष्लेशणप्रविधियों का प्रयोग किया जाता है। गणनात्मक तथ्यों के संकलन में प्रश्नावली, अनुसूची तथा साक्षात्कार जैसी प्रविधियों का महत्वपूर्ण स्थान है। जब हम किसी समस्या का अध्ययन करते हैं तो मौखिक इतिहास तथा वृतान्तों द्वारा महत्वपूर्ण एवं अत्यन्त उपयोगी गुणात्मक सामग्री संकलित की जाती है, साथ ही वृतान्त तथा मौखिक इतिहास द्वारा सामाजिक घटनाओं तथा तथ्यों के बारे में विस्तृत जानकारी उपलब्ध कराने में सहायता प्रदान करते हैं।

14.2 वृतान्त का अर्थ

वृतान्त ऐतिहासिक सामग्री को संकलित करने एवं सुरक्षित रखने की प्रमुख पद्धति है इसके अन्तर्गत उन व्यक्तियों का अभिलिखित साक्षात्कार किया जाता है जो भूतकालीन घटनाओं में अपनी सहभागिता रखते हो अथवा जो पुरातन जीवन पद्धति का अनुभव रखते हों। वृतान्त में अनुसंधानकर्ता उन लोगों के

अनुभव जानने अथवा अभिलिखित करने का प्रयास करता है जो किसी विशेष घटना की जानकारी रखते हैं तथा वे उनमें सहभागी रहे हों। ब्रिटिश शासन काल में अनेक अंग्रेज प्रशासक

कई बार वृतान्त प्रशिक्षित अंग्रेज विद्वानों द्वारा स्वयं लिखे गये जिनका प्रकाशन टिप्पणियों और पूछताछ के रूप में हुआ। साथ ही कई अंग्रेजों द्वारा भारत की जनजातियों क्षेत्रों तथा दूरदराज गांवों के बारे में वृतान्त लिखे गये हैं जिनके माध्यम से जनजातीय क्षेत्र तथा दूरदराज गांवों के उस समय की जीवन पद्धति के बारे में महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है।

14.3 मौखिक इतिहास का अर्थ

मौखिक इतिहास ऐतिहासिक सामग्री संकलित की प्रमुख पद्धति है। इतिहास लेखन में कई आधार एवं रूप हैं। मौखिक इतिहास विधि में वयोवृद्ध व्यक्तियों से साक्षात्कार किया जाता है और उन घटनाओं के बारे में जानकारी एकत्रित की जाती है जो उनकी बाल्यावस्था, किशोरावस्था, युवावस्था और प्रौढ़ावस्था में घटी है और वे उन घटनाओं के प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप में चश्मदीद गवाह रहे हैं। इसके साथ ही उनसे अपनी बाल्यावस्था, किशोरावस्था, युवावस्था और प्रौढ़ावस्था की घटनाओं , कार्याकलापों और मनोभावों के बारे में भी बताने के लिए कहा जाता है। इस प्रकार इस विधि द्वारा विगत इतिहास लेखन कर जीवन इतिहासों की रचना की जाती है। यह विधि सर्वेक्षणं विधि और सामाजिक इतिहास का मिलाजुला रूप है। यह आमतौर पर किसी व्यक्ति द्वारा दिये गये कथन होते हैं जो अनुसंधानकर्ता किसी व्यक्ति से गहन साक्षात्कार के माध्यम से एकत्र करता है। जैसे किसी अपराधी या निर्धन व्यक्ति की आप बीती। इस अध्ययन के लिए साक्षात्कार देने वाले व्यक्ति के पूर्ण सहयोग की आवश्यकता होती है। मौखिक इतिहास का अर्थ दो रूपों में स्पष्ट किया जा सकता है–

1. यह गुणात्मक अनुसंधान की प्रक्रिया है जिसमें व्यक्तिगत साक्षात्कार को आधार माना जाता है ताकि भूतकालीन घटनाओं से संबन्धित अर्थों निर्वचनों एवं अनुभवों को समझा जा सके।
2. इसे मौलिक ऐतिहासिक प्रलेख माना जाता है जोकि आगामी अनुसंधानों हेतु प्राथमिक सामग्री उपलब्ध कराने का कार्य करता है इसमें आडियो या विडियों तथा टेपरिकार्डर का प्रयोग किया जाता है जो स्वयं में उत्पादन है।

बोध–प्रश्न 1

(i) वृतान्त तथा मौखिक इतिहास के अर्थ को संक्षिप्त रूप में उल्लेख कीजिए ?

....
....
....
....

14.4 मौखिक इतिहस एवं वृतान्त प्रविधियों द्वारा तथ्य संकलन में कठिनाइयां

मौखिक इतिहस एवं वृतान्त प्रविधियों द्वारा गुणात्मक तथ्यों को संकलन के प्रयोग करने पर निम्नलिखित कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है –

1. **उचित सम्पर्क का अभाव** : इस प्रविधियों की सर्वप्रथम कठिनाई उन लोगों से सम्पर्क स्थापित करने से संबन्धित है क्योंकि व्यक्तियों द्वारा सरलता से अपने जीवन के बारे में बताने के लिए तैयार नही होते हैं अथवा अपने अनुभव के बारे में बताने हेतु तत्पर नहीं होते।

2. **विश्वसनीयता की कमी** : इस प्रविधियों द्वारा एकत्रित तथ्य और सूचनाओं में विश्वसनीयता की कमी होती है क्योंकि संबन्धित व्यक्तियों द्वारा सूचनाओं अथवा अपने अनुभवों को बढ़ा चढ़ा कर बताते हैं जिसमें सूचनाओं की विश्वसनीयता सन्देहजनक हो जाती है।
3. **विभिन्न परिप्रेक्ष्यों में समन्वय की कमी** : सामाजिक अध्ययन में इस प्रकार की गुणात्मक प्रविधियों का प्रयोग करने के लिए यह आवश्यक है कि अनुसंधानकर्ता को सबसे पहले विभिन्न सामाजिक विज्ञानों के परिपेक्ष्य की विस्तृत जानकारी प्राप्त करना अनिवार्य है। इन विभिन्न प्रकार के परिस्थितियों में समन्वय स्थापित करने में कठिनाई आती है। अनुसंधानकर्ता को जो सामाग्री इन विभिन्न परिपेक्ष्यों से प्राप्त होती है उसका क्रमबद्ध प्रस्तुतीकरण भी एक समस्या बन जाती हे।
4. **व्यक्तिगत अभिनति** : सूचनादाता एवं अनुसंधानकर्ता दोनों की ओर से अभिनति पैदा होने की सम्भावना सदैव बनी रहती है। दोनों की भूमिकाओं में समन्वय रखना तथा व्यक्तिगत पक्षपात को नियंत्रित करना दोनों प्रविधियों के प्रयोग में आने वाली प्रमुख कठिनाई है।
5. **नैतिक मूल्यों**: सूचनादाता एवं अनुसंधानकर्ता में इन प्रविधियों द्वारा सामग्री एकत्रित करने हेतु स्थापित सम्पर्क एवं एकत्रित सूचना से संबन्धित एक अन्य कठिनाई नैतिक मूल्यों से संबन्धित है यदि अनुसंधानकर्ता यदि नैतिक मूल्यों के कारण सूचनादाता द्वारा बताये गये वृतान्त को हू ब हू प्रस्तुत करता है तो हो सकता है कि सूचनादाता के हितों को किसी प्रकार का नुकसान हो, यदि सूचनादाता होने वाले नुकसान के प्रति सचेत है तो वह अनेक ऐसी सूचनाएं जीवन इतिहास एवं वृतान्त में लिखता ही नहीं है।

बोध–प्रश्न 1

(i) वृतान्त तथा मौखिक इतिहास की किन्ही दो कठिनाइयों को संक्षिप्त रूप में उल्लेख कीजिए ?

....
....
....
....
....
....

14.5 सारांश

वृतान्त सदियों पुरानी तथ्य संकलन की एक प्रविधि है इसी प्रकार की एक और प्रविधि है जिसे मौखिक इतिहास कहते है। जो गुणात्मक तथ्यों को संकलित करने की महत्वपूर्ण प्रविधियॉं हैं। अतीत में कोई ऐसी सूविधा नहीं थी जिससे इनको संग्रहीत किया जा सके। अर्थात् लिखित परम्परा नहीं थी सारे लोग मौखिक रूप में ही याद करते थे और आवश्यकता पड़ने पर अपनी स्मरण शक्ति के कारण उनको वस्तु या घटना के बारे में बता भी देते थे। वर्तमान में अनेक अत्याधुनिक उपकरणों के माध्यम से सूचनाओं का संकलन किया जाता है जो अधिक विश्वसनीय होते हैं।

14.6 परिभाषिक शब्दावली

विश्वसनीयता– यह सांख्यिकीय जांच या किसी अध्ययन में असंगति, वस्तुनिष्ठता और स्पष्टता को बताता है।

साक्षात्कार– एक व्यक्ति अथवा समूह के साथ विशिष्ट प्रायोजन से आयोजित औपचारिक वार्तालाप की प्रक्रिया साक्षात्कार कहलाती है।

तथ्य–तथ्य का तात्पर्य किसी ऐसी घटना से है जिसका अवलोकन किया जा सके।

सूचनादाता– वे लोग जो सर्वेक्षण के बारे में सूचना देते हैं। यह सूचना साक्षात्कार या प्रश्नावली के माध्यम से ली जाती सकती है।

14.7 बोध–प्रश्नों के उत्तर

बोध–प्रश्न 1

विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर वृतान्त का अर्थ तथा मौखिक इतिहास का अर्थ शीर्षक के अर्न्तगत दिये गये के विवरण में से लिखना है।

बोध–प्रश्न 2

विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर वृतान्त तथा मौखिक इतिहास की कठिनाइयां शीर्षक के अर्न्तगत दिये गये विवरण में से लिखना है।

14.8 संदर्भ ग्रंथ सूची

त्रिवेदी व शुक्ला. **रिसर्च मैथ्डोलॉजी**. कालेज बुक डिपो .जयपुर.

राय, पारस नाथ. **2004. अनुसंधान परिचय**. लक्ष्मी नारायण अग्रवाल. आागरा.

गुडे एंड हाट. 1983. **मैथ्डस इन सोशियल रिसर्च**. मैकग्रू हिल इंटरनेशनल. ऑकलैण्ड.

Donald Polkinghorne, *Narrative Knowing and the Human Sciences* , Albany: SUNY Press, 1988

Coffey, Amanda & Paul Atkinson (1996). "Making Sense of Qualitative Data." Thousand Oaks, CA: Sage Publications.

Polkinghorne, Donald E. (1995). Narrative configuration in qualitative analysis. Qualitative studies in education, Vol. 8, issue 2.

14.9 सहायक उपयोगी पाठ्य साम्रगी

राम आहूजा. 2005. **सामाजिक सर्वेक्षण एवं अनुसंधान**. रावत पब्लिकेशन्स. दिल्ली.

Singh, K. (1983**).** Techinques of method of Social Survey Research and Statistics, Prakashan Kendra, Lucknow.

Kothari, C.R. (2009). *Research Methodology Methods and Techniques*. 2nd Revised ed., New Delhi: New Age International (P) Limited, Publishers.

Young P.V. (1960). Scientific Social Surveys and Research. Asia Publishing House. Bombay.

Riessman, C.K. (1993). "Narrative Analysis". Newbury Park: Sage Publications.

Smith C.P. (2000). Content analysis and narrative analysis. In: Reis HT, Judd CM, eds. *Handbook of research methods in social and personality psychology*. New York, NY: Cambridge University Press.

14.10 निबंधात्मक प्रश्न

1. वृतान्त से आप क्या समझते है ? वृतान्त तथा मौखिक इतिहास की कठिनाइयों का उल्लेख कीजिए।
2. मौखिक इतिहास से आप क्या समझते है ? वृतान्त तथा मौखिक इतिहास की कठिनाइयों का उल्लेख कीजिए।

इकाई 15 द्वितीयक आधार सामग्री तथा कार्यालयी अभिलेख
Secondary Data Base & Official Document

15.0 उद्देश्य
15.1 प्रस्तावना
15.2 आधार सामग्री प्रलेख
15.3 प्रलेखों के प्रकार
15.4 प्रलेख के लाभ
15.5 प्रलेख की समस्याएं
15.6 कार्यालय अभिलेख
15.7 सारांश
15.8 परिभाषिक शब्दावली
15.9 अभ्यास–प्रश्नों के उत्तर
15.10 संदर्भ ग्रंथ सूची
15.11 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री
15.12 निबंधात्मक प्रश्न

15.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आपके द्वारा संभव होगा;

- आधार सामग्री प्रलेख के अर्थ को समझ पाना,
- प्रलेख के प्रकार को समझ पाना,
- आधार सामग्री प्रलेख की उपयोगिता तथा कठिनाई को समझ पाना,
- कार्यालय अभिलेख को बताना।

15.1 प्रस्तावना

सामाजिक अनुसंधान के लिए केवल प्राथमिक सामग्री ही पर्याप्त नहीं होती बल्कि अनेक सामाजिक घटनाओं को समझने तथा प्राथमिक तथ्यों की प्रमाणिकता की परीक्षा करने में द्वितीयक सामग्री के संकलन की भी आवश्यकता होती है। द्वितीयक तथ्य से अभिप्राय उन सभी सूचनाओं से है जो इस अध्ययन के पूर्व किसी अन्य व्यक्ति या संस्था द्वारा एकत्रित किये गये हों। इनमें पत्र, डायरियां, आत्मकथाएं, पाण्डुलिपियां, सरकारी प्रतिवेदन, जनगणना रिर्पोट, गेजेटियर, प्रलेख, अभिलेख आदि आते हैं। इसका तात्पर्य यह है कि द्वितीयक तथ्य पहले से उपलब्ध होते हैं जिनका उपयोग कोई शोधकर्ता अपने शोध विषय की आवश्यकतानुसार करता है। किसी शोधकर्ता सरकारी या गैरसरकारी संगठन द्वारा इस प्रकार की सामग्री से पहले संकलित किये होते हैं।

15.2 द्वितीयक आधार सामग्री

द्वितीयक स्रोतों द्वारा एकत्रित सामग्री को द्वितीयक आधार सामग्री कहा जाता है। इसे अनुसंधानकर्ता दूसरे के अनुसंधान से प्राप्त करता है अर्था इसे स्वयं अनुसंधानकर्ता संकलित नही करता है। द्वितीयक तथ्यों के संग्रह में प्रलेख शोध के लिए महत्वपूर्ण आधार सामग्री प्रदान करते हैं। शोध कार्य आरम्भ करने से पूर्व परिकल्पनाओं के निर्माण में द्वितीयक सामग्री का इनमें पुस्तकें, पत्रिकाएं, अखबार, रिपोर्ट, फाइलें, आत्मकथाएं, पत्र तथा डायरियां ये सभी कुल आते हैं। किसी भी समाज के इतिहास को ज्ञात

करने में द्वितीयक सामग्री अत्यन्त उपयोगी होती है। द्वितीयक सामग्री का प्रयोग करते समय अनुसंधानकर्ता के लिए यह स्थापित करना अनिवार्य होता है कि जिन पद्धतियों, साधनों, साक्ष्यों एवं प्रलेखों का उसने अपने अनुसंधान में प्रयोग किया है वे विश्वसनीय और संदेहरहित हैं।

15.3 प्रलेखों के प्रकार

प्रकाशित तथा अप्रकाशित प्रलेखों को द्वितीयक आधार सामग्री के रूप में सम्मिलित करते हैं। प्रलेखों को हम मुख्यतः छः प्रकारों में विभाजित कर सकते हैं –

1. विधि और नियम
2. प्रशासनिक प्रतिवेदन
3. शोध इतिहास
4. आंकड़ों के प्रकाशन
5. व्यक्तिगत प्रलेख
6. अभिलेख

1. विधि और नियम : सामाजिक शोध में यदि किसी सरकारी या गैर सरकारी संगठन से संबन्धित अध्ययन करना हो तो उसके लिए संविधान, विधि और नियमों की जानकारी होना बहुत आवश्यक होगी। अनेक अन्य संगठनों जैसे राजनीतिक दलों, स्वैच्छिक समाजसेवी संगठनों और क्लबों के अपने संविधान होते हैं। अध्ययन के लिए दूसरे महत्वपूर्ण प्रलेख विधि से संबन्धित होते हैं। बहुत से संगठन जैसे विश्वविद्यालय, लोक निगम आदि विधि द्वारा ही बनाये जाते हैं। इनका संविधान उस विधि द्वारा होता है जिनके माध्यम से इनकी स्थापना होती है बहुत से दूसरे संगठनों के कार्यों और अधिकारों का वर्णन भी विधियों में होता हैं। उदहारण के लिए, आयकर अधिनियम, दण्ड प्रक्रिया संहिता, कारखाना अधिनियम, औद्योगिक विवाद अधिनियम, लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम आदि एक शोधार्थी के लिए अत्यन्त आवश्यक हैं कि वह इन विधियों का स्वयं अध्ययन करे।

दूसरी ओर अध्ययन के लिए नियमों का अध्ययन भी महत्वपूर्ण स्थान है। भारतीय समाज के बहुत से अंग विधियों के स्थान पर नियमों द्वारा नियोजित होते हैं। जैसे संविधान की धारा 309 द्वारा संसद और राज्यों के विधि मण्डलों को यह अधिकार दिया गया है कि वे विधि द्वारा अपने–अपने कर्मचारियों की नियुक्ति तथा सेवा की शर्तों का नियंत्रण करे। प्रत्येक संस्था या संगठन कार्यों को करने के लिए बहुधा निश्चित कार्य विधियां होती हैं, इन्हें भी नियम कहा जा सकता है ये विधियों के अन्तर्गत बने नियमों से भिन्न होते हैं।

2. प्रशासनिक प्रतिवेदन : प्रत्येक प्रतिवेदन का यह उद्देश्य होता है कि क्या प्रयत्न किये जा रहे हैं उनमें साधनों पर कितना व्यय हुआ, क्या समस्याएं सामने आयी और क्या निष्पत्ति आयी आदि। यह प्रतिवेदन प्रत्येंक संगठन द्वारा जनता तथा ग्राहकों को तथा निम्न स्तर से उच्च स्तर को दिये जाते हैं। इनके माध्यम से महत्वपूर्ण सामग्री प्राप्त होती है यह किसी भी संगठन तथा उसके कार्य के विषय में जानने के महत्वपूर्ण साधन होते हैं। जैसे पंचवर्षीय के प्रतिवेदन, इसके अतिरिक्त सरकार द्वारा प्रकाशित विभिन्न जिलों के गजेटियर्स तथा सांख्यिकीय बुलेटिन आदि भी सूचनाएं प्राप्त करने के मुख्य साधन हैं। संसद द्वारा प्रतिवर्ष प्रस्तुत आर्थिक सर्वेक्षण के माध्यम से पूर्ण आर्थिक जानकारी प्राप्त होती है। चुनाव आयोग, विधान सभा, आम चुनाव तथा अन्य चुनाव का ब्यौरा तथा आंकड़े अपने प्रतिवेदन में प्रस्तुत करता है, प्रशासन के प्रत्येक विभाग द्वारा अपने विभाग से संबन्धित पिछले वर्ष की निष्पत्ति और व्यय तथा अगले वर्ष के प्रस्तावित कार्यक्रमों और व्यय का पूर्ण ब्यौरा बजट में मिल जाता है इस प्रकार सभी

प्रतिवेदन द्वितीयक आधार सामाग्री के रूप में महत्वपूर्ण साधन हो सकते हैं जिनसे मूल्यवान सामग्री प्राप्त हो सकती है।

3. शोध इतिवृत्त : सामाजिक अनुसंधान के माध्यम से शोध विद्यार्थियों द्वारा प्रस्तुत प्रतिवेदन या शोध प्रबंध भी बहुत अधिक महत्वपूर्ण सिद्ध हुए हैं अनुसंधानकर्ताओं द्वारा प्रस्तुत शोध प्रबंध में यद्यपि किसी विषय से संबन्धित पत्रों का अत्यधिक गहन अध्ययन करके महत्वपूर्ण तथ्य प्रकाश में लाये जाते है लेकिन विशेष सामाजिक अनुसंधान की दिशा का निर्धारण करने तथा प्राप्त सूचनाओं का सत्यापन करने के लिए शोध प्रतिवेदन बहुत महत्वपूर्ण होते हैं विश्वविद्यालय, सरकार के बहुत से अधिकरण तथा गैर सरकारी संगठन शोध इतिवृत्त का प्रकाशन करते रहते हैं विश्वविद्यालयों में होने वाली शोध पर आधारित सूक्ष्म इतिवृत्त पत्रिकाओं में शोध पत्रों के रूप में प्रकाशित होते हैं तथा इसी को बृहद इतिवृत्त पुस्तक के रूप में प्रकाशित होता है। साथ ही कुछ शोध कार्य प्रकाशित नहीं होते बल्कि विश्वविद्यालयों के पुस्तकालयों में संग्रहित होत हैं। आई. सी. एस. एस. आर., यू0जी0सी0, एन0सी0आर0टी0 तथा अन्य संस्थान प्रायोजनाओं के लिए प्रतिवर्ष अनुदान देती है तथा इनके इतिवृत्तों को प्रकाशित भी करवाती है। इतिवृत्त में सग्रहीत सामग्री या आधार सामग्री का पुनः से अन्य शोधकर्ताओं द्वारा उपयोग किया जाता है। ऐतिहासिक सामग्री के बढ़ते हुए प्रयोग के परिणामस्वरूप अनेक सरकारी, अर्द्ध सरकारी एवं गैर सरकारी संगठन एवं संस्थाएं सामग्री आधार एवं सामग्री बैंक तैयार करने का कार्य करने लगे हैं ताकि आवश्यकता पडने पर इनका प्रयोग किया जा सके। भारतीय विश्वविद्यालय संघ द्वारा भारतीय विश्वविद्यालयों पर जो सामग्री प्रकाशित की जाती है वह आधार सामग्री एवं सामग्री बैंक का कार्य करती है। इसके अन्तर्गत कितने विभाग और उनमें आचार्य, उपाचार्य एवं लैक्चरर आदि का पता चल जाता है। इसी प्रकार भारतीय सामाजिक अनुसंधान परिषद् द्वारा समाज वैज्ञानिकोंकी सम्पूर्ण सूची को पुस्तिका के रूप में तैयार कराया जाता है।

सरकार के विभाग तथा अन्य गैर सरकारी संगठन समय–समय पर शोध का काम करते हैं तथा इतिवृत्त को प्रकाशित भी करते हैं। सरकारी संगठनों द्वारा आयोगों के माध्यम से एक प्रतिवेदन प्रस्तुत किया जाता है जिससे मूल्यवान जानकारी प्राप्त होती है। जैसे वित्त आयोग, वेतन आयोग, आदि। गैर सरकारी संगठन भी नियमित रूप से शोध कार्य करवाते रहते हैं और इनके इतिवृत्तों से भी महत्वपूर्ण सामग्री प्राप्त होती है।

बोध–प्रश्न 1

(i) इतिवृत्त को संक्षिप्त रूप में उल्लेख कीजिए ?

....
....
....
....
....
....

4. आंकड़ों का प्रकाशन : द्वितीयक तथ्यों के अन्तर्गत सरकार द्वारा प्रकाशित उन आंकड़ों का विशेष महत्व होता है जिन्हें सरकार द्वारा विभिन्न विभागों की सहायता से एकत्र किया जाता है फिर उन्हें प्रकाशित कर जनसाधारण को उनकी सूचना दी जाती है इसमें मुख्यतः केन्द्रीय सांख्यिकीय संगठन का महत्वपूर्ण स्थान है। इसकी स्थापना सन् 1951 में हुई जिसका मुख्य उद्देश्य सारे देश के आंकड़ों से संबन्धित कार्यकलापों में समन्वय लाना तथा संप्रत्ययों को परिभाषित कर एक निश्चित मानक तय करना

था। इन्ही मानकों तथा परिभाषाओं के आधार पर सारे देश के आंकड़े तैयार किये गये। यह राज्यों के सांख्यिकीय विभागों के मध्य समन्वय स्थापित करता है और प्रत्येक राज्य का सांख्यिकीय विभाग राज्य सरकार के विभागों के मध्य समन्वय लाता है। जिससे समस्त विभागों के आंकड़ों का आधार एक से रखा जा सके। उदहारण के रूप में निम्नलिखित विभागों द्वारा आंकड़ों का संग्रह तथा प्रकाशन का कार्य किया जाता है–

1. **अर्थ एवं सांख्यिकीय निदेशालय, विधि तथा कृषि मंत्रालयः** इसकी स्थापना 1947 में हुई थी। इसका मुख्य उद्देश्य कृषि संबंधी आंकड़ों का संग्रह, संसाधन और आंकड़ों का प्रकाशन करना है।
2. **भारतीय सेना सांख्यिकीय संगठन** : इसकी स्थापना 1947 में सीमा के सैनिकों, सामान, गाड़ियों, निवास आदि के आंकड़े तैयार करने के उद्देश्य से हुई थी।
3. **श्रम ब्यूरो** : इसकी स्थापना 1946 में हुई थी इसका कार्य श्रम से संबन्धित आंकड़े तैयार किये जाते हैं।
4. **औद्योगिक सांख्यिकीय विभाग** : उद्योग धंधों से संबन्धित आंकड़ों को तैयार करता है।
5. **राश्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण** : यह संगठन देश की अर्थव्यवस्था के विभिन्न पक्षों से संबन्धित आंकड़े प्रतिदर्श सर्वेक्षण द्वारा एकत्र करता है। इसकी स्थापना 1950 में हुई थी।
6. **महापंजीयक और जनगणना आयुक्त विभाग** : यह संगठन जनगणना अधिनियम 1948 के अधीन जनगणना का कार्य करता है।
7. **रिर्जव बैंक ऑफ इंडिया**– वित्त मंत्रालय के अंतर्गत ऋण, वित, गरीबी, मुद्रा–स्फीति, रहन–सहन, प्रतिव्यक्ति आय एवं अन्य आर्थिक तथ्य संकलित किये जाते हैं और विभिन्न प्रतिवेदनों के माध्यम से प्रकाशित किये जाते हैं।

क. जनगणना के आंकड़े : जनगणना का तात्पर्य समग्र की समस्त इकाइयों का अध्ययन करना है। इस समग्रता की इकाई एक समूह, समुदाय या सम्पूर्ण राष्ट्र हो सकता है। जनगणना को वृहत् आंकड़ों का एक प्रमुख सामाजिक प्रलेख माना जाता है। विश्व के लगभग सभी देशों में प्रत्येक दस वर्ष पश्चात् जनगणना करायी जाती है जिससे उस देश से संबंधित जनसंख्या के बारे में विविध प्रकार की सूचनाओं का संकलन किया जाता है। जनगणना रिपोर्ट के आधार पर ही किसी देश की भावी नीति का निर्माण किया जाता है। नियोजन के इस युग में सामाजिक और आर्थिक जीवन के सभी पक्षों पर सरकार के नियंत्रण में निरंतर वृद्धि होती जा रही है। जनगणना के द्वारा सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक जीवन के अनेक महत्वपूर्ण पक्षों के विषय में विश्वसनीय आंकड़े व सूचनायें प्राप्त हो जाती हैं। 1872 में भारत में प्रथम बार जनगणना हुई थी और 1881 में दूसरी। इसके पश्चात प्रति दस वर्ष बाद जनगणना होती आ रही है। इन आंकड़ों के माध्यम से हमें परिवार का आकार, ग्रामीण–शहरी जनसंख्या, स्त्री–पुरूष अनुपात, जनसंख्या घनत्व, विभिन्न भाषा बोलने वाले की जनसंख्या, विभिन्न धर्मों के लोगों की जनंसख्या, विभिन्न क्षेत्रों में कार्यशील व्यक्तियों की संख्या, बेरोजगारी, जन्मदर, मृत्युदर, आयु का विवरण, साक्षरता, प्रति व्यक्ति आय, आदि के विषय में पता लग सकता है। पूरे भारत, प्रत्येक राज्य और प्रत्येक जिले के आंकड़े अलग–अलग प्रकाशित किए जाते हैं। इन सब दृष्टिकोण से जनगणना का अत्यधिक महत्व है और इसीलिए कहा जाता है कि जनगणना योजना विकास की कुंजी है। भारत में आज केन्द्र तथा राज्य स्तर पर तथ्य संकलन के कार्य को अत्यधिक व्यापक और व्यवस्थित रूप से पूर्ण किया जाता है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट हो जाता है कि जनगणना की रिपोर्ट अत्यन्त महत्वपूर्ण एवं उपयोगी प्रकाशन हैं जोकि जनसंख्या से संबंधित विवधि प्रकार के आंकड़ें प्रस्तुत करने एवं भावी नीतियां बनाने में सहायक हैं।

सामग्री संकलन के द्वितीयक स्रोतों के रूप में केन्द्र और राज्य स्तर पर कुछ ऐजन्सियों को अग्रांकित रूप से समझा जा सकता है –

1. **केन्द्र स्तर से संबन्धित स्रोत** : विभिन्न मंत्रालयों तथा सरकार द्वारा गठित संगठन द्वारा अनेक उपयोगी सूचनाओं का संकलन किया जाता है।
2. **कृशि तथा ग्रामीण पुनर्निर्माण मंत्रालय** : इस मंत्रालय के अधीन आर्थिक एवं सांख्यिकीय निदेशालय द्वारा कृषि, कृषि उपज के मूल्य, कृषि मजदूरी तथा कृषि से संबन्धित विकास कार्यों के बारे में अधिकृत सूचनाओं का संकलन किया जाता है।
3. **वित्त मंत्रालय** : इस मंत्रालय के अधीन रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया के द्वारा समय–समय पर अनेक महत्वपूर्ण सर्वेक्षण करके आंकड़ों का संकलन किया जाता है। देश की मुद्रा स्फीति, रहन–सहन का स्तर, प्रति व्यक्ति आय, आर्थिक व्यवस्था से संबन्धित अनेक तथ्यों को जानने के लिए मंत्रालय के प्रतिवेदन अधिक महत्वपूर्ण स्रोत का कार्य करते हैं।
4. **वाणिज्य तथा उद्योग मंत्रालय**– इसके अंतर्गत कुल उत्पादन तथा देश की आर्थिक स्थिति से संबंधित तथ्यों का संकलन कर भारतीय व्यापार पत्रिका में इन आंकड़ों को प्रकाशित किया जाता है जो वाणिज्य तथा उद्योग से संबंधित होते हैं।
5. **िाक्षा मंत्रालय**– इसके अंतर्गत शिक्षा का स्तर अर्थात देश में साक्षरता की स्थिति, शैक्षणिक विकास, शैक्षणिक नीतियां, पिछड़े वर्गों के कल्याण तथा सामाजिक नियोजन जैसे समाज कल्याण कार्यों व शिक्षा से संबंधित आंकड़ों का संकलन कर प्रकाशित किया जाता है।
6. **श्रम मंत्रालय**– इस मंत्रालय के द्वारा भारतीय श्रम गजट, आर्थिक पत्रिका में श्रमिकों से संबंधित आंकड़ों जैसे श्रमिक अधिनियमों, श्रम सुरक्षा, श्रम कल्याण तथा श्रमिक आय संबंधित तथ्यों को प्रकाशित किया जाता है।
7. **सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय**– सूचनाओं और आंकड़ों के संकलन तथा उनके प्रकाशन में इस मंत्रालय की महत्वपूर्ण भूमिका रहती है। इस मंत्रालय का महत्वपूर्ण विभाग प्रकाशन विभाग है इसकी स्थापना 1953 में हुई थी। इस मंत्रालय का प्रकाशन विभाग अन्य सभी मंत्रालयों राज्य सरकारों तथा संगठनों से सूचनाएं प्राप्त करके उन्हें प्रकाशित करता है। जैसे जंनसंचार, आर्थिक नियोजन, नागरिक आपूर्ति, कृषि, स्वास्थ्य, शिक्षा, वैज्ञानिक अनुसंधान आदि क्षेत्रों से संबंधित नवीनतम सूचनाओं का संकलन करने के लिए यह विभाग सर्वप्रथम स्रोत है।
8. **गृह मंत्रालय** : देश की आन्तरिक परिस्थितियों या दशाओं से संबन्धित सूचनाओं को संकलित किया जात है तथा उनका जनगणना प्रतिवेदन तथा भारत की जनगणना प्रपत्र में प्रकाशन रजिस्ट्रार जनरल के कार्यालय से किया जाता है इसके अधीन ही जनगणना संबंधी आकड़ों को एकत्रित करने का कार्य किया जाता है सामाजिक समस्याओं से संबन्धित किसी भी अध्ययन कार्य में इस मंत्रालय द्वारा प्रकाशित आंकड़ों का विशेष महत्व होता है।
9. **रेल मंत्रालय**– रेलवे सांख्यिकीय मासिक पत्रिका में भारतीय रेल परिवहन संबंधी सूचनाएं प्रकाशित की जाती है।
10. **मानव संसाधन विकास मंत्रालय**– इस मंत्रालय के अन्तर्गत देश की साक्षरता, शैखणिक विकास, सामाजिक नियोजन शिक्षा संबंधी नीतियां, पिछड़े वर्गों के कल्याण तथा मानवीय स्रोतों के उपयोग की दशा आदि के आधार पर सूचनाओं को प्रकाशित किया जाता है । सामाजिक अध्ययनों में इस मंत्रालय के प्रतिवेदनों को विशेष रूप से उपयोगी तथा प्रमाणिक सिद्ध होते हैं।

11. **नियोजन मंत्रालय** : वर्तमान परिस्थितियों में देश के सम्पूर्ण सामाजिक तथा आर्थिक नियोजन संबंधी कार्यक्रमों को तैयार करने तथा उन्हें लागू करने के लिए विभिन्न मंत्रालयों से आधार सामाग्री प्रदान करने में नियोजन मंत्रालय की भूमिका अत्यधिक है। एक ओर विभिन्न योजनाओं के निर्माण के लिए महत्वपूर्ण तथ्यों का संकलन किया जाता है तो दूसरी ओर उपलब्ध साधनों और भावी आवश्यकताओं में समन्वय करते हुए सभी योजनाओं को प्रस्तुत किया जाता है।
12. **शहरी कार्य तथा रोजगार मंत्रालय**– इस मंत्रालय के माध्यम से नगर नियोजन, नगरीकरण की प्रक्रिया, नागरिक सुविधाओं, तथा नगरीय रोजगार से संबंधित आंकड़े सामाजिक अध्ययनों के लिए प्रमुख द्वितीयक स्रोत है।
13. **केन्द्रीय सांख्यिकीय संगठन** : भारत में केन्द्रीय सांख्यिकीय संगठन प्रायः तीन इकाइयां राष्ट्रीय आय, औद्योगिक विकास तथा विभिन्न प्रकार के सर्वेक्षणों के लिए स्वतंत्र रूप से कार्य करती हैं जबकि अन्य इकाइयां स्वयं सूचनाओं को एकत्रित नहीं करती बल्कि केन्द्रीय सरकार के विभिन्न विभागों से सूचनाओं का संकलन करके उनका प्रकाशन करती हैं। इनका मुख्य कार्य विभिन्न क्षेत्रों से संबन्धित सूचनाओं को एकत्रित करके उनका समन्वय करना उन्हें प्रकाशन करना है। साधारणतया जिला स्तर की सूचनाएं राज्य स्तर पर समन्वित की जाती है तथा राज्य स्तर की सूचनाएं केन्दीय सांख्यिकीय संगठन को प्रेषित की जाती है।
14. **परिवहन विभाग**– यह विभाग भारतीय परिवहन संबंधी तथ्यों का संकलन कर उन्हे ट्रैफिक सर्वे में प्रकाशित करवाता है।
15. **सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय**– इस विभाग की स्थापना 1953 में हुई। इस विभाग का प्रकाशन विभाग तथ्यों के संकलन और प्रकाशन का महत्वपूर्ण कार्य करता है। यह विभाग प्रतिवर्ष अंग्रेजी में इंडिया और हिन्दी भाषा में भारत नाम की पत्रिका का प्रकाशन करता है। इसके अंतर्गत आर्थिक आंकड़े, स्वास्थ्य, शिक्षा, जनसंख्या, जनसंचार, समाज कल्याण, भूमि सुधार, सहकारिता, उद्योग, कृषि, सिंचाई, सांस्कृतिक गतिविधियां परिवहन, श्रम तथा आवास आदि से संबंधित नवीनतम आंकड़े प्रकाशित किये जाते हैं।
16. राष्ट्रीय निर्देशन सर्वेक्षण संगठन : राष्ट्रीय निर्दशन सर्वेक्षण निदेशालय की स्थापना 1950 में हुई जिसका मुख्य उद्देश्य चुने गये क्षेत्रों में निदर्शन के आधार पर व्यक्तियों से सम्पर्क स्थापित करके उनकी आवश्यकताओं की जानकारी प्राप्त करना था तथा इसकी सहायता से योजना आयोग को योजनाओं के निर्धारण में सहायता प्रदान करना था। इस उपयोगिता को देखते हुए सन् 1971 में राष्ट्रीय निदर्शन सर्वेक्षण संगठन का निर्माण किया गया यह संगठन देश की अर्थव्यवस्था, आवासीय स्थिति, आय और व्यय के प्रतिमानों, बेरोजगारी तथा कृषि मजदूरों की स्थिति आदि से संबन्धित आंकड़ों को नियमित रूप से एकत्रित करता है तथा योजना आयोग की सहायता करता है। यह स्वयं सूचनाओं की संकलित नहीं करता वरन् सरकारी विभागों द्वारा किये जाने वाले सर्वेक्षण का तकनीकी मार्गदर्शन करता है।

उपर्युक्त मंत्रालयों के अतिरिक्त वाणिज्य तथा उद्योग मंत्रालय, विधि और न्याय मंत्रालय, पर्यटन मंत्रालय भी सामाजिक अध्ययनों को अनेक उपयोगी सूचनाएं प्रदान करते हैं। केन्द्र में केन्द्रिय सांख्यिकीय संगठन सरकारी आंकड़ों को प्रकाशित कर जनसाधारण को उपलक्ष्ध कराने का एक महत्वपूर्ण माध्यम है साथ ही विभिन्न राज्यों में यह कार्य सांख्यिकीय विभाग द्वारा किया जाता है।

बोध–प्रश्न 2

(i) तथ्य संकलन में केन्द्र सरकार की किन्ही दो ऐजन्सियों को संक्षिप्त रूप में उल्लेख कीजिए ?

....
....
....
....

ख. **राज्य स्तर से संबन्धित स्रोत** : सामाजिक अनुसंधान में द्वितीयक तथ्यों के रूप में राज्य स्तर के मंत्रालयों तथा विभागों द्वारा प्रकाशित आंकड़ों की भूमिका अहम् होती है। राज्य स्तर पर समय–समय पर श्रम कल्याण, स्वास्थ्य, आवास, रोजगार, श्रमिकों की स्थिति आदि विषयों से संबंन्धित आंकड़ों को एकत्रित करके उनका प्रकाशन किया जाता रहता है। पृथक–पृथक विभाग द्वारा पृथक पृथक सूचनाएं एकत्रित की जाती है। इन सूचनाओं को व्यवस्थित रूप से प्रकाशित करने का कार्य सूचना विभाग का होता है। राज्य स्तर पर नवीन आंकड़ों को एकत्रित करने तथा उनका समन्वयन करने में सांख्यिकीय ब्यूरो की भूमिका अहम् होती है। इस सांख्यिकीय ब्यूरो की सहायता से जिले स्तर पर सांख्यिकीय अधिकारी नियुक्त किये जाते है जो विभिन्न विभागों से जिले स्तर पर सूचनाएं एकत्रित करते हैं तथा उन्हें सांख्यिकीय ब्यूरो को भेजते हैं।

सरकारी आंकड़ो के गुण–दोश

गुण– 1. अन्य स्रोतों की अपेक्षा सरकारी आंकड़े अधिक विश्वसनीय होते हैं।

2. सामाजिक अनुसंधान में इन आंकड़ो का उपयोग सरलता से उपयोग किया जाता है।

3. सरकारी आंकड़ो का समय समय से प्रकाशन होने के कारण सरलता से आंकड़े प्राप्त किये जा सकते है।

4. ये आंकड़े अधिक विश्वसनीय और प्रमाणिक होते हैं क्योकि इन्हे वृहद संगठन तथा प्रशिक्षित व्यक्तियों द्वारा एकत्रित किये जाते हैं।

5. सरकारी आंकड़ो में किसी प्रकार का पक्षपात नही पाया जाता।

6. सरकारी आंकड़े व्यापक जानकारी प्रदान करने के साथ ही योजना निर्माण में सहायक होते हैं।

दोश–1. सरकार आंकड़ो के अंतर्गत सरकार की असफलता दर्शाने वाले आंकड़ो को प्रकाशित नही कराया जाता क्योंकि ये आंकड़े सरकार की नीतियों और कार्यक्रमों की दृष्टि के अनुसार ही उपयोग में लसये जाते हैं।

2. सरकारी आंकड़ो में वस्तुनिष्ठा का अभाव पाया जाता है क्योंकि इनके द्वारा केवल विभागों की सफलता को ही दर्शाया जाता है।

3. सरकारी कर्मचारियों की लापरवाही, कामचोरी, खाना पूर्ति तथा बेईमानी के कारण विश्वसनीयता को खो देते हैं।

7 **व्यक्तिगत प्रलेख** : व्यक्तिगत प्रलेखों से तात्पर्य प्रलेखों या लिखित सामाग्री से है जिन्हें किसी व्यक्ति द्वारा निजी रूप से लिखा जाता है संकुचित अर्थ में इनमें किसी व्यक्ति द्वारा निजी क्रियाओं, अनुभवों तथा विश्वासों से लिखे गये प्रलेखों को सम्मिलित किया जाता है। व्यक्तिगत प्रलेख सामाजिक घटनाओं को समझने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं क्योंकि इनसे वास्तविक तथ्यों का पता चलता है। इसमें जीवन इतिहास, डायरी तथा व्यक्तिगत प्रमुख रूप से सम्मिलित किया जाता है। जीवन इतिहास से तात्पर्य विस्तृत आत्मकथा से है। तथ्य संकलन के द्वैतीयक स्रोत के रूप में जीवन इतिहास का काफी महत्व है। जीवन इतिहास में व्यक्ति अपने जीवन की घटनाओं और सुझावों का बहुत विस्तार के

साथ स्वाभाविक विवेचन करता है। इसमें किसी व्यक्ति के जीवन इतिहास से उसके समय की सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक एवं विभिन्न प्रकार की घटनाओं को समझने में सहायता मिलती है, इससे किसी एक विशेष काल की सामाजिक परिस्थितियों एवं समस्याओं को भली प्रकार समझा जा सकता है। आत्मकथाओं में दूसरे प्रकार के व्यक्तिगत प्रलेखों में कुछ अधिक विस्तृत होने ही सम्भावना है क्योंकि लेखक अपने गुणों को बढ़ाकर लिखता है साथ ही पुरानी घटना होती है जिनके बारे में लेखक को उनके विषय में याद न हो। लेखक अपने लम्बे जीवन में कुछ घटनाएं चुन लेता है यह चुनाव उसके विचारों को प्रभावित करता है इन कारणों से आत्मकथाओं से प्राप्त ऐतिहासिक जानकारी विकृत हो जाने की सम्भावना रहती है।

सामान्य व्यक्ति अपने जीवन में कई पत्र लिखता है। इनमें व्यक्ति महत्वपूर्ण विचारों, भावनाओं, जीवन की प्रमुख घटनाओं, अनुभवों, प्रेम, घृणा, अपनी योजनाओं आदि को व्यक्त करता है जिसके द्वारा जीवन के अप्रत्याशित और अत्यधिक गोपनीय तथ्यों को भी ज्ञात किया जा सकता है। अतः इनमें यथार्थ तथा विश्वसनीय सामग्री मिल पाती है। अर्थात् व्यक्तियों द्वारा लिखे गये निजी पत्र भी उनके बारे में महत्वपूर्ण जानकारी उपलब्ध कराने में सहायता प्रदान करते हैं। पत्र भी दूसरे व्यक्तियों को प्रभावित करने के उद्देश्य से लिखे जाते हैं इसलिए उनमें भी केवल घटनाओं का सत्य वृतान्त नहीं होता। साथ ही पत्रों का उपलब्ध हो जाना एक कठिन कार्य है तथा यदि एक ही पक्ष के पत्र उपलब्ध हो या बीच के कुछ पत्र न मिले तो सामग्री में क्रमबद्धता नहीं रहती।

डायरी के माध्यम से व्यक्ति के दैनिक क्रियाकलाप और उसके अन्तः मन की भावनाओं को समझने में सहायता मिलती है। चूंकि डायरी एक पूर्णतः गोपनीय दस्तावेज है, अतः व्यक्ति के जीवन की रहस्यमयी बातों का पता लगाने का एक विश्वसनीय स्रोत हैं ये सब बाते सिर्फ डायरी में लिखी जा सकती हैं। डायरी एक निजी प्रलेख है जिसमें कुछ लोग अपने दैनिक जीवन की प्रमुख घटनाओं , अनुभवों तथा वर्तमान परिस्थितियों के बारे में अपनी प्रतिक्रियाओं को विस्तृत अथवा संकेतक रूप में डायरी लिखते रहते हैं किन्तु ये कभी–कभी अच्छी आधार सामग्री नहीं दे पाती। यह सम्भव है कि वे संघर्षों और जीवन के नाटकीय पक्षों को अधिक महत्व दे दें और सुख शान्ति के काल को कम। डायरी में संकेतो द्वारा लिखा गया है तो उनका अर्थ लगाना कठिन हो सकता है। डायरियां विश्वसनीय सामग्री या आंकड़ो के स्रोत हैं तथा उनसे लिखने वाले के बारे में अनेक ऐसे रहस्यों का भी पता चलता हैं। कभी कभी डायरी भी प्रकाशन के उद्देश्य से लिखी जाती है और तब उसमें भी प्रभावोत्पादन के प्रयत्न के कारण विकृति आ जाती है।

बोध–प्रश्न 3

(i) व्यक्तिगत प्रलेख को संक्षिप्त रूप में उल्लेख कीजिए ?

....
....
....
....
....
....

6. अभिलेख : अप्रत्यक्ष एवं लिखित सामग्री के रूप में अभिलेखों का महत्वपूर्ण स्थान है। इसके अन्तर्गत व्यक्तिगत अथवा सामूहिक विकास संबंधी जानकारी विद्यमान होती है। बहुत से सरकारी तथा गैर सरकारी संस्थाओं द्वारा अपनी प्रशासकीय आवश्यकताओं की पूरा करने के लिए अनेक महत्वपूर्ण

तथ्य एवं सूचनाएं संकलित करके रखे जाते हैं। अभिलेख प्रलेखों का एक महत्वपूर्ण प्रकार है। प्रत्येक संगठन में अभिलेखों में महत्वपूर्ण निर्णयों, निर्णयों से पूर्व के विचार विमर्श तथा वाद में उनके कार्यालयों का वृतान्त मिलता है। यह सम्पूर्ण सामग्री विभ्न्नि समितियों, संगठनों, आयोगों के प्रतिवेदन व समय यमय पर आयोजित होने वाली बैठकों की कार्यवाहियों के रूप में होती है। यद्यपि यह सामग्री गोपनीय होती है, परन्तु साथ ही काफी विश्वसनीय भी होती है। इन अभिलेखों को हम प्रायः दो भागों में विभाजित करते हैं –

1. सभाओं समीतियों आदि की कार्यवाही
2. कार्यालय अभिलेख

सरकारी तथा गैर सरकारी संगठन में सभाओं, समितियों आदि की कार्यवाही का अभिलेख रखा जाता है जो हमें संगठन के क्रियाकलापों से अवगत कराता है इसमें विधेयक, विभिन्न आयोगों की कार्यवाही, राज्य मण्डलों की कार्यवाही, सभाओं, परिषदों, समितियों की कार्यवाही, मंत्रीपरिषद की कार्यवाही से संबन्धित कार्यवाही की जानकारी हमें प्राप्त होती है साथ ही न्यायालयों द्वारा दिये गये निर्णयों, आयोगों एवं समीतियों के प्रतिवेदन, अनुसंधान संस्थानों के प्रकाशन, अनुसंधान लेख, सरकारी तथा गैर सरकारी पत्रिकाएं आदि उल्लेखनीय हैं।

15.4 प्रलेखों के लाभ

सामाजिक अनुसंधान में प्राथमिक एवे द्वितीयक दोनों प्रकार की आधार सामग्री एकत्रित की जाती है। द्वितीयक सामग्री का अनुसंधान में अपना अलग महत्व होता है । द्वितीयक सामग्री के प्रमुख गुण निम्नांकित हैं–

1. **धन व समय की बचत**– प्रलेखों के उपयोग का एक लाभ यह है कि इनके द्वारा बहुत सी पूर्व से एकत्रित सागग्री मिल जाती है। अनुसंधानकर्ता जो सामग्री स्वयं एकत्रित करता है उसे प्राथमिक सामग्री कहते हैं। दूसरों द्वारा किसी अन्य उद्देश्य के लिए एकत्रित की गयी सामग्री गौण आधार सामग्री कहलाती है। जिसके कारण अनुसंधानकर्ता के समय, श्रम एवं धन के व्यर्थ प्रयोग से बचत करते हैं क्योंकि अनुसंधानकर्ता को गौण आधार सामग्री से उपयोगी लिखित सामग्री प्राप्त हो जाती है। जैसे पुलिस विभाग में अपराधों, शिक्षा विभाग में विद्यार्थियों के आंकड़े आदि के बारे में सूचनाएं प्राप्त होती है। गौण आधार सामग्री हमें मुख्यतः प्रलेखों से मिलती है जिनके आंकड़ो को सरकारी व गैर सरकारी संगठनों के द्वारा नियमित रूप से एकत्रित किये जाते हैं।
2. **भूतकालीन घटनाओं का अध्ययन**– प्रलेखों का दूसरा महत्वपूर्ण लाभ इसके द्वारा भूतकाल की घटनाओं या विषयों में पता लगता है। अर्थात हमें ऐतिहासिक सामग्री प्राप्त होती है। भूतकालीन घटनाओं का क्षेत्रीय अध्ययन करना समव नही होता। वर्तमान की सामग्री को तो हम स्वयं एकत्र कर सकते है लेकिन अतीत की सामग्री को उसी काल या समय के व्यक्तियों से प्राप्त होती है। इसके लिए बहुधा उस समय के प्रलेखों का उपयोग करना होता है। इसके माध्यम से हमें काल विषय के बारे में पता चलता है। समाजशास्त्र की इतिहास के अध्ययन से संबंधित शाखा को ऐतिहासिक समाजशास्त्र कहते हैं।
3. **निर्भरता का अभाव**– सामाजिक अनुसंधान की प्रविधियों में हमें दूसरे व्यक्तियों पर निर्भर रहना पड़ता है जैसे साक्षात्कार द्वारा आधार सामग्री संग्रह करने में उत्तरदाताओं पर निर्भर रहना पड़ता है। लेकिन प्रलेखों के उपयोग द्वार इस प्रकार की निर्भरता नही रहती है। प्रलेखों का मिलना सदैव आसान नही होता क्योंकि कोई भी सरकारी तथा गैर सरकारी संगठन द्वारा अपने बहुत से प्रलेखों को गोपनीय मानने के कारण अनुसंधान कर्ताओं को उपलब्ध नहीं

कराते। पुराने प्रलेख जिनका महत्व संस्था के लिए कम हो जाता है एक शोधकर्ता को आसानी से उपलब्ध होने के कारण काफी उपयोगी साबित होते हैं।

4. **पक्षपात से बचाव**– प्रलेखों का एक लाभ यह है कि अनुसंधान कर्ता द्वारा किसी प्रकार के पक्षपात करने की सम्भावना तथा सामग्री को अपने मूल्यों के अनुरूप तोड़ मरोड़ लेने की सम्भावना कम होती है। जिस व्यवहार का अध्ययन हम करना चाहते हैं वह अध्ययन के कारण ही और उसके द्वारा परिवर्तित हो जाता है साथ ही सूचनादाताओं द्वारा भी प्रश्नों का सही उत्तर प्राप्त नही होता जिसके द्वारा भी व्यवहार प्रभावित हो जाता है। प्रलेखों में यह कठिनाई कम उन्पन्न होती है। जैसे कोई शोधकर्ता विधि से संबंधित अध्ययन करना चाहता है तो उसके अभिलेखों से बहुत सी महत्वपूर्ण विश्वसनीय तथा प्रमाणिक जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। इसी प्रकार सरकारी तथा गैर सरकारी संस्थाओं के अभिलेखों द्वारा कई उपयोगी आधार सामग्री प्राप्त की जा सकती है।

15.5 प्रलेखों के समस्याएं

यद्यपि द्वितीयक सामग्री सामाजिक अनुसंधान में अनुसंधानकर्ता को महत्वपूर्ण योगदान देती है, फिर भी इसके प्रयोग के कारण अनुसंधान में अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। इन प्रलेखों के प्रमुख समस्याएं निम्नांकित हैं –

1. **कम विश्वसनीय**– प्रलेखों के उपयोग में कई समस्याएं आती हैं जिनमें से एक यह है कि सरकारी तथा गैर संरकारी संगठनों द्वारा एकत्रित आंकड़े सदैव सत्य नही होते हैं क्योंकि इन आंकड़ो को वैज्ञानिक ढ़ग से संकलित करने में काफी कठिनाइयां उठाानी पढ़ती हैं। जिन्हे इस कार्य हेतु रखा गया है वह पूर्ण ईमानदारी के साथ आंकड़े एकत्र करने के स्थान पर अनुमान से लिख दे या फिर पूर्व के आंकड़ों में थोड़ा बहुत फेरबदल कर नवीन आंकड़ों को प्रस्तुत करे। सरकारी आंकड़ो के संकलन में नियुक्त कर्मचारी अपने उच्च अधिकारी के सम्मुख अपने कार्य को अच्छा बताने की प्रवृत्ति के कारण, इन आंकडों को गलत रूप में प्रस्तुत करता है तो उनकी मौलिकता की विश्वसनीयता में कमी आती है।
2. **आकड़ो की भिन्नता** – प्रलेखों की दूसरी महत्वपूर्ण समस्या एक ही विषय से संबंधित आंकड़ों में भिन्नता का पाया जाना हैं क्योकि किसी भी सरकारी तथा गैर सरकारी संगठन के माध्यम से किसी भी विषय में आंकड़े एकत्र किये जाते है तो वह संस्थाएं आंकड़ो को एकत्र करने से पूर्व उनसे संबंधित मानको और परिभाषाओं से पूर्ण रूप से भिज्ञ नही होते। आंकड़ों की शुद्धता परिभाषा की स्पष्टता पर निर्भर करती है । परिभाषाओं और मानको की भिन्न्ता के कारण कभी कभी ऐसा होता है कि अलग अलग संगठनों द्वारा एकत्रित एक ही विषय से संबंधित आंकड़े अलग अलग होते हैं। साथ ही द्वितीयक सामग्री का उपयोग करने से पूर्व यह जांच भी कर लेनी चाहिए कि आंकड़ो को एकत्र करने में क्या पद्धति अपनायी गई।
3. **लेखक की अभिनति**– सभी प्रलेख लेखकों के विशिष्ट दृष्टिकोणों द्वारा प्रभावित होते है और हो सकता है कि अनुसंधानकर्ता को वास्तविकता की पूर्ण जानकारी न हो। क्योकि वे जिस देशकाल तथा परिस्थितियों में तैयार किये जाते हैं उसे जाानेे के पश्चात ही उसका उपयोग किया जा सकता है। संदर्भ के साथ ही बात का अर्थ तथा महत्व सभी कुछ बदल जाता है। उदाहरणार्थ पहले के इतिहासकार राजाओं और सामंतो के विषय में लिखते थे, जनसाधारण के विषय में उनकी जानकारी कम ही होती थी और उनके विषय में लिखना महत्वपूर्ण नही समझते थे। सामान्यतया यह प्रमाणित करना कठिन होता था कि जिस व्यक्ति के प्रलेखों को द्वितीयक सामग्री के रूप में प्रयोग कर रहे हैं वह एक निष्पक्ष , ईमानदार , संयोग्य व्यक्ति था या नहीं।

इसलिए पुराने वृतांतो को पडने से स्पष्ट हो जाता है कि इसमें दुख सुख, न्याय अन्याय आदि उच्च वर्गों के आंतरिक संबंधों के संदर्भ में ही देखे और प्रस्तुत किये जाते थे। उनका विषय साधारण जनता नही थे। इसलिए प्रलेखों का उपयोग करने से पर्व यह ध्यान रखना आवश्यक है कि किस संदर्भ के लिए और किस के द्वारा लिखे गए।

4. **अपर्याप्त सूचना**— सामान्यतया प्रलेखों द्वारा उपलब्ध सूचनाएं अपर्याप्त होती हैं क्योंकि उन्हें अनुसंधान के उद्देश्य ए अनुसंधानकर्ता द्वारा एकत्रित नही किया जाता। इनका उपयोग करने से पूर्व यह भी ध्यान देना चाहिए इनकों किस उद्देश्य के लिए लिखा गया है। उद्देश्य की दृष्टि से कुछ जानकारी उपयोगी हो सकती है और कुछ हमारे लिए उपयोगी न हो। बहुत सी काल्पनिक बातों का भी या यह हो सकता है कि कुछ बाते भूल से या किसी और कारण से छूट गयी हों।

बोध—प्रश्न 4

(i) प्रलेखों के दो महत्वपूर्ण लाभो तथा समस्याओं का संक्षिप्त रूप में उल्लेख कीजिए ?

....
....
....
....
....
....

15.6 कार्यालय अभिलेख

इनमें वृहद संगठनों के कार्यालयों में भी अभिलेख रखे जाते हैं इन संगठनों में प्रत्येक महत्वपूर्ण मामले पर कोई भी निर्णय लेने से पूर्व निर्णय से संबन्धित आवश्यक जानकारी एकत्रित की जाती है तत्पश्चात संगठन के अधिकारियों द्वारा विभिन्न पहलुओं पर विचार विमर्श होता है फिर निर्णय किया जाता है फिर निर्णय सर्वसम्मति से पारित होने के पश्चात इसके कार्यान्वयन के लिए आदेश दिये जाते हैं और अन्य कार्य किये जाते हैं। इस कार्यवाही से संबन्धित मामले को अभिलेख कहते हैं इसे कार्यालय में कुछ समय तक सुरक्षित रखा जाता है और आवश्यकतानुसार निकाल कर देख लिया जाता है इस अभिलेख की महत्वपूर्ण कार्य यह है कि जैसे ही इससे मिलता जुलता कोई मामला आता है तो अभिलेख देख कर यह आसानी से ज्ञात हो जाता है कि पहले इस मामले पर क्या निर्णय लिया गया तथा इस निर्णय लेने के पीछे कारण क्या था।

प्रत्येक कार्यालयी अभिलेख को मुख्यतः दो भागों में विभाजित किया जाता है ये दोनों भाग बहुधा अलग—अलग फाइलों में सुरक्षित रखे जाते हैं।

1. पत्र व्यवहार : पत्र व्यवहार का तात्पर्य संगठन के अन्य अंगों तथा बाहर के विभागों के साथ जो जानकारी साझा की जाती है उसे पत्र व्यवहार कहा जाता है इसमें विभाग से संबन्धित विभिन्न पहलुओं या विचारों को पत्र व्यवहार के माध्यम से अभिकरणों को प्रेषित किया जाता है तथा एक प्रति को भविष्य के लिए फाइल में सुरक्षित रख दिया जाता है तथा अन्य अधिकरणों में प्राप्त उत्तरों को भी अलग फाइल में रखा जाता है। समय—समय पर विभिन्न विभाग अन्य विभाग से जानकारी प्राप्त करने या विभाग में संबन्धित लिये गये निर्णयों को पत्र व्यवहार के माध्यम से दूसरे विभाग में भेजे जाते हैं।

2. टिप्पणियाँ और आदेश : इसके अन्तर्गत संगठन के अन्दर विभिन्न तलों पर प्रकट किये गये विचार टिप्पणियों के रूप में, लिये गये निर्णय तथा उनके क्रियान्वयन के लिए दिये गये आदेश रहते हैं। इसके अतिरिक्त कुछ अभिलेख दूसरे रूपों में रखे जाते हैं जैसे लेखा एक निश्चित रूप में लेखा पुस्तकों में रखा जाता है।

भारत सरकार एवं राज्य सरकार के अभिलेखागारों में पुराने अभिलेख मिल सकते हैं केन्द्र सरकार का अभिलेखागार नई दिल्ली में स्थित है इसमें कई वर्षों पुराने अभिलेख देखे जा सकते हैं। इसमें कुछ फाइलें पुस्तकें, तथा मानचित्र उपलब्ध हैं इसमें कुछ अभिलेखों के सूक्ष्म छायाचित्र भी बना लिए गये हैं। इसमें महत्वपूर्ण व्यक्तियों और नेताओं के व्यक्तिगत प्रलेख हैं। इन अभिलेखागार में शोधकर्ता को महत्वपूर्ण जानकारी मिल जाती है।

बोध–प्रश्न 5

(i) कार्यालयी अभिलेख को संक्षिप्त रूप में उल्लेख कीजिए ?

....
....
....
....
....
....

15.7 सारांश

आधार सामग्री के स्रोतो के रूप में प्रलेखों का महत्वपूर्ण स्थान है इनके द्वारा समय, धन और श्रम तीनो की बचत होती है। ऐतिहासिक सामग्री की प्राप्ति तथा इससे सामाजिक परिवर्तन के अध्ययन में सहायता मिलती है। अनेक संस्थाओं द्वारा भी ऐसे प्रलेख तैयार किये जाते है तथा इनके द्वारा सामग्री या आंकड़ें अपने निजी प्रयोग के लिए संकलित की जाती हैं। जिनमें बहुमूल्य और उपयोगी सामग्री उपलब्ध करायी जाती है ताकि उस जानकारी में रूचि रखने वाले अनुसंधानकर्ता अपने अध्ययनों को अधिक उपयोगी बना सकें। बृहत स्तर पर उपलब्ध आंकड़े अनुसंधानकर्ता को ऐसा आधार प्रदान करते हैं कि वह सिद्धांतों तक का निर्माण करने में सफल हो जाता है।

15.8 पारिभाषिक शब्दावली

प्रश्नावली–प्रश्नावली सामाजिक अनुसंधान में आंकड़ें संकलन करने के लिए प्रयोग किया जाने वाला एक ऐसा उपकरण हैं जोकि प्रश्नों की सूची या तालिका के रूप में है।

जीवन इतिहास– जीवन इतिहास का तात्पर्य विस्तृत आत्मकथा से है।

जनगणना– जनगणना का तात्पर्य समग्र की समस्त इकाइयों का अध्ययन करना है।

व्यक्तिगत प्रलेख– व्यक्तिगत प्रलेखों का तात्पर्य ऐसं प्रलेखों या लिखित सामग्री से है जिन्हें किसी व्यक्ति द्वारा निजी रूप में लिखा जाता है।

सिंद्धांत– सिद्धांत सामाजिक वास्तविकता के बार में ही अवलोकित प्रस्तावनाओं का सार है।

15.9 बोध–प्रश्नों के उत्तर

बोध–प्रश्न 1
विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर प्रलेखों के प्रकार शीर्षक के अर्न्तगत दिये गये इतिवृत्त के विवरण में से लिखना है।
बोध–प्रश्न 2
विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर प्रलेखों के प्रकार शीर्षक के अर्न्तगत दिये गये जनगणना के आंकड़े के विवरण में से लिखना है।
बोध–प्रश्न 3
विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर प्रलेखों के प्रकार शीर्षक के अर्न्तगत दिये गये व्यक्तिगत प्रलेख के विवरण में से लिखना है।
बोध–प्रश्न 4
विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर प्रलेखों के लाभ तथा प्रलेखों की समस्याएं शीर्षक के अर्न्तगत दिये गये विवरण में से लिखना है।
बोध– प्रश्न 5
विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर कार्यालय अभिलेख शीर्षक के अर्न्तगत दिये गये विवरण में से लिखना है।

15.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

गुडे एंड हाट. 1983. **मैथ्डस इन सोशियल रिसर्च**. मैकग्रू हिल इंटरनेशनल. ऑकलैण्ड.

राम आहूजा. 2005. **सामाजिक सर्वेक्षण एवं अनुसंधान**. रावत पब्लिकेशन्स. दिल्ली.

Singh, K. (1983). Techinques of method of Social Survey Research and Statistics, Prakashan Kendra, Lucknow.

Best J. W. (1959). Research in Education. Prentice-Hall Inc. Englewood Cliffs, New Jercy.

Kothari, C.R. (2009). *Research Methodology Methods and Techniques*. 2nd Revised ed., New Delhi: New Age International (P) Limited, Publishers

15.11 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री

जैन एम. बी. **रिसर्च मैथ्डोलॉजी**. रिसर्च पब्लिकेशन. जयपुर।

त्रिवेदी व शुक्ला. **रिसर्च मैथ्डोलॉजी**. कालेज बुक डिपो .जयपुर.

ज्योति वर्मा. 2007. सामाजिक सर्वेक्षण. डिस्कवरी पब्लिशिंग हाउस. नई दिल्ली।

Gardner, Lindzey and Elliott, (2nd ed.). (1975). The Handbook of Social Psychology. vol II. Amerind Publishing Co. New Delhi.

15.12 निबंधात्मक प्रश्न

1. द्वितीयक आधार सामग्री के प्रमुख प्रकार कौन से हैं ? स्पष्ट कीजिए
2. द्वितीयक आधार सामगी से आप क्या समझते हैं। प्रलेखों के लाभों तथा समस्याओं की विवेचना कीजिए।
3. जनगणना को ऐतिहासिक स्रोत क्यो कहां जाता है? समझाइये।
4. द्वितीयक आधार सामग्री से आप क्या समझते हैं कार्यालय अभिलेख की विवेचना कीजिए।

इकाई–16 सारणीयन (Tabulation)

16.0 उद्देश्य

16.1 प्रस्तावना

16.2 आंकड़ों के प्रस्तुतीकरण के तरीके

16.3 सारिणीयन की विशेषतायें

16.4 सारिणीयन का उद्देश्य

16.5 सारिणीयन के अंग

16.6 सारिणीयन के प्रकार

16.7 सारांश

16.8 शब्दावली

16.9 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

16.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची

16.11 निबन्धात्मक प्रश्न

16.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आपको निम्न सहायता मिलेगी –

- सारिणीयन को समझने में सहायता
- सारिणीयन के उद्देश्य की जानकारी
- सारिणीयन के प्रकारों की जानकारी

16.1 प्रस्तावना

आंकड़ो का वर्गीकरण करने से उनके प्रस्तुतीकरण की समस्या उत्पन्न होती है। आंकड़ो के प्रस्तुतीकरण का अर्थ है कि आंकड़े इतने स्पष्ट तरीके से प्रस्तुत किया जाये जिससे वे अच्छी तरह से समझे जा सके व विश्लेषित किये जा सके।

16.2 आंकड़ों के प्रस्तुतीकरण के तरीके

आंकड़ो के प्रस्तुतीकरण के (Presentation) कई तरीके हैं जिनमें से निम्न तीन प्रमुख हैं –

1– शाब्दिक प्रस्तुतीकरण (Oral Presentation)

2– सारणी द्वारा प्रस्तुतीकरण (Tabulation)

3– रेखीय प्रस्तुतीकरण (Graphic Presentation)

इनमें से दूसरे तरीके अर्थात सारणी प्रस्तुतीकरण का अध्ययन करेंगे –

सारणी : सांख्यिकीय आंकड़ो को पंक्तियों व कॉलम में क्रमबद्ध रूप से व्यवस्थित करने को सारणी कहते हैं।

परिभाषायें : "Table involve the orderly and systematic presentation of numerical data in a form design to elucidate the problem under consideration."

Prof. L. R. Conner

"Table in the broadest sense is an orderly arrangement of data in coloumn and rows."

Prof. M. M. Blaire

अर्थ – इन परिभाषाओं का अध्ययन करके हम इसे संक्षिप्त में इस तरह समझ सकते हैं –
सारणी आंकड़ो का पंक्तियों व स्तंभों का क्रमबद्ध रूप से व्यवस्थित करने की प्रक्रिया है।
पंक्तियां क्षेतिज होती हैं स्तंभ लंबवत रूप से व्यवस्थित होते हैं।

16.3 सारणीयन की विशेषतायें

1– अध्ययन के उद्देश्य के अनुसार सारणी का एक स्पष्ट शीर्षक होना चाहिए

2– इसके द्वारा तुलनात्मक अध्ययन को स्पष्ट किया जाना चाहिए
3– इसका एक पर्याप्त आकार होना चाहिए। यह न तो बहुत ही बड़ी होनी चाहिए और न ही बहुत ही छोटी होनी चाहिए।
4– इसमें संख्याओं को दो अंकों तक प्रदर्शित करना चाहिए व दो अंकों के बाद दशमलव लगाके शून्य लिखा होना चाहिए।
5– सारणी के नीचे एक फुट नोट होना चाहिए जिसमें सार्थकता का स्तर प्रदर्शित किया जाना चाहिए।
6– इसमें अंकों का योग अवश्य होना चाहिए।
7– इसके आंकड़ो का स्रोत अवश्य दर्शाना चाहिए।
9– स्तंभ का पर्याप्त व आकर्षक आकार होना चाहिए।
10– यह साधारण होनी चाहिए जिससे पाठक को समझने में आसानी हो सके। इसे जटिल तरीके से प्रदर्शित नहीं करना चाहिए। इसे आकर्षक दिखना चाहिए।

16.4 सारणीयन का उद्देश्य

1– इसके द्वारा अन्वेषण को जारी रखने में सहायता होती है।
2– इसके द्वारा दो या दो से अधिक समूहों के आंकड़ों की तुलना की जा सकती है।
3– इसके द्वारा आंकड़ो में त्रुटियों का पता चल सकता है।
4– इसके द्वारा कम जगह में परिणामों को स्पष्ट ढंग से प्रदर्शित किया जा सकता है।
5– इसके द्वारा जटिल आंकड़ो का भी सरलीकरण किया जा सकता है।
6– भविष्य में इसे संदर्भ के रूप में प्रयोग किया जा सकता है। भविष्य में होने वाले शोधों के लिए यह मार्गदर्शक का कार्य करती है।

16.5 सारणीयन के अंग

1– इसमें सबसे पहले शीर्षक क्रम डालना चाहिए जिससे परिणामों का क्रमानुसार प्रस्तुतीकरण हो सके।

2– इसके बाद सारणी का उचित शीर्षक लिखा जाता है।

3– इसके पश्चात सारणी का उचित अनुशीर्षक होना आवश्यक होता है जिससे आंकड़ों का प्रस्तुतीकरण व्यवस्थित रूप में हो सके।

4– इसके पश्चात सारणी के नीचे फुट नोट डाला जाता है जिसमें आंकड़ों का स्रोत लिखा जाता है।

सारणी का निर्माण

सारणी का निर्माण करना एक जटिल प्रक्रिया है क्योंकि इसमें विविध प्रकार की सामग्री का एक साथ प्रदर्शन करना होता है। सारणी के निर्माण की प्रक्रिया में निम्नलिखित बातें महत्वपूर्ण है अर्थात इसका निर्माण करते समय निम्न बातों का ध्यान रखना जरूरी है –

शीर्षक– प्रत्येक सारणी का एक उपयुक्त शीर्षक होना चाहिए जो कि उस सारणी में दिखाये गये तथ्यों के गुणों को स्पष्टतः वर्णन करता हो। शीर्षक पूरा, स्पष्ट व आकर्षक होना चाहिए व जहां तक संभव हो दो पंक्तियों से अधिक नहीं होना चाहिए। इसे बड़े अक्षरों में लिखा जाना जाहिये। एक अच्छे शीर्षक में विषय, समय वर्गीकरण के आधार तथा सूचना के श्रोत का सम्मिलित होना अनिवार्य है।

स्तंभ तथा कालम – सारणी का निर्माण करते समय स्तंभों के आकार का विशेष ध्यान रखना चाहिए तथा कागज अथवा पृष्ठ के स्थान को ध्यान में रखते हुए स्तंभों की संख्या व आकार का निर्धारण किया जाना चाहिए। प्रथम स्तंभ (क्रम संख्या) यदि नहीं है और यदि क्रम संख्या वाला स्तंभ है तो उससे अगला स्तंभ, बाकी स्तंभों से बड़ा होता है क्योंकि इसमें विभिन्न श्रेणियों के नाम लिखे जाते है। स्तंभ अधिक बड़ा होना चाहिये तथा इनका आकार समान अनुपात के आधार पर रखा जाना चाहिये ताकि सारणी देखने में आकर्षक लगे।

अनुशीर्षक –प्रत्येक स्तंभ का एक अनुशीर्षक होता है जो तथ्यों की प्रकृति अथवा गुण स्पष्ट करता है। अनुशीर्षक स्पष्ट होना चाहिए तथा इसे सुंदर लेख में लिखा जाना चाहिए। यदि अनुशीर्षक के नीचे लिखी जाने वाली संख्यायें बड़ी लें तो हजारों, लाखों या दस लाख अर्थात् मिलियन में संख्याओं को अनुशीर्षक के नीचे लिखा जाता है।

कतारें अथवा पंक्तियां –क्षैतिज रेखाओं द्वारा बने खानों को (जो कि लेबल है रेखाओ को काटते हैं) कतारे कट जाती है। कतारों में सूचना का आधार सामग्री का कोई भी गुण हो सकता है। वर्णनात्मक भौगोलिक, सामाजिक लक्षण अथवा संख्यात्मक महत्व के आधार पर कतारों बनायी जा सकती हैं।

स्तंभों का क्रम – स्तंभो का क्रम सोच समझकर निर्धारित करना चाहिये पहला स्तंभ बड़ा होता है क्योंकि इसमें श्रेणियों का वितरण होता है साथ ही सारणी को सामान्यता बायें से दायी ओर पढ़ा जाता है इसलिये सर्वाधिक महत्व की सूचनायें बांयी ओर के स्तंभों से शुरू की जानी चाहिए। इतना ही नहीं तुलना किये जाने वाले स्तंभों का साथ–साथ रखा जाना भी अनिवार्य है।

टिप्पणियां – कई बार सारणी में दिये गये तथ्यों के बारे में विशेष सूचना देनी पड़ती है जिसका प्रदर्शन सारणी में संभव नहीं हो पाता। इस प्रकार की परिस्थितियों में सारणी में दिखाये गये आंकड़ो पर कोई संकेत जैसे क, ख, ग इत्यादि देकर नीचे इसी प्रकार का संकेत बनाकर टिप्पणी लिखी जा सकती है।

सारणी की विधियां

सामग्री के सारणीयत के लिये प्रमुख रूप से दो विधियों का प्रयोग किया जाता है हस्तसारणीय तथा यांत्रिक सारणीयन । इसे निम्न प्रकार से स्पष्ट किया जा सकता है।

हस्त सारणीयन – हस्त सारणीयन विधि का प्रयोग उन परिस्थितियों में किया जाता है जबकि सामग्री सीमित हो। अधिक सामग्री होने पर हस्त सारणीयन की अपेक्षा यांत्रिक सारणीयन अधिक प्रचलित व महत्वपूर्ण है वैसे अधिक सामग्री के लिये भी हस्त सारणीयन का प्रयोग किया जाता रहा है। इस प्रकार के सारणीयन में सर्वप्रथम टैली शीट बनाकर आंकड़ों को विभिन्न वर्गो में बांटा जाता है हस्त सारणीयन का भी दो प्रकार से निर्मित किया जा सकता है।

प्रत्येक इकाई को पूरी सूचना कूट संकेतों (कोड शब्दो) द्वारा विभिन्न कार्डो और शीटों पर लिखी जा सकती है तथा इन्हें प्रश्नों एवं गुणों के अनुसार प्रत्यक्ष रूप से लिखा जा सकता है गिनने के लिये टैली शीट बनाई जा सकती है जिसमें एक तरफ (बायी तरफ) श्रेणियों तथा बीच में इकाईयों की संख्या एक–एक करते लिखी जाती है। टैली शीट द्वारा प्रत्येक श्रेणी में आने वाली इकाइयों की संख्या अर्थात आवृति का पता चल जाता है। यांत्रिक सारणीयन के प्रयोग से पहले बड़े–बड़े प्रोजेक्टों में इस विधि का प्रयोग किया जाता था।

हस्त सारणीयन की दूसरी विधि प्रत्येक इकाई (अर्थात सूचना दाता) की सांकेतिक सूचना को पृथक कार्डो पर लिखने के बजाय पहले एक मास्टर कार्ड बनाया जाता है जिसमें एक कलर में विभिन्न सूचनादाताओं के प्रत्येक प्रश्न की सूचना कोड शब्दों में लिखी जाती है। इसमें एक तरह से एक स्तंभ में सूचनादाओं द्वारा किसी प्रश्न के दिये गये उत्तर है मास्टर चार्ट में क्रास सारणीयन दो प्रश्नों को एक साथ पढ़कर किया जा सकता है। मास्टर चार्ट विधि में भी वैली शीट बनायी जाती है तथा इसमें क्रास सारणीयन के लिये एक से अधिक व्यक्तियों की आवश्यकता पड़ सकती है। इसलिये दोनों विधियों में से पहली अर्थात सूचनादाता की सूचना अलग कार्ड पर लिखे जाने की विधि अधिक प्रचलित रही।

यांत्रिक सारणीयन –यांत्रिक सारणीयन जैसा कि इसके नाम से स्पष्ट है वह सारणीयन है जिसमें यंत्रों अर्थात मशीनों का प्रयोग होता है। कम्प्यूटर द्वारा सामग्री के विष्लेशण से पूर्व सामाजिक अनुसंधान में हस्त सारणीयन का ही प्रयोग किया जाता था। अधिक इकाईयों (सूचनादाताओं, मदो अथवा केसों) के

होने पर हस्त सारणीयन अधिक कठिन हो जाती है, इसलिये यांत्रिक सारणीयन का प्रयोग किया जाता है।

यांत्रिक सारणीयन की निम्न प्रक्रियायें है –

1– सर्वप्रथम प्रश्न प्रश्नावली में प्रविष्ट सूचना को संकेतो (कोड) में बदला जाता है।

2– संकेतक सामग्री को पहले कोड शीट पर उतारा जाता है और फिर कार्डो पर उतारा जाता है। सूचना से संबंधित संकेतांक को की पंच द्वारा काटकर बंद कर लिया जाता है।

3– सूचना को कोर्डो पर उतारने के बाद त्रुटियों की जांच करने के लिये एक परीक्षण पंच द्वारा यह देखा जाता है कि कार्डो में छेद आवश्यकतानुसार ठीक किये है या नहीं।

4– फिर कार्डो की उनके विभिन्न गुणों के अनुसार बिजली के छाटने वाले यंत्र में डालकर अलग–अलग कर दिया जाता है। अब यह कार्य कम्प्यूटर के द्वारा किया जाने लगा है।

5– अन्त में यह छांटे हुये कोर्डो की यंत्र द्वारा गणना करके सारणीयन यंत्रों की सहायता से सारणियां तैयार कर ली जाती हैं। अब कम्प्यूटर द्वारा चरों में संबंधी सारणीयन बनाने की योजना बनाकर सारणियां कुछ ही मिनटों में तैयार हो जाती हैं।

आजकल उपर्युक्त यांत्रिक सारणीयन की विधि के स्थान पर सामाजिक विज्ञानों में सर्वाधिक प्रयोग किये जाने वाले साफ्टवेयर SPSS का प्रयोग होने लगा है। इसके द्वारा सभी प्रकार की सांख्यकीय परीक्षण व ग्राफ का निर्माण आसानी से किया जा सकता हैं।

16.6 सारणीयन के प्रकार

सारणीयन को प्रस्तुत करने के निम्न तीन आधार हैं –
1– सारणी के उद्देश्य के आधार पर
2– सारणी की मूलता के आधार पर
3– सारणी के निर्माण के आधार पर

सारणी के प्रकार

- उद्देश्य के आधार पर
  - साधारण उद्देश्य की सारणी
  - विशेष उद्देश्य की सारणी
- मूलता के आधार पर
  - मूल सारणी
  - व्युत्पन्न सारणी
- निर्माण के आधार पर
  - साधारण या एकमार्गी सारणी
  - जटिल सारणी
    - द्विमार्गी सारणी
    - त्रिमार्गी सारणी
    - बहुरूपीय सारणी

16.6.1 उद्देश्य के अनुसार सारणीयन –

उद्देश्य के अनुसार सारणी बनाने के निम्न तीन आधार हैं –

1. **सामान्य उद्देश्य सारणीयन** : यह सारणीयन वह सारणीयन है जिसका कोई विशिष्ट उद्देश्य या विशिष्ट समस्या नहीं होती है।

2. **विशिष्ट उद्देश्य सारणीयन** : विशिष्ट उद्देश्य सारणीयन वह सारणीयन है जो कि किसी विशिष्ट उद्देश्य को दिमाग में रखकर बनाया जाता है।

16.6.2 मूलता के आधार पर सारणीयन –

मूलता के आधार पर सारणी बनाने के निम्न तीन आधार हैं –

1. **मूल सारणीयन** : मूल सारणीयन वह सारणीयन है जिसमें आंकड़े उसी रूप में प्रस्तुत किये जाते हैं जिस रूप में एकत्रित किये गये थे।

2. **व्युत्पन्न सारणीयन** : यह वह सारणीयन है जिसमें आंकड़े उस रूप में नहीं प्रस्तुत किये जाते जिस रूप में ये एकत्रित होते हैं। इसमें आंकड़े पहले अनुपातों या प्रतिशत में बदले जाते हैं और फिर उन्हें प्रस्तुत किया जाता है।

16.6.3 रचना के आधार पर –

रचना के आधार पर सारणीयन के निम्न दो प्रकार हैं –

1. **साधारण सारणीयन** : साधारण सारणीयन जिसे एक मार्गीय सारणीयन भी कहा जाता है में आंकड़े केवल एक विशेषता के आधार पर प्रस्तुत किया जाता है इसे निम्न रूप से समझ सकते हैं :

Table 1.1 Faculty - wise liberary users

Faculties	Number of user
Science	50
Commerce	70
Art	90
Total	210

2. **जटिल सारणीयन** : जटिल सारणीयन में आंकड़ो का प्रस्तुतीकरण दो या अधिक विशेषताओं के आधार पर किया जाता है। ये सारणीयन द्विमार्गीय या त्रिमार्गीय हो सकता है। यह इस पर निर्भर करता है कि क्या दो या तीन विशेषतायें एक साथ प्रस्तुत की गयी हैं।

द्विमार्गीय सारणीयन

इस तरह की सारणी में चर जिनका अध्ययन किया जा रहा है यह दो समूहों में व फिर विभाजित किया जाता है जो आपस में अंतः संबंधित होते हैं। इसे निम्न उदाहरण से समझ सकते हैं –

Table 1.2 Faculty - wise liberary users

Faculties	Number of user		Total
	Girls	Boys	
Science	20	30	50
Commerce	30	40	70
Arts	35	55	90
Total	85	128	210

त्रिमार्गीय सारणीयन –

इस तरह की सारणी में जिन चरों का अध्ययन किया जाता है ये तीन अन्तसंबंधित विशेषताओं में विभाजित की जाती है।

इसका उदाहरण निम्न है–

Table 1.3 Faculty - wise liberary users

Faculties	Number of users						Total
	Girls			Boy			
	I Sem	II Sem	Total	I Sem	II Sem	Total	
Science	15	20	35	20	30	50	85
Commerce	35	30	65	45	40	85	150
Arts	25	35	60	35	85	90	150
Total	75	85	160	100	125	225	365

जटिल सारणीयन या उच्च सारणीयन

यह आंकड़ा विस्तृत अंर्तसंबंधित विशेषताओं के बारे मे जानकारी देती है। जटिल या उच्च सारणीयन को निम्न तरीके से समझ सकते हैं –

Table 1.4 Faculty - wise liberary users

Faculties	Number of users										Total (1) + (2)
	B.A. Ist					B.A. IInd					
	Boys	Girls				Boys		Girls			
	I Sem	II Sem	I Sem	II Sem	Total (1)	I Sem	II Sem	I Sem	II Sem	Total (2)	
Science	15	34	20	54	123	20	45	30	27	122	245
Commerce	35	23	30	34	122	45	37	40	29	151	273
Arts	25	56	35	22	138	35	34	55	36	160	298

सारणीयन की उपयोगिता

सारणीयन सामाजिक अनुसंधान का एक अति आवश्यक अंग है। इसके बिना आंकड़ो से परिणाम निकालना बहुत जटिल हो जायेगा। इसकी उपयोगिता निम्नलिखित है –

1– **सारणीयन सामग्री को सुव्यवस्थित करता है** – सारणीयन विस्तृत रूप अव्यवस्थित सामग्री को क्रमबद्ध करने में सहायक क्योंकि इसमें सामग्री को तार्किक आधार पर सुव्यवस्थित किया जाता है इसके द्वारा आंकड़ो के बारे में निष्कर्ष निकालने में सहायता मिलती है।

2– **सारणीयन विस्तृत सामग्री को संक्षिप्त रूप प्रदान करता है** – सारणीयन बिखरी हुई सामग्री को संक्षिप्त कर रूप में प्रस्तुत करने में सहायक है । इसके द्वारा आंकड़ो को बहुत कम जगह दिखाया जा सकता है।

3– **सारणीयन तुलना को सरल बनाना** – सारणीयन तुलना का कार्य अति सरल बना देता है क्योंकि इसमें तुलनात्मक सामग्री को एक साथ व्यवस्थित किया जाता है जिससे इसका महत्व स्पष्ट हो जाये ।

4–जटिल आंकड़ो का भी सरलीकरण – सारणीयन के द्वारा ऐसे आंकड़े जो जटिल होते हैं उन्हें सरलीकृत किया जा सकता है।

5–भविष्य में होने वाले शोधों के लिये मार्गदर्शिका – सारणीयन के द्वारा जटिल से जटिल आंकड़ो को व्यवस्थित रूप दिया जाता है। व्यवस्थित रूप होने के कारण यह भविष्य में होने वाले शोधों के लिये मार्गदर्शक का काम करता है।

6–सारणीयन सांख्यिकीय विश्ले□ाणमें सहायक – सारणीयन सामग्री के सांख्यिकीय विष्लेशणअर्थात माध्य प्रवृर्त्तिया, विचलन व सहसम्बन्ध इत्यादि निकालने अथवा सामग्री को ग्राफ इत्यादि द्वारा प्रदशित करने में सहायक है ।

संक्षेप में सारणियां वर्गीकृत समंको को सरल, संक्षिप्त व सुव्यवस्थित रूप से प्रस्तुत करके सांख्यिकीय विष्लेशण में सरलता मिलती।

सारणीयन की सीमायें –

1– केवल गणनात्मक सामग्री के प्रदर्श में सहायक – सारणीयन की सबसे बडी कमी यह है कि इसके द्वारा केवल गणात्मक सामग्री का प्रदर्शन किया जा सकता है , गुणात्मक (Qualitative) सामग्री का नहीं। सारणी में इतना स्थान ही नहीं होता कि किसी विशेष गणात्मक तथ्य की आंशिक गुणात्मक व्याख्या भी की जा सके । सामाजिक अनुसन्धान में जो तथ्य एकत्रित किए जाते हैं । वर्णात्मक अध्ययनों में सारणीयन उपयुक्त नहीं है ।

2–सामान्य व्यक्तियों की समझ से बाहर – सारणीयन द्वारा जिस सामग्री की प्रदर्शन किया जाता है ,उसे सामान्य व्यक्तियों द्वारा समझने में कठिनाई हो सकती है । वास्तव में ,इसका उपयोग केवल विशिष्ट एवं उच्च ज्ञान वाले व्यक्तियों तक ही सीमित है ।

3–सीमित उपयोग – सारणीयन का सीमित पैमाने पर उपयोग किया जा सकता है। एक सारणी में संपूर्ण सामग्री का प्रयोग नहीं किया जा सकता। गुणात्मक आंकड़ो का प्रदर्शित न किये जाने के कारण इसका उपयोग सीमित हो जाता।

वर्तमान में आंकड़ो को यथासंभव बिना सारणी के प्रयोग का प्रचलन बढ़ गया है। कुछ अनुसंधान पत्रिकाओं के निर्देशानुसार सामग्री का आंकड़ो को वैसे ही सरलता से समझाया जा सकता है तो सारणी का प्रयोग नहीं किया जाना चाहिए।

16.7 सारांश

इस तरह से हम देखते हैं कि सारणीयन के द्वारा हम आंकड़ो की पंक्तियों व स्तंभों में परिवर्तित करके उसे उद्देश्य के लिये और अधिक उपयोगी बना सकते हैं।

16.8 शब्दावली

सारिणीयन – सांख्किीय आंकड़ों को पंक्तियों व स्तम्भों में क्रमबद्ध रूप से व्यवस्थित करने को सारिणीयन (Tabluation) कहते हैं। इसमें पंक्तियॉ क्षैतिज होती हैं व स्तम्भ लंबवत रूप से व्यवस्थित होते हैं।

16.9 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न –

1. सांख्किीय आंकड़ों को .... व .... में क्रमबद्ध रूप से प्रस्तुत करने को सारिणीयन कहते हैं।
2. पंक्तियॉ .... होती हैं व स्तम्भ .... रूप में व्यवस्थित होते हैं।
3. उद्देश्य के आधार पर सारिणीयन के दो प्रकार हैं .... व ....
4. साधारण सारिणीयन को कहा जाता है ....

उत्तर –

1. पंक्तियॉ व स्तम्भ
2. क्षैतिज व लम्बवत्
3. साधारण उद्देश्य सारिणीयन व विशेष उद्देश्य सारिणीयन
4. एकमार्गीय सारिणीयन

16.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. Research Methodology : Methods and Technique – C.R. Kothari
2. Tabluation, Analysis, Interpretation of data – www.shodhganga.in.

16.11 निबन्धात्मक प्रश्न

1. सारणीयन से आप क्या समझते हैं ? इसके प्रकारों को बताइये।
2. सारणीयन के अर्थ व विशेषताओं को बताइये।
3. सारणीयन के उद्देश्य व अंग बताइये।

इकाई– 17 तथ्यों का संकेतीकरण
Coding of Data

17.0 इकाई का उद्देश्य
17.1 प्रस्तावना
17.2 तथ्यों के संकेतीकरण का अर्थ एवं परिभाषा
17.2.1 तथ्यों के संकेतीकरण की विशेषतायें
17.2.2 तथ्यों के संकेतीकरण के उद्देश्य
17.2.3 तथ्यों के संकेतीकरण को लाभप्रद बनाने वाली परिस्थितियां
17.2.4 तथ्यों के संकेतीकरण के प्रधान चरण
17.2.5 तथ्यों के संकेतीकरण के विभिन्न स्तर
17.2.6 प्रश्नावली अथवा साक्षात्कार अनुसूची में संकेतों के लिखे जाने के विभिन्न अवसर
17.2.7 तथ्यों के संकेतीकरण एवं सारिणीकरण
17.2.8 संकेतों का चुनाव
17.2.9 तथ्यों के संकेतीकरण के लिये आवश्यक निर्देश
17.2.10 तथ्यों के संकेतीकरण के दौरान विश्वसनीयता की समस्यायें
17.2.11 संकेत निर्धारकों का प्रशिक्षण
17.3 सारांश
17.4 शब्दावली
17.5 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
17.6 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
17.7 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
17.8 निबंधात्मक प्रश्न

17.0 इकाई का उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई का प्रमुख उद्देश्य अग्रलिखित है–

1. तथ्यों के संकेतीकरण का अर्थ एवं परिभाषा के बारे में जान सकेंगे।
2. तथ्यों के संकेतीकरण की विशेषताओं पर प्रकाश डाल सकेंगे।
3. तथ्यों के संकेतीकरण के उद्देश्यों के बारे में लिख सकेंगे।
4. तथ्यों के संकेतीकरण को लाभप्रद बनाने वाली परिस्थितिओं की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

5. तथ्यों के संकेतीकरण के प्रधान चरणों पर प्रकाश डाल सकेंगे।
6. तथ्यों के संकेतीकरण के विभिन्न स्तरों की जानकारी हासिल कर सकेंगे।
7. प्रश्नावली अथवा साक्षात्कार अनुसूची में संकेतों के लिखे जाने के विभिन्न अवसरों को पहचान सकेंगे।
8. तथ्यों के संकेतीकरण एवं सारिणीकरण को लिख सकेंगे।
9. संकेतों का चुनाव कैसे किया जाता है? के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
10. तथ्यों के संकेतीकरण के लिये आवश्यक निर्देशों पर प्रकाश डाल सकेंगे।
11. तथ्यों के संकेतीकरण के दौरान विश्वसनीयता की समस्याओं को लिख सकेंगे।
12. संकेत निर्धारकों का प्रशिक्षण किस प्रकार होना चाहिए? के बारे में लिख सकेंगे।

17.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई आपके सामने प्रस्तुत है। इस इकाई को आपके सामने इस लिए प्रस्तुत किय जा रहा क्योंकि जब अनुसंधान किया जाता है तब तथ्यों की मात्रा इतनी अधिक हो जाती है जिसको एक एक करके विष्लेशणएवं सारिणीकरण करना बहुत ही कठिन हो जाता है। अतः एकत्रित तथ्यों को संकेत के माध्यम से उनका संकेतीकरण किया जाता है जिससे उनको आसानी से छोटा किया जा सके। वास्तव में तथ्यों के प्रक्रियाकरण के सम्बन्ध में श्रेणियों के निर्धारण के बाद प्रत्येक श्रेणी के लिए एक संकेत या अंक निर्धारण किया जाता है जिसके परिणामस्वरूप तथ्यो का सारणीकरण तथा गणन अधिक विस्तृत रूप से सम्भव हो पाता है। यदि तथ्य सामग्री बहुत ही संक्षिप्त है तो प्रायः प्रक्रियाकरण के लिये तथ्यों के संकेतीकरण की आवश्यकता प्रतीत नहीं होती है क्योंकि सामान्यतः इसका प्रयोग बड़े पैमाने के सर्वेक्षणों में करने की परम्परा रही है। परन्तु प्रायः छोटे पैमाने के अनुसंधानों एवं सर्वेक्षण में भी तथ्यों की संख्या बहुत अधिक नहीं तो बहुत कम भी नहीं रहती है तथा कभी–कभी अत्यधिक जटिल होती है। अतः वहॉ भी तथ्यों के संकेतीकरण के अभाव में समुचित सारिणीकरण सम्भव नहीं है। तथ्यों का संकेतीकरण वह क्रिया है जिसके द्वारा तथ्य के प्रत्येक पद को एक सांकेतिक नाम देकर उसकी प्रकृति के अनुकूल एक श्रेणी में रखा जाता है। इस प्रकार उस श्रेणी में रखे गये सांकेतिक नामों को गिनकर तथ्य के अन्तर्गत उस वर्ग की कुल संख्या का पता लगता है। इसको और अधिक स्पष्ट करते हुए यह कहा जा सकता है कि तथ्यों का सांकेतिक नाम एक प्रतीक है जो एक या अधिक अक्षरों में हो सकता है अथवा एक या अधिक अंकों के रूप में भी हो सकता है।

17.2 तथ्यों के संकेतीकरण का अर्थ एवं परिभाशा

तथ्यों का संकेतीकरण सामाजिक अनुसंधान के अन्तर्गत अत्यधिक महत्वपूर्ण है, क्योंकि इसके अन्तर्गत आकड़ों को विभिन्न वर्गो में संगठित करते हुए उन्हें संकेत या अंक निर्धारित किये जाते हैं जिसके परिणामस्वरूप आकड़ों का विष्लेशणएवं विवेचन अधिक वृहद रूप से सम्भव हो जाता है। सामान्य बोलचाल में तथ्यों का संकेतीकरण वह क्रिया विधि है जिसके द्वारा तथ्य के प्रत्येक पद को एक सांकेतिक प्रतीक अथवा अंक प्रदान करके उसकी प्रकृति के अनुरूप एक श्रेणी में रखा जाता है।

तथ्यों के संकेतीकरण के अर्थ तथा परिभाषा के बारे में कुछ समाजशास्त्रियों, जैसे–क्लेयर सेल्टिज, पार्टन एवं गुडे तथा पाल हाट द्वारा दिये गये परिभाषाओं का अवलोकन किया जा सकता है। इन विद्वानों द्वारा दिये गये परिभाषाओं को अग्रलिखित प्रस्तुत किया जा रहा है–

क्लेयर सेल्टिज तथा अन्य के मत में– ''तथ्यों का संकेतीकरण वह प्राविधिक कार्यरीति है जिसके द्वारा ऑकड़े श्रेणीबद्ध किए जाते हैं। सांकेतिकरण के माध्यम से मौलिक ऑकड़े ऐसे संकेतों–प्रायः

अंकों–के रू‍ में परिवर्तित कर दिए जाते हैं जिन्हें सारिणीबद्ध किया जा सकता है तथा गिना जा सकता है।''

पार्टन के विचार मे– ''सांकेतिकरण के अनतर्गत प्रत्येक ऐसे उत्तर को एक संख्या अथवा संकेत निर्धारित किया जाता है जो एक पूर्व निर्धारित वर्ग में पाया जाता है। दूसरे शब्दों में सांकेतिकरण को सारिणीकरण के लिए आवश्यक वर्गीकरण की प्रक्रिया के रूप में समझा जा सकता है।''

गुडे तथा पाल हाट के अनुसार– ''सांकेतिकरण एक क्रिया है जिसके द्वारा ऑकड़े वर्गों में संगठित किए जाते हैं, तथा प्रत्येक मद को उस वर्ग के अनुसार जिसमें यह पाया जाता है, एक संकेत अथवा संख्या प्रदान की जाती है।''

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि तथ्यों के संकेतीकरण की परिभाषा एक ऐसी प्रक्रिया के रूप में की जा सकती है जिसके अन्तर्गत एक पूर्व निर्धारित वर्ग के अन्तर्गत पाए जाने वाले प्रत्युत्तर को अंक अथवा संकेत निर्धारित किये जाते हैं, जो गिने जा सकते हैं तथा जिन्हें सारिणी के रू‍ में प्रस्तुत किया जा सकता है।

17.2.1 तथ्यों के संकेतीकरण की विशेशतायें

तथ्यों के संकेतीकरण की विशेषताएं निम्नलिखित हैं–

1. यह तथ्यों को वर्गों एवं श्रेणियों में संगठित करने की क्रिया विधि है।
2. यह प्रत्येक पद को वर्ग व श्रेणी के अनुकूल प्रतीक व संकेत प्रदान करती है।
3. यह अपरिमार्जित या अपरिष्कृत तथ्यों को प्रतीकों मे परिवर्तित कर उनका सारिणीयन तथा गिनती करती है।
4. इसकी प्रमुख क्रिया विधि श्रेणीकरण की है।

17.2.2 तथ्यों के संकेतीकरण के उद्‌देश्य

सी0 ए0 मोजर के अनुसार–''समाजिक अनुसंधान के अन्तर्गत तथ्यों के संकेतीकरण का उद्‌देश्य एक प्रश्न के उत्तरों को अर्थपूर्ण श्रेणियों मे वर्गीकृत करना है ताकि उनके आवश्यक प्रतिमान सामने आ सकें।'' संक्षेप में संकेतीकरण के मुख्य उद्‌देश्य अग्रलिखित हो सकते हैं–

1. तथ्य सामग्री के श्रेणीयन को सम्भव बनाना।
2. सारिणीयन तथा गणन क्रिया को सरल तथा संक्षिप्त बनाना।
3. तथ्यों की तर्कपूर्ण व्यवस्था करके उन्हें आसानी से समझने योग्य बनाना।
4. सामग्री को इस योग्य बनाना कि विष्लेशणतथा निर्वचन अधिक विस्तृत रूप से सम्भव हो सके।

17.2.3 तथ्यों के संकेतीकरण को लाभप्रद बनाने वाली परिस्थितियां

तथ्यों के संकेतीकरण निम्न परिस्थितियों में अधिक लाभप्रद हो जाता हैः

1. जब उत्तरदाताओं की संख्या अधिक होती है।
2. जब पूछे गये प्रश्नों की संख्या पर्याप्त रूप से बड़ी होती है।
3. जब एकत्रित की गई सूचना का हम जटिल सांख्यिकीय विष्लेशणकरना चाहते हैं।

बोध प्रश्न–1

टिप्पणी : (क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

(ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

बताइए कि निम्नलिखित सही है या गलत और संबंधित खाने में टिक (✓) का निशान लगाइए।

	सही	गलत
1 तथ्यों का संकेतीकरण एक क्रिया है।	☐	☐
2 तथ्यों का संकेतीकरण तथ्यों को वर्गों एवं श्रेणियों में संगठित करने की क्रिया विधि है।	☐	☐
3 यह प्रत्येक पद को वर्ग व श्रेणी के अनुकूल प्रतीक व संकेत प्रदान करती है।	☐	☐
4 यह अपरिमार्जित या अपरिष्कृत तथ्यों को प्रतीकों मे परिवर्तित कर उनका सारिणीयन तथा गिनती नहीं करती है।	☐	☐
5 इसकी प्रमुख क्रिया विधि श्रेणीकरण की नहीं है।	☐	☐
6 जब उत्तरदाताओं की संख्या अधिक होती है तो संकेतीकरण अनुसंधान में लाभ प्रदान करती है।	☐	☐

अभ्यास प्रश्न–1

तथ्यों के संकेतीकरण का अर्थ एवं परिभाषा के बारे में एक संक्षिप्त ब्यौरा तैयार कीजिए।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

बोध प्रश्न–17

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

तथ्यों के संकेतीकरण की विशेषतायें, उद्देश्य तथा लाभप्रद बनाने वाली परिस्थितियों का वर्णन कीजिए और उत्तर लिखने से पहले मुख्य शब्दों पर निशान लगाइयें।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

17.2.4 तथ्यों के संकेतीकरण के प्रधान चरण

तथ्यों के संकेतीकरण की प्रक्रिया में दो प्रमुख चरण पाए जाते हैं। सर्वप्रथम यह निश्चित किया जाता है कि किन श्रेणियों का प्रयोग किया जाये। इसे हम सांकेतिकीकरण का ढॉचा कहते हैं। इसके बाद उत्तरदाताओं द्वारा दिये गये व्यक्तिगत प्रत्युत्तरों को इन श्रेणियों में निर्धारित किया जाता है। इस चरण को उत्तरों का सांकेतिकीकरण कहते हैं।

17.2.5 तथ्यों के संकेतीकरण के विभिन्न स्तर

समाजिक अनुसंधान के अन्तर्गत तीन स्तरों पर सांकेतिकीकरण का प्रयोग किया जा सकता हैः

1. **सूचना प्रदान करते समय उत्तरदाआओं द्वाराः** उत्तरदाताओं से इस बात का निवेदन किया जाय कि वे स्वयं अपने उत्तरों को वर्गीकृत रूप में प्रदान करें। उदाहरण के लिए उनसे यह पूँछा जाय कि विभिन्न दिये हुए आय समूहों में आय किस समूह में आती है। यहां पर साक्षात्कार अनुसूची या प्रश्नावली पहले से ही संकेतबद्ध होती है।
2. **उत्तरदाताओं द्वारा सूचना दिए जाने के बाद तथा इसके अभिलेखन के पूर्व साक्षात्कारकर्ता द्वाराः** इस स्तर पर साक्षात्कारकर्ता उत्तरदाता द्वारा प्रदान की गई सूचना को लिखने से पूर्व संकेतबद्ध करता है और लिखते समय इन्हीं संकेतों को अनुसूची में भरता है। यहां पर साक्षात्कार अनुसूची के प्रश्न संकेतबद्ध हो भी सकते हैं और नहीं भी किन्तु यदि ये संकेतबद्ध हों तो अधिक अच्छा होता है।
3. **कार्यालय के अन्तर्गत संकेत निर्धारकों द्वाराः** इस स्तर पर या तो उत्तरदाता स्वयं प्रश्नावली के विभिन्न प्रश्नों के उत्तर देकर डाक द्वारा वापस भेज देता है या साक्षात्कारकर्ता उत्तरदाता से विभिन्न प्रश्नों के उत्तर प्राप्त करते हुए इन्हें यथा स्थान लिखकर अनुसूची को कार्यालय में वापस दे देता है और इस प्रकार प्रश्नावली अथवा साक्षात्कार अनुसूची के वापस आ जाने पर कार्यालय के अन्तर्गत सांकेतिकीकरण के लिए नियुक्त किये गये संकेत निर्धारकों द्वारा संकेत निर्धारित किये जाते हैं।

अभ्यास प्रश्न–17

तथ्यों के संकेतीकरण के विभिन्न स्तरों के बारे में लिखिए।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

17.2.6 प्रश्नावली अथवा साक्षात्कार अनुसूची में संकेतों के लिखे जाने के विभिन्न अवसर

ये विभिन्न अवसर इस प्रकार हैं:

1. **पहले से ही संकेतबद्ध की गई अनुसूची अथवा प्रश्नावलीः** यहां पर प्रत्येक प्रश्न के प्रत्येक सम्भावित उत्तर के दूसरी ओर, प्रायः दाहिनी ओर, संकेत अथवा अंक लिखे हुए होते

हैं इन संकेतों अथवा संख्याओं पर निशान लगाने या गोला बनाने का कार्य उत्तरदाता द्वारा या साक्षात्कारकर्ता द्वारा किया जाता है। पहले से ही संकेतबद्ध किये गये प्रश्नों का सबसे बड़ा लाभ यह है कि इससे समय एवं धन की बचत होती है क्योंकि कोड शीट पर आंकड़ों के उतारे जाने की आवश्यकता का अनुभव नहीं होता और इस प्रकार उतारन की इस प्रक्रिया के दौरान की जाने वाली त्रुटियों से हमें छुटकारा मिल जाता है। इसकी सबसे बड़ी कमी यह है कि पूर्व सांकेतिकीकरण प्रभावपूर्ण रूप से तभी सम्भाव हो पाता है जबकी अध्ययन किए जाने वाले समग्र का पहले से सर्वेक्षण कर लिया जाए ताकि सभी सम्भावित उत्तरों को सांकेतिकीकरण की व्यवस्था में सम्मिलित किया जा सके।

2. **क्षेत्र के अन्तर्गत भरी गयी अनुसूचियों में लिखी गयी सूचना के समीप संकेतों का लिखा जानाः** सर्वाधिक प्रचलित सांकेतिकीकरण की कार्यरीति यही है जिसके अन्तर्गत क्षेत्रीय कार्य एवं सम्पादन का कार्य समाप्त हो जाने पर अनुसूची पर संकेतों को निर्धारित किया जाता है। इसका सबसे बड़ा लाभ यह है कि इसके अन्तर्गत हम आंकड़ों को कोड शीट पर उतारने में होने वाले अतिरिक्त समय एवं धन के व्यय तथा की जाने वाली त्रुटियों से बच जाते हैं किन्तु इसकी सबसे बड़ी कमी यह है कि अनुसूची पर संकेतों के लिखे जाने के लिए पर्याप्त स्थान न बचने के कारण प्रायः अस्पष्टता उत्पन्न होती है।
3. **प्रतिलेखन पत्र (transcription sheet) अथवा सारांश पत्र पर संकेतों का निर्धारणः** यहां पर एक प्रतिलेखन पत्र पर जो सांकेतिकीकरण के उद्देश्य को ध्यान में रचाते हुए तैयार किया जाता है। आंकड़ों को संकेतों के रूप में भर दिया जाता है। संकेतों को भरते समय अनुसूची पर भी इन्हें लिख दिया जाता है ताकि इनकी जांच सम्भव हो सके। प्रतिलेखन पत्रों का प्रयोग करने का निर्णय लिए जाने पर हमारे प्रयासों में उस समय बचत हो सकती है जब हम सम्पादन, अंकगणितीय गणनाओं तथा सांकेतिकीकरण एक साथ करते हैं।

प्रतिलेखन पत्र तैयार करते समय निम्न बातों को ध्यान में रखा जाना चाहिएः

1. सभी इकाइयों से सम्बन्धित सूचना युक्त बहुत लम्बे चौड़े प्रतिलेखन पत्र का प्रयोग नहीं किया जाना चाहिए क्योंकि इस पर एक ही व्यक्ति एक समय पर कार्य कर सकता है, किसी एक इकाई विशेष के प्रत्युत्तरों को खोजने में कठिनाई होती है, यह अत्यधिक स्थान घेरती है, इसके भरने में कठिनाई होती है, व्यक्तिगत उत्तरदाताओं नर ध्यान देने में कठिनाई का अनुभव होता है, तथा उत्तरदाताओं के कोड संख्याओं के अनुसार भरे जाने पर ऐसे नये उत्तरदाताओं के लिए कोई प्राविधान करना कठिन हो जाता है जिनकी कोड संख्या बदल गई हो।
2. यदि सारिणियों का निर्माण हाथ से किया जाना हो तो प्रतिलेखन पत्र छोटा तथा टिकाऊ होना चाहिए।
3. सम्पादन एवं सांकेतिकीकरण को ध्यान में रखने अतिरिक्त मशीनों की सहायता से किये जाने वाले सारिणीकरण के दौरान की जाने वाली कार्ड छिद्रण (punching) की क्रिया को भी ध्यान में रखते हुए प्रतिलेखन पत्र का स्वरूप निर्धारित किया जाना चाहिए।
4. प्रतिलेखन पत्र पर लिपिकों, संकेतकर्ताओं तथा जॉचकर्ताओं को अपने नाम लिखने अथवा हस्ताक्षर करने के लिए भी कुछ स्थान प्रदान किया जाना चाहिए।

प्रतिलेखन पत्र का एक उदाहरण प्रस्तुत हैः

उत्तरदाता का नाम	आयु समूह				आय समूह		
	170 वर्श से नीचे	170—40 वर्श	40—60 वर्श	60 वर्श से ऊपर	1700 रू0 से कम	1700—400 रू0	400—600रू0
	1	17	3	4	1	17	3
श्राम							
भयाम							
मेहन							
दिनेश							

4. **संकेत पत्रों पर:** यहॉ पर विशेष प्रकार के संकेत पत्र तैयार किये जाते हैं। इन्हें संकेत निर्धारकों द्वारा मौलिक अनुसूची में लिखी गई सूचना के आधार पर भरा जाता है।

17.2.7 तथ्यों के संकेतीकरण एवं सारिणीकरण

सांकेतिकीकरण का स्वरूप सारिणीकरण के ढंग पर निर्भर करता है। यदि सारिणीकरण हाथ की सहायता से किया जाना है तो सांकेतिकीकरण के लिए संकेतों का प्रयोग किया जाता है या कुछ शब्दों का ही संक्षेप में प्रयोग किया जा सकता है। किन्तु मशीन की सहायता से जब हम सारिणीकरण करना

चाहते हैं तो आंशिक संकेतों का प्रयोग आवश्यक हो जाता है। इसके अतिरिक्त आंकिक संकेतों की संख्या 117 या 13 से अधिक नहीं होती क्योंकि छिद्रण पत्र पर एक स्तम्भ में 117 या 13 पंक्तियां होती हैं। यह सत्य है कि मशीनों की सहायता से किए जाने वाले सारिणीकरण के लिये तैयार किये गये संकेतों को हाथ से किये जाने वाले सारिणीकरण में प्रयोग में लाया जा सकता हैं।

17.2.8 संकेतों का चुनाव

मौलिक आंकड़ों को वर्गीकृत करने के लिए वर्गों का चुनाव इकाइयों के आवंटन एवं प्रस्तावित सारिणीकरण की दृष्टि से किया जाना चाहिए। इस दिशा में कुछ सामान्य सिद्धांत एवं झुकाव निम्न **हैं:**

1. अंतिम रूप से प्रकाशित सारिणीयों में पाये जाने वाले वर्गीकरण की तुलना में इस स्तर पर अधिक विस्तृत वर्गीकरण का प्रयोग किया जाना चाहिए।
2. यदि सारिणियों का निर्माण हाथ से किया जाना है तो संकेतों का अंकों के रूप में पाया जाना आवश्यक नहीं होता।
3. यदि छिद्रित पंत्रों पर संकेतों को छिद्रित किया जाना है तो यह वांछनीय है कि अधिकतर मदों के लिए 10 या इससे कम वर्गों का निर्माण किया जाए।
4. यदि साक्षात्कारकर्ता द्वारा अनुसूची पर लिखी गयी कुछ सूचना को ही संकेतबद्ध किया जाना है, सम्पूर्ण को नहीं, तो उन मदों या संख्याओं को जिन्हें संकेतबद्ध किया जाना है, एक दूसरे रंग की स्याही से गोलाबद्ध कर दिया जाना चाहिए।
5. स्केतों के निर्धारण के बाद किन्तु सारिणीकरण के पूर्व इनकी जॉच यथार्थता तथा पूर्णता की दृष्टि से की जानी चाहिए। सारिणियों के अन्तर्गत अशुद्धियों का दूर किया जाना व्यक्तिगत अशुद्ध संकेतों के शोधन कार्य की अपेक्षाकृत अधिक कठिन कार्य है।
6. यदि मदों को संकेतबद्ध करने के पूर्व जटिल गणितीय गणनाओं की आवश्यकता होती है तो इन दोनों क्रियाओ को अलग–अलग देखा जाना चाहिए तथा पहले गणितीय गणना का कार्य समाप्त किया जाना चाहिए। तभी संकेत निर्धारण की दिशा में आगे बढ़ने का प्रयास किया जाना चाहिए।
7. संकेतिकीकरण एक दैनिक क्रिया के रूप में किया जाना चाहिए। कुछ जटिल तथा विशेष ध्यान देने की आवश्यकता रखने वाले प्रश्नों का सांकेतिकीकरण इस कार्य में विशेष निपुणता रखने वाले व्यक्तियों को सौंपा जाना चाहिए।
8. संकेतकर्ताओं के रूप में कार्य करन वाले कर्मचारियों का चुनाव कार्य करने वाले सम्पादकों एवं साक्षात्कारकर्ताओं तथा कार्यालय के अन्य कर्मचारियों में से किया जाना चाहिए जो अध्ययन से भली–भांति परिचित हों।
9. सांकेतिकीकरण से संबंधित विस्तृत एवं लिखित निर्देश तैयार किए जाने चाहिए ताकि विभिन्न संकेत निर्धारकों द्वारा किए गये कार्य में एकरूपता बनी रह सके।
10. आंकिक आंकड़ों के संदर्भ में सांकेतिकीकरण का कार्य सम्पादित करते हुए पहले से ही यह निश्चित कर लेना चाहिए कि इन्हें पूर्णांक के रूप में परिवर्तित करने के लिए किन नियमों एवं कार्यरीतियों को प्रयोग में लाया जाएगा तथा इस दिशा में स्पष्ट निर्देश प्रदान किये जाने चाहिए।
11. यथासम्भव सामान्य रूप से प्रयोग में लाए गए प्रमाणीकृत वर्गीकरणों को प्रयोग में लाया जाना चाहिए।

अभ्यास प्रश्न–3

प्रश्नावली अथवा साक्षात्कार अनुसूची में संकेतों के लिखे जाने के विभिन्न अवसरों पर अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

बोध प्रश्न–3

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

संकेतों के चुनाव के बारे में लिखिए और उत्तर लिखने से पहले मुख्य शब्दों पर निशान लगाइयें।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

17.2.9 तथ्यों के संकेतीकरण के लिये आवश्यक निर्देश

निर्देशों से संबंधित प्रमुख तथ्य निम्न है:

1. संकेतकर्ताओं से इस बात का निवेदन किया जाना चाहिए कि वे अपने आप को उन निर्देशों से अवगत कराएं जो परिगणकों, सम्पादकों, कार्ड छिद्रकों या कार्ड छॉटने वालों को प्रदान किए गये हैं।
2. सांकेतिकीकरण के उद्देश्यों एवं इसके अन्तर्गत सम्मिलित विभिन्न चरणों को स्पष्ट किया जाना चाहिए।
3. उन कसौटियों का स्पष्ट उल्लेख किया जाना चाहिए जिनका प्रयोग करते हुए संकेत निर्धारक यह निश्चित कर सकता है कि कोई विशिष्ट अनुसूची सांकेतिकीकरण की दृष्टि से स्वीकार किए जाने योग्य है या नहीं। उदाहरण के लिए यह तय कर दिया जाए कि इन विशिष्ट प्रश्नों के उत्तर न दिए होने पर संकेतकर्ता को प्रश्नावली को अस्वीकृत कर देना चाहिए।
4. उन कसौटियों का स्पष्ट वितरणप्रस्तुत किया जान चाहिए जिनका प्रयोग करते हुए संकेत निर्धरक को यह निश्चित करना है कि एक विशिष्ट मद स्वीकार्य है या नहीं अर्थात् यह सारिणीकरण की दृष्टि से उपयुक्त है अथवा नहीं।
5. उस क्रम का स्पष्ट विवरण प्रस्तुत किया जाए जिसमें मदों को संकेत बद्ध किया जाना है। उदाहरण के लिए प्रत्येक अनुसूची के किसी विशिष्ट मद को एक साथ संकेतबद्ध किया जाए अथवा एक अनुसूची के सभी मदों के संकेतबद्ध कर लेने बाद दूसरी अनुसूची को संकेतबद्ध करने का कार्य प्रारम्भ किया जाएं
6. संकेतों को भरने के विषय में विस्तृत विवरण प्रदान किया जाए।
   (अ) स्थान सम्बंधी विवरण स्पष्ट रूप से दिए जाये अर्थात यह बताया जाए कि संकेत को हांसिये में या मद मे ऊपर या मद के नीचे या मद के दाहिनी या बांई ओर कहॉ लिखा जाएगा।
   (ब) किन मदों को गोले से घेर दिया जाय ताकि यह पता चल सके कि साक्षात्कारकर्ता ने पहले ही उत्तर को संकेत के रूप में लिख रखा है।
   (स) संकेत निर्धारण के लिए किस रंग की पेन्सिल या स्याही का प्रयोग किया जाए।
   (द) संकेतों को स्पष्ट रूप से लिखा जाए।
   (य) जहॉ कहीं त्रुटि दिखाई दे वहॉ काटा न जाए या उसी के ऊपर न लिखा जाए बल्कि त्रुटि को रेखांकित कर दिया जाए और अलग से स्पष्ट रूप से लिख दिया जाए।
7. संकेतकर्ताओं को चाहिए कि वे अंतिम रूप से संशोधित की गई सूचना को ही संकेतबद्ध किया करें।
8. यदि कोई सीमान्त इकाई दृष्टिगोचर हो या यदि किसी इकाई को वर्गीकरण की पूर्व निर्धारित व्यवस्था में न रखा जा सकता हो तो संकेत निर्धारक को चाहिए कि वह अपने पर्यवेक्षक के साथ आवश्यक सलाह मशविरा कर ले।
9. संकेतबद्ध किए जाने वाले प्रत्येक मद की विस्तृत परिभाषा तथा विभिन्न संकेत निर्धारित किए जाने वाले प्रत्येक उत्तर के प्रकारों का स्पष्ट रूप से उल्लेख किया जाना चाहिए।
10. स्केंत निर्धारकों को उन गलतियों या त्रुटियों के विभिन्न प्रकारों के विषय में चेतावनी दी जानी चाहिए जो उन्हें सांकेतिकीकरण के पूर्व ही दिखाई पड़ सकती हैं तथा जिनमें सुधार किया जा सकता है।

11. संकेतनिर्धारकों को उन त्रुटियों के विषय में भी चेतावनी दी जानी चाहिए जो उनकी सावधानी तथा सतर्कता में कमी के परिणाम स्वरूप उत्पन्न हो सकती है।
12. इस बात के लिए स्पष्ट उदाहरण दिए जाने चाहिए कि संकेत निर्धारक ''ज्ञात नहीं'' ''कोई नहीं'' का प्रयोग किन परिस्थितियों में करें।
13. सही ढ़ंग से संकेतबद्ध की गई नमूना स्वरूप एक अनुसूची संकेत कर्ताओं को अवलोकनार्थ प्रदान की जानी चाहिए।
14. संकेतकर्ताओं को यह निर्देश दिया जाना चाहिए कि वे संकेतबद्ध की गई अनुसूची पर अपना नाम या लघु हस्ताक्षर अवश्य लिख दें।
15. संकेतों की जॉच करने वाले व्यक्तियों को स्पष्ट निर्देश प्रदान किये जाने चाहिए।

17.2.10 तथ्यों के संकेतीकरण के दौरान विश्वसनीयता की समस्यायें

संकेत निर्धारकों द्वारा लिये गए निर्णयों की अविश्वसनीयता की ओर ले जाने वाले कारक अनेक प्रकार के हैं किन्तु इन्हें दो प्रमुख श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है:

1. **आंकड़ों से उत्पन्न होने वाली कठिनाइयां**: अनुपयुक्त आंकड़े अनेक प्रकार की कठिनाइयों को जन्म देते हैं। ये अनुपयुक्त आंकड़े आंकड़ा संग्रह की अनुपयुक्त सार्यरीतियों तथा दोषपूर्ण भाषा वाली प्रश्नावली, अप्रशिक्षित पर्यवेक्षक या साक्षात्कारर्ता इत्यादि के कारण प्राप्त होते हैं। इनमें से अनेक कठिनाइयां समुचित रूप से सम्पादन करते हुए और अनुसूची की पूर्णता, पठनीयता, बोध गम्यता, अनुकूलता, एकरूपता तथा अनुपयुक्त प्रतिउत्तरों की दृष्टि से जांच करते हुए दूर की जा सकती है।
2. **श्रेणियों से उत्पन्न होने वाली कठिनाइयां**: इन कठिनाइयों के अन्तर्गत श्रेणियों को अवधारणात्म दृष्टि से परिभाषा की उपयुक्तता तथा अनुसंधान उद्देश्यों की प्राप्ति की दृष्टि से इनको यथार्थता से संबंधित कठिनाइयां सम्मिलित हैं।

17.2.11 संकेत निर्धारकों का प्रशिक्षण

संकेतीकरण की विश्वसनीयता में वृद्धि करने के लिए यह आवश्यक है कि निर्धारकों के समुचित प्रशिक्षण की व्यवस्था की जाए। संकेत निर्धारकों के प्रशिक्षण में पांच प्रमुख चरण पाये जाते हैं:

1. विभिन्न संकेतों को स्पष्ट किया जाता है तथा श्रेणीबद्ध की जाने वाली सामग्री से उदाहरण प्रस्तुत किये जाते हैं।
2. आंकड़ों के एक प्रतिदर्श पर संकेत निर्धारक अपना अभ्यास करते हैं। सामने आने वाली समस्याओं पर वे एक सामुहिक परिस्थिति में पर्यवेक्षक के साथ विचार विमर्श करते हैं ताकि सामान्य परिभाषाएॅ एवं कार्यरीतियां विकसित की जा सकें।
3. प्रयोग के परिणामस्वरूप प्राप्त परिणामों के आधार पर श्रेणियों में आवश्यक संशोधन किए जाते रहते हैं ताकि ये अधिक उपयुक्त रूप से एकत्रित की गई सामग्री पर लागू हो सकें।
4. जब प्रयोग के दौरान नवीन समस्याएं कम उत्पन्न होती हैं तो संकेत निर्धारकों से यह कहा जाता है कि वे एक दूसरे से या पर्यवेक्षक से पूॅछे बिना समान ऑकड़ों के संकेतबद्ध करें। संकेतीकरण में अनुकूलता की गणना करने के लिये विभिन्न संकेत निर्धारकों द्वारा किए गये संकेतीकरण का परीक्षण पर्यवेक्षक द्वारा किये संकेतीकरण को कसौटी मानकर करते हुए या सम्पूर्ण समूह की अनुकूलता के अन्य किसी माप का प्रयोग करते हुए या एक संकेत निर्धारक

की अन्य संकेत निर्धारकों से तुलना करते हुए की जा सकती है। विश्वसनीयता की जॉच के परिणामों के आधार पर उन श्रेणियों को वहिष्कृत करने जो अत्यधिक अविश्वसनीय हों, या अधिक घनीभूत प्रशिक्षण प्रदान करने अथवा अनुकूलता की अधिक कमी प्रदर्शित करने वाले संकेत निर्धारकों को निकाल देने अथवा अधिक कठिन मदों से युक्त विशिष्ट कार्यरीतियों को प्रयोग में लाने का निर्णय लिया जा सकता है।

5. एक बार एकत्रित की गई सामग्री का वास्तव में संकेतीकरण शुरू हो जाने पर सामयिक रूप से अनुकूलता की जांच आवश्यक हो जाती है ताकि इस बात का आश्वासन प्राप्त हो सके कि संकेत निर्धारक निश्चित किए गए नियमों के अनुसार ही संकेतीकरण का कार्य कर रहे हैं, किसी प्रकार की असावधानी नहीं कर रहे हैं और मनमाने ढंग से नवीन प्रयोग नहीं कर रहे हैं।

17.3 सारांश

प्रिय विद्यार्थियों आप लोंगों ने इस इकाई में तथ्यों के संकेतीकरण का अर्थ एवं परिभाषा, तथ्यों के संकेतीकरण की विशेषतायें, उद्देश्य, तथ्यों के संकेतीकरण को लाभप्रद बनाने वाली परिस्थितियां, चरण, विभिन्न स्तर, प्रश्नावली अथवा साक्षात्कार अनुसूची में संकेतों के लिखे जाने के विभिन्न अवसर, तथ्यों के संकेतीकरण एवं सारिणीकरण, संकेतों का चुनाव, तथ्यों के संकेतीकरण के लिये आवश्यक निर्देश, तथ्यों के संकेतीकरण के दौरान विश्वसनीयता की समस्यायें तथा संकेत निर्धारकों के प्रशिक्षण से संबंधित सभी तथ्यों की जानकारी प्राप्त कर ली होगी। इस इकाई को यदि आपने गहन अध्ययन कर लिया है तो निश्चित ही संकेतीकरण से संबंधित सभी प्रश्नों का उत्तर आपको आसानी से प्राप्त हो जायेगा तथा भविष्य में जो भी आप अनुसंधान कार्य करेंगे उसमें आप तथ्यों का संकेतीकरण आसानी से कर सकेंगे।

वास्तव में तथ्यों का संकेतीकरण वह क्रिया है जिसके द्वारा तथ्य के प्रत्येक पद को एक सांकेतिक नाम देकर उसकी प्रकृति के अनुकूल एक श्रेणी में रखा जाता है। इस प्रकार उस श्रेणी में रखे गये सांकेतिक नामों को गिनकर तथ्य के अन्तर्गत उस वर्ग की कुल संख्या का पता लगता है। इसको और अधिक स्पष्ट करते हुए यह कहा जा सकता है कि तथ्यों का सांकेतिक नाम एक प्रतीक है जो एक या अधिक अक्षरों में हो सकता है अथवा एक या अधिक अंकों के रूप में भी हो सकता है।

17.4 शब्दावली

तथ्यों के संकेतीकरण–इसके अन्तर्गत एक पूर्व निर्धारित वर्ग के अन्तर्गत पाए जाने वाले प्रत्युत्तर को अंक अथवा संकेत निर्धारित किये जाते हैं, जो गिने जा सकते हैं तथा जिन्हें सारिणी के रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है।

तथ्यों के संकेतीकरण का उद्देश्य–समाजिक अनुसंधान के अन्तर्गत तथ्यों के संकेतीकरण का उद्देश्य एक प्रश्न के उत्तरों को अर्थपूर्ण श्रेणियों मे वर्गीकृत करना है ताकि उनके आवश्यक प्रतिमान सामने आ सकें।

उत्तरदाता– उत्तरदाता से तात्पर्य उस व्यक्तिय से है जो अनुसंधान के अन्तर्गत शामिल किये गये जनसंख्या में से पूर्व निर्धारित प्रश्न अनुसूची का उत्तर अनुसंधानकर्ता को पूछने पर प्रदान करता है।

समग्र– समग्र से तात्पर्य उस सम्पूर्ण जनसंख्या से है जो अनुसंधान हेतु निर्धारित की जाती है।

प्रश्नावली– प्रश्नावली प्रश्नों की ऐसी सूची होती है जिसको उत्तरदाता को डाक द्वारा प्रषित की जाती है तथा उत्तरदाता से अनुरोध किया जाता है कि इसको भर कर अनुसंधानकर्ता को वापस कर दे।

अनुसूची– अनुसूची भी प्रश्नों की ही एक ऐसी सूची होती है जिसमे प्रश्नों की एक श्रृखला होती है जिसको उत्तरदाता से अनुसंधानकर्ता स्वयं प्रश्नों को पूछकर भरता है।

17.5 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1 सही
2 सही
3 सही
4 गलत
5 गलत
6 सही

17.6 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. क्लेयर सेल्टिज ऐण्ड अदर्श, रिसर्च मेथड्स इन सोशल रिलेशन्स, हेनरी होल्ट एण्ड कं0, 1960, पेज–401.
2. पार्टन, सर्वेज, पोल्स ऐण्ड सैम्पिल्स, हार्पर एण्ड री, न्युयार्क, 1965, पेज–444.
3. डब्लू जे0 गुडे ऐण्ड पी0 के0 हाट, मेथड्स इन सोशल रिसर्च, मैग्राहिल बुक कं0, न्युयार्क, 19517, पेज–315.
4. सी0 ए0 मोजर एण्ड जी0 काल्टन, सर्वे मेथड्स इन सोशल इनवेस्टीगेशन, हेनमैन ऐजुकेशनल बुक्स लिमिटेड, लंदन, 1974, पेज–414.
5. सिंह, डा0 सुरेन्द्र, सामाजिक अनुसंधान भाग–दो, उत्तर प्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, लखनऊ, 1975, पेज–171–31.
6. सिंह, डा0 एस0 डी0, वैज्ञानिक अनुसंधान एवं सर्वेक्षण के मूलतत्व, कमल प्रकाशन, इन्दौर, 1995, पेज–379–380.

17.7 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. पी0 वी0 यंग, साइंटिफिक सोशल सर्वेज ऐण्ड रिसर्च, प्रेन्टिस हाल, न्युयार्क, 1951.
2. आर0 के0 मर्टन, एम0 फिस्के ऐण्ड ए0 कटिंग्स, मास पर्सुएशन, हापर ऐण्ड ब्रदर्श, न्युयार्क, 1946.
3. डब्लू0डब्लू0डब्लू.गूगल.को.इन
4. गोयल, सुनिल एवं गोयल, संगीता, प्रारम्भिक सामाजिक अनुसंधान

17.8 निबंधात्मक प्रश्न

1. तथ्यों के संकेतीकरण का अर्थ एवं परिभाषा लिखते हुए इसकी विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

2. तथ्यों के संकेतीकरण के उद्देश्य तथा तथ्यों के संकेतीकरण को लाभप्रद बनाने वाली परिस्थितिओं का वर्णन कीजिए।
3. तथ्यों के संकेतीकरण के प्रधान चरण एवं तथ्यों के संकेतीकरण के विभिन्न स्तरों की चर्चा कीजिए।
4. प्रश्नावली अथवा साक्षात्कार अनुसूची में संकेतों के लिखे जाने के विभिन्न अवसरों पर प्रकाश डालिये।
5. तथ्यों के संकेतीकरण एवं सारिणीकरण तथा संकेतों का चुनाव पर एक निबंध लिखिए।
6. तथ्यों के संकेतीकरण के लिये आवश्यक निर्देश तथा तथ्यों के संकेतीकरण के दौरान विश्वसनीयता की समस्याओं पर प्रकाश डालिए।
7. संकेत निर्धारकों के प्रशिक्षण पर अपने विचार व्यक्त कीजिए।

इकाई–18 व्याख्या व रिपोर्ट लेखन
(Analysis and Report Writing)

18.0 उद्देश्य
18.1 प्रस्तावना
18.2 व्याख्या या विवरण का अर्थ
18.2.1 व्याख्या या विवरण की आवश्यकता
18.2.2 व्याख्या या विवरण की तकनीकी
18.2.3 व्याख्या या विवरण में सावधानियॉ
18.3 प्रतिवेदन लेखन
18.3.1 प्रतिवेदन के महत्व
18.3.2 प्रतिवेदन लेखन के चरण

18.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप

1. व्याख्या या विवरण का अर्थ जान सकेंगे।
2. व्याख्या या विवरण की आवश्यकता को समझ सकेंगे।
3. प्रतिवेदन के महत्व व लेखन के चरण का ज्ञान हासिल कर सकेंगे।
4. प्रतिवेदन लेखन के प्रकार व सावधानियॉ जान सकेंगे।

18.1 प्रस्तावना

आंकड़ों को एकत्र करने व उनकी व्याख्या करने के पश्चात शोधकर्ता का सबसे महत्वपूर्ण कार्य यह होता है कि वह उनके आधार पर प्राप्त निष्कर्षो का विवरण प्रस्तुत करे। इसके लिये शोधकर्ता को बहुत सावधान रहने की आवश्यकता होती है अन्यथा भ्रामक निष्कर्ष प्राप्त हो सकते हैं जिससे शोध का पूरा उद्देश्य ही भंग हो जाता है।

18.2 व्याख्या या विवरण का अर्थ

विश्लेषित तथा प्रयोगात्मक अध्ययनों से प्राप्त हुये संकलित तथ्यों के आधार पर निष्कर्ष निकालने की प्रक्रिया को विवरण या व्याख्या कहते हैं। सच्चे अर्थो में शोध से प्राप्त तथ्यों की विस्तृत अर्थो में खोज से इस कार्य के दो मुख्य पहलू हैं (1) शोध में सात्तय्यता बनाने के लिये शोध को अन्य शोध से प्राप्त परिणामों से संबंधित करना। (2) कुछ व्याख्यात्मक तथ्यों की स्थापना करना।

इस तरह विवरण या व्याख्या से शोधकर्ता द्वारा प्राप्त तथ्यों को विश्लेषित करने में मदद मिलती है तथा इसके द्वारा सैद्धान्तिक बीजारोपण भी देता है जो अन्य शोधों को दिशा निर्देशित कर सकती है।

18.2.1 व्याख्या या विवरण की आवश्यकता :

व्याख्या या विवरण इसलिये आवश्यक है क्योंकि शोधों से प्राप्त परिणामों की उपयोगिता सही तरीके के विवरण से ही प्राप्त होती है। यह शोध प्रक्रिया का मूलभूत अंग है। इसके प्रमुख कारण निम्न हैं :–

1– विवरण के द्वारा शोधकर्ता यह समझ सकता है कि उसके शोध से प्राप्त परिणामों के पीछे कौन सा अमूर्त सिद्धांत कार्य कर रहा है। इससे शोधकर्ता अपने परिणामों को उन अन्य परिणामों से भी संबंधित कर सकता है, जिनके पीछे वही अमूर्त सिद्धान्त है।

2– व्याख्या या विवरण से व्याख्यित संप्रत्ययों को स्थापित करने में सहायता मिलती और यह भविष्य में होने वाले अन्य शोधों के लिये दिशा निर्देश दे सकता है। इसके द्वारा नवीन बौद्धिक जोखिमों को लेने का दरवाजा खुलता है तथा इससे नये ज्ञान को खोजने का उद्धीपन होता है।

3– शोधकर्ता केवल परिणामों के विवरण या व्याख्या से ही यह बता सकता है कि उसके ये परिणाम क्यों आये हैं वे परिणाम क्या हैं तथा इसके द्वारा दूसरों को भी उसके शोध परिणामों के वास्तविक महत्व को समझने में सहायता मिलती है।

4– परक शोध (Exploratory research) से प्राप्त परिणामों की व्याख्या या विवरण से ज्यादातर प्रयोगात्मक शोधों के लिये परिकल्पना का निर्माण होता है अतः व्याख्या या विवरण एक तरह से परक शोध से प्रयोगात्मक शोध में परिवर्तन की भूमिका निभाता है। क्योंकि परक शोध में परिकल्पना से शुरूआत नहीं होती है। अतः इस तरह के अध्ययन के आधार पर प्राप्त परिणामों की व्याख्या कार्येत्तर आधार (Post Factum) पर की जा सकती है।

18.2.2 व्याख्या या विवरण की तकनीकी

व्याख्या या विवरण एक आसान काम नही है। शोधकर्ता से बहुत अधिक दक्षता की मांग करता है। यह एक कला है जिसे शोधकर्ता अभ्यास व अनुभव से सीखता है।

विष्लेशण या विवरण के प्रमुख चरण निम्न है :–

1– शोधकर्ता को अपने परिणामों में प्राप्त संबंधों की उचित व्याख्या देना जरूरी होता है तथा उसे इन संबंधों की व्याख्या अंतनिर्हित प्रक्रिया में करनी होती है तथा उसे अपने विविध शोध की सटली परत के अन्तर्गत स्थित एकरूपता को खोजने की कोशिश करनी होती है। इस प्रक्रिया के द्वारा संप्रत्ययों का सामान्वीकरण होता है।

2– यदि शोध में विषयेत्तर (Extraneous) सूचनायें संकलित होती है तो उन्हें अंतिम रूप से प्राप्त होने वाले परिणामों में गौर किया जाना चाहिए।

3— अंतिम रूप से विवरण तैयार करने के पहले ऐसे व्यक्ति से जिसकी अध्ययन में अंर्तदृष्टि अच्छी है तथा जिसे सही व्याख्या करने में कोई हिचक नहीं है से परामर्श लेना चाहिए। इस परामर्श से सही व्याख्या करने में सहायता मिलती है तथा शोध परिणामों की उपयोगिता बढ़ती है।

4— शोधकर्ता को अंतिम रूप से विवरण तैयार करने से पहले सभी उन सभी तथ्यों को समझ लेना चाहिए जिससे असत्य सामान्यीकरण प्राप्त हो सकता है। परिणामों की व्याख्या करने हेतु शोधकर्ता को हड़बड़ी नहीं दिखानी चाहिये। ज्यादातर निष्कर्ष जो प्रारंभ में सही दिखते हैं, हमेशा शुद्ध नहीं होते।

विवरण या विश्लेशण में सावधानियां –

शोधकर्ता को हमेशा यह ध्यान रखना होता है कि आंकड़े यदि सही तरीके से संकलित किये गये हो तथा उनकी सही तरीके से यदि व्याख्या भी की गयी हो तो भी गलत विष्लेशण का विवरण गलत निष्कर्ष प्रदान करता है। अतः इस कार्य हेतु बहुत अधिक धैर्य की आवश्यकता होती है।

शोधकर्ता को निम्न सावधानियां रखनी चाहिये –

1— सबसे पहले शोधकर्ता को अपने आपको संतुष्ट करनी चाहिए कि आंकड़े उपयुक्त हों, विश्वसनीय हो तथा अनुमान निकालने के लिए सही हो।

2— शोधकर्ता को परिणाम की आख्या करते समय बहुत सावधानी रखनी चाहिये कि कहीं कोई त्रुटि न हो जाये। त्रुटियां असत्य सामान्यीकरण, गलत सांख्यिकीय विष्लेशण से भी हो सकती है।

3— शोधकर्ता को यह ध्यान रखना होता है कि विवरण बहुत अधिक विष्लेशण से संबंधित होता है तथा इसे अलग नहीं किया जा सकता है। उसे आंकड़ो की विश्वसनीयता, वैधता आदि को जानने के समय सावधानी रखनी चाहिए।

4— शोधकर्ता को यह भी ध्यान रखना चाहिये कि उसे सुसंबद्धित घटनाओं का अवलोकन ही नहीं करना होता है बल्कि उन कारणों को पहचान करना है जो छुपे होते हैं। विस्तृत सामान्यीकरण की जगह शोधकर्ता को निश्चित समय, निश्चित क्षेत्र तथा विशेष परिस्थितियों पर ध्यान देना चाहिए।

18.3 प्रतिवेदन लेखन

शोध का प्रतिवेदन लेखन तैयार शोध अध्ययन का महत्वपूर्ण अंग है। इसके बिना शोध अपूर्ण रहता है। बहुत अच्छी परिकल्पना बहुत अच्छी शोध अभिकल्पना तथा बहुत ही अच्छे तरीके से किया गया शोध अध्ययन व बहुत ही अच्छे सामान्यीकृत परिणामों के होते हुए भी यह तब तक उपयोगी नहीं है जब तक इसे दूसरों की अच्छी तरह से, प्रभावी तरीके से संप्रेषित नहीं किया जाता। इसके द्वारा शोध प्रतिवेदन की महत्ता का पता चलता है। शोध प्रतिवेदन शोध अध्ययन का अंतिम कदम होता है तथा इसके लिये बहुत अधिक दक्षता व कौशल की आवश्यकता होती है। इस कार्य को शोधकर्ता द्वारा बहुत अधिक सावधानी की आवश्यकता होती है।

18.3.1 प्रतिवेदन लेखन के विभिन्न चरण :

शोध प्रतिवेदन बहुत ही मंद गति से होने वाला श्रमसाध्य कार्य है। इसके मुख्यतः निम्न होते हैं

1— विषय वस्तु का तार्किक विश्लेशण

2— अंतिम रूप से रूपरेखा तैयार करना

3— कच्चा मसौदा तैयार करना

4— फिर से लिखना तथा उसमें और अधिक सुधार करना

5— अंतिम रूप से संदर्भ ग्रंथ सूची तैयार करना

6— अंतिम मसौदा तैयार करना

इन सभी चरणों का संक्षिप्त परिचय निम्न है —

विषय वस्तु का तार्किक विश्लेशण : यह विषय के प्रारंभिक विषय से संबंधित है विषय के विकास के दो मार्ग हैं। 1— तार्किक रूप से, 2— कालानुक्रमिक रूप से। तार्किक विकास मानसिक संबंधो पर आधारित होते हैं तथा तार्किक उपचार से अंतर्गत विषयवस्तु का विकास साधारण से जटिल संरचना की तरफ होता है।

कालानुक्रमिक विकास का आधार समय—समय के क्रम में लिया जाता है। किसी कार्य को करने की दिशा या कोई चीज निर्मित करने के लिये कालानुक्रमिक आधार बनाया जाता है।

अंतिम रूपरेखा को तैयार करना : यह शोध प्रतिवेदन को निर्मित करने का अगला चरण है। रूपरेखा के द्वारा एक तरह का ढांचा है जिसके ऊपर दीर्घलिखित कार्य संरचित होते हैं। इसके द्वारा विषय वस्तु तार्किक संगठन में सहायता मिलती है।

कच्चे मसौदे का निर्माण : इसके द्वारा विषय की तार्किक व्याख्या होती है तथा इसके द्वारा अंतिम रूपरेखा का निर्माण होता है। इस आधार पर शोधकर्ता यह लिखना शुरू करता है कि शोध कार्य के संदर्भ में उसने क्या कार्य किया है। यह आंकड़ो के संग्रहन के संबंध में अपनायी गयी कार्यवृति तथा इस अवस्था में उत्पन्न हुई समस्या के बारे में दिखाता है इसके अतिरिक्त वह आंकड़ों के विष्लेशण के लिये प्रयुक्त की गयी विधि को तथा प्राप्त हुये परिणाम को लिखता है। सामान्यीकरण तथा अन्य समस्याओं के संबंध में अपने सुझाव देते हैं।

कच्चे मसौदे का पुनः लिखना : सभी चरणों में यह चरण अधिक कठिन है। यह बहुत अधिक समय मांगता है। शोधकर्ता को यह देखना चाहिए कि विषयवस्तु में सुसंबंधता है या नहीं, क्या प्रतिवेदन से एक निश्चित पैरवी का पता चल रहा है ? उसे यह भी देखना चाहिए कि क्या उसके लेखन में संगतता है। उसे अपने व्याकरण वर्तनी पर भी ध्यान देना चाहिए।

अंतिम रूप से संदर्भ ग्रंथ सूची तैयार करना : संदर्भग्रंथ सूची के शोध प्रतिवेदन के पीछे संलग्न होती पत्र, पुस्तकों की एक सूची होती है जो कि शोध के लिये उपयुक्त होती है इसमें उन सभी कार्यो को समाहित करना चाहिये जिससे शोधकर्ता में सवयता की शत वर्णमाला क्रम में व्यवस्थित होनी चाहिए

तथा इसके दो भाग होने चाहिये। एक भाग सभी पुस्तकों के नाम लिखने चाहिए तथा दूसरे भाग में पत्रिकाओं व समाचार पत्र के लेखों को रखना चाहिए लेकिन संदर्भ ग्रंथ सूची लिखने का केवल सही एक तरीका है उसे निम्न तरीकों से भी लिखा जा सकता है।

पुस्तकों के लिये संदर्भ ग्रंथ सूची का तरीका :

1— लेखक का नाम, अंतिम नाम पहले लिखा जाता है

2— शीर्षक, इसे इटेलिक में लिखते हैं

3— स्थान, प्रकाशक तथा प्रकाशन की तिथि

4— संस्करण का नंबर

उदाहरण — Futheri, C.R. Qunahhu, Technique New Delhi, Vikas Publishing House Pvt. Ltd., 1978

समाचार पत्रों तथा पत्रिकाओं मे लिखने का तरीका

1— लेखक का नाम, अंतिम नाम पहले

2— शीर्षक, प्रश्न सूचक वाक्य में

3— सामयिक का नाम, इटेलिक में

4— अंक

5— तिथि

6— पृष्ठ पर अंक डालना

हालांकि संदर्भ ग्रंथ सूची को लिखने के लिये उपरोक्त एक ही तरीका नहीं है लेकिन यह ध्यान देना होगा कि जो भी तरीका अपनाये उसी पर स्थिर होना चाहिए।

अंतिम मसौदा तैयार करना : यह अंतिम चरण है यह संक्षिप्त होनी चाहिए तथा वस्तुनिष्ठ ढंग से साधारण भाषा में लिखी जानी चाहिए। अंतिम रूप से मसौदा तैयार करने के लिये शोधकर्ताओं को अमूर्त शब्दों से बचना चाहिए। सामान्य अनुभवों के आधार पर प्राप्त उदाहरणों को उपयोग अंतिम मसौदे में किया जाता है। इसका प्रारूप ऐसा लेना चाहिए जिससे लोगों को उस शोध प्रारूप प्रतिवेदन पर रूचि बनी रहे। प्रत्येक प्रतिवेदन को ऐसा होना चाहिए जिससे बौद्धिक समस्या का समाधान हो सके।

अंत विषय : प्रतिवेदन के अंत में परिशिष्ट को संलग्न किया जाना आवश्यक है जिसमें प्रश्नावली प्रतिदर्श की सूचना आदि संकलित किये जाते हैं। श्रोतों के संदर्भ ग्रंथ सूची भी दी जाती है। अनुक्रमणिका को भी इसके अंतर्गत रखा जाता है जिसमें नामों की वर्णमाला के अनुसार नामों का सारणीयन, स्थान तथा उन पुस्तकों का पृष्ठ क्रम जिसका अध्ययन किया गया है को भी प्रदर्शित करते हैं को प्रतिवेदन के अंत में देना चाहिये।

प्रतिवेदन के प्रकार : शोध परिणामों को तकनीकी प्रतिवेदन प्रसिद्ध प्रतिवेदन, आर्टिकल के रूप में, मोनोग्राफ के रूप में, मौखिक प्रस्तुति के रूप में प्रस्तुत कर सकते हैं। तब हम किसी भी विधि का प्रयोग करें यह इस बात पर निर्भर करता है कि परिस्थितियां कौन सी जिसके अन्तर्गत अध्ययन किया गया है, तकनीकि प्रतिवेदन का प्रयोग तब किया जाता है जब रिकार्ड रखने या जनता में प्रचार के लिये इसका उपयोग किया जाता है। प्रसिद्ध प्रतिवेदन का उपयोग नीति निर्माण के लिये किया जाता है।

तकनीकी प्रतिवेदन –

तकनीकी प्रतिवेदन में मुख्य बल होता है –

1– जो कार्य विधि अपनायी गयी ।

2– अध्ययन में लगाये गये अनुमान

3– परिणामों का सीमाओं व परिणामों का समर्थन करने वाले आकडों का प्रस्तुतिकरण ।

तकनीकी प्रतिवेदन की सामान्य रूपरेखा निम्न है –

1– **परिणामों का सारांश** – मुख्य परिणामों की समालोचना केवल दो या तीन पेजों में ही की जानी चाहिये ।

2– **अध्ययन की प्रकृति** – अध्ययन के उद्देश्य की साधारण व्याख्या , समस्या का परिचालित शब्दों का निर्माण , परिकल्पना ,विष्लेशणका प्रकार व आकडों की व्याख्या की जाती है ।

3– **प्रयुक्त कार्य पद्वति** – इसमें प्रयुक्त विशिष्ट कार्य पद्वति तथा उसकी सीमाओं के बारे में बताया जाता है ।

4– **आंकड़ा** – एकत्रित आकडों का वर्णन ,उनके स्रोतों , विशेषताओं व सीमाओं को बताया जाता है । अगर द्वितीय आकडों का प्रयोग किया गया हो तो उनकी समस्या के साथ सानुकूल्यता देखी जाती है ।

5– **आकड़ों की व्याख्या तथा परिणामों का प्रस्तुतीकरण** – आकड़ों का विष्लेशणतथा अध्ययन के परिणामों की तालिकाओं व चार्ट में पूरी तरह व्याख्या की जाती है । यह इस तरह के शोध प्रतिवेदन का सबसे महत्वपूर्ण अंग होता है तथा यह कई पेजों में लिखा जाता है ।

6– **निश्कर्श** – परिणामों का विस्तृत सारांश तथा परिणामों से प्राप्त नीतियों के निहितार्थ की व्याख्या की जाती है ।

7 – **सन्दर्भ ग्रंथ सूची** – विभिन्न स्रोतों की सन्दर्भ ग्रंथ सूची बनाकर उसे संलगनित किया जाना चाहिये ।

8– **तकनीकी संलग्नक** – सभी तकनीकि मामलों के लिये संलग्नक अवश्य दिये जाने चाहिये । ये संलग्नक प्रश्नावली , गणितीय व्युत्पत्ति आदि हो सकते है ।

9– **अनुक्रमणिका** – अनुक्रमणिका का निर्माण अवश्य किया जाना चाहिये तथा इसे प्रतिवेदन के अंत में दिया जाता चाहियें ।

उपरोक्त क्रम तकनीकी प्रतिवेदन की केवल एक सामान्य जानकारी देते है । यह आवश्यक नहीं है कि सभी प्रकार के तकनीकि प्रतिवेदनों का यही क्रम हो लेकिन यह अवश्य ध्यान में रखना चाहिये की सभी प्रकार के प्रतिवेदनों के समान तकनीकी प्रतिवेदन में भी साधारण प्रस्तुतीकरण किया जाये तथा परिणामों को चार्ट तथा डाईग्राम के रूप में अवश्य प्रस्तुत किया जाये ।

प्रसिद्व प्रतिवेदन – प्रसिद्ध प्रतिवेदन वह है जिसमें सहजता तथा आकर्षकता के उपर बल डाला जाता है । यह सहजता स्पष्ट लेखन से आती है इसमें चार्ट तथा डाइग्राम का उदारता से उपयोग किया जाता है । इस तरह के प्रतिवेदन में नीतियों की उपयोगिता पर बल डाला जाता है ।

इसकी संक्षिप्त रूपरेखा निम्न है –

1– **परिणाम तथा इनकी उपयोगिता** – परिणाम जिनका व्यवहारिक उपयोग अधिक है उन पर अधिक बल डाला जाता है ।

2– **कार्यवाही की अनुशंसा** – प्रतिवेदन से प्राप्त परिणामों के आधार पर कार्यवाही की अनुशंसा की जाती है ।

3– **अध्ययन का उद्देश्य** – समस्या कैसे उत्पन्न हुई उसका संक्षिप्त पुनरावलोकन तथा अध्ययन के विशिष्ट उद्देश्य के बारे में बताना होता है ।

4– **प्रयुक्त कार्यप्रणाली** – इसमें प्रयुक्त कार्यप्रणाली का संक्षिप्त व गैर तकनीकि विष्लेशणकरते है व आकडे जिस पर अध्ययन आधारित होते है की भी संक्षिप्त व्याख्या करते है ।

5– **परिणाम** – यह प्रतिवेदन का सबसे महत्वपूर्ण अंग होता है जिसमें अध्ययन का परिणाम स्पष्ट व गैर – तकनीकि शब्दो में प्रयुक्त किया जाता है। इसके लिये चार्ट डाइग्राम आदि का उपयोग किया जाता है ।

6– **तकनीकी संलग्नक** – प्रयुक्त कार्यप्रणाली, उसके प्रकार की विस्तृत व्याख्या संलग्नक में प्रयुक्त की जाती है परन्तु यदि प्रतिवेदन साधारण जनता के लिये है तो संलग्नक की अधिक विस्तार पूर्वक व्याख्या से बचना चाहिये ।

शोध प्रतिवेदन का अभिविन्यास (Layout of the Research Report) :

शोध प्रतिवेदन के अभिविन्यास से (Lay out) तात्पर्य है कि शोध प्रतिवेदन में क्या समाहित होना चाहिए। इसमें मुख्यतः तीन चरण होते हैं –

1– प्रारंभिक पन्ने
2– मुख्य विषय वस्तु
3– अंत विषय वस्तु

प्रारंभिक पन्ने :

शोध प्रतिवेदन के प्रारंभिक पन्नों में शीर्षक तथा दिनांक रखा जाता है। इसके पश्चात प्रस्तावना या अग्रेषण के रूप में आभारोक्ति की जाती है। इसके पश्चात विषय वस्तु की सारणी बनायी जाती है। इसके पश्चात सारणियों व चित्रों की लिस्ट बनायी जाती है। इसका आशय यह होता है कि कोई व्यक्ति जिसे इस अध्ययन में रूचि हो वह आसानी से वांछनीय सूचनाओं को प्राप्त कर सके।

मुख्य विषय वस्तु :

इसमें सबसे ऊपर पुनः शीर्षक को रखा जाता है इसके पश्चात पेज का पेज नं0 डाला जाता है सभी मुख्य अंश नये पेज से शुरू किया जाना चाहिये। मुख्य विषय वस्तु के निम्न वर्ग होते हैं :–

1– परिचय
2– परिणामों व संस्तुतियों का विवरण
3– परिणाम
4– परिणामों से आशय
5– सारांश

परिचय :परिचय का उद्देश्य होता है पाठक को शोध से परिचय कराना। इसमें उद्देश्य स्पष्ट होना चाहिए। समस्या को तार्किक होना चाहिए। अन्य शोधों का भी सारांश होना चाहिए जिससे वर्तमान अध्ययन को उस संदर्भ में भी देखा जा सके।

अध्ययन के लिये प्रयुक्त अध्ययन विधि को भी पूरी तरह विश्लेषित किया जाना चाहिये। इसमें मूल शोध अभिकल्प का वर्णन होना चाहिए। यदि अध्ययन प्रयोगात्मक है तो क्या प्रयोगात्मक जोड–तोड़ किये गये थे? यदि आंकड़ो के प्रश्नावली या साक्षात्कारों से संग्रहित किया गया है तो कौन से प्रश्न को पूछा गया है। (साक्षात्कार सूची या प्रश्नावली को संलग्न करना होगा)। यदि मापन अवलोकन या निरीक्षण पर आधारित है तो क्या निर्देश दिये गये थे? प्रतिदर्श के संबंध में शोधकर्ता को यह जानकारी देनी होगी कि प्रतिदर्श कौन थे प्रतिदर्श का चुनाव कैसे किया गया? उनकी संख्या क्या थी? इन प्रश्नों के द्वारा परिणामों के संभावित सामायीकृत सीमाओं का अध्ययन किया जा सकता है। सांख्यिकीय विष्लेशण को भी स्पष्ट रूप में प्रस्तुत किया जाता है। इन सबके साथ–साथ अध्ययन की उपयोगिता को भी इसमें समाहित किया जाता है। उन सीमाओं का भी वर्णन किया जाना चाहिए जो शोध परियोजना को पूरा करते समय सामने आयी थी।

परिणामों एवं संस्तुतियों का विवरण : परिचय के पश्चात शोध प्रतिवेदन में परिणामों एवं सस्तुतियों का विवरण सीधे–साधे व स्पष्ट शब्दों में दिया जाना चाहिए। जिससे इसे समझने में आसानी हो। यदि परिणाम बहुत अधिक विस्तृत है तो उन्हें सारांश में प्रस्तुत किया जाना चाहिए।

परिणाम :परिणामों का विस्तृत प्रस्तुतीकरण सारणियों व ग्राफ के द्वारा किया जाना चाहिए। यह सामान्यतः प्रतिवेदन का मुख्य भाग है। सभी परिणामों को एक तार्किक क्रम में प्रस्तुत किया जाता है। इस हेतु शोधकर्ता को अपनी प्राक्लपना तथा समस्या को ध्यान में रखना होगा।

परिणामों की उपयोगिता :मुख्य विषय वस्तु के पश्चात शोधकर्ता को अपने परिणाम को स्पष्टतः तथा विधिपूर्वक प्रस्तुत करना होता है। उसे इस तरह से अध्ययन की उपयोगिता बतानी होती है जिससे सामान्य पाठक भी उसकी उपयोगिता को समझ सके।

सारांश : इसके पश्चात एक संक्षिप्त निष्कर्ष देना होता है जो कि अध्ययन को सारांश में प्रस्तुत करता है। अध्ययन से प्राप्त निष्कर्ष परिकल्पनाओं से सीधे संबंधित होने चाहिये इसके अतिरिक्त इस विशिष्ट क्षेत्र में और क्या किया जाना चाहिये इसका भी वर्णन किया जाता है। इसमें शोध समस्या, अध्ययन विधि, मुख्य परिणाम तथा शोध परिणामों से प्राप्त मुख्य निष्कर्ष को लिखा जाता है।

शोध प्रतिवेदन लिखने का तरीका – शोध प्रतिवेदन को तैयार करने का एक निश्चित नियम है जिसे हम प्रतिवेदन तैयार करते समय ध्यान में रखना चाहिए। एक बार तकनीकि का निर्णय ले लिया जाता है तो उसका निष्ठापूर्वक पालन करना चाहिये। जैसे ही शोध प्रतिवेदन की सभी वस्तुयें एकत्रित

हो जाती हैं तुरंत हमें प्रारूप का निर्णय से लेना चाहिए। शोध प्रतिवेदन की प्रक्रिया को लिखने हेतु निम्न बिन्दुओं पर ध्यान देना चाहिए –

1– **आकार** – पांडुलिपि बिना लाइन वाले पेपर पर $8^{1/2}$'' **X** 11" आकार में लिखी जानी चाहिए। अगर यह हाथ से लिखी जाती है तो काली या नीली स्याही का प्रयोग करना चाहिए। बायी तरफ कम से कम एक या आधे इंच का किनारा तथा दायीं तरफ कम से आधे इंच का किवारा अवश्य छोड़ देना चाहिये। ऊपर व नीचे भी एक इंच का किनारा लेना चाहिए। अगर पांडुलिपि की टाइप करना है तो सभी टाइपिंग केवल एक तरफ के पन्ने पर डबल स्पेस में होनी चाहिए।

2– **पद्धति** – प्रतिवेदन के विभिन्न चरणों को कड़े रूप में पालन किया जाना चाहिए। (इन चरणों की इस अध्याय में पहली ही व्याख्या हो चुकी है)

3– **अभिविन्यास** – उद्धेश्य तथा सामग्री की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए प्रतिवेदन के अभिविन्यास का निर्धारण करना चाहिए। (अभिविन्यास के बारे में भी इस अध्याय में पहले बताया जा चुका है)।

4– **उद्धरण का प्रबंधन** – अगर कही से उद्धरण लिया जा रहा है तो उसे इन्वर्टेड कॉमा तथा डबल स्पेस में लिखा जाना चाहिये। यदि यह उद्धरण चार या पॉच पंक्तियों से अधिक होता है तो इसे सिंगल स्पेस में तथा उसे सामान्य मार्जिन से कम से कम एक इंच दायी तरफ लिखते हैं।

5– **फुटनोट** – फुटनोट लिखते समय निम्न बातों को ध्यान में रखते –

(अ) फुटनोट का प्रयोग क्रास रिफरेंस, लेखकों व स्रोतों के उद्धरण के लिये, अभिस्वीकृति तथा किसी दृष्टिकोण की व्याख्या के लिये किया जाता है।

(ब) फुटनोट का प्रयोग पेज के नीचे किया जाता है फुटनोट को पाठ्य सामग्री से प्रथानुसार आधे इंच से तथा डेढ़ इंच लंबी लाइन से अलग किया जाता है।

(स) फुटनोट पर नम्बर अवश्य पड़े होने चाहिए। फुटनोट पर दिये नम्बर को पाठ्य सामग्री में दिये गये संदर्भ के साथ संबंधित किया जाता है।

(द) फुटनोट की हमेशा सिंगल इस्पेस में लिया होना चाहिए तथा एक से दूसरे में विभाजन डबल स्पेस से किया जाना चाहिए।

6– **प्रलेखीकरण का तरीका** – प्रलेखीकरण के लिये किसी कार्य के लिये संदर्भ का फुटनोट प्रलेखन में पूरा होना चाहिए, जिसमें प्रयुक्त संस्करण के सभी तथ्य बताये जाने चाहिए। ऐसे प्रलेखित फुटनोट एक सामान्य क्रम पर आधारित होते हैं। ऐसे सामान्य क्रम निम्न हैं –

1. एक संस्करणीय संदर्भ के लिये।

2. लेखक का नाम सामान्य क्रम में व कामा का प्रयोग

3. कार्य का शीर्षक इटैलिक में, प्रकाशन की तिथि व स्थान

4. पेज नंबर

उदाहरण

John Gassner, *Masters of the Dhrama*, New York : Dover publications, Inc. 1954, p. 315.

अगर संदर्भ अनेक संस्करण में है तो उपरोक्त क्रम में ही लिखा जायेगा। बस पेज नंबर के पहले संस्करण का नम्बर लिखा जाना चाहिए।

3. **वर्णमाला के अनुसार व्यवस्थापन** – वर्णमाला के अनुसार व्यवस्थापन के लिये, जैसे इनसाक्लोपीडिया तथा राष्टकोष में पृष्ठांकन की आवश्यकता नहीं होती उदाहरण

"Salamanca," *Encyclopaedia Britannica*, 14the Edition.

4. **पत्रिकाओं के संदर्भ में**

(अ) लेखक का नाम सामान्य क्रम में

(ब) आर्टिकल का शीर्षक कोटेशन मार्क में

(स) पत्रिका का नाम इटेलिक में

(द) संस्करण नंबर

(य) प्रकाशन तिथि

(र) पृष्ठांकन

5– **संग्रह ग्रंथ तथा संदर्भ संग्रहण** – संग्रह ग्रंथ या साहित्यिक कार्यो से लिये गये उद्धरणों के लिये न केवल लेखक का बल्कि, उसे संग्रहित करने वाले के नाम को भी आभारोक्ति की जाती है।

6– **दूसरे से प्राप्त संदर्भ के लिये** – इसके लिये निम्न नियम हैं

(अ) मौलिक लेखक व शीर्षक

(ब) उद्धरित ग्रंथ

(स) द्वितीय लेखक व उसका कार्य

उदाहरण

J.F. Jones, Life in Ploynesia, p. 16, quoted in *History of the Pacific Ocean area,* by R.B. Abel, p. 191.

7— **अनेक लेखकों के संदर्भ में** — अगर प्रलेखन में दो से अधिक लेखक या एडिटर हैं तो लेखन में केवल प्रथम लेखक का नाम लिखा जाता है तथा अन्य लेखकों को “et al.” या “and others” से प्रदर्शित किया जाता है।

अगर एक ही काग्र को पुनः उद्धरित किया जाता है तो उसे ibid से प्रदर्शित किया जाता है व इसमें कामा व पेज नंबर डाला जाता है। अगर सिर्फ एक पेज ले तो उसे p., से प्रदर्शित करते हैं पर एक से अधिक होने पर PP से प्रदर्शित किया जाता है।

8— **फुटनोट में विरामचिन्ह तथा संक्षिप्तीकरण** —

फुटनोट में नंबर के बाद लेखक का नाम साधारण रूप में लिखा जाता है, फिर कामा लगाकर किताब का शीर्षक लिखा जाता है। शीर्षक से A, An, The जैसे शब्दों को हटाकर केवल पहला शब्द, व्यक्तिवाचक संज्ञा व विष्लेशण को बड़े अक्षर में लिखना चाहिए। शीर्षक के बाद कामा, संस्करण की सूचना की अंकित किया जाता है। इसके पश्चात कामा लगाकर प्रकाशन का स्थान लिखा जाना चाहिए। स्थान को संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत किया जाना चाहिए (अगर वह स्थान प्रसिद्ध है) इसके बाद कामा लगाकर प्रकाशक का नाम लिखा जाता है फिर कामा लगाया जाता है व प्रकाशन की तिथि लिखी जाती है।

इसके पश्चात कामा लगाकर संस्करण नंबर व पेज नंबर लिखा जाता है। दोनो के बीच में कॉमा लगा होना चाहिए। कुछ अंग्रजी व लैटिन में संक्षिप्त शब्द व संदर्भ ग्रंथ सूची में लिखे जाते हैं जिससे शब्दों की पुनरावृत्ति से बचा जा सके।

इसमें से कुछ निम्न हैं –

anon.,	anonymous
ante.,	before
bk.,	book
bull.,	bulletin
ed.,	editor, edition, edited.
ed.cit.,	edition cited
et.al.,	and others
viz.,	namely
vol. or vol(s).,	volume(s)
vs., versues:	against

8– **सांख्यिकी चार्ट व ग्राफ का उपयोग** –

शोध परिणामों का सरलीकरण व स्पष्टीकरण के लिये सांख्यिकी का प्रयोग किया जाता है। सांख्यिकीय को तालिकाओं, चार्ट, बार, लाईन ग्राफ आदि से प्रदर्शित किया जाता है। ऐसा प्रस्तुतीकरण अपने आप में पूर्ण होना चाहिए। यह समस्या के अनुकूल व उपयुक्त होना चाहिए। अंततः सांख्यिकी प्रस्तुतीकरण स्वच्छ व आकर्षक होना चाहिए।

9– **अंतिम मसौदा** – अंतिम मसौदा लिखने से पूर्व रफ लिखना चाहिए। शोधकर्ता को स्वयं यह देखना चाहिये क्या वाक्य स्पष्ट है। वाक्यों में व्याकरण त्रुटियां नहीं

होनी चाहिए। इसमें अर्थ स्पष्ट होना चाहिए। अंतिम रूप से तैयार करने से पहले इसे किसी विद्धान से निरीक्षित करवा लेना चाहिए।

10– **संदर्भ ग्रंथ सूची** – पूर्व लिखित विधि के अनुसार संदर्भ ग्रंथ सूची को तैयार करना चाहिए व उसे प्रतिवेदन में संलग्रित करना चाहिए।

11– **अनुक्रमणिका का निर्माण** – प्रतिवेदन के अंत में अनुक्रमणिका को अवश्य प्रस्तुत किया जाना चाहिए। अनुक्रमणिका में subject index व author index दोनो होना चाहिए। पहली अनुक्रमणिका में विषयों, प्रत्ययों के नाम होना चाहिए व उसका पेज नं0 होना चाहिए जबकि author index में लेखकों के संबंध में जानकारी होनी चाहिए। अनुक्रमणिका हमेशा वर्णमाला में व्यवस्थित होनी चाहिए।

प्रतिवेदन लेखन में सावधानियाँ

1– शोधकर्ता को शोध अध्ययन में प्रारंभिक परिकल्पना, इन्द्रयानुभविक अनुभव अवलोकन तथा सैद्धांतिक संप्रत्यय में निश्चित अंतक्रियाका ध्यान रखना होता है।

2– प्रतिवेदन को तार्किक रूप से विश्लेषित किया जाना चाहिए।

3– शोध प्रतिवेदन को अपनी मूलता दिखानी होती है। इसके द्वारा बौद्धिक समस्याओं के समाधान का भी प्रयास किया जाता है। इसके द्वारा किसी समस्या के समाधान में योगदान आवश्यक होता है तथा इसके द्वारा ज्ञान में वृद्धि आवश्यक होती है।

4– संलग्नकों को अवश्य प्रतिवेदन में प्रस्तुत किया जाना चाहिए।

5– संदर्भ ग्रंथ सूची अत्यंत आवश्यक होती है।

6– इडेक्स भी अच्छे प्रतिवेदन का एक आवश्यक अंग होता है अध्ययन का उद्देश्य समस्या की प्रस्तुति, शोध विधि, विष्लेशण तकनीकि को भी शुरूआत में परिचय में लिखना चाहिए।

18.4 सारांश

1. व्याख्या का तात्पर्य है कि संकलित आंकड़ों से अनुमान निकालने की प्रक्रिया।
2. शोध के लिए प्रतिवेदन लेखन अत्यन्त महत्वपूर्ण है।
3. प्रतिवेदन लेखन के चरण हैं – विषय वस्तु का तार्किक **विश्लेषण**, अन्तिम रूप रेखा की तैयारी, रफ ड्राफ्ट तैयार करना, अन्तिम रूप से संदर्भ ग्रन्थ सूची का निर्माण, अन्तिम ड्राफ्ट लिखना
4. प्रतिवेदन के दो प्रकार होते हैं – 1. तकनीकी प्रतिवेदन 2. प्रसिद्ध प्रतिवेदन
5. प्रतिवेदन लेखन में भी अनेक सावधानियॉ रखनी होती हैं।

18.5 शब्दावली

- **प्रतिवेदन** : विश्लेषित तथा प्रयोगात्मक अध्ययनों से प्राप्त हुए संकलित तथ्यों के आधार पर निष्कर्ष निकालने की प्रक्रिया को प्रतिवेदन कहते हैं।
- **व्याख्या या विश्लेशण** : आंकड़ों को विश्लेषित करके अर्थ को ज्ञात करने को आंकड़ा विष्लेशणया व्याख्या कहते हैं।

18.6 स्वमूल्यांकन हेतु प्रशन

1. प्रयोगात्मक या विश्लेषित अध्ययनों से प्राप्त आंकड़ों से अनुमान ज्ञात करने को .... कहते हैं।
2. शोध प्रतिवेदन में तीन चीजें समाहित होनी चाहिए ....
3. नीतियों के प्रयोग के लिए बनाये गये प्रतिवेदन को .... कहते हैं।

उत्तर – 1. प्रतिवेदन 2. आरम्भिक पन्ने, आरम्भिक विषय वस्तु, अंत विषय वस्तु 3. प्रसिद्ध प्रतिवेदन

18.7 संदर्भ ग्रन्थ सूची

- Research Methodology Method and Techniques. C.R. Kothari, New Age International Publication New Delhi.
- www.omgcenter.org

18.8 निबन्धात्मक प्रशन

1. परिणामों की व्याख्या का शोध अभिकल्प के संदर्भ में व्याख्या कीजिये
2. परिणामों की व्याख्या के सम्बन्ध में क्या सावधानियॉ रखनी चाहिए।
3. शोध प्रतिवेदन को लिखने के चरण बताइये।

इकाई 19 सांख्यिकी
Statistics

इकाई की रूपरेखा

19.0 उद्देश्य

19.1 प्रस्तावना

19..2 सांख्यिकी का अर्थ तथा परिभाषा

19..2.1 सांख्यिकी की विशेषताएं

19.3 सांख्यिकी के प्रकार

19.4 सांख्यिकी की श्रेणियां

19.5 सांख्यिकी की उपयोगिता एवं महत्व

19.6 सांख्यिकी की सीमाएं

19.7 सारांश

19.8 परिभाषिक शब्दावली

19.9 अभ्यास–प्रश्नों के उत्तर

19.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

19.11 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री

19.12 निबंधात्मक प्रश्न

19.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आपके द्वारा संभव होगा;

- सांख्यिकी की परिभाषा देना,
- सांख्यिकी की विशेषताओं की चर्चा करना,
- सांख्यिकी के प्रकारों व श्रेणियों को बताना,
- सांख्यिकी की उपयोगिता को बतानाष

- सामाजिक और आर्थिक क्रियाओं की बेहतर समझ के लिए सांख्यिकी के प्रयोगों के बारे में सीख सकेगें,
- सामाजिक अनुसंधान में सांख्यिकी का ज्ञान कैसे सहायक हो सकता है।

19.1 प्रस्तावना

वर्तमान में समाजशास्त्र तथा अन्य सामाजिक विज्ञानों में सांख्यिकीय का प्रयोग दिन प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है।हमारे दैनिक जीवनमें तरह तरह के संख्यात्मक आंकडे़ देखने को मिलते हैं इन आंकड़ों का संबंध जीवन के प्रत्येक क्षेत्र से होता है जैसे आज हम गंभीर आर्थिक समस्याओं जैसे मूल्यवृद्धि, बढती जनसंख्या, साक्षरता, जनस्वास्थ्य, कृषि, बेरोजगारी निर्धनता आदि के विष्लेशणमें सांख्यिकी का अधिकाधिक प्रयोग कर रहे हैं, ताकि इन समस्याओं को हल करने के उपाय ढूढे जा सकें।

अनुसंधान कार्य में प्रायः बहुत से आंकडों को एकत्र किया जाता है यदि इनको ज्यों का त्यों ही प्रस्तुत कर दिया जाय तो वह आंकडों के समूह के अतिरिक्त और कोई अर्थ्स नही रखेगा। अतः यह आवश्यक आंकड़ों को व्यवस्थित करके उसका अध्ययन करना और उनसे उपयोगी सूचना प्राप्त करना ही सांख्यिकी का मूल उद्देश्य है।

19.2 सांख्यिकी का अर्थ तथा परिभाषा

शाब्दिक रूप में सांख्यिकी शब्द अंग्रेजी के शब्द statistics का हिन्दी रूपान्तर है जो लैटिन भाषा के शब्द स्टेटस (status) तथा जर्मन भाषा शब्द statistik से भी जोड़ते हैं जिसका अर्थ राज्य है। इसका अर्थ प्राचीन काल में राजनीतिक रूप से राज्य व्यवस्था के लिए किया जाता था। इस प्रकार हम देखते है कि इस विषय की उत्पत्ति राज्य विज्ञान के रूप में हुई। शासन की भली प्रकार से चलाने के लिए राजा आंकड़े एकत्र करवाते थे जैसे सेना की संख्या, रसद की मात्रा, कर्मचारियों का वेतन, भूमि कर आदि। आंकड़ों की सहायता से ही राज्य के आय–व्यय का सही अनुमान लगाया जाता था। राजाओं की नीति बहुत आगे तक आंकड़ों पर निर्भर करती थी। अतः मूल रूप से सांख्यिकी में राज्य के लिए उपयोगी विभिन्न पक्षों पर संख्यात्मक आंकड़ों का केवल संग्रह होता था।

अतः साख्यिकी का शाब्दिक अर्थ है संख्या से संबंधित शास्त्र। इस प्रकार विषय के रूप में सांख्यिकी ज्ञान की वह शाखा है जिसका संबंध संख्याओं या संख्यात्मक आंकड़ों से हो। सांख्यिकी सिद्धान्तों को वैज्ञानिक रूप में प्रस्तुत करने का श्रेय जर्मन विद्वान गॉटफ्रायड एचेनवाल को है इसी कारण एकेनवेल को सांख्यिकी का जनक कहा जाता है। वर्तमान युग में सांख्यिकी को विकसित करने में कार्ल पियर्सन का योगदान सबसे अधिक है।

सांख्यिकी शब्द का प्रयोग दो भिन्न–भिन्न अर्थो में किया जाता है –

i) बहुवचन

ii) एक वचन

बहुवचन में इसका अभिप्राय ऑकड़ो या समंको से होता जैसे अपराध, आयात–निर्यात, राष्ट्रीय आय

जबकि एक वचन के रूप में सांख्यिकी का अर्थ सांख्यिकी विज्ञान से होता है अर्थात कुछ विशेष विधि के द्वारा आंकड़ों के संग्रह, विष्लेशण और विवेचन से होता है।

सांख्यिकी का अर्थ इस प्रकार दो रूपों में प्रस्तुत किया गया।

1) एक वचन के रूप में सांख्यिकी का अर्थ 'सांख्यिकी विज्ञान' के रूप में है।

2) बहुवचन के रूप में सांख्यिकी का अर्थ आंकड़ो या समंको से होता है।

बाउले के अनुसार "समंक किसी अनुसंधान के किसी विभाग में तथ्यों का संख्या के रूप में प्रस्तुतीकरा है, जिन्हें एक दूसरे से सम्बन्धित रूप में प्रस्तुत किया जाता है"।

कॉनर के अनुसार "सांख्यिकी किसी प्राकृतिक अथवा सामाजिक समस्या से सम्बन्धित माप की गणना या अनुमान का क्रमबद्ध एवं व्यवस्थित ढंग है जिससे कि अन्तसम्बन्धों का प्रदर्शन किया जा सके"।

वालिस तथा रॉबर्ट्स "सांख्यिकी के परिमाणात्मक पहलुओं के संख्यात्मक विवरण है जो मदों की गिनती या माप के रूप में व्यक्त होते हैं"।

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि सांख्यिकी वह प्रविधि या कार्य पद्धति है जिसको संख्यात्मक तथ्यों के संकलन, प्रस्तुतीकरण तथा विष्लेशण करने के लिए प्रयोग में लाया जाता है। सांख्यिकी द्वारा ऐसे परिणाम प्राप्त होते हैं जिनसे विभिन्न दशाओं के बीच कार्य और कारण के सम्बन्ध का स्पष्ट करके एक सामान्य निष्कर्ष पर पहुंचा जा सके।

बोध प्रश्न–1

(i)-सांख्यिकी से क्या समझते है ? पाँच पंक्तियों में संक्षिप्त उत्तर दीजिए।

....

....

....

....

....

बोध प्रश्न–2

(ii)-statusशब्द किस भाषा से मिलकर बना है।

(i) अंग्रेजी
(ii) लैटिन
(iii) जर्मन
(iv) ग्रीक

19.2.1 सांख्यिकी की विशेषताएं

समाजशास्त्र में सांख्यिकी की उपयोगिता निम्नलिखित तथ्यों के द्वारा स्पष्ट की जा सकती है।

(1)-तथ्यों का समूहीकरण– तथ्यों के किसी समूह अथवा उस पर आधारित निष्कर्ष को सांख्यिकी कहा जाता है। उदाहरणार्थ किसी एक व्यक्ति की मासिक आय सांख्यिकी नहीं है अपितु बहुत से लोगों की मासिक आय से प्राप्त औसत आय को सांख्यिकी आँकड़ा कहा जाता है।

(2)-तथ्यों का संख्यात्मक प्रस्तुतीकरण– सांख्यिकी उपयोग किसी तथ्य की गुणात्मक महत्व अर्थात अच्छा, बुरा, उचित अथवा अनुचित को व्यक्त नहीं करता है। इसके विपरीत प्रत्येक निष्कर्ष को प्रतिशत, अनुपात, औसत अथवा विचलन के रूप में संख्या के द्वारा व्यक्त किया जाता है। वास्तविक अर्थो में सांख्यिकी संख्यात्मक आँकड़ों का समूह होता है। किसी उद्योग क्षेत्र के प्रबन्धक का वेतन श्रमिकों से ज्यादा होता है, इस तथ्य द्वारा सांख्यिकी प्रकृति प्रदर्शित नहीं होती है, जबकि विभिन्न श्रेणियों के कार्मिकों की औसत मासिक आय की परस्पर तुलना तथ्यों को सांख्यिकी रूप में प्रस्तुत करेगी।

(3)-पूर्व निर्धारित उद्देश्य– विशेषताः सांख्यिकी के अर्न्तगत संबंधित आँकड़ों समंको क संकलन एक पूर्व निश्चित उद्देश्य को दृष्टिगत रखकर किया जाता है। सांख्यिकीय समंक यत्र–तत्र अव्यवस्थित नही होते वरन् यह अति व्यवस्थित एवं योजनाबद्ध रूप में होते हैं। किसी पूर्व निर्धारित उद्देश्य की अनुपस्थिति में प्राप्त किये जाने वाले तथ्यों को संख्या कहा जा सकता है परन्तु वह आँकड़ों की श्रेणी में नहीं आते है।। जैसे किसी औद्योगिक क्षेत्र में श्रमिकों की सामाजिक आर्थिक स्थिति का अध्ययन किया ताना हे तो पूर्व में ही उद्देश्य निर्धारित किया जाता है कि तथ्यों का संग्रहीकरण किस लक्ष्य हेतु किया जा रहा है। इस लक्ष्य के लिए कार्य घण्टे, दैनिक मजदूरी , स्वास्थ्य दशाएं, परिवार का आकार, शैक्षणिक स्तर आदि तथ्य एकत्र किये जा सकते है।

(4)-तुलनात्मक आधार– सांख्यिकी का संबंध उन आँकड़ों से भी होता है जो एक दूसरे के साथ तूलना योग्य होते है। तुलनात्मक अध्ययन के लिए तुलना की श्रेणियों में सजातीय एकरूपता का होना अनिवार्य है। उदाहरण के लिए यदि व्यक्तियों की आय की तुलना वृक्षारोपण के आँकड़ों से की जायेगी तो समरूपता न होने का कारण उन्हें सांख्यिकी के अर्न्तगत नहीं रखा जा सकता है। उक्त उदाहरण से स्पष्ट होता हे कि आँकड़ों के केवल उन समूहों को सांख्सिकी कहा जा सकता है जो परस्पर तुलना योग्य हों।

(5)-आँकड़ों का विशुद्ध रूप– आँकड़ों में पर्याप्त शुद्धता की उपस्थिति सांख्यिकी की एक विशेष आवश्यकता होती है। इयका तात्पर्य एह है कि अध्ययन विषय की प्रकृति तथा अनुसंधान का उद्देश्य विशुद्ध होना चाहिए। आँकड़ों की शुद्धता का संबंध विषय की प्रकृति एवं विशिष्ट परिस्थिति से होता है। इस परिशुद्धता का निर्धारण संमको की मात्रा अथवा संख्या से किया जाता है जिसके आधार पर एक उपयोगी निष्कर्ष निरूपित किया जा सकता है।

(6)-आँकड़ों का व्यवस्थित एकत्रीकरण– सांख्यिकी की इस विशेषान्तर्गत तथ्यों का संकलन योजनाबद्ध तरीके से किया जाता है क्योंकि अव्यवस्थित आँकड़े किसी भी निष्कर्ष को वस्तुनिष्ठतापूर्वक निरूपित नहीं कर सकते हैं।

(7)-विभिन्न दशाओं से प्रभावित – यह विदित है कि विज्ञान होने के कारण सांख्यिकी से संबंधित आँकड़े अनेक कारणों अथवा कारकों से प्रभावित होते है। सांख्यिकी का संबंध किसी एक पक्ष मात्र के विष्लेशणसे ही नहीं अपितु उन सभी कारकों के आंकलन अथवा विवेचन से भी होता है जो किसी विशेष दशा में परिवर्तन उत्पन्न करते हैं, साथ ही घटनाओं के मध्य परस्पर सह–संबंध को व्यक्त करते हैं।

(8)-संगणना व निदर्शन पर आधारित होना– सांख्यिकी के अर्न्तगत निहित आँकड़ों का संकलन विभिन्न पद्धतियों एवं प्रविधियों पर आधारित होते है। उद्देश्यपूर्ण विधि से संकलित संगणना व निदर्शन आधारित आँकड़े सांख्यिकी की विशेषता को स्पष्ट करते हैं। सीमित अनुसंधान क्षेत्र में संमको का एकत्रीकरण संगणना विधि तथा विस्तृत अनुसंधान क्षेत्र में आँकड़ों का संकलन निदर्शन अर्थात् संबधित पूर्ण इकाइयों में से कुछ प्रतिनिधि इकाइयों का चयन करके किया जाता है।

(9)-सामान्य प्रवृत्तियों का अध्ययन– विशेष रूप से सांख्यिकी एक ऐसा विज्ञान है जो आँकड़ों के आधार पर किसी विषय से संबंधित सामान्य प्रवृत्तियों को स्पष्ट करता है। सांख्यिकी की आधारभूत मान्यता यह है कि कतिपय संख्याओं के आधार पर निरूपित निष्कर्ष दूसरी संख्याओं पर लागू होता है। जैसे– यदि किसी विशेष समाज में कार्यदशाओं, स्वास्थ्य– स्तर, मासिक आय, जन्म दर, मृत्यु दर आदि आँकड़े एकत्रित कर लिये जाये ंतो उनके आधार पर उसी प्रकार के अन्य समाजों के लिए भी जनसंख्या संबंधी सामानय प्रवृत्तियों को समझा जा सकता है।

डी0 एन0 एलहान्स के शब्दों में '' सांख्यिकी आँकड़ों के रूप में संख्यात्मक विवरणों के वह तथ्य हैं जो विष्लेशणएवं व्याख्या के योग्य होते हैं। उपरोक्तानुसार सांख्यिकी वह विषय है जिसके द्वारा किसी अनुसंधान में आँकड़ों का संग्रह, प्रस्तुतीकरण, विष्लेशणऔर विवेचन प्रक्रियाएं निष्पादित की जाती हैं।

बोध प्रश्न–3

(i)-सांख्यिकी की किन्ही पांच विशेषताओं का संक्षिप्त में उत्तर दीजिए।

....
....
....
....
....
....
....

19.3 सांख्यिकी के प्रकार

प्रक्रिया की आधारभूत मान्यताओं के आधार पर सांख्यिकी के मुख्यतः दो रूप प्रचलित है –

i) प्राचल सांख्यिकी

ii) अप्राचल सांख्यिकी

i) प्राचल सांख्यिकी (parametric statistics) इसके अन्तर्गत समग्र के किसी एक विशेष प्राचल से संबंधित होता है तथा आंकड़ों के आधार पर प्राचल के संबंध में अनुमान लगाया जाता है। अर्थात इसके

अन्तर्गत जिस प्रकार के आंकड़ों का विष्लेशणकिया जाता है वह आंकड़ें न्यादर्श और सामान्य विवरण से संबंधित होते है।

ii) अप्राचल सांख्यिकी इसे वितरण मुक्त सांख्यिकी भी कहा जाता है क्योंकि कुछ आंकड़ें ऐसे भी होते है जहां न तो संयोगिक चयन होता है और न सामान्य वितरण हो। ऐसे आंकड़ों की संख्या कम होने के कारण आकड़ों का स्वरूप विकृत होता है और इनका एक समग्र के प्राचल से संबंध नही होता है। ऐसे आंकडों से संबंधित सांख्यिकी विधियां अप्राचल सांख्यिकी के अन्तर्गत आती हैं। माध्यिका, सहसंबंध, काई टेस्ट, माध्यिका टेस्ट आदि प्रमुख सांख्यिकी विधियां है।

व्यावहारिकसांख्यिकी के मुख्यतः दो प्रकारों में विभक्त कर सकते है।

i). वर्णनात्मक सांख्यिकी

ii). अनुमानिक सांख्यिकी

i). वर्णनात्मक सांख्यिकी : इसके अन्तर्गत वे विधियां आती है जिनके प्रयोग से किसी न्यादर्श की विशेषताओं का प्राप्त आंकडों के आधार पर वर्णन किया जाता है। इस प्रकार की सांख्यिकी का प्रयोग सांख्यिकी में प्रदत्तों का संकलन, संगठन, प्रस्तुतीकरण एवं परिकलन से होता हैं इसके अंतर्गत प्रदत्तों का संकलन करके सारणीबद्ध किया जाता है और प्रदत्तों की विशेषता स्पष्ट करने के लिए कुछ सरल सांख्यिकीय मानों की गणना की जाती है– जैसे केन्द्रीय प्रवृत्ति के मापकों, विचलन मापकों तथा सहसंबंध आदि का प्रयोग वर्ग की प्रकृति तथा स्थिति आदि जानने के लिए किया जाता है।

ii). अनुमानिक सांख्यिकी : इस सांख्यिकी विधियां का प्रयोग किसी जनसंख्या से लिये गए न्यादर्श के विशेष में तथ्य एकत्र करके उसके आधार पर जनसंख्या के विषय में निष्कर्ष निकालने के लिए किया जाता है। बहुधा इस सांख्यिकी की सहायता से परिणामों की वैधता जांच की जाती है। बहुधा अनुमान के लिए अपेक्षाकृत उच्च सांख्यिकी विधियों का प्रयोग किया जाता है जैसे सम्भावना नियम, मानक त्रुटि, सार्थकता, परीक्षण आदि। चूंकि समूह विस्तृत होते है तथा इनके सदस्यों की संख्या अधिक होती है अतः अध्ययनकर्त्ता अध्ययन के लिए इन बड़े समूहों से न्यादर्श को चुनकर समस्या का अध्ययन से प्राप्त निष्कर्ष सम्पूर्ण समूह का प्रतिनिधित्व करते है।

बोध प्रश्न–4

(i)-अप्राचल सांख्यिकीसे क्या समझते है ? पाँच पंक्तियों में संक्षिप्त उत्तर दीजिए।

....
....
....
....

बोध प्रश्न–5

(i)- व्यावहारिक सांख्यिकी को कितने प्रकारों में विभक्त कर सकते है, पाँच पंक्तियों में संक्षिप्त उत्तर दीजिए।

....

....

....

....

....

....

....

19.4 सांख्यिकी की श्रेणियां

तथ्यों के संकलन की क्रमबद्ध एवं व्यवस्थित रूप में लिखा जाता है तब उसे हम सांख्यिकी श्रेणी या पदमाला कहते है।

सेकिस्ट के अनुसार ''सांख्यिकी में समंक श्रेणी उन पदों या इकाईयों के गुणों का कहा जा सकता है जो किसी तर्कपूर्ण क्रम के अनुसार व्यवस्थित किए गए हैं।''

सांख्यिकी श्रेणियों को निम्नलिखित प्रकार से विभाजित किया जा सकता हैं–

(1) प्रकृति के आधार पर–साखि्यकीय श्रेणियां तीन प्रकार की होती है–
(1) कालानुसार श्रेणी
(2) स्थानानुसार श्रेणी
(3) परिस्थितिनुसार श्रेणी

(1)-**बनावट के आधार पर**–सांख्यिकीय श्रेणियां तीन प्रकार की होती है–

(1) व्यक्तिगत श्रेणी
(2) खंण्डित श्रेणी
(3) अविच्छिन्न श्रेणी

समाजशास्त्र में सामान्यतः तीन सांख्यिकी श्रेणियां है–

(1)-**व्यक्तिगत श्रेणी या सरल श्रेणियां**– व्यक्तिगत श्रेणी में प्रत्येक पद या इकाई का अलग अलग माप दिया जाता है। अर्थात पद मूल्य एक संख्या के रूप में होते है तथा उनकी आवृति भी केवल एक–एक स्वतन्त्र संख्यामें हो तो हम उसे व्यक्तिगत श्रेणी कहते है।

उदाहरण. किसी वार्षिक परीक्षा में 9 छात्रों के इतिहास में प्राप्तांक निम्नवत थे, उनके प्राप्तांको का समान्तर माध्य प्रत्यक्ष विधि से ज्ञात कीजिए।

छात्र	A	B	C	D	E	F	G	H	I
प्राप्तांक	26	20	25	29	21	32	41	22	39

(2)-खंण्डित श्रेणी या असतत् श्रेणी– समंको के संकलन के समय जब एक ही मूल्य के अनेक पद एकत्रित हो जाते है तब उन्हे अलग अलग करना संभव नही होता तब ऐसी स्थिति में उन पदों की केवल आवृत्ति लिख दी जाती है। अर्थात श्रेणी में मूल्यों की आवृति जितनी बार होता है वह संख्या उसी मूल्य के सामने लिखी जाती है। इसके अर्न्तगत माप निश्चित एवं पूर्णांकों में लिखा जाता है और उनके खण्ड नही होते हैं। बच्चों की संख्या, अण्डों की या व्यक्ति की संख्या आदि ऐसे मूल्य है जो पूर्णाक होते है और उनके टुकडें या खण्ड नही होते।

उदाहरण .

प्राप्तांक	छात्र संख्या
28	4
99	1
31	3
40	1
42	7
44	1
46	6
47	2
48	1

(3)-अविच्छिन्न श्रेणी या सतत श्रेणी– इस प्रकार की श्रेणियों में विभिन्न मदों के मल्य निश्चित संख्याओं के रूप में न दियेजाकर वर्गान्तर में दिये जाते है अर्थात अखण्डित श्रेणी में आवृत्तियों की संख्या अत्यधिक होनेके कारण पदों को कुछ निश्चित वर्गों में विभक्त कर दिया जाता है इससे प्रत्येक मूल्य के मद को कहीं न कही अवश्य ही सम्मिलित किया जाता है। एक वर्ग के समाप्त होते ही दूसरा वर्ग प्रारम्भ हो जाता है। खण्डित श्रेणी में मल्य पूर्णांकों में दिया जाता है जबकि सतत् श्रेणी में मूल्य वर्गों में दिया जाता है । ये श्रेणिया दो प्रकार की होती हैं–

(अ)-**असम्मिलित श्रेणी**– असम्मिलित सतत् श्रेणी में पिछले वर्गान्तर की मुख्य सीमा एवं उसके वर्गान्तर की निम्न सीमा दोनों एक ही होती है।

उदाहरण

वर्गान्तर	**छात्र संख्या**
10-20	4
20-30	1
30-40	3
40-50	1
50-60	7

(ब)-**सम्मिलित श्रेणी**– सम्मिलित सतत् श्रेणी में पिछले वर्गान्तर की उच्च्य सीमा एवं उसके अगले वर्गान्तर की निम्न सीमा एक ही नही होती हैं।

उदाहरण

वर्गान्तर	**छात्र संख्या**
10—19	5
20—29	7
30—39	6
40—49	1
50—59	8

प्रत्येक प्रश्न को हल करते समय सम्मिलित श्रेणी को असम्मिलित श्रेणियों में परिवर्तित कर लेना चाहिए।

उदाहरण

वर्गान्तर	**छात्र संख्या**
10-20	5
20-30	7
30-40	6
40-50	1
50-60	8

प्रकृति के आधार पर

(1)-**कालानुसार श्रेणी**– इस श्रेणी को ऐतिहासिक श्रेणी भी कहा जाता है क्योंकि वर्ग पदों की ऐतिहासिक क्रम में लिखा जाता है। संकलित तथ्यों को जब काल या समय के अनुसार वर्गीकरण किया जाता है तब इस प्रकार की वर्गीकृत श्रेणी को काल श्रेणी कहते है। जैसे वर्ष, माह, सप्ताह या दिन को समय की इकाई के रूप में प्रयोग किया जा सकता है। यह पदमाला समय, काल या इतिहास को दर्शाती है।

उदाहरण 1 महाविद्याालय में विभिन्न सत्रों में बी. ए. प्रथम वर्ष में छात्रों की संख्या निम्न थी।

वर्श	2005	2006	2007	2008	2009	2010	2011	2012	2013
छात्रों की संख्या	26	20	25	29	21	32	41	22	39

(2)-स्थानानुसार श्रेणी– इसके अन्तर्गत संकलित तथ्यों को स्थान संबंधी जानकारी के आधार पर बांटा जाता है तब इस प्रकार की श्रेणियों को स्थान या भौगोलिक श्रेएियां कहते है। इस श्रेणी में एक ही समय पर विभिन्न स्थानों की स्थिति दर्शायी जाती है।

उदाहरण 3

राज्य का नाम	**जनसंख्या (करोड में)**
दिल्ली	20
उत्तर प्रदेश	28
हिमाचल प्रदेश	2
उत्तराखण्ड	1

(3)-परिस्थितिनुसार श्रेणी– इन श्रेणियों में आंकडों को परिस्थितियों के अनुसार या दशा के अनुसार दर्शाया जाता है। तब उसे परिस्थितिनुसार श्रेणी कहते है। इन श्रेणियों में प्रत्येक इकाई का माप अलग–अलग दिया जाता है अर्थात भिन्न– भिन्न दशाओं में सांख्यिकी श्रेणियों की आवृत्तियां परिवर्तनशील होती रहती है। जैसे– लम्बाई, वेतन, आयु, प्राप्तोक आदि श्रेणियां इसके अन्तर्गत आती हैं। **उदाहरण** . समाजशास्त्र विषय में 70 छात्रों के प्राप्तांको को दर्शाने वाली श्रेणी परिस्थितिनुसार श्रेणी है।

प्राप्तांक	**छात्र की संख्या**
10-20	12
20-30	10
30-40	22
40-50	8
50-60	18

बोध प्रश्न–6

(i)-सांख्यिकी श्रेणियों से आप क्या समझते है ? बनावट के आधार पर श्रेणियो को कितने भागों में बांटा जाता है ।

....

....

....

....

.**बोध प्रश्न–7**

(ii)-प्रकृति के आधार पर सांख्यिकी श्रेणियों को कितने भागों में बांटा जाता है।

(i) एक

(ii) दो

(iii) पांच

(iv) तीन

19.5 सांख्यिकी की उपयोगिता एवं महत्व

वर्तमान में सांख्यिकी का प्रयोग दिन प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है क्योंकि हमारे जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में नीति निर्धारण आवश्यक होता है और नीतियों का निर्धारण संमको के बिना सम्भव नहीं है। भारत तथा अन्य विकासशील देशों की सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था का नियोजन परोक्ष अथवा अपरोक्ष रूप से सांख्यिकी के प्रयोग पर ही आधारित है। एकत्रित सांख्यिकीय आँकड़ों के माध्यम से ही भविष्य की आवश्यकताओं का अनुमान लगाया जाता है और विकासोन्मुख दिशा में संसाधनों की अभिवृद्धि करने का प्रयास होता हैं वर्तमान परिपेक्ष्य में सांख्यिकी के सामयिक महत्व तथा उपयोगिता को अग्रलिखित बिन्दुओं के रूप में समझा जा सकता है–

(1)-तथ्यों को संख्यात्मक रूप में प्रस्तुत करना– सांख्यिकी का यह महत्वपूर्ण कार्य विषय से संबंधित तथ्यों का संख्या के रूप में प्रस्तुतीकरण होता हैं पूर्व में इसका उपयोग मात्र संख्या में मापी जाने आँकड़ों की प्राप्ति तक ही सीमित था,परन्तु मनोवृत्ति मापक पैमानों के विकास के साथ ही मानव विचारों और मनोवैज्ञानिक अध्ययनों में भी सांख्यिकी की उपयोगिता व्यापक हो गई है। इसके द्वारा समस्याओं को अपेक्षाकृत अधिक सरल रूप में समझा जा सकता है। उदाहरणर्थ वर्तमान में चुनाव से पूर्व विभिन्न राजनीतिक दलों को चुनाव के वक्त मिलने वाली सीटों के अनुमान के लिए मीडिया द्वारा एक्जिट पोल किया जाता है ताकि लोगो की राय जानी जा सके।

(2)-संमको के सरलीकरण में सहायक– आँकड़ों का सरल और सुबोध रूप में प्रस्तुतीकरण सांख्यिकी के द्वारा ही सम्भव होता हे। अत्यन्त जटिल दृष्टव्य तथ्यों का सांख्यिकी की वर्गीकरण, सारणीयन, दण्डचित्र, ग्राफ, बिन्दुरेखाओं के द्वारा सरलता से प्रदर्शित किया जा सकता हे और सामान्य जनसमुदाय उसे आसानी से समझा जा सकता है। उदाहरण के लिए प्रति व्यक्ति आय तथा राष्ट्रीय आय को सारणी तथा रेखाचित्र द्वारा प्रदर्शित पर उनकी ग्राह्यता अत्यन्त सरल व स्मरणीय हो जाती है।

(3)-तथ्यों का तुलनात्मक अध्ययन– सांख्यिकी विषय निहित तथ्यों अथवा विभिन्न विषयों से संबंधित आँकड़ों का तुलनातमक अध्ययन करती है। औसत तथा गुणांक के द्वारा किन्हीं भी दो तथ्यों की तुलना करके उनके मध्य सहसंबंध प्रदर्शित करते हैं। जैसे– यदि हम समुदाय में परिवारों की आर्थिक स्थिति और शैक्षिक स्तर के मध्य अध्ययन करते हैं तो प्राप्त आँकड़ों से यह ज्ञात करना सरल हो जाता है कि परिवारों की आर्थिक स्थिति का शिक्षा से किया संबंध है।

(4)-पूर्वानुमान की सुविधा– सांख्यिकी के द्वारा न केवल आँकड़ों का विष्लेशणकिया जाता है, वरन् सांख्यिकी के रूप में प्राप्त आँकड़ों की सहायता से भावी परिस्थितियों अथवा दशाओं का पूर्व में अनुमान लगाया जा सकता है। पुर्वानुमान विज्ञान की आवश्यक विशेषता है, जिसके आधार पर भावी योजनाएं निर्मित की जाती हैं। जनसंख्या से प्राप्त आँकड़ों के आधार पर भविष्य की आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिए प्राथमिकता आधारित कार्य क्षेत्रों का निर्णय महत्वपूर्ण होता है। सांख्यिकी की उपरोक्त कार्य विशेषता के कारण सभी सामाजिक विज्ञानों में सांख्यिकीय पद्धतियों के अध्ययन को अधिकाधिक महत्व दिया जा रहा है।

(5)-व्यक्तिगत ज्ञान में वृद्धि– सांख्यिकी द्वारा व्यक्तिगत ज्ञान और अनुभवों में वृद्धि होती है। इसका उपयोग करके किसी भी समस्या के व्यावहारिक पक्ष को अधिक सरल व सहज तरीके से समझा जा सकता है क्योंकि सांख्यिकी मूलतः अनुभूत व सिद्ध तथ्यों से संबंधित हैं यह व्यक्ति की तर्क शक्ति को

बढ़ाती है, साथ ही विचारों की स्पष्टता को प्रखर करती है। अध्ययनरत समूह की व्यावहारिक समस्याओं के सरल व अनुभूत बोध के साथ हमारे व्यावहारिक– सामाजिक दृष्टिकोण परिवर्तित हो सकते हैं।

(6)-विशय की सही जानकारी– यद्यपि सामाजिक जीवन में अधिकांश विषयों की जानकारी सामान्य कथनों व द्वितीय स्रोतो से प्राप्त सूचनाओं पर आधारित होती हैं, तथापि स्पष्ट तथा अनुभव सिद्ध भिज्ञता मात्र सांख्यिकी के द्वारा ही प्राप्त होती हैं अतएव यह स्पष्ट किया जा सकता है कि सामाजिक विषयों की जानकारी का सबसे प्रामाणिक आधार सांख्यिकी ही है।

(7)-राज्य प्रशासन के क्षेत्र में महत्व–विकासोन्मुखी वर्तमान युग में प्रशासनिक कार्यों के संचलनार्थ भी सांख्यिकी का प्रयोग महत्वपूर्ण है। सरकारों का मुख्य दायित्व विकास के लिए प्रशासन का अधिकाधिक कार्य कुशल बनाना होता है। विकास के विभिन्न क्षेत्रों से संबंधित आँकड़ों का संकलन करके नीति नियोजन के द्वारा सरकारें प्रशासनिक क्रियान्वयन को और अधिक सजग व प्रभावपूर्ण बनाती हैं ताकि विकास लक्ष्यों की गुणात्मक व मात्रात्मक उपलब्धि सुनिश्चित हो सके।

(8)-अन्य विज्ञानों के नियमों के सत्यापन में सहायक–सामान्यतः परिस्थितियों में परिवर्तन के कारण पुराने सिद्धान्त पूर्व की भाँति वर्तमान में प्रमाणिक तथा उपयोगी नहीं रह गए हैं। सांख्यिकी के द्वारा प्राप्त अध्ययन पद्धतियों के प्रयोग से वर्तमान तथ्यों का संकलन सम्भव होता है कि अतीत का कोई नियम अथवा सिद्धान्त वर्तमान में किस सीमा तक उपयोगी अथवा अनुपयोगी है। इसी के द्वारा पई परिकल्पनाएं सृजित होती है जो नवीन नियमों एवं सिद्धान्तों को विकसित होने का आधार देती हैं।

(9)-नियोजन के क्षेत्र में महत्व– नियोजन एक अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रक्रिया है। जिस देश में नियोजन जितना व्यावहारिक होता है, वहाँ का सामाजिक–आर्थिक विकास उतनी ही तीव्र गति से होता है। सांख्यिकीय आँकड़ों की उपलब्धता इस दिशा में उपलब्ध साधनों तथा भविष्य की आवश्यकताओं के मध्य संतुलन स्थापित करती है। आँकड़ों के द्वारा ही यह ज्ञात करना सम्भव हो सकता है कि उस क्षेत्र अथवा समूह की अल्पकालीन व दीर्घकालीन आवश्यकताएं क्या हैं। इन्हीं आवश्यकताओं के आधार पर विकास कार्यों से संबंधित प्राथमिकताओं का निर्धारण किया जाता हैं।

(10)-आर्थिक क्षेत्र में महत्व–व्यक्ति का आर्थिक उत्पादन व उपभोग के मध्य संतुलन, व्यापारिक क्रियाओं तथा औद्योगिक विकास पर निर्भर करता है। व्यक्तियों की अभिरूचियाँ, जीवन शैली, जीवन स्तर, क्रय क्षमता तथा दैनिक व्यवहारिक आदतों का अध्ययन उत्पादन के व्यवस्थापन अथवा प्रबन्धन के लिए अत्यावश्यक हैं। इसका तात्पर्य यह है कि जिस क्षेत्र में औद्योगिक तथा आर्थिक समंक जितनी कुशलता से एकत्रित किये जाते हैं, उस क्षेत्र का आर्थिक विकास उतनी ही त्वरित गति से नियोजित किया जा सकता है। नियोजन हेतु पुनः सांख्यिकी का प्रयोग महत्वपूर्ण है।

(11)-सामाजिक अनुसंधान में महत्वपूर्ण– सामाजिक घटनाओं का क्रम बड़ी सीमा तक अमूर्त तथा गुणात्मक होता है, परन्तु सांख्यिकीय उपकरण की मदद से घटनाओं से संबंधित प्रवृत्तियों को समझा जा सकता है। सांख्यिकी के अभाव में सामाजिक अनूसंधान यर्थाथ एवं वस्तुनिष्ठ नहीं बनाया जा सकता है। सामाजिक विकास कार्यों का मूल्याकंन भी आँकड़ों के आधार पर ही किया जाता है।

बोध प्रश्न–8

(i)-सांख्यिकी की किन्ही चार उपयोगिताका संक्षिप्त उत्तर दीजिए।

....
....
....
....

19.6 सांख्यिकी की सीमाएं

यद्यपि सांख्यिकी वैज्ञानिक महत्व युक्त है, परन्तु इसके प्रयोग की सीमाएं भी हैं। तथ्यों का संकलन, विष्लेशणतथा विवेचन प्रविधियों में सीमाओं का ध्यान रखना नितान्त आवश्यक होता है, अन्यथा निष्कर्ष त्रुटिपूर्ण हो सकते हैं। सांख्यिकी की प्रमुख सीमाओं को निम्नानुसार समझा जा सकता है–

(1)-**संख्यात्मक अध्ययन की सीमितता–** सांख्यिकी का उपयोग केवल उन्ही अध्ययनों में किया जा सकता है जिनमें तथ्यों को संख्याओं के रूप में स्पष्ट करना सम्भव होता है। अधिकाशतः सामाजिक घटनाये गुणात्मक होती हैं, यथा–जनसमुदाय की सांस्कृतिक विशेषताओं, नैतिकता तथा चरित्र को आँकड़ों में नही मापा जा सकता है।

(2)-**व्यक्तिगत इकाईयों के अध्ययन का आभाव–** सांख्यिकी का प्रयोग मात्र वर्गो के अध्ययन हेतु किया पा सकता है न कि व्यक्तिगत मूल्यों के संदर्भ में । साख्यिकी द्वारा व्यक्तिगत इकाईयों के संदर्भ में नही दिये जा सकते हैं और न ही अधिक जानकारी प्राप्त की जा सकती है।

(3)-**भ्रमपूर्ण** निष्कर्ष **प्राप्ति की सम्भावना–** सांख्यिकी के आधार पर जो निष्कर्ष प्राप्त किये जाते हैं उनकी विश्वसनीयता बहुत अधिक नहीं होती है। इस प्रकार के निष्कर्ष अथवा परिणाम अपूर्ण तथा अस्पष्ट होते हैं जो वास्तविकता से पृथक एक सामान्य दशा को व्यक्त करते हैं।

(4)-**सांख्यिकी परिणाम औसत के सूचक होते है–** सांख्यिकी की यह सीमितता यह इंगित करती है कि सांख्यिकी द्वारा जो भी परिणाम प्राप्त होते हैं वो प्रायः औसतम मान के रूप में ही रहते हैं। जहाँ एक ओर सांख्यिकी औसत को सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थान देती है, वहीं दूसरी तरफ औसत मान दीर्घकाल में उपयोगी नहीं रह पाते हैं। औसत मान सदैव परिवर्तित होता रहता है, साथ ही यह एक सामान्य प्रवृत्ति को स्पष्ट करता है।

(5)-**उपयोग हेतु विशेश ज्ञान की आवश्यकता–** अनुसंधान कार्य में सांख्यिकी का कुशल प्रयोग करने के लिए विशष ज्ञान आवश्यक होता है। सांख्यिकी आधार पर तथ्यों के संकलन, सारणीयन, विष्लेशणतथा विवेचना आदि का समुचित ज्ञान होना नितान्त जरूरी है।

(6)-**गहन अध्ययन हेतु उपयुक्त–** गहन अध्ययन की शोध पद्धतियों में सांख्यिकी का प्रयोग करना लाभदायक नहीं होता है क्योंकि गहन अध्ययन विषयों में जीवन की सूक्ष्म घटनाओं के संबंध में स्पष्ट निष्कर्ष प्राप्त नहीं किये पा सकते हैं। इस प्रकार की अध्ययन शैली के अर्न्तगत वैयक्तिक अध्ययन तथा सहभागी अवलोकन पद्धतियाँ ही प्रभावी हो सकती हैं जो वास्तविक दशाओं को स्पष्ट करती हैं।

(7)-पद्धति की अपूर्णता– सांख्यिकी एक सम्पूर्ण पद्धति नहीं है अर्थात सांख्यिकी का उपयोग करके प्राप्त परिणामों को तभी सच माना जा सकता है जब अन्य पऋतियों द्वारा उनकी प्रामाणिकता की पुष्टि कर ली जाए।

(8)-आँकड़ों में सजातीयता एवं एकरूपता की अनिवार्यता– इस सीमितता के अर्न्तगत आँकड़ों का तुलनात्मक अध्ययन करके उपयोगी निष्कर्ष निरूपित किये जाते हैं, परन्तु तुलना के लिए आँकड़ों का समान प्रवृत्ति का होना अनिवार्य होता है। समंकों की समानता की दशा को सजातीयता अथवा एकरूपता कहते हैं। आँकड़ों के सजातीयता होने पर ही निष्कर्ष प्राप्त किये जा सकते हैं। तथ्यों में भिन्नता की दशा में त्रुटिपूर्ण परिणाम प्राप्त होते हैं।

(9)- सांख्यिकी साधन प्रस्तुत करती है उसका समाधान नहीं–प्रो0 बाउले का विचार है कि सांख्यिकी का कार्य समंको को संकलित कर प्रस्तुत करना होता है न कि किसी निष्कर्ष पर पहुँचना। सांख्यिकी के द्वारा हमें मात्र कुछ तथ्य प्राप्त होते हैं, जिनके आधार पर समस्या समाधान का कार्य शोधकर्ता का होता है। यदि शोधकर्ता स्वयं योग्य और कुशल नहीं होगा तो वह किसी उपयोगी निष्कर्ष पर नही पहुँच सकता है। कोई व्यक्ति चाहे तो इनको परिणाम रूप् में उपयोग कर सकता है। अतः उपरोक्तानुसार स्पष्ट होता है कि सांख्यिकी एक साधन एक मात्र है।

बोध प्रश्न–9

(i)-सांख्यिकी की किन्ही चार सीमाओंका संक्षिप्त उत्तर दीजिए।

....

....

....

....

....

....

19.7 सारांश

इस इकाई में हमने सबसे पहले सांख्यिकी के अर्थ को स्पष्ट करते हुए इसकी विशेषताओं की चर्चा की है, जिससे स्पष्ट है कि सांख्यिकी अर्न्तनिहित आँकड़ों एवं समंकों सहित एक वैज्ञानिक विधि है जिसे अध्ययन हेतु एक आवश्यक आधार के रूप में देखा जाता है। सांख्यिकी आंकड़ों के समूह को कुछ संख्यात्मक मापों के रूप में संक्षिप्त करने में सहायता करता है, जिससे सांख्यिकी के द्वारा आंकड़ों के समूह के विषय में सार्थक एवं समग्र सूचनाएं प्रस्तुत की जाती है। सामाजिक अनुसंधान के क्षेत्र में सांख्यिकी यद्यपि अत्यधिक महत्वपूर्ण है, फिर भी इसका पूरक पद्धति के रूप में उपयोग करना ही लाभदायक होता है। साख्यिकी से प्राप्त महत्वपूर्ण तथ्यों को अनुसंधानकर्ता की व्यक्तिगत योग्यता द्वारा ही उपयोगी निष्कर्ष के रूप में निरूपित किया जा सकता है। सांख्यिकी की उपयोगिता एवं महत्व दिनो दिन बढता जा रहा है। हमारे जीवन का कोई भी क्षेत्र सांख्यिकी के उपयोग से अछूता नही है।

19.8 परिभाषिक **शब्दावली**

वर्गीकरण–वह रीति है जिसके द्वारा संगृहीत आंकड़ों को उनकी समानता एवं असमानता के अनुसार विभिन्न वर्गो में बांट दिया जाता है।

सारणीयन–वह रीति है जिसमें वर्गीकृत आंकड़ों को पक्तियों एवं स्तम्भों में व्यवस्थित रूप में रखा जाता है।

अवर्गीकृत आंकड़ें–अव्यवस्थित आंकड़ों अवर्गीकृत आंकडें कहते हैं।

वर्गीकृत आंकडें– अव्यवस्थित आंकड़ों को विभिन्न वर्गों में बांटकर व्यवस्थित किया जाये तो इन आंकड़ों को वगीकृत आंकड़े कहते है।

आँकड़ें– किसी विषय पर बेहतर समझ के लिए विशेष सूचना प्राप्त करने के लिए व्यवस्थित क्रमबद्ध संख्याओं का समुच्चय।

19.9 अभ्यास–प्रश्नों के उत्तर

बोध– प्रश्न 1

विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तरसांख्यिकी का अर्थ तथा परिभाषा शीर्षक के अर्न्तगत दिये गये विवरण में से लिखना है।

बोध–प्रश्न 2

जर्मन

बोध–प्रश्न 3

विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर सांख्यिकी की विशेषताएं शीर्षक के अर्न्तगत दिये गये विवरण में से लिखना है।

बोध–प्रश्न 4

विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर सांख्यिकी के प्रकार शीर्षक के अर्न्तगत दिये गये विवरण में से लिखना है।

बोध– प्रश्न 5

विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तरसांख्यिकी के प्रकार शीर्षक के अर्न्तगत दिये गये विवरण में से लिखना है।

बोध–प्रश्न 6

विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तरसांख्यिकी की श्रेणिया शीर्षक के अर्न्तगत दिये गये विवरण में से लिखना है।

बोध–प्रश्न 7

तीन

बोध–प्रश्न 8

विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर सांख्यिकी की उपयोगिता एवं महत्वशीर्षक के अर्न्तगत दिये गये विवरण में से लिखना है।

बोध–प्रश्न 9

विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर सांख्यिकी की सीमाएंशीर्षक के अर्न्तगत दिये गये विवरण में से लिखना है।

19.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

त्रिवेदी व शुक्ला. **रिसर्च मैथ्डोलॉजी**. कालेज बुक डिपो .जयपुर.

जैन एम. बी. **रिसर्च मैथ्डोलॉजी**. रिसर्च पब्लिकेशन. जयपुर।

ज्योति वर्मा. 2007. सामाजिक सर्वेक्षण. डिस्कवरी पब्लिशिंग हाउस. नई दिल्ली।

19.11 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री

राम आहूजा. 2005. **सामाजिक सर्वेक्षण एवं अनुसंधान**. रावत पब्लिकेशन्स. दिल्ली.

Singh, K. (1983**).** Techinques of method ofSocial Survey Research and Statistics, PrakashanKendra, Lucknow.

Bailey, Kenneth D. (1982). Methods of Social Research.The Free Press. New York.

Lundberg G. A., 1942, Social Research , Longmans, New York.

Mukundlal.(1958). Elementary Statistical Methods. Manoj Prakashan. Varanasi.

Sanders, Donald.(1955). Statistics.McGraw Hill. New York.

19.12 निबंधात्मक प्रश्न

1–सांख्यिकी को परिभाषित कीजिए तथा सामाजिक अनुसंधान में सांख्यिकी के लाभ एवं सीमाओं का वर्णन कीजिए।

2–सांख्यिकी क्या है ? सामामाजिक अनुसंधान में इसके महत्व का वर्णन कीजिए।

3–सांख्यिकी क्या है ? सांख्यिकी की विशेषताओं तथा प्रकारों का वर्णन कीजिए।

4– सांख्यिकी को परिभाषित कीजिए तथा सांख्यिकी श्रेणियों की उदाहरण सहित व्याख्या कीजिए।

इकाई 20 केन्द्रीय प्रवृत्तियों का मापन. Measurement of Central Tendency

इकाई की रूपरेखा

20.0 उद्देश्य

20.1 प्रस्तावना

20.2 केन्द्रीय प्रवृत्ति के प्रकार

20.3 मध्यमान की परिभाषा तथा विशेषताएं

20.3.1 समान्तर माध्य की गणना–विधि

20.3.2 विभिन्न श्रेणियों में मध्यमान

20.3.3 माध्यों की उपयोगिता एवं महत्व

20.3.4 माध्य के दोष

20.4 माध्यिका या मध्यांक का अर्थ एवं परिभाषाएं

20.4.1 विशेषताएं

20.4.2 माध्यिका की गणना–विधि

20.4.3 माध्यिका के गुण

20.4.4 माध्यिका के दोष

20.5 बहुलक का अर्थ एवं परिभाषाएं

20.5.1 विशेषताएं

20.5.2 बहुलक की गणना–विधि

20.5.3 बहुलक के गुण

20.5.4 बहुलक के दोष

20.6 सारांश

20.7 शब्दावली

20.8 उपयोगी पुस्तकें

20.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

20.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

20.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आपके द्वारा संभव होगा;

केन्द्रीय प्रवृत्तियों के प्रकार को बताना,

माध्य, माध्यिका और बहुलांक की चर्चा करना,

माध्य, माध्यिका और बहुलांक के सूत्रों का प्रयोग करना,

माध्य, माध्यिका और बहुलांक के गुण व दोषों को बताना।

20.1 प्रस्तावना

अनुसंधान कार्य में आँकड़ों के आवृति वितरण के पश्चात् केन्द्रीय प्रवृत्तियों के मान का महत्वपूर्ण स्थान हैं। केन्द्रीय प्रवृत्तियों को ज्ञात करने के दो लाम होते है प्रथम यह एक औसत है जो समूह के सभी प्राप्तांकों का प्रतिनिधित्व करता है। जैसे सारे वर्गों के व्यक्तियों की अलग–अलग आय दर्शाने के स्थान पर औसत आय का वर्णन ही उपयुक्त होगा। दूसरा अनेक वितरणों/आकड़े की तुलना में सहायक होता है। ऐसे माप जो किसी आवृति वितरण की औसत विशेषताओं को दर्शाते है, ''केन्द्रीय प्रवृत्तियों के माप हैं –मध्यमान, मध्यांक और बहुलांक।

20.2 केन्द्रीय प्रवृत्ति के प्रकार

केन्द्रीय प्रवृत्ति मानों के प्रकार निम्न प्रकार के होते है।
(i) माध्य
(ii) माध्यिका
(iii) बहुलांक

20.3 मध्यमान (Mean) की परिभाषा तथा विशेषताएं

केन्द्रीय प्रवृत्तियों के माप में माध्य सबसे अधिक प्रचलित तथा लोकप्रिय है। इसके माध्यम से आकड़ों के उन औसत मूल्यों का पता चलता है जो कि आकड़ों का प्रतिनिधित्व करते हैं। दैनिक जीवन में मध्यमान को औसत कहा जाता है। किसी पदमाला के योग में पदों की कुल संख्या का भाग दिया जाता है और जो भागफल प्राप्त होता है मध्यमान कहा जाता हैं।

क्लार्क तथा शिकाड़ें के अनुसार ''माध्य, सम्पूर्ण समंकों के समूह का विवरण देने वाली एकमात्र, संख्या प्राप्त करने का प्रयत्न है''।

किंग (W.I. King) के अनुसार ''समंकमाला के पदो ंके योग में उनकी संख्या के भाग देने पर जो अंक प्राप्त होता है उसी को अंकगणितीय औसत अथवा माध्य के रुप में परिभाषित किया जा सकता है।''

रीगलमैन एवं फीसबी ने लिखा है ''यह एक औसत है जो पद मूल्यों से जोड़ में उसकी संख्या का भाग देने से प्राप्त होता है।

उपयुक्त परिभाषा से माध्य एक ऐसा मुल्य है जो कि श्रेणी के समस्त मूल्यों का प्रतिनिधित्व करता है। चूंकि यह समंक श्रेणी के अन्तर्गत मध्य में ही स्थित होता है अतः इसे केन्द्रीय प्रवृत्ति माप कहा जाता है।

20.3.1 समान्तर माध्य की गणना–विधि

समान्तर माध्य निकालने की दो पद्धतियां या विधियाँ है जो पदमाला की प्रकृति पर निर्भर होती है।

1. प्रत्यक्ष विधि (direct method)
2. संक्षिप्त विधि (short cut method)

1.प्रत्यक्ष विधि : इसे ऋजु पद्धति भी कहा जाता है इस पद्धकि का उपयोग तब किया जाता है जब पदमाला छोटी होती है। इस पद्धति के अन्तर्गत पदो ंके कुल योग में पदों की संख्या का भाग देकर समान्तर माध्य ज्ञात कर लिया जाता है इसके लिए निम्नांकित सूत्र का प्रयोग किया जाता है।

$$\text{समान्तर विधि} = \frac{x_1 + x_2 + x_3 + x_4 ----x_n}{n}$$

या

$$\text{स0 मा0 (M)} = \frac{\sum x}{n}$$

संकेतों का अभिप्राय

M = समान्तर माध्य

x = पदो के मूल्य

$\sum$ = यह एक ग्रीक अक्षर है जो योगफल को प्रकट करता है।

$\sum$x = समस्त पदों मूल्यों का योग

n = पदों की कुल संख्या

'$\sum$' यह चिन्ह ग्रीक भाषा का है इसका उच्चारण सिगमा (Sigma) है। इसका अर्थ कुल या योग होता है।

2. **संक्षिप्त विधि** : इसे लघु विधि भी कहा जाता है इस विधि का उपयोग तब किया जाता है जब पदों की संख्या अधिक हो। लघु विधि से समान्तर माध्य निकालने के लिए निम्न क्रिया अपनानी पड़ती है।

1. पदमाला के किसी पद को कल्पित माध्य मान लेते है। साधारणतया दी हुई संख्याओं के बीच वाली संख्या को कल्पित माध्य माना जाता है। जिससे गणना करना सरल होता है।
2. द्वितीय चरण में इस कल्पित माध्य से बाद में प्रत्येक के विचलन निकाल लिये जाते है। विचलन निकालते समय घन (+) और ऋण (-) चिन्हों का प्रयोग अनिवार्य रूप से किया जाता है, ''पदमाला में जो पद कल्पित माध्य से कम है तो ऋण (-) एवं यदि मूल्य कल्पित माध्य से अधिक है तो घन (+) का चिन्ह लगाते है।
3. अन्त में निम्न सूत्र का प्रयोग करके समान्तर माध्य की गणना की जाती है।

$$\text{स0 मा0 (M)} = A \pm \frac{d1 + d2 + d3 + d4 ......dn}{n}$$

$$M = A \pm \frac{\sum d}{n}$$

संकेतों से अभिप्राय

$\sum$x = सा0 माध्य

A = कल्पित माध्य

n = पदों की संख्या

d = विचलन

$\sum$d = विचलनों का योग

20.3.2 विभिन्न श्रेणियों में मध्यमान

1. **व्यक्तिगत श्रेणी में मध्यमान** :—व्यक्तिगत श्रेणी में अनेक पद—मूल्य बिखरे हुए होते है तथा प्रत्येक पद मूल्य की आकृति केवल एक ही होती है। व्यक्तिगत श्रेणियों में से प्रत्यक्ष विधि तथा लघु विधि के द्वारा माध्य निम्नांकित रुप से ज्ञात किया जा सकता है। व्यक्तिगत श्रेणी में मध्यमान की गणना सारे पदों का योग कर उसे पदों की संख्या से भाग देकर की जाती है। प्राप्त मान समान्तर माध्य होता है। इस विधि से माध्य निकालने के लिए निम्नांकित सूत्र का प्रयोग किया जाता है।

समान्तर विधि = $\frac{x_1 + x_2 + x_3 + x_4 ----x_n}{n}$

या

स0 मा0 (M) = $\frac{\sum x}{n}$

संकेतो का अभिप्राय

M = समान्तर माध्य

x = पदो के मूल्य

$\sum$ = यह एक ग्रीक अक्षर है जो योगफल को प्रकट करता है।

$\sum$x = समस्त पदों मूल्यों का योग

n = पदों की कुल संख्या

उदाहरण.1 :— किसी वार्षिक परीक्षा में 9 छात्रों के समाजशास्त्र में प्राप्तांक निम्नवत थे, उनके प्राप्तांको का समान्तर माध्य प्रत्यक्ष विधि से ज्ञात कीजिए।

छात्र	A	B	C	D	E	F	G	H	I
प्राप्तांक	26	20	30	36	21	38	40	22	37

(i)- प्रत्यक्ष विधि द्वारा

हल

सूत्र

स0 मा0 (M) = $\frac{\sum x}{n}$

$\sum$x = समस्त पद मूल्यों का योग

n = पदों की कुल संख्या

M= समान्तर माध्य

प्राप्तांको का योग ($\sum$x) = 26+20+30+36+21+38+40+22+37 = 270

अतः $\sum$x = 270

छात्रों की कुल संख्या (n) = 09

अतः $\sum$x = 270

n = 09

M= ?

उपरोक्त आकड़ों को सूत्र में रखने पर

M = $\frac{270}{9}$

M = 30

माध्य = 30 अंक

(ii)- लघु विधि का प्रयोग

1. किसी उपयुक्त संख्या की कल्पित माध्य मान लेते है।
2. प्रत्येक पद में से कल्पित माध्य घटाकर कल्पित माध्य से विचलन ज्ञात कर लेते है।

अतः

कल्पित माध्य से विचलन = पद – कल्पित माध्य

स0 मा0 (M)= $A \pm \frac{d1+d2+d3+d4......dn}{n}$

$$M = A \pm \frac{\sum d}{n}$$

यहाँ ± से अर्थ है कि यदि विचलन का योग घनात्मक है तो + चिन्ह का उपयोग होगा यदि ऋणात्मक है तो ऋण चिन्ह का।

संकेतों से अभिप्राय

$\sum$x = सा0 माध्य

A = कल्पित माध्य

n = पदों की संख्या

d = विचलन

$\sum$d = विचलनों का योग

उदाहरण 2:– सात महिला श्रमिकों की साप्ताहिक आय (रुपयों में) निम्न प्रकार है लघु विधि से स0 माध्य की गणना कीजिए।

30, 35, 25, 40, 20, 45, 50

हल : लघु विधि द्वारा

श्रमिक	साप्ताहिक आय (रुपयों में)	कल्पित माध्य (A)	कल्पित माध्य (40) से विचलन (x-A = d)
A	30		30-40 = - 10
B	35		35-40 = -5
C	25		25-40 = -15
D	40	40	40-40 = 0
E	20		20-40 = -20
F	45		45-40 = -50
G	50		50-40 = +10
n =7			**$\sum$dx = = -35**

सूत्र

$$M = A \pm \frac{\sum d}{n}$$

M= ?

A = 40

$\sum$d = -35

n = 7

प्रतिस्थापन करने पर

$40 - \frac{-35}{7}$

M = 40.5

= 40.5

= 35

रुपये = 35 (उत्तर साप्ताहिक माध्य आय – 35 रुपये)

2. असतत् श्रेणी में मध्यमान :— असतत् श्रेणी में मध्यमान (वर्गीकृत आँकड़े) शब्द असतत् से तात्पर्य लगातार न होना। असतत् श्रेणी में प्रत्येक इकाई का पद को एक आवृति प्रदान की गई होती है अथवा आँकड़ों को वर्गीकृत रूप में दिया जाता है। अतः आंकड़ों का योग ज्ञात करने हेतु प्रत्येक इकाई को उसकी आवृति से गुणा करते है। फिर गुणनफलों के योगफल में आवृतियों के योगफल से भाग देकर अभीष्ट समान्तर माध्य प्राप्त होता है।

असतत् पदमाला में माध्य की गणना करने के लिए निम्न दो पद्धतियों में से किसी भी पद्धति का प्रयोग किया जा सकता है।

(i)- प्रत्यक्ष विधि

सूत्र

$$M = \frac{\sum fx}{N}$$

संकेतो से अभिप्रायः

M= स0 माध्य

F = आवृति

N = आवृतियों का योग

∑fx = पद मूल्यों का उनका आवृति से गुणा करने के बाद प्राप्त योग

उदाहरण 1

प्राप्तांक (x)	छात्र संख्या (f)	f.x
38	4	38×4 = 152
39	1	39×1 =39
41	3	41×3 = 123
44	1	44×1 = 44
52	7	52×7 = 364
54	1	54×1 = 54
58	6	58×6 = 348
64	2	64×2 = 128
71	1	71×1 = 71
	N = 26	∑fx = 1323

सूत्र

$$M = \frac{\sum fx}{N}$$

M= ?

∑fx = 1323

N = 26

उपरोक्त आँकड़ों को सूत्र में रखने पर

$$M = \frac{1323}{26}$$

$$= 50.9$$

अभीष्ट स0 माध्य = 50.9

(ii)- लघु विधि द्वारा

सूत्र = स0मा0 (M) = $A + \frac{\sum fd}{n}$

A- कल्पित माध्य

N- आवृतियों का योग

∑fd = विचलनों का आवृतियों से गुणा करने के बाद प्राप्त योग

प्राप्तांक (x)	छात्र संख्या (f)	कल्पित माध्य (d)	कल्पित माध्य से विचलन	fxd
38	4		-14	-56
39	1		-13	-13
41	3		-11	-33
52	7	52	0	0
54	1		+2	+2
58	6		+6	+36
64	2		+12	+24
71	1		+19	+19
	N = 26			∑xd = -29

M = A ± $\frac{\sum fd}{n}$

A = 52

N = 26

∑fd = - 29

M = ?

उपरोक्त आँकड़ों को सूत्र में रखने पर

M = 52 ± $\frac{-29}{26}$

= 52&1.1

= 50.9

अभीष्ट समान्तर माध्य = 50.9

3. सतत श्रेणी में माध्य

कभी–कभी आँकड़े अंको के स्थान पर वर्ग अन्तराल के रूप में दिये जाते है। केवल अन्तराल का मध्य बिन्दु की गणना की जाती है।

यह मध्यमान किसी वर्ग अन्तराल की उच्च सीमा तथा निम्न के योग का आधा होता है। यदि कोई वर्गान्तर सीमा 10–20 है तो इसका मध्यमान

मध्यमान = $\frac{10+20}{2}$

= $\frac{30}{2}$

= 15

इसी मध्य बिन्दु को आवृति से गुणा कर गुणांक fx ज्ञात किया जाता है।

(i)- प्रत्यक्ष विधि के सूत्र को हम इस प्रकार लिख सकते है :

स0 माध्य $M = \frac{\sum fx}{N}$

M= स0 माध्य

n = आवृति का योग

$\sum$fx = पदों और आवृत्तियों के गुणनफल का योग

x = वर्ग अन्तराल का मध्यमान

f = आवृति

उदाहरण. 1ः एक निजी प्रतिष्ठान के श्रमिकों की दैनिक मजदूरी का बंटन निम्नलिखित है।

दैनिक मजदूरी	3-5	5-7	7-9	9-11	11-13	13-15
श्रमिको की संख्या	7	6	8	10	12	14

दैनिक मजदूरी (वर्ग अन्तराल)	मध्यमान (x)	आवृति (f)	आवृत्ति x मध्यमान = fxX
3-5	4	7	7 × 4 = 58
5-7	6	10	10 × 6 = 60
7-9	8	23	23 × 8 = 184
9-11	10	51	51 × 10 = 510
11-13	12	6	6 × 12 = 72
13-15	14	13	3 × 14 = 42
		n =100	∑fx = 896

अतः स0 माध्य $M = \frac{\sum fx}{N}$

M= ?

$\sum$fx = 896

n = 100

उपरोक्त आँकड़ों को सूत्र में रखने पर

$M = \frac{896}{100}$

= 8.96

अभीष्ट माध्य = रुपये 8.96

II) लघु विधि

I) सर्वप्रथम प्रत्येक वर्ग अंतराल का मध्य बिन्दु ज्ञात करते हैं।

II) पुनः किसी उपयुक्त मध्यमान को कल्पित माध्य मान लेते है।

III) जब अग्रिम क्रिया प्रत्यक्ष विधि की ही भांति करते हैं।

सूत्र

स0 माध्य $M = \frac{\sum fd}{N}$

A= कल्पित माध्य

n = आवृति का योग

$\sum$fd = विचलन और आवृतियों के गुणनफल का योग

उदाहरणः– 2 निम्न सारणी से लघु विधि द्वारा औसत दैनिक मजदूरी ज्ञात करना।

दैनिक मजदूरी वर्ग अंतराल	मध्यमान (x)	आवृति (f)	कल्पित माध्य से विचलन (d = x-A)	आवृति × विचलन (fxd)
3-5	4	7	-6	-42
5-7	6	10	-4	-40
7-9	8	23	-2	-46
9-11	10 = A	51	0	0
11-13	12	6	2	12
13-15	14	3	4	12
		N = 100		$\sum$fd = -104

अतः स0 माध्य $M = A \pm \frac{\sum fd}{n}$

M= ?

A= 10

$\sum$fd = -104

n = 100

उपरोक्त आँकड़ों को सूत्र में रखने पर

$M = 10 \pm \frac{104}{100}$

= 10–1.04

=8.96

अभीष्ट माध्य = रुपये 8.96

बोध प्रश्न–1 निम्न प्रश्न में माध्य की गणना लघु विधि द्वारा कीजिए ?

वर्ग–अन्तराल	10-20	20-30	30-40	40-50	50-60	60-70
आवृति	8	5	9	15	13	14

....

....

....

....

16.3.3 माध्यों की उपयोगिता एवं महत्व

माध्यो की उपयोगिता व गुणों या महत्व को निम्नांलिखित बिन्दुओं में रखा जा सकता है।

1- **सरल आगणनः**— माध्य निकालना व समझना अन्य सांख्यिकीय विधियों की तुलना में अत्यन्त सरल होता है। साधारण गणित के सूत्रों के माध्य आसानी से निकाले जा सकते है।

2- **सुपरिभाषित** : समान्तर माध्य पूरी तरह स्पष्ट और सुपरिभाषित होता है जब हम सभी आँकड़ों के योग को आवृतियों की संख्या से भाग देते है तो हमें अंकगणितीय औसत प्राप्त होता है इससे किसी भी प्रकार की अस्पष्टता नहीं होती है।

3- **तुलनात्मक अध्ययन से उपयोगीः** माध्य विभिन्न तथ्यों या आँकड़ों की तुलना करने में सहायता प्रदान करता है। माध्य समूह को संक्षिप्त रुप में प्रकट करते है अतः तुलना कार्य सरल हो जाता है।

4- **समग्र का प्रतिनिधित्व करनाः**— माध्य एक ऐसी संख्या है जा सम्पूर्ण समग्र का प्रतिनिधत्व करता है और सम्पूर्ण समूह की अधिकाधिक विशेषताओं को व्यक्त करता है।

5- **सांख्यिकीय विवेचन का आधारः** माध्यों के द्वारा संकलित सामग्री से सांख्यिकीय **विश्लेषण**, विवेचन और निर्वचन आदि से बहुत मदद मिलती है सांख्यिकीय विष्लेशणकी अधिकाश क्रियाऐं जैसे— अपकिरण, सहसम्बन्ध सूचकांक आदि विवेचन का आधार माध्य की हैं।

6- **निष्कर्षो में समानताः** माध्य का एक विशेष गुण यह है कि इसे चाहे किसी भी पद्धति से निकाला जाये, उनसे प्राप्त होने वाले उत्तर सदैव समान होते है इसी कारण समान्तर माध्य की प्रकृति अधिक स्पष्ट होती है।

20.3.4 माध्य के दोष

1. केवल आवृतियों के आधार पर गणितीय माध्य को कल्पित करना मुश्किल होता हैं।
2. माध्य द्वारा गुणात्मक विशेषताओं से सम्बन्धित परिवर्तनों को स्पष्ट करना एक कठिन कार्य है।
3. माध्य के द्वारा जो मूल्य ज्ञात होते है वह एक सम्पूर्ण वर्ग का प्रतिनिधत्व नहीं कर पाती इस दशा में माध्य से सम्बन्धित निष्कर्ष अव्यावहारिक हो जाते है।

4. माध्य समस्त तथ्यों का प्रतिनिधि रूप मात्र ही होता है अतः इससे वास्तविक प्रवृत्तियों का पता नही चल पाता है, क्योंकि इससे कमी या वृद्धि का ज्ञान नही होता।

5. प्रायः अंकगणितीय माध्य पूर्ण इकाइयों के रूप में नही निकलता। अविभाजित इकाइयों यथा– मनुष्यों, पशुओं और वाहनों आदि के सन्दर्भ में, यदि माध्य पूर्ण संस्था नही है तो यह हास्यप्रद निष्कर्ष प्रतीत होते हैं।

20.4 माध्यिका (Median)

मध्यांक या माध्यिका किसी पद श्रृखंला या श्रेणी में वह बिन्दु होता है जो सम्पूर्ण श्रृखंला व श्रेणी को दो बराबर भागों में विभाजित कर देता है आधे पद माध्पिका के ऊपर हों तथा आधे उसके नीचे। जैसे –श्रेणी 21, 22, 23, 24, 25, 27, 28 का मध्यांक बीच का पद अर्थात 24 है क्योंकि यह अंक श्रेणी को दो भागों में विभाजित करता है जिससे उसके ऊपर 3 व नीचे भी 03 पद हो जाते है। परन्तु ऐसा होना के लिए यह आवश्यक है कि सभी पद मूल्यों को आरोही या अवरोही क्रमों में रखा जाए।

माध्यिका या मध्यांक का अर्थ एवं परिभाषाएं

माध्यिका या मध्यांक वह पद मूल्य है जो कि आरोही (बढते हुए) अथवा अवरोही (घटते हुए) क्रम में व्यवस्थित किसी श्रेणी को दो बराबर भागों में विभाजित कर देता है। इस प्रकार क्रमानुसार व्यवस्थित मूल्यों की श्रृखंला के मध्य का मूल्य का नाम ही माध्यिका है।

सेक्रिस्ट के अनुसार ''पदमाला की मध्यका वह वास्तविक या अनुमानित होता है, जो पदमाला को विस्तार के क्रम में व्यवस्थित करने पर उसे बराबर दो भागों में विभक्त करती है।''

कोनोर के अनुसार ''माध्यिका समंक श्रेणी का वह पद मूल्य है जो समूह को दो भागों में इस प्रकार विभाजित करता है कि एक भाग में समस्त मूल्य मध्यका से अधिक और दूसरे भाग में समस्त मूल्य मध्यका से कम होते हैं।''

इन परिभाषाओं से स्पष्ट होता है किसी पदमाला या श्रेणी को उतरते या चढते क्रम में व्यवस्थित करने पर उसका मध्य मूल्य मध्यांक कहलाता है। जो श्रेणी के पद मूल्यों को दो बराबर भागों में बांट देता है। इस कारण मध्यका से कम और अधिक वाले मूल्य बराबर होते हैं।

20.4.1 विशेषताएं

मध्यांक समंक श्रेणी को दो बराबर भागों में विभाजित करती है

1. मध्यांक ज्ञात करने के लिए समंक श्रेणी को आरोही एवं अवरोही क्रम में व्यस्थित करना आवश्यक होता हैं।
2. मध्यांक का अर्थ किसी औसत से नहीं होता बल्कि यह एक समंक माला के केन्द्र में स्थित एक विशेष पद मूल्य होता हैं।
3. माध्यिका केवल एक विशेष मूल्य की ओर संकेत करता हैं। यह मूल्य जिस संख्या अथवा विशेषता से सम्बन्धित होता हैं, उसी को माध्यिका मान लिया जाता हैं।

20.4.2 माध्यिका की गणना विधि

माध्यिका का परिकलन भी श्रेणियों के अनुरुप दिया जाता हैं। जैसा स्पष्ट किया जा चुका है कि अंक श्रेणिया प्रमुख रूप से तीन प्रकार की होती हैं

1) सरल श्रेणी
2) खण्डित श्रेणी
3) अविच्छिन्त श्रेणी

1. सरल श्रेणी का मध्यांक

माध्यिका निकालने में दृष्टिकोण से सरल श्रेणियां दो प्रकार की हो सकती हैं।

i). जब ऑकड़ों की संख्या विषम (odd) हो

मान लिया आँकड़ों की संख्या $= n$

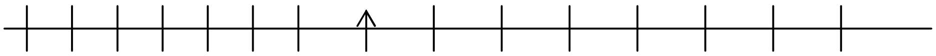

$\left(\frac{n-1}{2}\right)$ पद $\qquad\qquad \left(\frac{n-1}{2}\right)$ पद

माध्यिका = $\left(\frac{n-1}{2}+1\right)$ वां पद

स्पष्टतः है इन्हे अरोही अथवा अवरोही क्रम में व्यवस्थित करने पर मध्यवाला पद

$\left(\frac{n-1}{2}+1\right)$ वां पद अर्थात $\qquad \left(\frac{n-1}{2}\right)$ वां पद होगा

अर्थात्

माध्यिका Md = $\frac{n+1}{2}$ वां पद

यहां पर Md = माध्यिका

n = पदों की संख्या

उदाहरण 1. छात्र के नौ प्रश्न पत्रों में निम्नलिखित प्राप्तांक थे

छात्र	A	B	C	D	E	F	G	H	I
प्राप्तांक	65	36	58	62	42	40	72	82	25

माध्यिका निकालने की विधि

सर्वप्रथम प्राप्तांकों को आरोही अथवा अवरोही क्रम में व्यवस्थित करने पर

25, 36, 40, 42, 58, 62, 65, 72, 82

यहाँ n = 9 अर्थात् पदों की संख्या विषम हैं।

अतः माध्यिका = $\frac{n+1}{2}$ वां पद

= $\frac{9+1}{2}$ वां पद

= 5 वां पद

= 58 अंक

अतः

मध्यिका = 58 अंक

i) जब आँकड़ों की संख्या सम हो – तक निम्नांकित सूत्र का प्रयोग किया जाता है।

$$\text{माध्यिका (Md)} = \frac{\frac{n}{2} \text{ वे पद का मान } + \left(\frac{n}{2}+1\right) \text{ वे पद का मान}}{2}$$

उदाहरण 2: एक कार्यालय में दस कर्मचारियों का दैनिक वेतन निम्नलिखित है।

कर्मचारी	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10
दैनिक मजदूरी	10	13	22	25	8	11	19	17	31	36

वेतन की माध्यिका ज्ञात कीजिए

हल – सर्वप्रथम उपर्युक्त संख्याओ को आरोही क्रम में व्यवस्थित करने पर

8, 10, 11, 13, 20, 17, 19, 22, 25, 26

यहां n = 10 अर्थात पदों की संख्या सम है।

$$\text{अतः माध्यिका (Md)} = \frac{\frac{n}{2} \text{ वे पद का मान } + \left(\frac{n}{2}+1\right) \text{ वे पद का मान}}{2}$$

$$\text{माध्यिका (Md)} = \frac{\frac{10}{2} \text{ वे पद का मान } + \left(\frac{10}{2}+1\right) \text{ वे पद का मान}}{2}$$

$$= \frac{5 \text{ वे पद का मान} + 6 \text{ वे पद मान}}{2}$$

$$= \frac{20+17}{2}$$

= 20.50

वेतन की माध्यिका = रुपये 20.50

2. असतत् श्रेणियों में मध्यांक

1) पदो को आरोही अथवा अवरोही क्रम में व्यस्थित करने के पश्चात् सभी पदों की आवृतियों की संचयी आवृति में बदलना आवश्यक होता है।

2) संचयी आवृति की गणना के लिए पहले पद की आवृति से आरम्भ करके प्रत्येक अगली आवृति को उसमें जोड़ दिया जाता हैं

3) पुनः ऊपर बतायी गयी विधि यां सूत्र से माध्यिका ज्ञात कर लेते हैं

उदाहरण 1. निम्न सारणी में माध्यंका की गणना कीजिए।

पद का आकार	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13
आवृत्ति	5	8	4	12	5	11	14	12	7	19

हलः उपर्युक्त की संचयी आवृत्ति सारणी में निम्नवत है।

पद का आकार	आवृत्ति (f)	संचयी आवृत्ति
4	5	5
5	8	13
6	4	17
7	12	29
8	5	34
9	11	45
(10)	(14)	(59)
11	12	71
12	7	78
13	19	97
	n = 97	

यहां n = 97 अर्थात पदों की संख्या विषम है
अतः

माध्यिका = $\frac{n+1}{2}$ वां पद

= $\frac{97+1}{2}$ वां पद

= $\frac{98}{2}$ वां पद

= 49 वां पद

संचयी आवृति देखने से यहा स्पष्ट है कि 49 वां पद, 45 से अधिक और 59 से कम हैं। अतः 49 वां पद उस वर्ग में होगा जिसकी संचयी आवृति 59 हैं।

अतः 49 वां पद का मान = 10
अतः अभीष्ट माध्यिका = 10 उत्तर

उदाहरण 2:– निम्न सारणी से माध्यिका की गणना कीजिए।

पद का आकार	11	12	13	14	15	20	17	18	19	20
आवृत्ति	5	8	12	20	24	18	13	11	6	3

हल :
माध्यिका की गणनाः उपर्युक्त की संचयी आवृत्ति सारणी में निम्नवत है।

पद का आकार	आवृत्ति	संचयी आवृत्ति
11	5	8
12	8	5+8 =13
13	12	13+12 =25
14	20	25+20 =45
15	24	45+24 =69
20	18	69+18 =87
17	13	87+13 =100
(18)	(11)	100+11 =(111)
19	6	111 + 6 = 117
20	3	117 + 3 = 220
	n = 220	

यहां n = 220
अर्थात् पदों की संख्या सम है।

सूत्रः

अतः माध्यिका (Md) = $\dfrac{\dfrac{n}{2} \text{ वे पद का मान } + \left(\dfrac{n}{2}+1\right) \text{ वे पद का मान}}{2}$

माध्यिका (Md) = $\dfrac{\dfrac{220}{2} \text{ वे पद का मान } + \left(\dfrac{220}{2}+1\right) \text{ वे पद का मान}}{2}$

= $\dfrac{110 \text{ वे पद का मान } + 111 \text{ वे पद का मान}}{2}$

= $\dfrac{18+18}{2}$ (क्योंकि दोनों पद उस स्तम्भ में है जिसको संचयी बारबारता 111 है)

$\dfrac{36}{2} = 18$

अभीष्ट माध्यिका = 18

3. **सतत् श्रेणियों का माध्यिका** : इस विधि के निम्नलिखित चरण हैं:–

1) सर्वप्रथम संचयी आवृति को ज्ञात करते हैं इसके बाद उस वर्ग को ज्ञात करते जिसमें आवृतियों के योग का आधा स्थित हो इसे माध्यिका वर्ग कहते हैं अर्थात् $\frac{n}{2}$ के आधार पर न कि $\frac{n+1}{2}$ सूत्र के आधार पर वर्गान्तर के मध्यांक की स्थिति ज्ञात की जाती हैं।

2) तत्पश्चात निम्नलिखित सूत्र का प्रयोग कर माध्यिक ज्ञात कर लेते हैं।

माध्यिका (Md) = $L_2 + \frac{L_2 - L_1}{f}\left(\frac{n}{2} - C\right)$

यहॉ Md = माध्यिका
L1 = माध्यिका वर्ग की निम्न सीमा
L2 = माध्यिका वर्ग की उच्च सीमा
f = माध्यिका वर्ग की आवृति
n = आवृतियों का योग
c = माध्यिका वर्ग के पहले वर्ग की संचयी आवृत्ति

उदाहरण. 1. निम्न सारणी से माध्यिका की गणना कीजिए।

वर्ग अन्तराल	आवृत्ति
5-25	4
25-45	5
45-65	12
65-85	20
85-105	20
105-125	14
125-145	6

हल

वर्ग अन्तराल	आवृत्ति	संचयी आवृत्ति
5-25	4	4
25-45	5	9
45-65	12	(21) c
65-85	(20) f	41
85-105	14	55
105-125	6	61
125-145	4	65
	n = 65	

यहां n = 65

$$\frac{n}{2} = \frac{65}{2} = 32.5$$

चूँकि 32.5 आवृति 41 के अन्तर्गत है इसलिए माध्यिका वर्ग (65–85) हुआ।

अतः L_1 = 65
L_2 = 85
F = 20
C = 21
Me = ?

सूत्र

मााध्यिका $Me = L_1 + \frac{L_2 - L_1}{f}\left(\frac{n}{2} - C\right)$

$$= 65 + \frac{85-65}{20}(32.5 - 21)$$

$$= 65 + \frac{20}{20}(32.5 - 21)$$

$$= 65 + 11.5$$

= 76.5 उत्तर

बोध प्रश्न–2 निम्न सारणी में माध्यिका की गणना प्रत्यक्ष विधि द्वारा कीजिए ?

वर्ग–अन्तराल	10-20	20-30	30-40	40-50	50-60	60-70
आवृति	7	5	8	6	10	12

....

....

....

....

....

....

बोध प्रश्न–3. जब पदों की संख्या सम हो तो आंकड़ों का मध्यांक क्या है–

(a) $\frac{n+1}{2}$ वां पद

(b) $\frac{n}{2}$ वे पद

(c) $\dfrac{\frac{n}{2} \text{ वे पद का मान } + \left(\frac{n}{2}+1\right) \text{ वे पद का मान}}{2}$

(d) $\left(\frac{n}{2}+1\right)$ वे पद

....

....

....

....

20.4.3 माध्यिका के गुण

1). माध्यिक हमेशा निश्चित एवं स्पष्ट होती हैं

2). माध्यिक दिये हुए पदों का ही एक अंश होता हैं इसलिये वह सम्पूर्ण समूहो का उचित प्रतिनिधित्व करता हैं इसका मान सभी पदों पर आधारित होता हैं

3). माध्यिका की गणना के समय सम्पूर्ण समंको की जानकारी आवश्यक होती है।

4). तुलनात्मक रुप से माध्यिका को ज्ञात करना भी अत्यधिक सरल होता हैं क्योंकि कभी कभी पद मूल्यों को क्रम से लगा लेने मात्र से ही माध्यिका को ज्ञात किया जा सकता हैं

5). मध्यका का अनुमान निरीक्षण द्वारा भी किसर जा सकता हैं।

6). मध्यका को बिन्दुरेखीय प्रदर्शन द्वारा भी ज्ञात किया जा सकता हैं।

20.4.4 माध्यिका के दोष

1). मध्यका की गणना करते समय सभी पदों को समान महत्व दिया जाता हैं अतः यह गलत पद्धति हैं।
2). माध्यिका मूल्य का बीजगणितीय विवेचन सम्भव नहीं हैं, अतः अन्य सांख्यिकीय रीतियों से इसका प्रयोग नहीं किया जा सकता
3). इसका निर्धारण करने के लिए श्रेणी के सभी पदों को आरोही या अवरोही क्रम में व्यवस्थित करना पड़ता हैं इस कार्य में गलती होने की सम्भावना रहती हैं।
4). पदों की संख्या कम होने पर प्रतिनिधत्व ठीक नहीं रहता हैं।
5). तुलनात्मक आधार पर माध्य की अपेक्षा माध्यिका को अधिक शुद्ध नहीं माना जाता यही कारण है कि यदि किसी स्थिति में माध्य अथवा माध्यिका में से किसी एक का प्रयोग करने की छूट हो तो माध्य को प्राथमिकता दी जाती हैं।
6). पदमाला के अनियमित वितरण की स्थिति में मध्यका दोष पूर्ण निकलती हैं।
7). गुणात्मक गणनाओं के लिये मध्यांक अनुपयोग हैं।

20.5 बहुलक (Mode)

बहुलांक को बहुलक तथा भूयिष्ठक जैसे शब्दों से भी सम्बोधित किया जाता हैं। बहुलांक के अंग्रेजी शब्द 'Mod' की उत्पत्ति फ्रेंच शब्द 'la mode' से मानी जाती हैं जिसका अर्थ हैं सर्वाधिक 'फैशन' अथवा 'प्रचलन'।

बहुलांक या भूयिष्ठक किसी वितरण या श्रेणी में सर्वाधिक बार आने वाला पद है अर्थात भूयिष्ठक वह मूल्य हैं जिसकी आवृति सबसे अधिक होती हैं। इस प्रकार भूयिष्ठक वह माप है जिसकी आवृति पदमाला या श्रेणी में सबसे अधिक बार होती है।

क्राक्सटन एवं काउडेन के अनुसार ''एक वितरण भूयिष्ठक वह मूल्य है जिसके चारों तरफ सर्वोच्च पद केन्द्रित हो। उसे मूल्यों की पदमाला का सर्वोच्च पद प्रतिरुप कहा जा सकता है।''

जिजेक के अनुसार ''बहुलक वह मूल्य है जो पदों की श्रेणी अथवा समूह में सबसे अधिक बार आता हैं, तथा जिसके चारों ओर सबसे अधिक घनत्व में पदों का वितरण रहता हैं।''

गिलफोर्ड के अनुसार ''माप के पैमाने पर बहुलक वह बिन्दु है, जहॉ पर वितरण मे ंसबसे अधिक आवृत्तियॉ केन्द्रित होती हैं।''

इस प्रकार उपरोक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि श्रेणी में उस पद का मूल्य है जिसकी आवृति सबसे अधिक होती हैं।

20.5.1 विशेषताएं

1). बहुलक का मूल्य सबसे अधिक सम्भावित मूल्य होता हैं जिसके आस–पास सबसे अधिक आवृतियाँ केन्द्रित होती हैं।

2). बहुलक का मूल्य प्रायः अधिकतम आवृतियों से निर्धारित होता हैं इकाइयों से नहीं

3). बहुलक की गणना एक समंक के सभी पदों की आवृतियों को ध्यान में रखते हुए की जाती है इसके फलस्वरुप ये सभी पद मूल्यों का प्रतिनिधित्व करते हैं।

4). बहुलक का मूल्य ही केवल ऐसा मूल्य है जो गुणात्मक तथ्यों के लिए भी प्रयोग किया जा सकता हैं।

20.5.2 बहुलक की गणना विधि

1.सरल श्रेणी का बहुलक

इस पद की आवृति सबसे अधिक बार आई है और यही सबसे अधिक बार आने वाली आवृति का पद भूयिष्ठक होता हैं।

उदाहरण 1. निम्न पद मूल्यों से बहुलक ज्ञात कीजिए?

11, 21, 22, 30, 52, 30, 54, 30, 25, 30

हलः

इसमें 30 की आवृति 4 हैं तथा किसी दूसरी संख्या की आवृति 4 से अधिक नहीं हैं

अतः अभीष्ठ बहुलक = 30

2. असतत् श्रेणी का बहुलक

पदमाला के साधारण निरीक्षण द्वारा इस बात का पता लगा लिया जाता है कि जिस पद की आवृति सबसे अधिक होगी वही पद बहुलक पद होगा

उदाहरण 2. निम्न समंको के बहुलक ज्ञात कीजिए ?

पद	25	35	45	55	65	75	85
आवृति	4	7	15	20	10	9	3

हलः

स्पष्ट है कि 55 की आवृति 20 हैं तथा किसी भी दूसरे पद की आवृति 20 अथवा 20 से अधिक नहीं हैं।

अतः अभीष्ठ बहुलक = 55 उत्तर

3. सतत् या अविच्छिन्न या अखण्डित में बहुलक

1) सर्वप्रथम अधिकतम आवृति वाले वर्गान्तर को मालूम कर लेना चाहिए। वर्गान्तर बहुलक वर्गान्तर होगा।

2) पदमाला की आवृति यदि नियमित रूप से घटती या बढ़ती हैं तब ऐसी पदमालाओं का भूयिष्ठक वर्ग अधिकतम आवृति वाला पद ही होता हैं

3) निम्नलिखित सूत्र का उपयोग करते हैं।

$$Mo = L_1 + \frac{f - f_1}{2f - f_1 - f_2}(L_2 - L_1)$$

यहां

Mo = बहुलक

L_1 = बहुलक वर्ग की निम्न सीमा

L_2 = बहुलक वर्ग की उच्च सीमा

f = बहुलक वर्ग की आवृति

f_1 = बहुलक वर्ग के पहले वर्ग की आवृति

f_2 = बहुलक के अगले वर्ग की आवृति

उदाहरण 3.

वर्ग अन्तराल	3-6	6-9	9-12	12-15	15-18	18-21	21-23
आवृति	2	5	21	(23)f	10	12	3

हलः

यहां अधिकतम आवृति 23 हैं अतः बहुलक वर्ग 12—15 हुआ।

L_1 = 12

L_2 = 15

f = 23

f_1 = 21

f_2 = 10

सूत्र

$$Mo = L_1 + \frac{f - f_1}{2f - f_1 - f_2}(L_2 - L_1)$$

$$Mo = 12 + \frac{23-21}{46-21-10}(15-11)$$

$$= 12 + \frac{2}{15} \times 3$$

$$= 12 + \frac{2}{5}$$

= 12 + 0.4

= 12.4

अभीष्ठ बहुलक = 12.4

बोध प्रश्न—4 निम्न सारणी में बहुलक की गणना प्रत्यक्ष विधि द्वारा कीजिए ?

वर्ग—अन्तराल	10-20	20-30	30-40	40-50	50-60	60-70
आवृति	2	5	7	14	12	9

....

....

....

....

....

20.5.3 बहुलक के गुण

1). इसका परिकलन आसान है तथा अधिकतर मान प्रेक्षण से ही मालूम हो जाता हैं।

2). बहुलक अधिकतम आवृति वाला पद होता है अतः इसे प्रतिनिधि माध्य भी कहा जा सकता हैं।

3). लेखा चित्र द्वारा भी इसे ज्ञात कर लिया जाता हैं।

4). बहुलक पदमाला की अधिकतम घनत्व वाली आवृतियों को प्रदर्शित करता हैं।

5). बहुलक एक समंक माला से सम्बन्धित किन्हीं भी दूसरे पद मूल्यों से प्रभावित नहीं होता।

6). बहुलक की गणना शीघ्रता, सरलता एवं यथार्थता से की जा सकती हैं।

20.6.4 बहुलक के दोष

1). बहुलक पर बीजगणित का प्रयोग नहीं किया जा सकता क्योंकि इसकी गणना आवृतियों के आधार पर की जाती हैं।

2). कभी कभी इसे ज्ञात करना कठिन होता हैं, क्योंकि एक ही पदमाला में दो या अधिक बहुलक पद आ जाते हैं।

3). इसमें सीमांत पदों को छोड़ दिया जाता हैं अतः इन पदों का प्रतिनिधित्व समाप्त हो जाता हैं।

4). बहुलक वर्गान्तरों में परिर्वतन के कारण परिवर्तित हो जाता हैं।

5). यदि बहुलांक का मूल्य और कुल पदों की संख्या ज्ञात हो तो उनका गुणा करके समंक–माला में स्थित सभी पद मूल्यों के योग को ज्ञात नहीं किया जा सकता। बहुलांक की यह एक सांख्यिकीय दुर्बलता हैं।

20.7 सारांश

इस इकाई में हमने सबसे पहले केन्द्रीय प्रवृत्ति के अर्थ को स्पष्ट करते हुए इसके प्रकारो की चर्चा की है। केन्द्रीय प्रवृत्ति की माप का प्रयोग आंकड़ों के संक्षेपण के लिए किया जाता है। इसके पश्चात् माध्य, माध्यिका तथा बहुलक की विवेचना से यह स्पष्ट हुआ कि माध्य, माध्यिका तथा बहुलक उन प्रतिनिधि अंको के द्योतक हैं जोकि अनेक आँकड़ों के मध्य की स्थिति को व्यक्त करते है और आँकडों की केन्द्रीय प्रवृत्ति क्या होगी इसकी ओर संकेत करते है। माध्य सर्वाधिक प्रयोग किया जाने वाला औसत है। यह परीकलन में सरल एवं सभी प्रेक्षणों पर आधारित होता है। इसके पश्चात् इन तीनो की गणना विधि को विभिन्न सांख्यिकीय श्रेणियों के आधार पर विवेचित किया है। अंत में माध्य, माध्यिका तथा बहुलक की उपयोगिताओं और दोषों की चर्चा करते हुए स्पष्ट किया है कि वैज्ञानिक अनुसंधान के लिए यह कितनी उपयोगी है।

20.8 परिभाषिक शब्दावली

सिग्मा '$\sum$' – यह चिन्ह ग्रीक भाषा का है जिसका अर्थ कुल या योग होता है।
केन्द्रीय प्रवृत्ति की माप– एक ऐसे एकल मान द्वारा आँकड़ों को संक्षिप्त करता है, जो संपूर्ण आँकड़ों का प्रतिनिधित्व कर सकें।
बहुलक– वह मान है जो सबसे अधिक बार प्रकट होता है।
अंतराल– वर्ग विस्तार उच्च सीमा तथा निम्न सीमा के बीच का अंतर है।
मध्य बिन्दु – किसी वर्ग का मध्य मान होता है। यह वर्ग की निम्न वर्ग सीमा तथा उच्च वर्ग सीमा के बीच होता है।

20.9 अभ्यास–प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1
विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर माध्य की गणना शीर्षक के अर्न्तगत दिये गये विवरण में से लिखना है।
बोध प्रश्न 2
विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर माध्यिका की गणना शीर्षक के अर्न्तगत दिये गये विवरण में से लिखना है।
बोध प्रश्न 3
(c)
बोध प्रश्न 4
विद्यार्थी को इस प्रश्न का उत्तर बहुलक की गणना शीर्षक के अर्न्तगत दिये गये विवरण में से लिखना है।

20.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

राम आहूजा. 2005. **सामाजिक सर्वेक्षण एवं अनुसंधान**. रावत पब्लिकेशन्स. दिल्ली.
जैन एम. बी. **रिसर्च मैथ्डोलॉजी**. रिसर्च पब्लिकेशन. जयपुर।
त्रिवेदी व शुक्ला. **रिसर्च मैथ्डोलॉजी**. कालेज बुक डिपो .जयपुर.
ज्योति वर्मा. 2007. सामाजिक सर्वेक्षण. डिस्कवरी पब्लिशिंग हाउस. नई दिल्ली।

20.11 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री

Bailey, Kenneth D. (1982). Methods of Social Research. The Free Press. New York.
Mukundlal. (1958). Elementary Statistical Methods. Manoj Prakashan. Varanasi.
Sanders, Donald.(1955). Statistics. McGraw Hill. New York.
Singh, K. (1983**).** Techinques of method of Social Survey Research and Statistics, Prakashan Kendra, Lucknow.

20.12 निबंधात्मक प्रश्न

प्रश्न–1 निम्न सारणी में माध्य तथा बहुलक की गणना प्रत्यक्ष विधि द्वारा कीजिए ?

वर्ग–अन्तराल	50-60	60-70	70-80	80-90	90-100	100-110
आवृति	6	8	10	20	14	9

प्रश्न–2 माध्य से आप क्या समझते है ? माध्य के गुण–दोषों की विवेचना कीजिए।
प्रश्न–3 माध्यिका तथा बहुलक से आप क्या समझते है ? माध्य के गुण–दोषों की विवेचना कीजिए।

इकाई 21 कंप्यूटर के आधार - इतिहास, भाषा और घटक
Fundamentals of Computer-History, Langugage and Components

- **21.0:** परिचय **(Introduction to Unit)**
  (प्रस्तावना, उद्देश्य)
- **21.2:** कंप्यूटर का इतिहास **(History of Computers)**

  (कंप्यूटर क्या है, प्राचीन गणना पद्धतियां, अबेकस और अन्य गणना प्रणालियां, कंप्यूटर का विकास, कंप्यूटर की पीढ़ियां, कंप्यूटर के प्रकार, पर्सनल कंप्यूटर का विकास, कंप्यूटर के गुण–उपयोग)

- **21.3:** कंप्यूटर के बुनियादी अवयव **(Basic Components)**

  (प्रोसेसिंग, इनपुट, आउटपुट, मेमोरी, प्रोग्राम)

- **21.4:** कंप्यूटर की कार्यपद्धति **(Working Process)**

  (डाटा, सूचना, हार्डवेयर, सॉफ्टवेयर)

- **21.5:** कंप्यूटर लैंग्वेज **(Computer Languages)**

  (प्रोग्रामिंग भाशाएं, बाइट, बाइनरी संख्याएं, कोडिंग सिस्टम, कम्पाइलर)

- **21.6:** उपसंहार **(The Conclusion)**
- **21.7:** अभ्यास प्रश्न **(Exercise)**
- **21.8:** निबंधात्मक प्रश्न **(Theoretical Questions)**

21.0: उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप समझ पाएंगे कि

- मानव जीवन के विकास के साथ किस तरह गणना उपकरण विकसित हुए
- कंप्यूटर क्या है, किस तरह इस बहुउपयोगी मशीन का विकास हुआ
- कंप्यूटर किस तरह काम करता है और इसके प्रमुख अवयव क्या हैं
- कंप्यूटर एप्लीकेशन क्या हैं और इनका महत्व क्या है

21.1: प्रस्तावना (Introduction)

समाजशास्त्र और कंप्यूटर, पहली नजर में ये दोनों शब्द एक–दूसरे से जुड़े हुए प्रतीत नहीं होते हैं। किन्तु वैज्ञानिक प्रगति के दौर में कंप्यूटर जिस तरह मानव जीवन का अभिन्न अंग बनकर रह गया है, उससे सामाजिक अभिरचना को जानने–समझने में भी कई मायनों में

मदद मिली है। शिक्षा हो, स्वास्थ्य हो, सुरक्षा हो, बैंकिंग हो या कोई भी अन्य क्षेत्र, मानव जीवन का शायद ही कोई पहलू आज कंप्यूटर से अछूता रह गया हो। वस्तुतः कंप्यूटर आज मानव जीवन के दैनन्दिन कार्यों की सबसे बड़ा सहायक मशीन बन गया है। यही वजह है कि सामाजिक शोध कार्यों में भी कंप्यूटर और कंप्यूटर एप्लीकेशन का इस्तेमाल आज आवश्यक है।

21.2: कंप्यूटर का इतिहास (History of Computers)

विकास के लंबे अनुक्रम में मनुष्य ने जीवन के नये पहलुओं की खोज अपने अनुभवों के आधार पर की। इन्हीं खोजों में शामिल थी गणनाएं। यूं तो मानव मस्तिष्क स्वयं में सूचनाओं को सुरक्षित रखने का अथाह भंडार है, किन्तु जब प्रश्न गणनाओं और गणनाओं में भी त्वरित गणनाओं का आता है तो मस्तिष्क कुछ पीछे रह जाता है। शायद यही वह कारण रहा होगा, जिसने प्राचीन काल से ही मनुष्य को ऐसे तरीके ईजाद करने के लिए प्रेरित किया हो, जो गणनाओं को चुटकियों में हल कर सकें। प्राचीन गणना पद्धतियों अबेकस से लेकर कैलकुलेटर और फिर कंप्यूटर तक की यात्रा भी इसी प्रेरणा का परिणाम है।

• कंप्यूटर क्या है (What is a Computer)

कंप्यूटर शब्द की उत्पत्ति अंग्रेजी शब्द कंप्यूट (Compute) से हुई है, जिसका अर्थ गणना करना है। यही वजह है कि हिन्दी में इस उपकरण को गणक या संगणक भी कहा जाता है। अपने विकास की शुरूआत में कंप्यूटर का इस्तेमाल मुख्यतः जटिल गणनाओं में ही किया जाता रहा, लेकिन कालान्तर में ज्यों–ज्यों मानवीय आवश्यकताएं बढ़ती गईं, कंप्यूटर का स्वरूप भी बहुआयामी (Multitasking) होता चला गया। आज हम कंप्यूटर पर गाने सुन सकते हैं, वीडियो देख सकते हैं, इसके जरिये इंटरनेट पर दुनियाभर की खबरें एक चुटकी में हासिल कर सकते हैं, चिकित्सकीय सुविधाएं हासिल कर सकते हैं, शिक्षा प्राप्त कर सकते हैं और हर वो काम कर सकते हैं जो हम चाहते हैं। यानी कंप्यूटर वह मशीन है, जो वर्तमान दौर में हमारे जीवन को सरल और अधिक सक्षम बनाती है।

• कंप्यूटर का विकास (Development of Computers)

यद्यपि मानव सभ्यता के विकास के साथ ही गणनाओं के भी प्रमाण मिलते रहे हैं। हजारों वर्ष पहले अंगुलियों की मदद से गणनाओं की जानकारी मध्यपूर्व एशिया, यूरोप की कई सभ्यताओं में मिलती है, लेकिन उपकरणों की मदद से कंप्यूटर के विकास की य़ात्रा को जानने–समझने के लिए हमें करीब तीन हजार साल पीछे लौटना होगा। मानव जीवन में गणनाओं का विशेष महत्व रहा है, लेकिन यह पहले ही स्पष्ट हो चुका है कि मानव मस्तिष्क जटिल गणनाओं का त्वरित हल निकाल पाने में सक्षम नहीं है। ऐसे में गणनाओं

के लिए किसी उपकरण की आवश्यकता महसूस की जाने लगी। ऐतिहासिक साक्ष्यों के अनुसार चीनी वैज्ञानिकों ने करीब तीन हजार साल पूर्व पहला ऐसा उपकरण बनाया, जो गणनाओं को मानव के लिए सुगम और सरल बनाने में सफल रहा। यह उपकरण था अबेकस (Abacus), इसे हम निम्न चित्र के जरिये जान सकेंगे। अबेकस में लकड़ी या लोहे के फ्रेम में कुछ लोहे की छड़ें होती हैं, जिनमें लकड़ी की बनी गोलियां लगाई जाती थीं। इन गोलियों को इसे इस्तेमाल करने वाला व्यक्ति उपर–नीचे करके आसानी से गणनाएं कर सकता था। आज भी नन्हे स्कूली बच्चों को गणनाओं का प्रारंभिक पाठ पढ़ाने में अबेकस की मदद ली जाती है। हालांकि, इसकी मदद से सिर्फ छोटी गणनाएं ही कर पाना संभव है। फिर भी यही वह उपकरण था, जो मौजूदा कंप्यूटर के आविष्कार की बुनियाद बना। इस लिहाज से अबेकस को पहला कंप्यूटर का दर्जा दिया जाता है।

(प्राचीन अबेकस, जिसकी मदद से गणनाएं की जाती थीं)

अबेकस के बाद गणनाओं के लिए एक नया उपकरण ईजाद हुआ सन 1617 में। स्कॉटलैंड के गणितज्ञ नेपियर ने एक गणितीय उपकरण बनाया, जो दिखने में अबेकस की तरह ही था। अंतर सिर्फ यह था कि इसमें गोलियों के बजाय छड़ें ही फ्रेम में लगी होती थीं। खासियत यह थी कि इन छड़ों पर अंक लिखे होते थे, जिनकी मदद से गणनाएं की जा सकती थीं। इसके कुछ ही समय बाद 1642 में एक और नये उपकरण का आविष्कार अपने दौर के महान फ्रांसीसी गणितज्ञ ब्लेज पास्कल ने किया। इस उपकरण का नाम पास्कल के नाम पर ही पास्कलाइन (Pascaline) रखा गया। यह अबेकस और नेपियर बोन से अधिक तेजी से गणना करने में सक्षम था। हालांकि, अब भी गुणा और भाग की गणनाएं

करना संभव नहीं हो सका था। ऐसे में सन 1671 में जर्मन वैज्ञानिक गॉडफ्रिट लेन्ज ने पास्कलाइन को ही परिष्कृत (Modified) किया, जिसका परिणाम लेन्ज कैल्कुलेटर के रूप में सामने आया। इसकी खासियत यह थी कि इसमें जोड़ और घटाने के अलावा गुणा–भाग जैसी जटिल गणनाएं भी आसानी से कर पाना संभव हुआ।

हालांकि, समय के साथ जिस तेजी से मानव सभ्यताएं विकसित होती गईं और हर रोज नई खोजों के लिए जटिलतम गणनाएं सामने आती रहीं, अबेकस की तरह पास्कलाइन भी अनुपयोगी लगने लगा। ऐसे में सन सर चार्ल्स बैबेज एनालिटिकल इंजन (Analytical Engine) नाम का उपकरण सामने लाए। यह कहीं अधिक तेजी से और त्रुटिरहित गणनाएं करने में सक्षम था।

सबसे बड़ी बात यह थी कि इस मशीन में गणनाओं को सुरक्षित भी रखा जा सकता था। स्टोरेज के लिए इसमें पंचकार्ड का इस्तेमाल किया जाता था। यह 25 हजार छोटे पुर्जों से बना करीब 15 टन वजनी और आठ फीट उंचा उपकरण था। भारीभरकम स्वरूप की वजह से हर किसी के लिए इसका इस्तेमाल करना न तो सरल था, न ही संभव, लेकिन एनालिटिकल इंजन ही वह रास्ता बना, जो आगे चलकर कंप्यूटर पर खत्म हुआ। यही कारण है कि सर चार्ल्स बैबेज को ही कंप्यूटर के जनक के तौर पर जाना जाता है। कालान्तर में सर बैबेज के ही डिजाइन किए उपकरण में निरन्तर सुधार किए जाते रहे और आज का कंप्यूटर विकसित होता गया। अब भी कंप्यूटर की दुनिया में लगातार खोज और सुधार जारी हैं।

- **कंप्यूटर की पीढ़ियां (Generations of Computers)**

सर चार्ल्स बैबेज ने जो एनालिटिकल इंजन पेश किया था, वह गणनाओं में खासा सहायक साबित हुआ, लेकिन चूंकि समय के साथ परिवर्तन आवश्यक है, निरन्तर गणनाओं का दायरा और सूचनाओं को सुरक्षित रखने की जरूरत महसूस की जाने लगी। सर बैबेज के एनालिटिकल इंजन से आधुनिक कंप्यूटर के विकास का सफर शुरू हुआ। इस लिहाज से सामान्यतः कंप्यूटर के विकास को पीढ़ियों में भी बांटकर देखा जाता है। पहली पीढ़ी से लेकर आज के दौर के कंप्यूटर यानी पांचवीं पीढ़ी तक।

- **पहली पीढ़ी (First Generation)**

सन 1946 में दुनिया का पहला इलेक्ट्रॉनिक कंप्यूटर अस्तित्व में आया। दो वैज्ञानिकों जेपी एकर्ट और जेडब्ल्यू मॉशी इस कंप्यूटर के आविष्कर्ता थे। दोनों ने अपने इस कंप्यूटर को नाम दिया ENIAC (Electronic Numerical Integrated and Calculator) लेकिन यह कंप्यूटर बहुत अधिक भारी था। उस वक्त इस कंप्यूटर का वनज करीब 30 टन था। दोनों वैज्ञानिकों ने इस कंप्यूटर में आंकड़ों के संग्रहण के लिए वैक्यूम ट्यूबों का इस्तेमाल किया, लेकिन कमी यह थी कि वैक्यूम ट्यूब की कार्यक्षमता बहुत अधिक नहीं थी। इसके अलावा

इस कंप्यूटर को ठंडा रखने के लिए काफी बड़े कूलिंग सिस्टम (Cooling System) की भी जरूरत पड़ती थी। पहली पीढ़ी के कंप्यूटर के कालखंड को 1946 से 1959 तक बांटकर देखा जा सकता है।

(पहली पीढ़ी का कंप्यूटर एनिआक)

- **दूसरी पीढ़ी (Second Generation)**

समय के साथ आते गए बदलावों के फलस्वरूप दूसरी पीढ़ी के कंप्यूटर अस्तित्व में आए। इस पीढ़ी के कंप्यूटरों का कालखंड 1959 से 1964 रहा। इस पीढ़ी के कंप्यूटरों की खासियत यह थी कि इसमें आंकड़ों के संग्रहण के लिए भारीभरकम वैक्यूम ट्यूबों के स्थान पर ट्रांजिस्टर (Transistors) का उपयोग किया गया। ट्रांजिस्टर वैक्यूम ट्यूब के मुकाबले आकार में भी काफी छोटे थे, लिहाजा कंप्यूटर का स्वरूप और वजन पूर्ववर्ती पीढ़ी के सापेक्ष काफी कम हो गया। दूसरी ओर, ट्रांजिस्टर की गणनात्मक कार्यक्षमता और आंकड़ों को सुरक्षित रखने की क्षमता भी एनिआक के मुकाबले काफी बेहतर थी।

- **तीसरी पीढ़ी (Third Generations)**

सन 1964 में तीसरी पीढ़ी के कंप्यूटरों की खोज हुई। इस पीढ़ी के कंप्यूटरों की विशेषता यह थी कि इसमें इंटीग्रेटेड सर्किट (Integrated Circuit: IC) का इस्तेमाल कंप्यूटर के प्रमुख इलेक्ट्रॉनिक घटक के रूप में किया गया था। आईसी की खोज और कंप्यूटर में

इसका इस्तेमाल आगे चलकर माइक्रोइलेक्ट्रॉनिक्स (Micro Electronics) का जरिया बना। वैज्ञानिक टीएस बिल्की की खोज आईसी की सबसे बड़ी खासियत इसका बेहद छोटा आकार, लेकिन संग्रहण की अकूत क्षमता थी। इसके अलावा इसमें पहले के मुकाबले कई गुना अधिक और कहीं ज्यादा तेजी से गणनाएं करने की क्षमता भी थी। तीसरी पीढ़ी के कंप्यूटरों का कालखंड (Time Period) 1965 से 1971 रहा।

- **चौथी पीढ़ी (Fourth Generation)**

चौथी पीढ़ी के कंप्यूटर वह हैं, जिनका इस्तेमाल हम आज करते हैं। इस पीढ़ी के कंप्यूटरों की खासियत इनमें इस्तेमाल किया जाने वाला माइक्रो प्रोसेसर (Micro Processor) है। 1971 में अमेरिका के वैज्ञानिक टेड हॉफ (Tedd Hoff) को माइक्रो प्रोसेसर की ईजाद का श्रेय जाता है। टेड तब कंप्यूटर निर्माता कंपनी इनटेल में काम करते थे और उन्होंने अपने माइक्रोप्रोसेसर को इनटेल–4004 नाम दिया। माइक्रोप्रोसेसर दरअसल एक सिंगल चिप है, जिसमें आंकड़ों को सुरक्षित रखा जा सकता है। इसके इस्तेमाल से कंप्यूटरों का न सिर्फ आकार छोटा हुआ, बल्कि इनकी कार्यक्षमता भी बढ़ी। इस पीढ़ी का कालखंड 1971 से 1980 रहा।

- **पांचवीं पीढ़ी (Fifth Generation)**

1980 से आज के दौर तक इस्तेमाल किए जाने वाले कंप्यूटरों को पांचवीं पीढ़ी में शामिल किया जाता रहा है। कुछ विद्वान आज के कंप्यूटरों को भी चौथी पीढ़ी का ही कंप्यूटर मानते हैं तो कुछ ने इन्हें पांचवीं पीढ़ी में रखा है। कंप्यूटरों को चौथी पीढ़ी का ही मानने की बड़ी वजह यह है कि मौजूदा कंप्यूटरों का मूलाधार माइक्रोप्रोसेसर ही है, लेकिन इन्हें पांचवीं पीढ़ी में रखने वाले यह मानते हैं कि माइक्रोप्रोसेसर की क्षमताओं और आकार में भी लगातार बदलाव आते रहे हैं।

इसके अलावा प्रोसेसर अब सिर्फ कंप्यूटर तक ही सीमित नहीं रह गया है, बल्कि मोबाइल स्मार्टफोन के जरिये ये मनुष्य के हाथों में समाहित हो जाने वाला उपकरण बन चुका है। कंप्यूटर की भावी पीढ़ी की बात करें तो वैज्ञानिक इस तरह के कंप्यूटर बनाने की दिशा में प्रयास कर रहे हैं जो कृत्रिम बुद्धि (Artificial Intelligence) से लेस हो। इस दिशा में निरन्तर शोध किए जा रहे हैं। रोबोट को कुछ हद तक इस श्रेणी में रखा जा सकता है, लेकिन वह भी उतने ही काम करता है, जितने का उसे निर्देश दिया जाता है।

वैज्ञानिकों की सोच यह है कि ऐसे कंप्यूटर बनाए जाएं जो आवश्यकता के अनुरूप स्वतः निर्णय ले सके और आंकड़ों–सूचनाओं का इस्तेमाल कर खुद ही अपेक्षित परिणाम दे सके। हालांकि, यह बिन्दु इस लिहाज से विवाद का विषय भी बनता रहा है कि यदि कंप्यूटर स्वतः बुद्धि–विवेक से काम करने लगेगा तो मनुष्य उस पर नियंत्रण कैसे रख सकेगा। और

यदि अनहोनीवश कृत्रिम बुद्धि–विवेकयुक्त कंप्यूटर नकारात्मक दिशा में चलने लगा तो यह विनाशकारी साबित हो सकता है।

- **कंप्यूटर के प्रकार (Types of Computers)**

कंप्यूटर का मुख्य कार्य उन आंकड़ों को सुरक्षित रखना है, जो इसे इस्तेमाल करने वाला व्यक्ति (User) कंप्यूटर को उपलब्ध कराता है। कंप्यूटर उपयोगकर्ता के निर्देशों के आधार पर इन आंकड़ों का उपयोग कर परिणाम देता है। कार्यक्षमता के आधार पर कंप्यूटर को इन श्रेणियों में बांटा गया हैः सुपर कंप्यूटर, मेनफ्रेम कंप्यूटर, मिनी कंप्यूटर और माइक्रो कंप्यूटर (Micro Computer)। इन सभी श्रेणियों पर नजर डालें तो सुपर कंप्यूटर सर्वोच्च श्रेणी का माना जाता है, जबकि माइक्रो कंप्यूटर सबसे छोटी। आइए अब हर श्रेणी को कुछ विस्तार से समझते हैं।

- **सुपर कंप्यूटर (Super Computers)**

सुपर कंप्यूटर, कंप्यूटरों की लंबी श्रृंखला में सबसे तेज गति से काम करने वाले कंप्यूटर हैं। कल्पनातीत डाटा को यह न्यूनतम समय में सूचनाओं में बदलने में सक्षम हैं। इनका इस्तेमाल सामान्यतः बेहद बड़ी गणनाओं में ही किया जाता है। कंप्यूटर का प्रयोग मौसम की भविष्यवाणी, मिसाइलों के डिजाइन जैसे जटिल कार्यों में किया जाता है। सुपर कंप्यूटरों में कई माइक्रो प्रोसेसर (Micro Processors) लगे होते हैं। यह एक प्रकार की बेहद छोटी मशीन है जो कम्प्यूटिंग यानी गणना के कार्य को बेहद कम समय में कर पाने में सक्षम है। भारत में विकसित सुपर कंप्यूटर का नाम परम है। निम्नवत चित्र से समझा जा सकता है कि सुपर कंप्यूटर दरअसल, कई सारे प्रोसेसर का एक सामूहिक स्वरूप है।

यहां यह सवाल उठना लाजिमी है कि प्रोसेसर किस तरह गणना में मदद करते हैं। दरअसल, किसी जटिल गणना को कम समय में पूरा करने के लिये बहुत से प्रोसेसर एक साथ काम करते हैं। इस प्रक्रिया को समान्तर प्रोसेसिंग (Parallal Processing) कहा जाता है। इसके तहत कंप्यूटर को मिलने वाले डाटा अलग–अलग काम के लिए अलग–अलग प्रोसेसर को बांट दिए जाते हैं। हर प्रोसेसर अपने हिस्से की गणना करने के बाद कंप्यूटर को सूचना उपलब्ध कराता है और कंप्यूटर सभी प्रोसेसर से मिलने वाली सूचनाओं को एकत्र कर लेने के बाद सटीक अंतिम परिणाम उपलब्ध करा देता है।

(सुपर कंप्यूटर)

- **मेनफ्रेम कंप्यूटर (Mainframe Computers)**

मेनफ्रेम कंप्यूटर कार्यक्षमता के लिहाज से सुपर कंप्यूटर से कुछ कमतर, लेकिन फिर भी काफी अधिक क्षमतावान होते हैं। इसकी कार्यक्षमता का अंदाजा इसी से लगाया जा सकता है कि मेनफ्रेम कंप्यूटरों पर एक ही समय में 250 से अधिक लोग एकसाथ काम कर सकते हैं। इन कंप्यूटरों का इस्तेमाल बल्क डाटा (Bulk Data) की प्रोसेसिंग में किया जाता है। यानी ऐसी जगहों पर ये कंप्यूटर प्रयुक्त होते हैं, जहां एक ही समय में भारी मात्रा में और निरन्तर गणनाओं की जरूरत होती है। मुख्यतः इस तरह के कंप्यूटर बड़ी कंपनियों में उपभोक्ताओं की जानकारी सुरक्षित रखने में, जनगणना और इसी तरह के अन्य ऐसे कार्यों में इस्तेमाल किए जाते हैं, जहां भारी डाटा आता है।

- **मिनी और माइक्रो कंप्यूटर (Mini, Micro Computers)**

मिनी कंप्यूटर, मेनफ्रेम कंप्यूटरों से छोटे लेकिन माइक्रो कंप्यूटरों से बड़े होते हैं। माइक्रो कंप्यूटरों को पर्सनल कंप्यूटर (Personal Computers, PC) भी कहा जाता है। पर्सनल कंप्यूटर कंप्यूटरों की श्रृंखला में आकार के लिहाज से सबसे छोटे होते हैं। पर्सनल कंप्यूटर का विकास सबसे पहले 1981 में हुआ था। आगे हम इसे विस्तार से समझेंगे। माइक्रो या पर्सनल कंप्यूटर के अन्य प्रकारों को इस तरह समझ सकते हैं।

- डेस्कटॉपः वह कंप्यूटर जिसे मेज पर रखकर काम किया जा सके
- लैपटॉपः ऐसा कंप्यूटर, जिसे उपयोगकर्ता गोद में रखकर काम करे)

- पामटॉपः वह कंप्यूटर जो उपयोगकर्ता की हथेली में समा सके, इस श्रेणी में स्मार्टफोन (Smartphones), म्यूजिक प्लेयर, वीडियो प्लेयर, टैबलेट रखे जा सकते हैं

- **पर्सनल कंप्यूटर का विकास (Development of PCs)**

कंप्यूटर की शुरूआत के साथ ही इनका आकार बेहद बड़ा था, जो कालान्तर में जरूरत के हिसाब से छोटा होता गया। समय के साथ कंप्यूटर में आते गए इन बदलावों ने कंप्यूटर को सिर्फ गणनाएं करने वाली मशीन के बजाय एक समय में एकसाथ कई काम करने वाला उपकरण बना दिया। इससे यह मनुष्य के दैनिक जीवन के लिए लगातार उपयोगी बनता गया, लेकिन सबसे बड़ी समस्या यह थी कि आम आदमी कैसे करोड़ों का सुपर कंप्यूटर इस्तेमाल करे। इस जवाब के तलाश में 1970 में माइक्रो प्रोसेसर का आविष्कार हुआ। यही माइक्रो प्रोसेसर आगे चलकर माइक्रो कंप्यूटरों की खोज का जरिया बने। कंप्यूटर निर्माता कंपनी आईबीएम ने वर्ष 1981 में पहला पर्सनल कंप्यूटर बनाने की घोषणा की, जिसे आईबीएम–पीसी नाम दिया गया। यह कंप्यूटर प्रारंभिक रूप से मुख्यतः शौकिया बनाया गया था, लेकिन यह इस कदर लोकप्रिय हुआ कि बाद में सभी कंप्यूटर निर्माता कंपनियों का ध्यान पीसी की ओर गया।

(पर्सनल कंप्यूटर या माइक्रो कंप्यूटर)

खास बात यह है कि अब दुनियाभर में सैकड़ों कंपनियों के पर्सनल कंप्यूटर बाजार में हैं, लेकिन वे सभी आईबीएम–पीसी कंपेटीबल (IBM-PC Compatible) ही होते हैं। इसका अर्थ यह है कि ये सभी पर्सनल कंप्यूटर आकार, संरचना, हार्डवेयर आदि में आईबीएम–पीसी के समान ही होते हैं। इस तरह आईबीएम–पीसी स्वतः कंप्यूटर निर्माता कंपनियों के लिए एक मानक (Standard) बन गया है। समय के साथ पर्सनल कंप्यूटरों की क्षमताओं में भी लगातार बदलाव होते आए हैं। 1981 में पहले पर्सनल कंप्यूटर के जन्म के बाद से अब तक पीसी की कई पीढ़ियां सामने आ चुकी हैं। इनमें पीसी–पेंटियम, पीसी–कोर 2, इंटेल आई सीरीज प्रमुख हैं। सभी कंप्यूटर सामान्यतः एकसमान होते हैं, लेकिन हर श्रेणी और पीढ़ी में अंतर सिर्फ इसकी संग्रहण क्षमता (Storage Power) और प्रोसेसर (Processor) का होता है।

कंप्यूटर के गुण–उपयोग (Qualities-Uses of Computers)

कंप्यूटर आज के प्रतिस्पर्धी और वैज्ञानिक युग में सिर्फ गणनाओं को चुटकी में हल कर देने भर का साधन नहीं रह गया है वरन यह आज मनोरंजन, शिक्षा, चिकित्सा, सुरक्षा का भी बड़ा माध्यम बन चुका है। कंप्यूटर के गुणों की बात करें तो यह किसी भी काम को बहुत तेज गति से करने वाला, उपयोगकर्ता की ओर से मिलने वाले निर्देशों का अपेक्षित पालन करने वाला, जितना निर्देश दिया जाए, उतना ही काम करने वाला, हर काम को त्रुटिरहित करने वाला, आंकड़ों के आंकड़ों के असीमित भंडार को कम से कम जगह में संग्रह करके रखने वाला और जरूरत पड़ने पर अभीष्ट आंकड़ों को तुरंत उपलब्ध कराने वाला उपकरण है। इस लिहाज से यह मौजूदा मानव जीवनशैली में मानव का सबसे बड़ा सहायक उपकरण बन जाता है। दूसरी ओर, यदि कंप्यूटर के उपयोगों की बात की जाए तो इस लिहाज से भी यह अपने पूर्ववर्ती उपकरणों से कहीं आगे निकल चुका है। इसके दैनन्दिन के कार्यों में होने वाले उपयोग निम्नवत हैं:

ईमेलः ईमेल इलेक्ट्रॉनिक मेल (Electronic Mail) का संक्षिप्त रूप है। ईमेल का तात्पर्य उस मेल यानी पत्र से है, जिसे हम कंप्यूटर पर लिखकर इंटरनेट के माध्यम से किसी को भेजते हैं। सामान्य डाक प्रक्रिया से इतर यह पूरी प्रक्रिया चंद सेकंडों की होती है। इसके लिए उपयोगकर्ता को एक ईमेल पते की आवश्यकता होती है जो उपयोगकर्ता (User) और मेल सुविधा देने वाली कंपनी के डोमेन नेम (Domain Name) का संयुक्त स्वरूप होता है। उदाहरण के लिए– xyzsharma@gmail.com

जानकारी संजोना एवं सहयोगः कंप्यूटर उपयोगकर्ता (User) के लिए सहयोगी की तरह काम करता है। वह उपयोगकर्ता की ओर से मिलने वाले निर्देशों का पालन करने के साथ ही जरूरत के अनुरूप जानकारी, सूचनाएं, आंकड़े उपलब्ध कराता है। इस तरह यह उपयोगकर्ता के लिए एक चुटकी में दुनियाभर की जानकारी देने का जरिया बन जाता है।

शिक्षा एवं संचार सुविधाः शिक्षा के क्षेत्र में कंप्यूटर आज के दौर में अति आवश्यक तत्व बन गया है। स्कूल से लेकर विश्वविद्यालयी शिक्षा तक शायद ही शिक्षा का कोई हिस्सा हो, जहां कंप्यूटर का इस्तेमाल नहीं होता हो। दूरस्थ शिक्षा के क्षेत्र में तो कंप्यूटर के सहयोग से क्रान्ति आई है। दुनिया के किसी भी कोने में बैठा शिक्षक आज इंटरनेट के जरिये छात्रों को पढ़ाने में सक्षम हो सका है। दूसरी ओर, संचार सुविधाएं भी कंप्यूटर की मदद से तेजी से विकसित हुई और बढ़ी हैं। वह चाहे ईमेल हो या स्मार्टफोन, सबका विकास कंप्यूटर सिस्टम के जरिये ही हो पाना संभव हो सका है। इससे कुछ पीछे जाएं तो टेलीफोन के दौर में एसटीडी और आईएसडी कॉल की शुरूआत का श्रेय भी कंप्यूटर क्रान्ति को ही जाता है।

शोध, स्वास्थ्यः कंप्यूटर शोधार्थियों के लिए अहम उपकरण है। वस्तुतः शोध कार्यों में एकत्र होने वाले डाटा, आंकड़ों को संग्रहित कर सूचनाओं का संकलन करने में यह शोधार्थी का सबसे बड़ा सहायक बन जाता है। दूसरी ओर, स्वास्थ्य सुविधाओं के क्षेत्र में भी कंप्यूटर मददगार साबित हुआ है। सीटी स्कैन हो या अल्ट्रासाउंड या एमआरआई चिकित्सा क्षेत्र में निरन्तर नये बदलावों के जरिये कंप्यूटर मानव जीवन को स्वस्थ बनाने में सहायक बना है। और अब तो टेलीमेडिसिन चिकित्सा विधा की समग्र शाखा के तौर पर सामने आई है। इसके तहत डॉक्टर दुनिया के किसी भी कोने में रहकर मरीज का इलाज कर पाने में सक्षम हुए हैं।

सुरक्षा एवं अन्य सुविधाएंः कंप्यूटर मनुष्य जीवन के अहम बिन्दु सुरक्षा के लिहाज से खासे मददगार साबित हुए हैं। आम जनजीवन में क्लोज सर्किट कैमरे (Close Circuit Cameras) हों या सैन्य जीवन में अत्याधुनिक उपकरण, रडार और स्वचालित हथियार, सभी कुछ कंप्यूटरीकृत तकनीक पर आधारित हैं। इसके अलावा सड़कों पर यातायात व्यवस्था को सुगम–सुचारू बनाए रखने वाली ट्रैफिक लाइटें हों या एक कॉल पर घायलों को अस्पताल पहुंचाने वाली 108 एंबुलेंस या फिर आपराधिक वारदातों की त्वरित सूचनाएं पुलिस तक पहुंचाने वाला 100 नंबर, सभी जगह कंप्यूटर ही मूल तकनीकी बुनियाद के तौर पर नजर आता है।

21.3: कंप्यूटर के बुनियादी अवयव (Basic Components)

कंप्यूटर चाहे सुपर हो या माइक्रो यानी पर्सनल, हर कोई पांच प्रमुख भागों से मिलकर तैयार होता है, इन भागों को हम कंप्यूटर के बुनियादी अवयव भी कह सकते हैं। ये पांचों हैंः इनपुट (Input), आउटपुट (Output), प्रोसेसर (Processor), मेमोरी (Memory) और प्रोग्राम (Program), कंप्यूटर की संरचना में इन पांचों का विशेष महत्व है। निम्नवत ग्राफ की मदद से हम इनके कार्य को समझ सकते हैं:

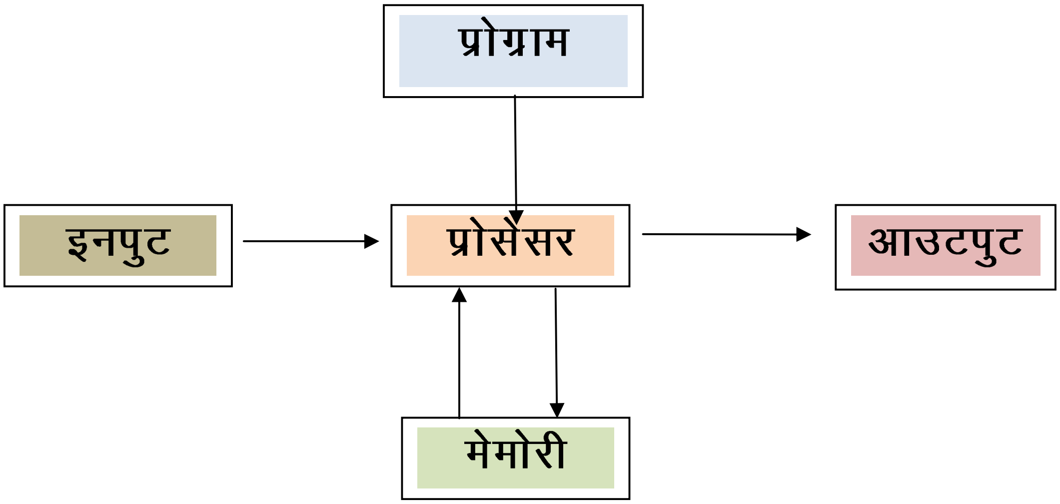

•प्रोसेसर (Processor)

जैसा कि नाम से ही स्पष्ट हो रहा है कि प्रोसेसर कंप्यूटर का वह हिस्सा होगा, जहां प्रोसेसिंग (Processing) यानी पूरी प्रक्रिया चलती होगी। इस लिहाज से प्रोसेसर को कंप्यूटर का सर्वाधिक महत्वपूर्ण भाग माना जा सकता है, या इसे यूं भी कहा जा सकता है कि प्रोसेसर ही दरअसल असल कंप्यूटर है, बाकि के सभी भाग तो प्रोसेसर की ओर से किए जा रहे कार्यों को सफलतापूर्वक पूर्ण करने में सहायक हैं। ग्राफ से भी यह आसानी से समझ में आता है कि कंप्यूटर के सभी भाग सीधे तौर पर प्रोसेसर से ही जुड़े हुए हैं। इसे यूं भी कहा जा सकता है कि प्रोसेसर कंप्यूटर का दिमाग है, जिस तरह मनुष्य का दिमाग उसे सोचने–समझने, तर्क करने या किसी समस्या का हल निकालने की क्षमता प्रदान करता है, ठीक उसी तरह प्रोसेसर भी कंप्यूटर को मिलने वाले निर्देशों का सही हल निकालने का काम करता है। इस लिहाज से यह साफ है कि प्रोसेसर कंप्यूटर का वह हिस्सा है जो उपयोगकर्ता (User) की ओर से दिए जाने वाले आदेशों को ठीक से समझकर उनका ठीक से पालन करने, गणितीय क्रियाएं करने, किसी विशेष लक्ष्य या कार्य की जांच आदि करने का काम करता है।

कंप्यूटर के प्रोसेसर वाले हिस्से को सेंट्रल प्रोसेसिंग यूनिट (Central Processing Unit) कहा जाता है, जिसे आमतौर पर संक्षिप्त रूप में हम सीपीयू भी कह लेते हैं। अब सीपीयू के भी तीन अहम हिस्से होते हैं, जिनके जुड़ने से प्रोसेसिंग यूनिट अपना सही आकार लेती है और ठीक से कार्य कर पाती है। ये तीन भाग हैं: मेमोरी (Memory), अर्थमेटिक लॉजिक यूनिट (Arithmatic Logic Unit) यानी एएलयू और कंट्रोल (Control), प्रोसेसर के इन तीनों हिस्सों के जिम्मे अलग–अलग तरह के निर्देशों का ठीक से पालन करना और परिणामों को बिल्कुल सही प्राप्त करना है। सबसे पहले बात करते हैं अर्थमेटिक लॉजिक यूनिट की। अर्थमेटिक का हिन्दी अर्थ ही अंक गणित है, यानी इस

यूनिट के जिम्मे सभी तरह की गणनाएं और तुलनाएं हैं। अब लॉजिक पर आएं तो इसके तहत गणितीय प्रक्रियाओं से इतर मिलने वाले सभी तरह के निर्देश शामिल हैं। कंट्रोल यूनिट का काम कंप्यूटर के सभी भागों की निगरानी करना और उपयोगकर्ता की ओर से मिलने वाले निर्देशों को अभीष्ट यूनिट तक पहुंचाना होता है। तीसरी और सबसे अहम यूनिट है मेमोरी, चूंकि यह वृहद् विषय है, इसे हम आगे विस्तार से जानेंगे।

• मेमोरी (Memory)

मेमोरी, यानी याददाश्त। हम पहले ही जान चुके हैं कि मानव विकास के अनुक्रम में जिस तेजी से गणितीय गणनाएं लगातार बढ़ती गईं, उसी तेजी से यह जरूरत भी बढ़ती चली गई कि हम जो भी गणना कर रहे हैं, उनके परिणाम स्मृति में लंबे समय तक संजोकर रखें। अबेकस से लेकर कंप्यूटर तक के विकास की सैकड़ों सालों की यात्रा का परिणाम है मेमोरी। कंप्यूटर पर उपयोगकर्ता जो भी जानकारी, सूचना, आंकड़ा, परिणाम बाद के इस्तेमाल के लिए सुरक्षित रखना चाहता है, वह मेमोरी में ही जाकर संग्रहीत (Stored) होता है।

मानव मस्तिष्क में जिस तरह चेतन और अवचेतन मस्तिष्क की अवधारणा है और अब तो यह विभिन्न शोधों से पता भी चला है कि मस्तिष्क के अलग–अलग हिस्से अलग–अलग तरह की सूचनाओं को संग्रहीत कर स्मृति में बनाए रखते हैं, ठीक उसी तरह कंप्यूटर की मेमोरी भी काम करती है। कंप्यूटर की मेमोरी भी मानव मस्तिष्क के अलग–अलग हिस्सों की तरह कई छोटे टुकड़ों (Blocks) में बंटी होती है। इन ब्लॉक को सामान्यतः बाइट (Byte) कहा जाता है। कंप्यूटर मेमोरी में हर ब्लॉक की अपनी एक खास लोकेशन (Location) होती है, जो मनुष्य की पहचान के लिए दिए जाने वाले नामों की तरह इन पर दर्ज नंबरों से तय मानी जाती है। इन नंबरों को बाइट या ब्लॉक का पता (Addresss) माना जा सकता है।

हर बाइट अपने से भी छोटी इकाई बिट (Bit) से बनती है। बिट को कंप्यूटर मेमोरी का सबसे छोटा हिस्सा माना जा सकता है और हर आठ बिट की शृंखला (Chain) मिलकर एक बाइट का निर्माण करती है। बिट किस तरह काम करती है, इसे हम 'हां' या 'ना' के उदाहरण से समझते हैं। हमें कुछ काम करना है तो हमारे उसे करने या नहीं करने की दो ही स्थितियां हो सकती हैं, हां या ना। या इसे किसी स्विच के ऑन या ऑफ होने से भी समझ सकते हैं। यानी किसी बाइट में मौजूद बिटों की शृंखला में कुछ बिट हां या ऑन हैं तो कुछ ना या ऑफ। इस आधार पर ऑन बिट को 0 और ऑफ को 1 माना जाता है। कंप्यूटर पर हम जो भी काम करते हैं या सूचनाएं संग्रहीत रखते हैं, वह सब 0 और 1 के रूप में ही दर्ज होता है, इन्हें बाइनरी संख्या कहा जाता है, जिसे हम इसी यूनिट के अगले हिस्से में जानेंगे। किसी भी कंप्यूटर की संग्रहण क्षमता यानी उसकी मेमोरी को बाइट में ही

मापा जाता है। जिस कंप्यूटर की बाइट जितनी अधिक होगी, वह आंकड़ों के संग्रहण, गणनाओं और सूचनाओं तथा परिणाम के निष्पादन में उतना ही सक्षम होगा। बाइट से लेकर गीगा बाइट और इससे भी कहीं आगे एक्साबाइट तक मेमोरी की क्षमता की यह श्रृंखला जाती है। इस लिहाज से जितनी अधिक बाइट वाला कंप्यूटर होगा, उसकी मेमोरी उतनी ही अधिक होगी। इसे हम निम्न सारिणी से समझ पाएंगे:

8 बिट	1 बाइट
1024 बाइट	1 किलोबाइट
1024 किलोबाइट	1 मेगाबाइट
1024 मेगाबाइट	1 गीगाबाइट

- **इनटर्नल मेमोरी (Internal Memory)**

कंप्यूटर की मेमोरी दो तरह की होती है, भीतरी और बाहरी। भीतरी यानी इनटर्नल मेमोरी को कंप्यूटर की मुख्य मेमोरी (Main Memory) माना जाता है। कंप्यूटर की इनटर्नल यानी मेन मेमोरी को भी दो भागों में बांटा जा सकता है। पहला है रैम (RAM) और दूसरा रॉम (ROM) ये दोनों मेमोरी संेंट्रल प्रोसेसिंग यूनिट में ही मौजूद होती हैं, लेकिन दोनों के काम करने का तरीका अलग होता है जो कंप्यूटर को आंकड़ों को संग्रहीत करके रखने में मददगार बनता है।

रैम (RAM): पहले बात करते हैं रैम की। रैम का पूरा नाम है रैंडम एक्सेस मेमोरी (Random Access Memory) यानी मेमोरी का वह हिस्सा या वह प्रकार, जिसे उपयोगकर्ता अपनी इच्छा के अनुसार इस्तेमाल कर सकता है। इस मेमोरी में कोई भी जानकारी, आंकड़ा या सूचना कम समय के लिए ही संग्रहीत हो सकती है। कोई नया या दूसरा डाटा आने की स्थिति में पिछला डाटा सुरक्षित नहीं रह पाता है।

रॉम (ROM): रॉम यानी रीड ओनली मेमोरी (Read Only Memory), जैसा कि नाम से ही स्पष्ट हो रहा है कि इसमें संग्रहीत आंकड़ों को उपयोगकर्ता पढ़ यानी इस्तेमाल तो कर सकता है, लेकिन इसमें बदलाव नहीं किया जा सकता। रॉम कंप्यूटर निर्माता कंपनी की ओर से उपलब्धऐसा डाटा है, जिनकी उपयोगकर्ता को निरन्तर आवश्यकता होती है। इसमें संग्रहीत डाटा कभी मिटता या खत्म नहीं होता है।

कै�ा मेमोरी (Cache Memory): कैश भी रैंडम एक्सेस मेमोरी के समान है, लेकिन इन दोनों में मुख्य अंतर यह है कि रैम जहां कंप्यूटर सिस्टम में स्टोर रहती है, कैश मेमोरी गतिशील होती है और इसे सर्वर में स्टोर किया जाता है। दोनों का उपयोग और कार्यशैली

समान ही होते हैं, लेकिन कंप्यूटर इस मेमोरी का उपयोग अधिकतर हाल में देखे गए वेब पेजों को याद रखने में करता है।

• बाहरी मेमोरी (External Memory)

कंप्यूटर की भीतरी या मुख्य मेमोरी की अपनी कुछ सीमाएं होती हैं। हर कंप्यूटर को अलग मेमोरी क्षमता से डिजाइन किया जाता है। लेकिन अकसर यह होता है कि डाटा या आंकड़े इतने अधिक हो जाते हैं कि उन्हें कंप्यूटर में ही संग्रहीत रख पाना संभव नहीं हो पाता। या कई बार जरूरत यह होती है कि कंप्यूटर में दर्ज परिणामों का इस्तेमाल कहीं और करना होता है। ऐसे में बाहरी मेमोरी (External Memory) मददगार साबित होती है। शायद यही वजह है कि इस मेमोरी को सहायक मेमोरी (Auxilliary Memory) भी कहा जाता है। हम सभी लोग इस तरह की मेमोरी का अकसर दैनन्दिन जीवन में उपयोग करते हैं। फ्लॉपी, पेनड्राइव, सीडी, डीवीडी, हार्ड डिस्क आदि कंप्यूटर की सहायक मेमोरी ही हैं। इनमें सैकड़ों–हजारों गीगाबाइट तक आंकड़े, सूचनाएं, गणनाएं, परिणाम आदि संग्रहीत कर रखे जा सकते हैं।

• इनपुट (Input)

यह तो हम स्पष्ट रूप से जानते हैं कि कंप्यूटर कोई भी कार्य उपयोगकर्ता की ओर से दिए जाने वाले निर्देशों के पालन के अनुक्रम में करता है। ऐसे में इनपुट कंप्यूटर की वह इकाई है, जिसकी मदद से उपयोगकर्ता सेंट्रल प्रोसेसिंग यूनिट यानी सीपीयू तक अभीष्ट निर्देश पहुंचा पाता है। उपयोगकर्ता की ओर से कंप्यूटर को निर्देश देने की इस प्रक्रिया को ही इनपुट कहा जाता है। कंप्यूटर को इनपुट देने के लिए उपयोगकर्ता कुछ उपकरणों (Devices) का इस्तेमाल करता है, जिन्हें इनपुट डिवाइस भी कहा जाता है। मसलन, हम जब कंप्यूटर पर टाइपिंग करते हैं तो हम उसके लिए की–बोर्ड (Key Board) पर टाइप करते हैं। इस तरह की–बोर्ड कंप्यूटर के लिए एक इनपुट डिवाइस है, क्योंकि यह उपयोगकर्ता की ओर से टाइप किए जाने वाले अक्षर–अंक की जानकारी कंप्यूटर के सीपीयू को पहुंचाता है। की–बोर्ड के अलावा माउस, जॉयस्टिक, लाइट पेन, माइक, स्कैनर आदि भी इनपुट डिवाइस हैं।

• आउटपुट (Output)

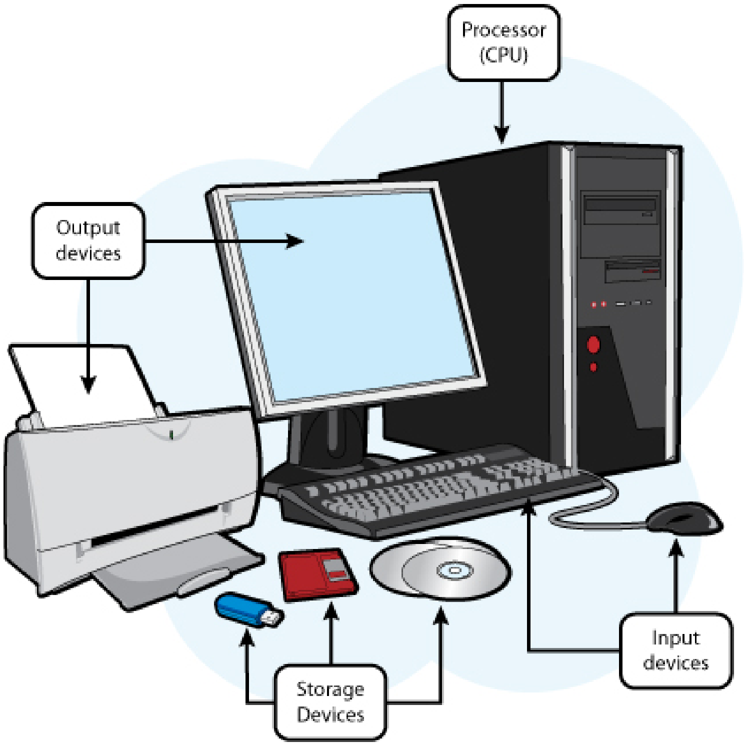

उपयोगकर्ता जो भी इनपुट कंप्यूटर को देता है वह सीपीयू में जाकर प्रोसेस किया जाता है। जो परिणाम कंप्यूटर उपयोगकर्ता तक पहुंचाता है, उसे आउटपुट कहा जाता है। आउटपुट पाने में कुछ मशीनें या उपकरण कंप्यूटर के सहायक होते हैं। इन मशीनों या उपकरणों पर उपयोगकर्ता अपनी ओर से दिए गए निर्देशों के परिणाम कंप्यूटर के स्तर पर की जाने वाली डाटा प्रोसेसिंग के बाद हासिल कर पाता है। इनमें सबसे अधिक महत्वपूर्ण और सर्वाधिक इस्तेमाल की जाने वाली डिवाइस है मॉनीटर (Monitor) मॉनीटर पर ही हम हर परिणाम देख–सुन सकते हैं। इसके अलावा प्रिंटर, स्पीकर आदि भी आउटपुट डिवाइस हैं। इनपुट–आउटपुट डिवाइस और कंप्यूटर अन्य प्रमुख घटक यानी सिस्टम यूनिट को हम उपरोक्त चित्र की मदद से आसानी से समझ सकते हैं।

•प्रोग्राम (Program)

दैनिक जीवन में हम जो भी काम करते हैं, उनके लिए निश्चित और पूर्वनियत प्रक्रियाओं के एक समूह से गुजरते हैं। मसलन हमें नहाना है तो यह निश्चित है कि हम सबसे पहले बाथरूम तक पहुंचेंगे, नल खोलेंगे, बाल्टी लगाकर पानी भरेंगे और फिर नहाना शुरू करेंगे। ठीक इसी तरह कंप्यूटर भी उपयोगकर्ता के लिए जो भी काम करता है, वह दरअसल आदेशों का एक ऐसे समूह के जरिये तय हो पाता है, जो पहले से कंप्यूटर के सीपीयू में दर्ज हैं।

कंप्यूटर पर हर कार्य के लिए अलग आदेश समूह व्यवस्थित रहता है। उदाहरण के लिए हम जब भी कंप्यूटर पर कुछ काम करते हैं तो देखने में तो वह माउस के एक क्लिक पर चुटकी में हो जाता है, लेकिन दरअसल, प्रोसेसर तक माउस की वह एक क्लिक अभीष्ट काम से जुड़े आदेशों का समूह पहुंचाती है। ये आदेश चरणबद्ध तरीके से कंप्यूटर की भीतरी मेमोरी में दर्ज रहते हैं और प्रोसेसिंग यूनिट उस पर बेहद तेजी से काम (Execution) करती है, जिससे सेकंड से भी कम समय के भीतर जरूरी परिणाम हमारे सामने आउटपुट डिवाइस यानी मॉनीटर या प्रिंटर पर उपलब्ध हो जाता है। किसी अभीष्ट कार्य को सफलतापूर्वक निष्पादित करने के लिए जरूरी आदेशों के समूह को कंप्यूटर के लिए प्रोग्राम कहा जाता है।

21.4: कंप्यूटर की कार्यपद्धति (Working Process of Computer)

कंप्यूटर के सभी भागों के बारे में जानकारी मिल जाने के बाद यह जानना जरूरी लगता है कि कंप्यूटर इन सबकी मदद से काम करता कैसे है। इससे पहले हम यह जान लेते हैं कि कंप्यूटर की कार्यपद्धति में किन तत्वों की सबसे अधिक आवश्यकता होती है। ये तत्व हैं: डाटा (Data), सूचना (Information), हार्डवेयर (Hardware) और सॉफ्टवेयर (Softwares)

हम जानते हैं कि कंप्यूटर पर उपयोगकर्ता की ओर से कुछ निर्देश दिए जाते हैं, ये निर्देश सूचनात्मक होते हैं, यानी हम कंप्यूटर के सेंट्रल प्रोसेसिंग यूनिट अर्थात् सीपीयू को कुछ डाटा उपलब्ध कराते हैं, जिसके आधार पर वह हार्डवेयर और सॉफ्टवेयर की मदद से परिणाम हासिल करता है। सामान्यतः दैनिक जीवन में भी हम कई तरह के डाटा का इस्तेमाल कर किसी परिणाम पर पहुंचते हैं, इस प्रकिया को डाटा प्रोसेसिंग (Data Processing) कहते हैं। कंप्यूटर पर यही कार्य इलेक्ट्रॉनिक डाटा प्रोसेसिंग (Electronic Data Processing) बन जाता है, क्योंकि कंप्यूटर एक इलेक्ट्रॉनिक मशीन है। आइए अब हम डाटा प्रोसेसिंग के प्रमुख तत्वों को समझते हैं:

• डाटा क्या है (Data)

सामान्य शब्दों में कहा जाए तो डाटा दरअसल जानकारी है। इसे इस उदाहरण से समझते हैं, मान लीजिए कि हम क्रिकेट खेल रहे हैं। अब क्रिकेट में किन खेल उपकरणों का इस्तेमाल होता है, क्रिकेट को खेलने का सही तरीका क्या है, क्रिकेट के मैच कितने तरह के होते हैं, क्रिकेट के एक मैच में कितनी टीमें खेलती हैं, क्रिकेट की एक टीम में कितने खिलाड़ी होते हैं. इस तरह सवालों की एक लंबी श्रृंखला जो बनेगी, वह क्रिकेट को लेकर अलग–अलग तरह का डाटा बन जाएगा।

अब इसे कंप्यूटर की भाषा में समझें तो डाटा दो तरह का होता है। पहला संख्यात्मक (Numeric) और दूसरा चिह्नात्मक (Alpha Numeric) संख्यात्मक जैसा कि नाम से ही स्पष्ट हो रहा है कि यह डाटा अंकों से संबंधित है, जिनका उपयोग जोड़, घटाना, गुणा–भाग या अन्य तरह की गणनाओं में किया जा सकता है। दूसरी ओर चिह्नात्मक डाटा का मतलब ऐसी जानकारियों से है, जिन्हें अंकीय स्वरूप में दर्ज नहीं किया जा सकता। जैसे: किसी व्यक्ति का नाम, किसी किताब का नाम आदि। इस तरह के डाटा के साथ गणितीय प्रक्रिया संपन्न नहीं की जा सकती है, लेकिन इनके जरिये तुलनात्मक परिणाम (Comparative Results) जरूर हासिल किए जा सकते हैं।

- **सूचना (Information)**

किसी भी काम के संबंध में हमारे पास जो भी डाटा यानी जानकारी उपलब्ध होती है, वह अव्यवस्थित (Unarranged) होती है। इसकी वजह से कई बार यह डाटा इसलिए उपयोगी साबित नहीं हो पाता, क्योंकि इसके व्यवस्थानुक्रम में नहीं होने के कारण अभीष्ट परिणाम प्राप्त करना असंभव होता है। इसके लिए जरूरी है कि हम डाटा के अकूत भंडार में से सिर्फ उसी डाटा को अपने लिए चुनें, जो समय विशेष पर हमारे लिए उपयोगी है। उदाहरण के लिए, यदि हमें प्यास लगी है तो हम जानते हैं कि प्यास पानी से बुझेगी लेकिन पानी के संबंध में हमारे मस्तिष्क में कई तरह का डाटा उपलब्ध है। पानी नदी से आता है, पानी बारिश से भी आता है, तालाब में भी पानी भरा रहता है और नल में भी पानी आता है. लेकिन इन सब जानकारियों में से महज एक जानकारी हमें इच्छित परिणाम तक पहुंचा सकती है और वह है नल से पानी आना। इसी तरह कंप्यूटर में कोई इच्छित परिणाम प्राप्त करने के लिए उपयोगकर्ता डाटा के भंडार में से जरूरी और उपयोगी डाटा का चयन करता है। इस चयनित डाटा को ही सूचना कहा जाता है।

- **हार्डवेयर (Hardware)**

कंप्यूटर पर हम जो भी काम करते हैं, वह दो चीजों की मदद के बिना असंभव है। ये चीजें हैं हार्डवेयर और सॉफ्टवेयर। पहले बात करते हैं हार्डवेयर की। हार्डवेयर कंप्यूटर से जुड़े वे कल–पुर्जे (Spare Parts) या उपकरण हैं, जिन्हें उपयोगकर्ता आंखों से देख सकता है या छूकर महसूस कर सकता है। सीपीयू, मॉनीटर, माउस, की–बोर्ड, प्रिंटर, पैन ड्राइव आदि कंप्यूटर के हार्डवेयर हैं।

- **सॉफ्टवेयर (Softwares)**

कंप्यूटर के सफल तरीके से कार्य करने (Execution) में सॉफ्टवेयर की अहम भूमिका है। सॉफ्टवेयर दरअसल प्रोग्रामों का समूह है। यानी उपयोगकर्ता जो भी काम कंप्यूटर पर करना चाहता है या निर्देश कंप्यूटर को देना चाहता है, उसके सफल निष्पादन के लिए

जिन आदेशों की आवश्यकता कंप्यूटर को पड़ती है, उस प्रोग्राम को सॉफ्टवेयर कहा जाता है। बिना सॉफ्टवेयर के कंप्यूटर पर कोई भी काम कर पाना असंभव सा है, क्योंकि यदि सॉफ्टवेयर नहीं होगा तो इसका सीधा तात्पर्य यह है कि संबंधित कंप्यूटर के पास उपयोगकर्ता के इच्छित आदेशों का पालन करवाने वाले आदेशों का समूह उपलब्ध नहीं है। ऐसी स्थिति में कंप्यूटर के लिए अभीष्ट परिणाम देना संभव नहीं हो सकेगा। कार्यक्षमता के लिहाज से सॉफ्टवेयर को भी दो भागों में बांटा जा सकता है। पहला है सिस्टम सॉफ्टवेयर और दूसरा है एप्लीकेशन सॉफ्टवेयर।

सिस्टम सॉफ्टवेयर वे प्रोग्राम हैं, जिनका काम सिस्टम यानी कंप्यूटर को चलाते रहना है। ऑपरेटिंग सिस्टम (Operating System), कंपाइलर (Compiler), यूटिलिटी प्रोग्राम (Utility Program) ऐसे ही सॉफ्टवेयर हैं। यह भी कहा जा सकता है कि यही वे प्रोग्राम हैं, जिनकी वजह से कंप्यूटर चलता है, यानी ये कंप्यूटर के प्राण हैं। कंप्यूटर पर जो भी उपयोगकर्ता काम करता है, उसे इन्हीं सॉफ्टवेयर पर काम करना होगा। दूसरी ओर, एप्लीकेशन सॉफ्टवेयर वे प्रोग्राम हैं, जिन्हें उपयोगकर्ता की जरूरत के हिसाब से डिजाइन किया गया है। उदाहरण के लिए जो उपयोगकर्ता पेंटिंग करना चाहता है, उसके लिए पेंटिंग के प्रोग्राम हैं, किसी को वेतन का रिकॉर्ड दर्ज करना है तो उसके लिए अलग एप्लीकेशन हैं। ये प्रोग्राम कंप्यूटर में पहले से उपलब्ध नहीं होते हैं, इन्हें अलग से इंस्टॉल (Install) करना होता है। सिस्टम और एप्लीकेशन सॉफ्टवेयरों की मदद से ही कंप्यूटर पूरा होता है। इन दोनों के संयुक्त स्वरूप को सॉफ्टवेयर पैकेज भी कहा जाता है।

21.5: कंप्यूटर लैंग्वेज (Computer Languages)

हम यह भली–भांति जानते हैं कि कंप्यूटर मानव जीवन के लिए बहुधा उपयोगी मशीन है जो गणनाओं के जरिये मानव जीवन को सरल–सुगम बना रही है। लेकिन यह भी उतना ही सत्य है कि कंप्यूटर स्वयं कोई परिणाम मनुष्य को नहीं देता, बल्कि यह उपयोगकर्ता के निर्देशों के पालन के अनुक्रम में ही काम करता है। कंप्यूटर पर किस निर्देश के आधार पर डाटा प्रोसेसिंग का क्या परिणाम निकलेगा, यह तय करते हैं प्रोग्राम और ये प्रोग्राम आदेशों का एक समूह होते हैं, यह हम पहले ही जान चुके हैं। इस लिहाज से कंप्यूटर के लिए हर काम के लिए आदेशों का एक ऐसा समूह यानी प्रोग्राम तैयार किया जाता है, जिसे कंप्यूटर समझ सके।कंप्यूटर के लिए प्रोग्राम जिन भाषाओं में लिखे जाते हैं, उन्हें कंप्यूटर प्रोग्रामिंग लैंग्वेज कहा जाता है। कंप्यूटर बस इतना करता है कि जो भी प्रोग्राम उसके सीपीयू में इंस्टॉल हो जाए, उसके आदेशों के क्रम को वह मेमोरी में सेव कर लेता है। इसके बाद जब भी कभी उपयोगकर्ता को आवश्यकता होती है, कंप्यूटर का प्रोसेसर मेमोरी से अभीष्ट आदेशों के प्रोग्राम का चयन कर लेता है और इसके आधार पर परिणाम उपयोगकर्ता को उपलब्ध करा देता है। कंप्यूटर के लिए प्रोग्राम बनाने वाली भाषाओं में मुख्यतः अंग्रेजी के कुछ शब्द और चिह्न प्रयुक्त किए जाते हैं।

हर प्रोग्रामिंग भाषा का अपना एक अलग व्याकरण (Grammar or Syntax) होता है। ऐसे में यह जरूरी होता है कि जिस भाषा में प्रोग्राम तैयार किया जा रहा हो, उसके व्याकरण का पूरा पालन किया जाए, ऐसा नहीं करने पर कंप्यूटर प्रोग्राम को ठीक से समझ नहीं सकेगा और आदेशों का ठीक पालन नहीं कर पाने से वह परिणाम नहीं दे सकेगा।

कंप्यूटरों के लिए प्रयुक्त होने वाली प्रमुख भाषाएं निम्नवत हैं:

- बेसिक (BASIC)
- सी (C)
- सी++ (C++)
- जावा (JAVA)
- डॉटनेट (DOTNET)
- **बाइनरी संख्या प्रणाली (Binary Number System)**

यहां यह उल्लेखनीय है कि कंप्यूटर बाइनरी भाषा ही समझते हैं, यानी कंप्यूटर का सारा काम सिर्फ दो अंकों 0 और 1 पर चलता है। यह हम पहले ही जान चुके हैं कि कंप्यूटर मेमोरी की सबसे छोटी इकाई बिट है जो 0 और 1 से ही मिलकर बनती है। हम सामान्य जीवन में दशमलव संख्या प्रणाली का इस्तेमाल करते हैं, यानी एक से नौ तक के अंक, लेकिन कंप्यूटर सिर्फ 0 और 1 का ही प्रयोग करता है।

मान लीजिए कि हमें 9 लिखना है तो हम सीधे 9 लिखेंगे, लेकिन यदि कंप्यूटर को 9 लिखना है तो प्रोससिंग यूनिट इसे बाइनरी नंबरों में तोड़कर समझेगा। इसे सामान्य शब्दों में इस तरह समझ सकते हैं कि हम कंप्यूटर पर जो भी काम करते हैं, वह हमारे लिए भले ही सीधा समझ में आता हो, लेकिन कंप्यूटर उसे अपनी भाषा में समझता है। हालांकि, आउटपुट पर कंप्यूटर जो परिणाम उपलब्ध कराता है, वह उसी रूप में होता है, जो हमारा अभीष्ट है।

दशमलव संख्या	बाइनरी संख्या	दशमलव संख्या	बाइनरी संख्या
0	0	8	1000
1	1	9	1001
2	10	10	1010
3	11	11	1011
4	100	12	1100
5	101	13	1101
6	110	14	1110
7	111	15	1111

यहां यह उल्लेखनीय है कि दशमलव संख्या प्रणाली में हम 10 को आधार मानते हैं, क्योंकि इस संख्या प्रणाली में हम 0 से लेकर 9 तक कुल 10 अंकों की मदद से किसी भी बड़ी से बड़ी संख्या को लिख सकते हैं, लेकिन बाइनरी संख्या प्रणाली में 2 ही हर संख्या का आधार है, क्योंकि इस प्रणाली में सिर्फ दो अंकों 0 और 1 का ही इस्तेमाल किया जाता है।

विशेष पहलू यह है कि किसी भी दशमलव संख्या को बाइनरी संख्या में बदला जा सकता है और किसी भी बाइनरी संख्या को दशमलव संख्या में परिवर्तित किया जा सकता है। लेकिन चूंकि यह बिन्दु हमारे विषय के लिए बहुत उपयोगी नहीं है, लिहाजा हमने उपर दिए गए ग्राफ में सिर्फ समझने के लिए हम प्रथम 16 अंकों के बाइनरी नंबर लिए हैं।
यहां यह तथ्य उल्लेखनीय है कि हमें पहले ही मालूम है कि एक बाइट का अर्थ आठ बिट से होता है और हर बिट के दो मान हो सकते हैं, 0 या 1। अब गणितीय सिद्धांतों के अनुसार हर एक बाइट में बिटों की संख्या 2 का आठ गुना यानी दो को आठ बार गुणा करने से मिलने वाला मान अर्थात् 256 हो सकती है। यानी सीधे शब्दों में कहें तो हर एक बाइट में 0 से लेकर 255 तक यानी कुल 256 संख्याएं दिखाई जा सकती हैं। इसी तरह किसी एक बाइट में कुल 256 चिह्न दर्ज किए जा सकते हैं।

- **कोडिंग सिस्टम (Coding System)**

कंप्यूटर पर बाइनरी भाषा के चलते अक्षरों और चिह्नों को बाइनरी संख्या प्रणाली के हिसाब से ही लिखना जरूरी है। ऐसे में यह स्पष्ट है कि हम जो भी संख्या या चिह्न या डाटा लिखना चाहते हैं उसका कोई बाइनरी कोड होना आवश्यक है। तभी कंप्यूटर समझ सकेगा कि हम क्या लिखना चाहते हैं। इस लिहाज से कोडिंग सिस्टम कंप्यूटर और उपयोगकर्ता के बीच परस्पर बातों को समझाने का जरिया बन जाता है। कोडिंग के जरिये अक्षरों और चिह्नों को बाइटों में सुरक्षित कर लिया जाता है। इसके लिए मुख्यतः दो प्रकार के कोड प्रयोग में लाए जाते हैं, ये हैं आस्की कोड (American Standard Code for Information Interchange) और एब्सडिक (Extended Binary Coded Decimal Interchange Code) हालांकि, माइक्रो यानी पर्सनल कंप्यूटरों में मुख्यतः आस्की कोड का ही इस्तेमाल किया जाता है। अंग्रेजी अक्षरों को आस्की और एब्सडिक कोड में कैसे लिखा जाता है, यह निम्न सारिणी से समझा जा सकता है:

अक्षर	**आस्की**	**एब्सडिक**
A	01000001	11000001
B	01000010	11000010
C	01000011	11000011
D	01000101	11000101

कम्पाइलर (Compiler)

हमें मालूम है कि कंप्यूटर के प्रोग्राम ऐसी भाषा में होने जरूरी हैं, जिसे कंप्यूटर समझ सके और यह भाषा है बाइनरी संख्या प्रणाली आधारित। कंप्यूटर की इस भाषा को मशीन लैंग्वेज (Machine Language) कहा जाता है। इसे सामान्य तौर पर निम्न स्तरीय भाषा (Low Level Language) भी कहा जाता है। इसलिए यह जरूरी हो जाता है कि कंप्यूटर के लिए जो प्रोग्राम तैयार किए जाएं, वे मशीनी भाषा में ही हों, लेकिन ऐसा करना

संभव नहीं हो पाता, क्योंकि हर अंक, चिह्न को बाइनरी संख्या प्रणाली में 0 और 1 के रूप में लिख पाना बेहद लंबा और दुष्कर कार्य है। ऐसे में मददगार साबित होता है कंपाइलर। दरअसल, कंपाइलर एक ऐसा प्रोग्राम है जो उच्चस्तरीय भाषा में लिखे गए किसी भी प्रोग्राम को मशीनी भाषा में बदल देता है, ताकि कंप्यूटर उसे आसानी से समझ सके। इसे निम्न ग्राफ की मदद से समझ सकते हैं:

कंपाइलर किसी कंप्यूटर के सिस्टम सॉफ्टवेयर का ही हिस्सा होता है। कंपाइलर दो भाग में काम करता है। पहला यह कि कंपाइलर उपयोगकर्ता की ओर से दिए जाने वाले आदेश की अभीष्ट प्रोग्राम के व्याकरण के आधार पर पूरी जांच करता है। पता लगाता है कि आदेश प्रोग्राम के व्याकरण के अनुरूप है कि नहीं। अगर कोई गलती है तो कंपाइलर रूक जाता है, जिसके बाद उपयोगकर्ता को दोबारा ठीक से आदेश देना होता है। कंपाइलर आदेश को प्रोग्राम के व्याकरणसम्मत पाता है तो इसे तत्काल मशीनी भाषा यानी बाइनरी कोड में बदल देता है। उपयोगकर्ता के एक आदेश को पूरा पढ़ने के बाद कंपाइलर उस एक आदेश को बाइनरी कोड के हिसाब से कई छोटे आदेशों में भी बदल सकता है। ये आदेश सीपीयू में जाते हैं, जहां मेमोरी, प्रोसेसर, एएलयू आदेशों के अनुरूप काम करती हैं।

21.6: उपसंहार (The Conclusion)

हम न सिर्फ कंप्यूटर के विकास और इसके इतिहास से रूबरू हुए हैं, बल्कि यह भी समझ पाने में सक्षम रहे हैं कि किस तरह मानवीय सभ्यताओं के विकास के साथ कंप्यूटर भी आगे बढ़ा। प्राचीन काल में सामान्य गणनाओं से लेकर आज के वैज्ञानिक युग में मगल ग्रह तक मनुष्य के सफर को कामयाब बनाने में कंप्यूटर का किसी न किसी रूप में योगदान रहा। इस लिहाज से कह सकते हैं कि कंप्यूटर मानव समाज का अभिन्न अंग बन चुका है।

21.7: अभ्यास प्रश्न (Exercise)

1. गणनाओं के लिए सर्वप्रथम उपयोग किया गया ज्ञात उपकरण है:

(a)पास्कलाइन
(b) एनियाक
(c)अबेकस
(d) सुपर कंप्यूटर

2. कंप्यूटर के विकास की मूल अवधारणा इनमें से क्या थी:

(a)गणनाएं
(b) मनोरंजन
(c)खेल
(d) उपरोक्त में से कोई नहीं

3. इनमें से किसे कंप्यूटर का जनक माना जाता है:

(a)ब्लेज पास्कल
(b) सर चार्ल्स बैबेज
(c)जेपी एकर्ट
(d) जेडब्ल्यू मॉशी

4. इंटीग्रेटेड सर्किट यानी आईसी की खोज किसने की:

(a)सर चार्ल्स बैबेज
(b) जेपी एकर्ट
(c)टीएस बिल्की
(d) बिल गेट्स

5. कम्पाइलर इनमें से क्या है:

(a)एक प्रोग्राम
(b) एक प्रोग्रामिंग भाषा
(c)इनपुट डिवाइस
(d) आउटपुट डिवाइस

6. एक बाइट का मान होता है:

(a)8 बिट
(b) 16 बिट
(c)1024 बिट
(d) उपरोक्त में से कोई नहीं

7. बाइनरी संख्या प्रणाली में आधार अंक हैं:

(a)0 से 9 तक
(b) 0 और 1
(c)2 और 10
(d) कोई आधार अंक नहीं है

8. हर एक बाइट में चिह्नों या अंकों की संख्या हो सकती है:

(a)200
(b) 512
(c)1024
(d) 256

9. पैन ड्राइव इनमें से किस मेमोरी का उदाहरण है:

(a)बहरी मेमोरी
(b) रैम
(c)रॉम
(d) कैश मेमोरी

10. अर्थमेटिक लॉजिक यूनिट हिस्सा है:

(a)सीपीयू का
(b) एक विशेष प्रोग्राम का
(c)कम्पाइलर का
(d) कंप्यूटर उपकरणों का

11. पर्सनल या माइक्रो कंप्यूटर अस्तित्व में आए:

(a)1970 में
(b) 1942 में
(c)1981 में
(d) 1990 में

12. अमेरिकी वैज्ञानिक टेड हॉफ ने खोज की थी:

(a)माइक्रो प्रोसेसर की
(b) बाइनरी संख्या प्रणाली की
(c)एनालिटिकल कंप्यूटर की
(d) पास्कलाइन की

13. दूसरी पीढ़ी के कंप्यूटरों में इस्तेमाल किया जाता था:

(a)वैक्यूम ट्यूब

(b) इंटीग्रेटेड सर्किट
(c)माइक्रोप्रोसेसर
(d) ट्रांजिस्टर

14. पहले माइको प्रोसेसर का नाम था:

(a)इनटेल–4004
(b) एनियाक
(c)परम
(d) इनमें से कोई नहीं

15. अल्फा न्यूमेरिक डाटा का तात्पर्य है:

(a)अंकों में प्रदर्शित किए जाने वाले डाटा से
(b) ऐसे डाटा से, जिसे अंकों में नहीं दिखाया जा सकता
(c)उपरोक्त में से दोनों
(d) उपरोक्त में से कोई नहीं

16. निम्नलिखित में से कौन आउटपुट डिवाइस नहीं है:

(a)प्रिंटर
(b) मॉनीटर
(c)स्कैनर
(d) सभी आउटपुट डिवाइस हैं

17. c और c++ क्या हैं:

(a)कंप्यूटर एप्लीकेशन
(b) कंप्यूटर प्रोग्राम
(c)कंप्यूटर प्रोग्रामिग भाषाएं
(d) कंप्यूटर कम्पाइलर

18. कंप्यूटर प्रोग्राम का तात्पर्य है:

(a)खास परिणाम के लिए तय आदेशों का कम
(b) खास परिणाम पाने के लिए जरूरी आउटपुट
(c)कंप्यूटर पर इस्तेमाल किए जाने वाले इनपुट उपकरण
(d) उपरोक्त में से कोई नहीं

19. इस मेमोरी में दर्ज सूचनाएं बदली नहीं जा सकतीं:

(a)रैम
(b) रॉम
(c)कैश मेमोरी
(d) उपरोक्त सभी

20. भारत में विकसित सुपर कंप्यूटर का नाम है:

(a)आईबीएम
(b) एनियाक
(c)लेन्ज कैल्कुलेटर
(d) परम

21.7: निबंधात्मक प्रश्न (Theoretical Questions)

1. कंप्यूटर क्या है, अबेकस से लेकर कंप्यूटर तक की विकास यात्रा का विस्तृत वर्णन के साथ इसकी आवश्यकता भी समझाएं।
2. कंप्यूटर को कितनी पीढ़ियों में बांटा जा सकता है, इनका क्रमवार वर्णन करने के साथ हर पीढ़ी में आए अंतर का विष्लेशणकरें।
3. कंप्यूटर के प्रमुख अवयव क्या हैं, हर अवयव कंप्यूटर प्रणाली के लिए किस तरह महत्वपूर्ण है और ये किस तरह काम करते हैं?
4. कंप्यूटर मेमोरी क्या है, यह कितने प्रकार की होती है?
5. कंप्यूटर किस तरह काम करता है, डाटा–सूचना क्या हैं, इनमें प्रमुख अंतर क्या है, सॉफ्टवेयर और हार्डवेयर में क्या अंतर है?
6. बाइनरी संख्या प्रणाली क्या है, यह मानव जीवन में प्रयुक्त की जाने वाली दशमलव संख्या प्रणाली से किस तरह भिन्न है, कंप्यूटर में इस संख्या प्रणाली का उपयोग क्यों किया जाता है, कोडिंग सिस्टम का भी वर्णन करें।
7. कंप्यूटर के विकास अनुक्रम को संक्षिप्त में समझाते हुए मानव समाज की प्रगति में इसके योगदान का विष्लेशणकरें।

इकाई २२ कंप्यूटर ऑपरेटिंग सिस्टम और इंटरनेट के अनुप्रयोग
Applications of Computer Operating Systems and Internet

- **22.1:** परिचय **(Introduction to Unit)**
  (प्रस्तावना, उद्देश्य)
- **22.2:** सिस्टम सॉफ्टवेयर **(System Softwares)**
  (सॉफ्टवेयर, सिस्टम सॉफ्टवेयर)
- 22.3: ऑपरेटिंग सिस्टम **(Operating Systems)**
  (ऑपरेटिंग सिस्टम क्या हैं, ऑपरेटिंग सिस्टम का इतिहास, ऑपरेटिंग सिस्टम के प्रकार, कुछ प्रमुख ऑपरेटिंग सिस्टम)
- **22.4:** ऑपरेटिंग सिस्टम के घटक **(Components of Operating System)**
  (कर्नल, यूजर इंटरफेस, नेटवर्किंग, सुरक्षा आदि)
- **22.5:** इंटरनेट **(Internet)**
  (इंटरनेट का संक्षिप्त इतिहास, इंटरनेट के प्रकार, साधन, सेवाएं, सामाजिक प्रभाव, सुरक्षा)
- **22.6:** उपसंहार **(The Conclusion)**
- **22.7:** अभ्यास प्रश्न **(Exercise)**
- **22.8:** निबंधात्मक प्रश्न **(Theoretical Questions)**

22.0 उद्देश्य

- इस इकाई के अध्ययन के बाद हम यह समझ सकेंगे कि
- कंप्यूटर ऑपरेटिंग सिस्टम क्या हैं और ये किस तरह कंप्यूटर की कार्यप्रणाली को आसान व मानवोपयोगी बना सकते हैं
- कंप्यूटर ऑपरेटिंग सिस्टम का विकास किस तरह हुआ
- नेटवर्किंग क्या है और कंप्यूटर की कार्य व्यवस्था में इसका क्या महत्व है
- इंटरनेट क्या है, इसका इस्तेमाल क्यों किया जाता है, इसने मानव जीवन को सरल–सुगम बनाने में क्या योगदान किया है
- इंटरनेट का इस्तेमाल करने में सुरक्षा का ध्यान रखना क्यों जरूरी है, इंटरनेट का इस्तेमाल करने के दौरान किस तरह की सावधानियां बरती जानी चाहिए

22.1 प्रस्तावना (The Introduction)

हम इस तथ्य से भली–भांति परिचित हैं कि कंप्यूटर आज मानव जीवन की अभिन्न आवश्यकता बन चुका है। जीवन का शायद ही कोई पहलू आज ऐसा बचा रह गया हो, जिसमें छोटे या बड़े रूप में कंप्यूटर का इस्तेमाल नहीं किया जाता हो। अब जिस तरह मानवीय सामाजिक व्यवस्था अलग–अलग घटकों में बंटी हुई है, उसी तरह कंप्यूटर की पूरी कार्य व्यवस्था भी कई अंगों का एक सामूहिक स्वरूप है। पिछली इकाई में हमने कंप्यूटर के इतिहास से लेकर इसके विकास के अनुक्रम को विस्तार से समझा है। अब इस इकाई में हम जानेंगे कि एप्लीकेशन (Application System) और ऑपरेटिंग सिस्टम (Operating Systems) किस तरह कंप्यूटर के सफल कार्य निष्पादन में सहयोगी हैं।

22.2: सिस्टम सॉफ्टवेयर (System Softwares)

पिछली इकाई में हम जान चुके हैं कि सॉफ्टवेयर क्या होते हैं। सॉफ्टवेयर मुख्यतः दो प्रकार के होते हैं, सिस्टम सॉफ्टवेयर (System Softwares) और एप्लीकेशन सॉफ्टवेयर (Application Softwares) सिस्टम सॉफ्टवेयर वे प्रोग्राम हैं, जिनका काम कंप्यूटर को चलाना होता है। हम इस इकाई में जिस ऑपरेटिंग सिस्टम के बारे में जानने वाले हैं, वह भी मूलतः सिस्टम सॉफ्टवेयर ही है। इसके अलावा एप्लीकेशन सॉफ्टवेयर वे प्रोग्राम हैं, जो किसी खास काम को करने और अभीष्ट परिणाम हासिल करने में उपयोगकर्ता की मदद करते हैं।

22.3: ऑपरेटिंग सिस्टम (Operating System)

हम जान चुके हैं कि ऑपरेटिंग सिस्टम दरअसल सिस्टम सॉफ्टवेयर है, यानी इसकी मदद से ही कोई कंप्यूटर काम कर सकता है। इस लिहाज से कोई भी ऑपरेटिंग सिस्टम वह माध्यम है, जो उपयोगकर्ता और कंप्यूटर के बीच की महत्वपूर्ण कड़ी का काम करता है।

यहां यह बिन्दु अति महत्वपूर्ण है कि ऑपरेटिंग सिस्टम के बिना किसी उपयोगकर्ता के लिए कंप्यूटर से अभीष्ट कार्य करा पाना असंभव तो नहीं है, लेकिन बेहद कठिन जरूर है। ऑपरेटिंग सिस्टम का महत्व इससे समझा जा सकता है कि यह उपयोगकर्ता (User) के आदेशों, एप्लीकेशन सॉफ्टवेयर पर दर्ज निर्देशों को कंप्यूटर तक पहुंचाने और प्रोसेसिंग के बाद मिलने वाले परिणाम और अन्य सूचनाओं को वापस उपयोगकर्ता तक पहुंचाने का काम करता है। इसके अलावा किसी खास कार्य के निष्पादन या मनचाहे परिणाम प्राप्त करने के लिए उपयोगकर्ता ने जो प्रोग्राम तैयार किए हैं, उन्हें शुरू कराने से लेकर पूरी प्रक्रिया के बाद खत्म कराने तक की जिम्मेदारी भी ऑपरेटिंग सिस्टम पर होती है। हार्डवेयर के सभी संसाधनों को जरूरत पड़ने पर प्रोग्राम के लिए उपलब्ध कराना और उपयोगकर्ता के लिए उपयोगी डाटा को सुरक्षित रखने का काम भी ऑपरेटिंग सिस्टम की मदद से ही संभव हो पाता है। ऑपरेटिंग सिस्टम, एप्लीकेशन सॉफ्टवेयर, उपयोगकर्ता और कंप्यूटर के बीच संबंध को निम्न ग्राफ से समझा जा सकता है:

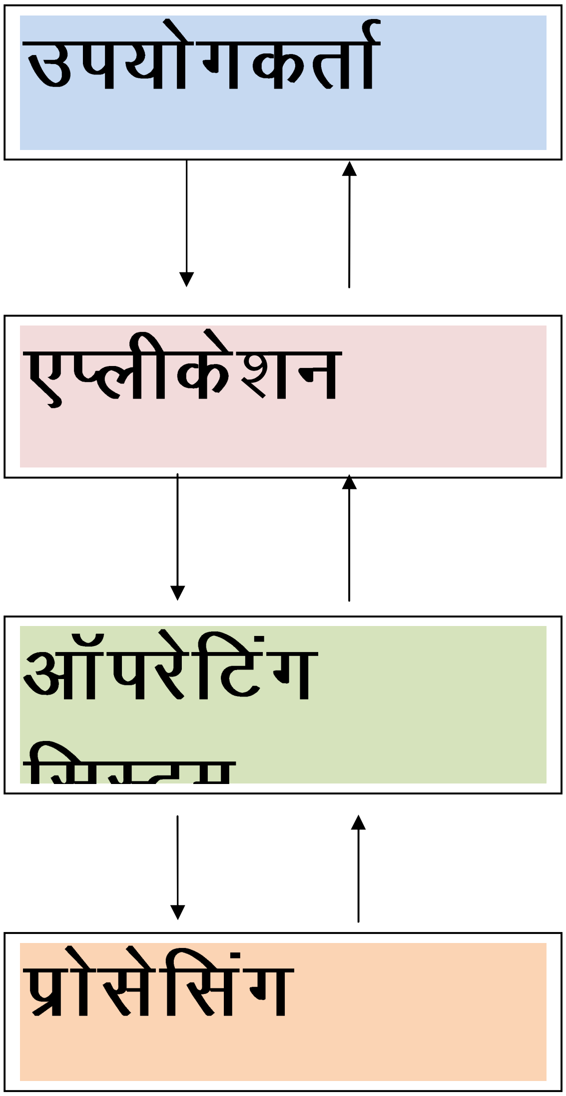

इतिहास और विकास (History and Development)

हम जानते हैं कि कंप्यूटर के विकास की शुरूआत एकल उद्देश्य की पूर्ति के लिए हुई थी, जिसे गणना कहा जाता है। इस तरह के कंप्यूटर मुख्यतः कैल्कुलेटर ही थे, लेकिन जिस तरह गणनाएं और जरूरतें बढ़ती गईं, एक से अधिक कार्य कंप्यूटर की मदद से किए जाने लगे। वर्ष 1950 में अस्तित्व में आए प्रारंभिक कंप्यूटर में कोई ऑपरेटिंग सिस्टम तो नहीं था, लेकिन इनमें रेजीडेंट मॉनीटर (Resident Monitor) नाम का खास फंक्शन मौजूद था, इसकी वजह से कंप्यूटर की कार्यक्षमता, एक्यूरेसी (Accuracy) और गति (Speed) में भी खासी बढ़ोतरी हुई। इसके बाद ऑपरेटिंग सिस्टम के विकास पर कंप्यूटर अनुसंधानकर्ताओं का ध्यान गया। वर्ष 1960 तक कंप्यूटरों में बैच प्रोसेसिंग, इनपुट–आउटपुट इंटरप्ट, बफरिंग जैसे कार्य करना संभव हो गया था। हालांकि, अब भी

यह सिंगल टास्किंग मशीन (Single Tasking Machine) ही थी, यानी कंप्यूटर पर एक समय में एक ही काम कर पाना संभव हो सकता था।

• मेनफ्रेम ऑपरेटिंग सिस्टम (Mainframe OS)

हम जानते हैं कि वर्ष 1980 में पर्सनल कंप्यूटर के विकास से पहले सुपर और मेनफ्रेम कंप्यूटर ही अस्तित्व में थे। चूंकि सुपर कंप्यूटर बेहद महंगे थे, लिहाजा मेनफ्रेम कंप्यूटर ही अधिकतर प्रयोग किए जाते थे और ऑपरेटिंग सिस्टम भी मेनफ्रेम कंप्यूटरों के लिए ही विकसित हुए। मेनफ्रेम कंप्यूटरों के लिए कब–कैसे ऑपरेटिंग सिस्टम का विकास हुआ, यह निम्नवत समझा जा सकता है:

- **वर्श 1950:** रेजीडेंट मॉनीटर फंक्शन
- **वर्श 1959:** आईबीएम ने अपने मेनफ्रेम कंप्यूटर आईबीएम–704 के लिए शेयर (SHARE) ऑपरेटिंग सिस्टम तैयार किया। आईबीएम के आईबीएम–709 और आईबीएम–7090 मेनफ्रेम कंप्यूटरों में भी यही ऑपरेटिंग सिस्टम प्रयोग किया गया, हालांकि जल्द ही कंपनी ने एक और नया ऑपरेटिंग सिस्टम विकसित कर लिया, जिसे आईबीएम–709, 7090 और 7094 मेनफ्रेम कंप्यूटरों पर इस्तेमाल किया गया। इस ऑपरेटिंग सिस्टम का नाम था आईबीसिस या आईबीजॉब (IBSYS/ IBJOB)
- **वर्श 1960:** आईबीएम कंपनी ने हर तरह के काम के लिए एक सिंगल ऑपरेटिंग सिस्टम (Single Operating System) तैयार किया, जिसे नाम दिया गया ओएस–360 (OS360) आईबीएम का यह ऑपरेटिंग सिस्टम आज के दौर के सभी ऑपरेटिंग सिस्टम का मूलाधार है। खास बात यह है कि उस वक्त इस ऑपरेटिंग सिस्टम के लिए प्रोग्राम इस तरह लिखे गए थे कि यह सिस्टम आज के दौर के कंप्यूटरों पर भी आसानी से चलाया जा सकता है।

  ओएस–360 की खासियत यह थी कि यह पहला ऐसा सिस्टम था जो उपयोगकर्ता की जरूरत के मुताबिक संसाधनों को उपलब्ध कराने के अलावा डाटा को मेन और सहायक मेमोरी में सेव करने में मदद करता था। यह पहला सिस्टम था, जिसके जरिये फाइल लॉकिंग (File Locking) का काम संभव हो सका।

  कालान्तर में आईबीएम के दूसरे जितने भी ऑपरेटिंग सिस्टम विकसित हुए, वे सभी दरअस ओएस–360 में ही कुछ सुधार कर तैयार किए जाते रहे। दूसरी ओर 1960 में ही कंट्रोल डाटा ऑपरेशन्स (Control Data Oprations) और मिनोसेटा यूनिवर्सिटी के संयुक्त प्रयासों से बैच प्रोसेसिंग के मकसद से एक ऑपरेटिंग सिस्टम विकसित किया गया। इसका नाम था स्कोप (SCOPE)

- **वर्श 1961**: बरॉज कॉरपोरेशन ने बी5000 नाम से नया मेनफ्रेम कंप्यूटर पेशकया जो मास्टर कंट्रोल प्रोग्राम (MCP) नाम के ऑपरेटिंग सिस्टम से सुसज्जित था। यह दुनिया का पहला ऐसा ऑपरेटिंग सिस्टम था, जिसके लिए पहली बार हाई लेवल लैंग्वेज (High Level Language) ESPOL में प्रोग्राम लिखे गए थे। यही नहीं, इस मशीन में पहली बार वर्चुअल मेमोरी का भी इस्तेमाल किया गया था। यह अपने दौर का बेहद क्रान्तिकारी कदम था। शायद यही वजह थी कि उस दौर की सबसे बड़ी कंप्यूटर निर्माता कंपनी ने अपने हार्डवेयर प्रोजेक्ट एएस400 (AS400) के लिए बरॉज कॉरपोरेशन से इस ऑपरेटिंग सिस्टम के इस्तेमाल की इजाजत मांगी, लेकिन कंपनी ने इनकार कर दिया। एमसीपी का इस्तेमाल आज भी यूनिसिस क्लियरपाथ कंप्यूटरों में किया जा रहा है। दूसरी ओर, बाद में आईबीएम ने सीपी–67 नाम से अपने सिस्टम पर काम किया, जो वर्चुअल मेमोरी (Virtual Memory) पर फोकस था।
- **वर्श 1970**: 1961 से 1970 तक ऑपरेटिंग सिस्टम के विकास को लेकर लगातार शोध होते रहे। हर पुराने सिस्टम में कुछ संशोधन कर जल्द ही नया सिस्टम तैयार कर लिया जाता था। इस कड़ी में यह साल भी शामिल रहा। इस वर्ष कंट्रोल डाटा कॉरपोरेशन और मिनोसेटा यूनिवर्सिटी ने क्रोनोर और एनओएस सिस्टम पेश किए। इनकी खासियत टाइमशेयरिंग और एक साथ कई काम किया जाना थी। कंट्रोल डाटा ने ही बाद में यूनिवर्सिटी ऑफ इलियोनिस के साथ मिलकर प्लेटो (PLATO) नाम से ऑपरेटिंग सिस्टम तैयार किया, जिसकी मदद से पहली बार रियल टाइम चैटिंग और मल्टी यूजर ग्राफिकल गेम्स जैसे फीचरों का सफल निष्पादन संभव हो सका। प्लेटो अपने दौर का सबसे आधुनिक ऑपरेटिंग सिस्टम बन गया।

  इसी साल पहली कॉमर्शियल कंप्यूटर निर्माता कंपनी यूनिवैक (UNIVAC) ने एक्जेक (EXEC) नाम से ऑपरेटिंग सिस्टम की एक सीरीज पेश की जो रियल टाइम बेस्ड (Real Time Based) थी। इसी तरह जनरल इलेक्ट्रिक और एमआईटी ने जनरल कांप्रेहेन्सिव ऑपरेटिंग सिस्टम (GCOS) तैयार किया। वहीं, डिजिटल इक्विपमेंट कॉरपोरेशन ने टॉप्स–10 (TOPS-10) और टॉप्स–20 (TOPS-20) जैसे ऑपरेटिंग सिस्टम तैयार किए जो मुख्यतः विश्वविद्यालयों के लिए खासे उपयोगी साबित हुए। इनके अलावा भी कई अन्य ऑपरेटिंग सिस्टम लगातार विकसित किए जाते रहे।
- **माइक्रो कंप्यूटर सिस्टम (Micro Computer OS)**

हम जानते हैं कि पहले माइक्रो कंप्यूटर या पर्सनल कंप्यूटर का विकास आईबीएम कंपनी ने 1980 में किया था। उस वक्त यह सिर्फ प्रयोग के तौर पर तैयार किए गए थे।

शुरूआती दौर में पर्सनल कंप्यूटरों में अधिक क्षमता भी नहीं थी, लिहाजा इनके लिए अलग से ऑपरेटिंग सिस्टम की जरूरत महसूस नहीं की गई, क्योंकि तब कंप्यूटरों का दैनन्दिन जीवन में कोई विशेष उपयोग नहीं किया जाता था। हालांकि, तब भी इन कंप्यूटरों में रॉम यानी मेमोरी उपलब्ध रहती थी। उस दौर में इन कंप्यूटरों को मॉनीटर (Monitor) कहा जाता था।

पर्सनल कंप्यूटर के प्रारंभिक दौर में पहला ऑपरेटिंग सिस्टम था सीपी–एम (CP-M) जो डिस्क ऑपरेटिंग सिस्टम (Disk Operating System) था। लेकिन जल्दी ही माइक्रोसॉफ्ट ने अपना ऑपरेटिंग सिस्टम एमएस–डॉस (MS-DOS) पेश किया। लांचिंग के साथ ही यह सिस्टम सबसे अधिक लोकप्रिय हो गया। इसकी एक बड़ी वजह यह भी थी कि आईबीएम कंपनी ने अपने माइक्रो कंप्यूटरों के लिए इसी ऑपरेटिंग सिस्टम का चयन किया, जिसे तब आईबीएम डॉस या पीसी डॉस (IBM-DOS or PC-DOS) भी कहा जाता था।

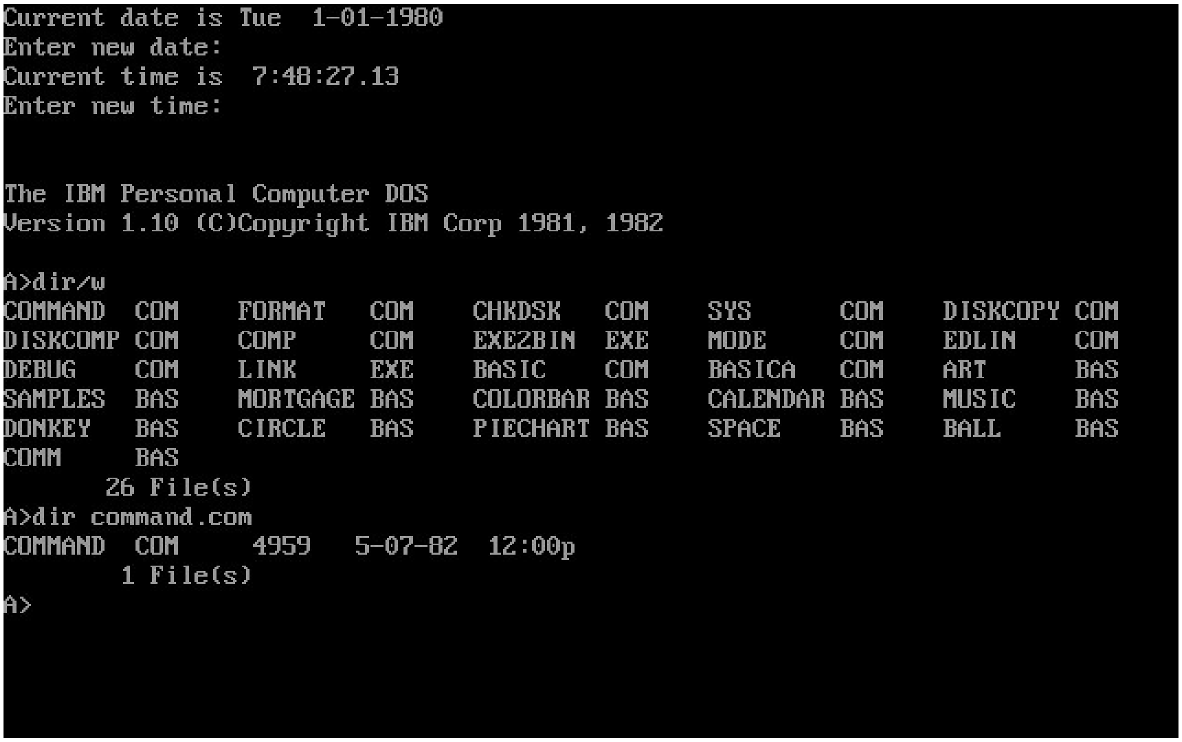

(आईबीएम कंप्यूटर में इस्तेमाल किया जाने वाला पीसी डॉस)

दूसरी ओर, कंप्यूटर निर्माता दूसरी बड़ी कंपनी एप्पल (Apple Inc) ने भी लगभग आईबीएम के समानांतर एप्पल मेकिनटोश (Apple Macintosh) नाम से अपना माइक्रो कंप्यूटर पेश किया। इस कंप्यूटर की खासियत थी इसका ऑपरेटिंग सिस्टम मैकिन्टोश ऑपरेटिंग सिस्टम, जिसे मैक ओएस (MAC OS) भी कहा जाता है। इस ऑपरेटिंग

सिस्टम की मदद से एप्पल कंपनी अपने पर्सनल कंप्यूटर में ग्राफिकल यूजर इंटरफेस (Graphical User Interface- GUI) देने में सफल रही। इस इंटरफेस का तात्पर्य ऐसी व्यवस्था से है, जिसके तहत उपयोगकर्ता मशीन पर चल रहे प्रोग्राम को आइकन (Icons) की मदद से पहचान सके, ताकि उसे काम करने में आसानी हो। सबसे खास बात यह थी कि अपने इस नये प्रोजेक्ट को आगे बढ़ाने के लिए एप्पल कंपनी ने अपने शुरूआती पर्सनल कंप्यूटर प्रोजेक्ट एप्पल 2 (Apple II) को बंद कर दिया था।

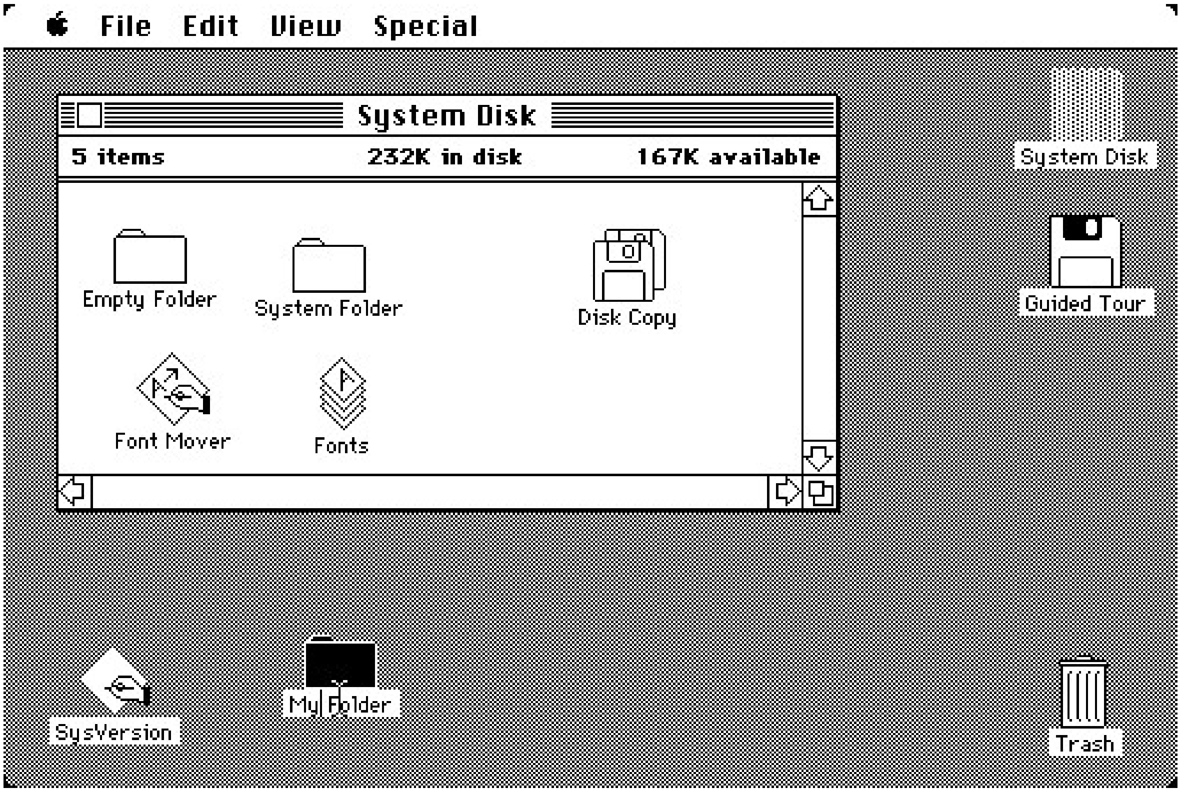

(एप्पल मैकिनटोश में इस तरह आइकन बने नजर आते थे)

वर्ष 1985 में 32 बिट आर्किटेक्चर और पेजिंग क्षमता वाली इनटेल 80386 सीपीयू चिप ने पर्सनल कंप्यूटर के विकास में नयी क्रान्ति पैदा की। दरअसल, इस चिप के इस्तेमाल के बाद ही पर्सनल कंप्यूटर मेनफ्रेम और मिनी कंप्यूटरों की तरह मल्टी टास्किंग (Multi Tasking) ऑपरेटिंग सिस्टम को चलाने लायक बन सका। इस बिन्दु को ध्यान में रखते हुए माइक्रोसॉफ्ट कंपनी ने वीएमएस (VMS) ऑपरेटिंग सिस्टम बनाने वाले डेविड कटलर को अपने साथ जोड़ लिया और उन्हें माइक्रोसॉफ्ट के पुराने ऑपरेटिंग सिस्टम (DOS) को आगे बढ़ाते हुए विंडोज ऑपरेटिंग सिस्टम (Windows Operating System) को तैयार करने की कमान सौंप दी गई। दूसरी तरफ एप्पल कंपनी के सह संस्थापक स्टीव जॉब्स का ध्यान भी इनटेल 80386 चिप ने खींचा। स्टीव ने नेक्स्ट कंप्यूटर नाम से अपनी

अलग कंपनी बनाई और इसके तहत नेक्स्टस्टेप (NEXTSTEP) ऑपरेटिंग सिस्टम तैयार किया। कालान्तर में एप्पल ने यह सिस्टम खरीद लिया और मैकिनटोश के साथ इसका उपयोग किया। मौजूदा पर्सनल कंप्यूटरों में अधिकतर इस्तेमाल होने वाले ऑपरेटिंग सिस्टम विंडोज और मैकिनटोश ही हैं। हालांकि, लाइनक्स (LINUX) यूनिक्स (UNIX) भी ऑपरेटिंग सिस्टम हैं, लेकिन पर्सनल कंप्यूटरों में इनका बहुत अधिक इस्तेमाल नहीं किया जाता है।

1.3.2: ऑपरेटिंग सिस्टम के प्रकार (Types of Operating System)

ऑपरेटिंग सिस्टम को इनकी कार्यक्षमता और इनकी कार्यशैली के आधार पर दो अलग तरह से बांटा जा सकता है। यूनिट के इस हिस्से में दोनों तरीकों से ऑपरेटिंग सिस्टमों को आसानी से जान सकेंगे। कार्यक्षमता के आधार पर ऑपरेटिंग सिस्टम को छह प्रमुख भागों में बांटा जा सकता है। ये हैं एकल एवं बहुल कार्य (Single and Multi Tasking) एकल एवं बहुल उपयोगकर्ता (Single and Multi Users), वितरित सिस्टम (Distributed), टेंपलेटेड (Templated), एंबेडेड (Embedded), लाइब्रेरी (Library) और रियल टाइम (Real Time)

- **एकल और बहुल कार्य (Single and Multi Tasking):** शुरूआत करते हैं एकल एवं बहुल कार्य सिस्टम से। जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है कि सिंगल ऑपरेटिंग सिस्टम वे सिस्टम हैं, जो एक समय में एक ही काम करने में सक्षम हैं, दूसरी ओर मल्टी टास्किंग ऑपरेटिंग सिस्टम उपयोगकर्ता को एक ही वक्त में एक से अधिक काम करने की क्षमता प्रदान करते हैं। मल्टी टास्किंग ऑपरेटिंग सिस्टम टाइम अचीविंग (Time Achieving) के जरिये ऐसा कर पाते हैं। लेकिन इसमें भी ऑपरेटिंग सिस्टम दो तरह से काम करते हैं। पहला है प्रीएंप्टिव और दूसरा को–ऑपरेटिव। प्रीएंप्टिव (Preemptive) ऑपरेटिंग सिस्टम के तहत प्रोसेसर में हर प्रोग्राम के लिए टाइम शेयर (Time Share) कर लिया जाता है, जिससे प्रोसेसर तय समय में एक के बाद एक हर प्रोग्राम पर काम करता है। लेकिन, इसमें परेशानी यह होती है कि एक प्रोग्राम की प्रोसेसिंग पूरी होने के बाद ही दूसरा शुरू हो सकता है। यानी उपयोगकर्ता को दूसरे प्रोग्राम पर जाने के लिए इंतजार करना होता है। इस तरह के ऑपरेटिंग सिस्टम हैं लाइनक्स (Linux), यूनिक्स (Unix), सोलरिस (Soalaris), अमीगा (Amiga) दूसरी ओर, को–ऑपरेटिव ऑपरेटिंग सिस्टम में हर काम को इस तरीके से प्रोसेस किया जाता है कि प्रोसेसर में हर काम के लिए अलग टाइम स्लॉट तय करने के साथ प्रोसेसिंग को भी बांट दिया जाता है। इससे एक ही समय में एक साथ अलग–अलग काम करना संभव हो पाता है। विंडोज 16–बिट ऐसा ही ऑपरेटिंग सिस्टम है। हालांकि, विंडोज का

32–बिट ऑपरेटिंग सिस्टम और विंडोज 9X ऑपरेटिंग सिस्टम प्रीएंप्टिव सिस्टम थे।

- **एकल एवं बहुल उपयोगकर्ता (Single and Multi Users)**: एकल यूजर ऑपरेटिंग सिस्टम एकल उपयोगकर्ता के लिए ही उपयोगी होता है। हालांकि, यह भी बहुत अधिक सुविधाएं प्रदान नहीं करता, फिर भी इतनी सहूलियत जरूर होती है कि इसमें एक साथ कुछ प्रोग्राम चलाए जा सकते हैं। दूसरी ओर, मल्टीटास्किंग यूजर ऑपरेटिंग सिस्टम एक से अधिक उपयोगकर्ताओं को डिस्क स्पेस (Disk Space) सुविधा के जरिये कंप्यूटर (Interact) करने की सुविधा प्रदान करता है। इससे इस तरह के ऑपरेटिंग सिस्टम पर एक साथ कई उपयोगकर्ता एक ही समय पर काम करने में सक्षम होते हैं। इसी तरह टाइम शेयरिंग ऑपरेटिंग सिस्टम भी खास तरीकों से प्रोसेसर टाइमिंग, प्रिंटर, मास स्टोरेज और अन्य संसाधनों का एलॉकेशन (Allocation) करता है, जिससे एक ही समय पर अलग–अलग उपयोगकर्ता अलग–अलग संसाधन का उपयोग अपने अभीष्ट परिणाम प्राप्त करने में कर सकें।
- **वितरित सिस्टम (Distributed):** इस तरह के ऑपरेटिंग सिस्टम को सिंगल एंड मल्टीटास्किंग–यूजर का वृहद और विस्तृत स्वरूप माना जा सकता है। दरअसल, इस सिस्टम के जरिये ऐसे कई कंप्यूटरों को साथ जोड़ा जा सकता है, जो दरअसल भौतिक रूप से एक–दूसरे से दूर हों। यह काम नेटवर्किंग (Networking) के जरिये किया जाता है, जिसकी प्रक्रिया को हम आगे जानेंगे। वस्तुतः इस तरह के सिस्टम का विकास ही नेटवर्किंग की अवधारणा के बाद हुआ। इसके जरिये एक ही समय में एक साथ कई सारे कंप्यूटरों को ऑपरेट किया जाना संभव हो सका। कंप्यूटरों पर को–ऑपरेशन (Co-operation) के तहत होने वाले काम को ही वितरित सिस्टम कहा जाता है।
- **टेंपलेटेड (Templated):** टेंपलेट का शाब्दिक अर्थ होता है खास पैटर्न (Pattern) यानी किसी खास मकसद की पूर्ति के लिए तैयार किया जाने वाला ऑपरेटिंग सिस्टम। यह ऑपरेटिंग सिस्टम वितरित सिस्टम का और अधिक परिष्कृत स्वरूप है। मुख्यतः इस तरह के ऑपरेटिंग सिस्टम का प्रयोग इंटरनेट बेस्ड (Internet Based) क्लाउड कंप्यूटिंग (Cloud Computing) में किया जाता है। इस तरह के ऑपरेटिंग सिस्टम में किसी भी डाटा, सूचना को वर्चुअलाइज (Virtualize) कर लिया जाता है। इसके बाद यह डाटा या सूचना सर्वर (Server) तक पहुंचा दिया जाता है, जहां वह स्टोर रहता है। अब भविष्य में जब भी किसी उपयोगकर्ता को किसी खास डाटा की आवश्यकता होती है तो टेंपलेट ऑपरेटिंग सिस्टम की मदद से वह आसानी से उसे सर्वर से हासिल कर लेता है।

- **एंबेडेड सिस्टम (Embeded System):** एंबेडेड ऑपरेटिंग सिस्टम एंबेडेड कंप्यूटरों के लिए बनाए जाते हैं। एंबेडेड कंप्यूटरों का अर्थ उन कंप्यूटरों से है, जिनका निर्माण कुछ खास मकसद से किया जाता है, जो कम आकार, कम स्पेस और कम संसाधनों के बावजूद सुरक्षित और विश्वसनीय तरीके से उपयोगकर्ता के निर्देशों का पालन कर सकें।

(पीडीए आधारित एक मोबाइल डिवाइस)

उदाहरण के लिए इसे पीडीए (Personal Digital Assistant) से समझा जा सकता है। पीडीए दरअसल एक मोबाइल डिवाइस है, जो इंटरनेट से जुड़ सकती है, डाटा और सूचनाएं संग्रहीत कर सकती है और उपयोगकर्ता की जरूरत के मुताबिक जानकारी उपलब्ध करा सकती है। यही वजह है कि पीडीए को हैंडहोल्ड पीसी (Handhold PC) भी कहा जाता था। हालांकि वर्ष 2010 के बाद स्मार्टफोन के विकास और आईफोन ऑपरेटिंग सिस्टम (i-OS) और एंड्रॉयड (Android) के विकास के बाद पीडीए का उपयोग काफी कम, लभगग नगण्य, रह गया।

- **रियल टाइम सिस्टम (Real Time Operating System):** इस तरह के ऑपरेटिंग सिस्टम यह सुनिश्चित करते हैं कि उपयोगकर्ता जो काम करना चाहता है या जो डाटा इस्तेमाल करना चाहता है, वह निश्चित समयावधि में परिणाम के रूप में उसके सामने उपलब्ध हो। ये ऑपरेटिंग सिस्टम सिंगल टास्किंग भी हो सकते हैं और मल्टी टास्किंग भी। अंतर सिर्फ यह होता है कि मल्टी टास्किंग होने की स्थिति में ये ऑपरेटिंग सिस्टम निर्धारित कलन विधियों (Scheduled Algorithms) की मदद से लक्ष्य हासिल करता है। कलन विधियां, गणितीय शब्द है।

ये दरअसल किसी एप्लीकेशन प्रोग्राम के वे स्टेप हैं, जिनपर चलकर प्रोसेसर उपयोगकर्ता को अभीष्ट परिणाम उपलब्ध कराता है। एल्गोरिथम में भी ये ऑपरेटिंग सिस्टम दो तरह से काम करते हैं। पहला है इवेंट ड्राइवन सिस्टम (Event Driven System) इसके तहत ऑपरेटिंग सिस्टम उपयोगकर्ता की ओर से मिले आदेशों को प्राथमिकता (Priority) के क्रम में तय करता है और एक के बाद एक तय समय में इन्हें पूरा करता है। वहीं, टाइम शेयरिंग सिस्टम (Time Sharing System) में कार्यों के लिए समय निर्धारण किया जाता है।

- **लाइब्रेरी (Library):** लाइब्रेरी ऑपरेटिंग सिस्टम भी मुख्यतः कंप्यूटर नेटवर्किंग से जुड़ा हुआ है। यह सिस्टम दरअसल किसी खास तरह की नेटवर्किंग में इस्तेमाल किए जाने वाले सभी ऑपरेटिंग सिस्टमों का एक समूह है, जो लाइब्रेरी के स्वरूप में उपलब्ध रहता है।

• प्रमुख ऑपरेटिंग सिस्टम (Some Operating Systems)

कंप्यूटर के विकास के अनुक्रम में ही ऑपरेटिंग सिस्टमों का भी विकास तेजी से हुआ। जिस हिसाब से जरूरतें बढ़ती गईं, उसी हिसाब से लगातार शोध और अनुसंधानों की मदद से ऑपरेटिंग सिस्टमों की ईजाद कर समस्याओं का हल निकाला जाता रहा। कुछ प्रमुख ऑपरेटिंग सिस्टमों के बारे में हम यहां जानने का प्रयास करेंगेः

- **यूनिक्स (Unix):** यूनिक्स मल्टीटास्किंग, मल्टीयूजर कंप्यूटर ऑपरेटिंग सिस्टम है, जिसे 1970 में अमेरिका की अमेरिकन टेलीफोन एंड टेलीग्राफ कंपनी (AT&T) की बेल रिसर्च लैब (Bell Lab) में केन थॉमसन, डेनिस रिची की टीम ने तैयार किया था। टीम ने यूनिक्स सिस्टम बनाने का प्रोजेक्ट 1968 में शुरू किया था। शुरूआत में यह ऑपरेटिंग सिस्टम असेंबलिंग लैंग्वेज (Assembling Language) में लिखा गया था, जो उस समय प्रोग्रामिंग की प्रचलित भाषा थी। प्रारंभ में यह ऑपरेटिंग सिस्टम सिर्फ बेल लैब के ही कार्यों के निष्पादन के लिए तैयार किया गया था। बाद में एटीएंडटी ने यह ऑपरेटिंग सिस्टम अन्य संस्थाओं को भी देना शुरू किया। इसके लिए यूनिक्स के एकेडमिक और कॉमर्शियल दो वर्जन तैयार किए गए। इसके शुरूआती उपयोगकर्ताओं में यूनिवर्सिटी ऑफ कैलीफोर्निया, माइक्रोसॉफ्ट, बर्कले, आईबीएम, सन माइक्रोसिस्टम्स जैसी कंपनियां रहीं। यूनिक्स अपनी खास पद्धति पर काम करता है, जिसे अकसर कंप्यूटर विशेषज्ञ यूनिक्स फिलॉसफी (Unix Pholosophy) भी कहते हैं। यह सिस्टम उपयोगकर्ता को ऐसे टूल्स (Tools) का समूह उपलब्ध कराता है, जिनमें से हरेक एक खास फंक्शन (Function) को पूरा करते हैं। इसके अलावा यह इन सभी टूल्स की मदद से

संयुक्त यूनिफाइड फाइल सिस्टम और शेल (Shell) कमांड सिस्टम भी विकसित करता है, जिससे वर्कफ्लो (Workflow) में मदद मिलती है। बेहतरीन कार्यक्षमता और उपयोगकर्ता के लिए खासा मददगार साबित हुआ यूनिक्स पहला पोर्टेबल ऑपरेटिंग सिस्टम (Portable Operating System) माना जाता है। यही वजह है कि इसके बाद विकसित हुए अधिकतर ऑपरेटिंग सिस्टमों का मूल आधार यूनिक्स ही रहा। यही नहीं, समय के साथ जैसे–जैसे प्रोग्रामिक भाषाएं विकसित होती रहीं, वैसे–वैसे हर भाषा में यूनिक्स को हर बार नये स्वरूप में तैयार किया गया।

- **यूनिक्स लाइक फैमिली (Unix Like Family):** यूनिक्स कंप्यूटर के विकास का बड़ा आविष्कार था। मेनफ्रेम और मिनी कंप्यूटरों के लिहाज से यह बेहद उपयोगी था, जहां बल्क डाटा (Bulk Data) आता था।एटीएंडटी–बेल रिसर्च लैब में विकास के बाद यूनिक्स के ट्रेडमार्क द ओपन ग्रुप ने हासिल कर लिए, जिसने एचपी, आईबीएम, एप्पल और सन माइक्रोसिस्टम्स को यूनिक्स ऑपरेटिंग सिस्टम को अपने कंप्यूटरों में प्रयोग करने को ही अधिकृत किया है। ऐसे में यूनिक्स से मिलते–जुलते ऑपरेटिंग सिस्टम तैयार करने शुरू किए गए। यूनिक्स के समकक्ष कई नये ऑपरेटिंग सिस्टम उभरकर सामने आए, जिन्हें यूनिक्स लाइक फैमिली कहा जाता है। इनमें लाइनक्स (Linux), वी सिस्टम (V System), बीएसडी (BSD) शामिल हैं। इनमें से अधिकतर का उपयोग एकेडमिक संस्थाओं, इंजीनियरिंग कंपनियों के सर्वर में किया जाता है।
- **लाइनक्स (Linux):** यह ऑपरेटिंग सिस्टम फिनलैंड के एक इंजीनियरिंग छात्र लाइनस टोर्वेल्ड्स ने तैयार किया। पढ़ाई के दौरान एक प्रोजेक्ट पर काम करते हुए लाइनस ने अपने इस ऑपरेटिंग सिस्टम के बारे में एक अखबार में जानकारी प्रकाशित की। हालांकि, तब तक यह पूरी तरह तैयार नहीं हुआ था, लेकिन अखबार में प्रकाशन के बाद कई विशेषज्ञ, इंजीनियरिंग छात्रों ने लाइनस को इस प्रोजेक्ट में मदद की, अपेक्षित सुधार किए, जिसके बाद लाइनक्स सिस्टम वजूद में आया।

(मौजूदा दौर में सबसे अधिक इस्तेमाल किए जाने वाले एंड्रॉयड सिस्टम वाले मोबाइल फोन का ऑपरेटिंग सिस्टम लाइनक्स ही है)

लाइनक्स को यूनिक्स लाइक ऑपरेटिंग सिस्टम माना जाता है, लेकिन अपनी तरह के दूसरे सिस्टम से लाइनक्स इस लिहाज में अलग है कि इसे बनाने में यूनिक्स कोड का इस्तेमाल नहीं किया गया है। ओपन लाइसेंस मोड होने के कारण लाइनक्स कोड अध्ययन और सुधारीकरण के लिए भी खुला है। अपनी इसी खूबी के कारण लाइनक्स सुपर कंप्यूटरों से लेकर स्मार्टवॉच तक का ऑपरेटिंग सिस्टम बन गया। मल्टीटास्किंग, मल्टीयूजर सर्वर से लेकर मोबाइल फोन जैसे एंबेडेड कंप्यूटरों में भी लाइनक्स का पूरा इस्तेमाल किया जाता है। गूगल क्रोम और क्रोम ब्राउजर भी लाइनक्स आधारित हैं।

- **मैक ओएस (Mac-OS):** मैकिन्टोश ऑपरेटिंग सिस्टम (Macintosh Operating System) एप्पल कंपनी की ओर से तैयार किया गया ऑपरेटिंग सिस्टम है। ग्राफिकल यूजर इंटरफेस (GUI) आधारित यह पहला ऑपरेटिंग सिस्टम नहीं था, लेकिन जीयूआई का पहला सबसे अधिक लोकप्रिय सिस्टम बना।

  मैक से पहले 1980 में जेरॉक्स कॉरपोरेशन (Xerox Corporation) ने सबसे पहले जीयूआई पर शोध किया। इस शोध से सिद्ध हुआ कि हाथ में पकड़े जा सकने वाले किसी साधन (Tool) की मदद से कंप्यूटर को निर्देश समझाना अधिक आसान और सुगम है। कंपनी ने अपने इस शोध के आधार पर अपना खुद का

कंप्यूटर जेरॉक्स स्टार (Xerox Star) भी लांच किया, लेकिन इसमें जीयूआई सिस्टम यानी ग्राफिकल यूजर इंटरफेस की परिकल्पना पूरी तरह सफल नहीं हो सकी थी। दूसरी ओर, एप्पल भी इसी विषय पर शोध कर रहा था और उसने संपूर्ण जीयूआई आधारित ऑपरेटिंग सिस्टम यानी मैक तैयार कर बाजी मार ली। एप्पल ने वर्ष 1984 में अपना पहला मैक ऑपरेटिंग सिस्टम पेश किया था, जिसे बाद में परिष्कृत किया जाता रहा।

- **माइक्रोसॉफ्ट विंडोज (Microsoft Windows):** पर्सनल या माइक्रो कंप्यूटर आज डेस्कटॉप (Desktop) या लैपटॉप (laptop) के रूप में लगभग हर घर में इस्तेमाल हो रहा है। और जब भी हम अपना डेस्कटॉप या लैपटॉप खोलते हैं तो उसमें हमें विंडोज 7, 8 या एक्सपी ही बतौर ऑपरेटिंग सिस्टम नजर आती है। इसकी वजह यह है कि दुनियाभर के कुल वेब कनेक्टेड कंप्यूटरों में से 88.9 प्रतिशत में विंडोज ऑपरेटिंग सिस्टम इस्तेमाल किया जाता है। इसके बारे में हम आगे विस्तार से जानेंगे।

• माइक्रोसॉफ्ट विंडोज (Microsoft Windows OS)

वर्ष 1985 में माइक्रोसॉफ्ट कॉरपोरेशन ने पहली बार विंडोज 1.0 ऑपरेटिंग सिस्टम को लांच किया था। पूरी तरह ग्राफिकल यूजर इंटरफेस आधारित यह सिस्टम जल्द ही बेहद लोकप्रिय हो गया। यही वजह थी कि आईबीएम ने अपने कंप्यूटरों के लिए इस ऑपरेटिंग सिस्टम को आधिकारिक रूप से स्वीकृत और उपयोग किया।
आईबीएम के अलावा भी अन्य कंप्यूटर निर्माता कंपनियों ने अपने पर्सनल कंप्यूटरों में विंडोज का ही इस्तेमाल किया है।
माइक्रोसॉफ्ट कॉरपोरेशन 1985 से लेकर 2015 तक अभी तक विंडोज 1.0 से लेकर विंडोज 10 तक ऑपरेटिंग सिस्टम के अलग–अलग वर्जन लांच कर चुका है। विंडोज ऑपरेटिंग सिस्टम का हर नया वर्जन यानी संस्करण पिछले वाले संस्करण में रह गई कमियों को दूर करके बनाया जाता रहा, जिसकी वजह से हर नया विंडोज सिस्टम उपयोगकर्ताओं के लिए और अधिक उपयोगी और लाभकारी बनता चला गया। दुनियाभर के अधिकतर कंप्यूटरों में विंडोज सिस्टम इस्तेमाल किए जाने के पीछे शायद यही वजह है। यहां यह उल्लेखनीय है कि विंडोज 7.0 सबसे अधिक लोकप्रिय और सर्वाधिक इस्तेमाल किया जाने वाला ऑपरेटिंग सिस्टम है। विंडोज में समय के साथ आए बदलावों को हम निम्नवत समझ सकते हैं:

- **विंडोज 1.0:** माइक्रोसॉफ्ट की ओर से वर्ष 1985 में यह सबसे पहला जीयूआई आधारित ऑपरेटिंग सिस्टम लांच किया गया था, इसकी सबसे बड़ी खासियत उपयोगकर्ता की जरूरत के हिसाब से मल्टीटास्किंग करना

भी थी। 32X32 पिक्सल (Pixels) के आइकन और कलर स्कीम इस ऑपरेटिंग सिस्टम की विशेषताएं रहीं।

- **विंडोज 1.2:** विंडोज 1.0 की कामयाबी के दो साल बाद यानी वर्ष 1987 में माइक्रोसॉफ्ट ने अपने ऑपरेटिंग सिस्टम का यह परिष्कृत स्वरूप पेश किया। इस ऑपरेटिंग सिस्टम की विशेषता यह थी कि इसमें विंडोज की ओवरलैपिंग (Overlapping) की सुविधा उपलब्ध थी। ओवरलैपिंग का मतलब यह है कि एक विंडो के उपर इसमें दूसरी विंडो खोली जा सकती थी।

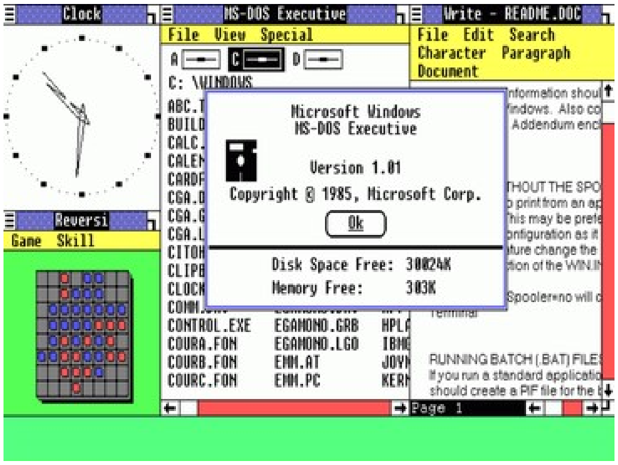

(विंडोज का पहला जीयूआई ऑपरेटिंग सिस्टम विंडोज 1.0)

- **विंडोज 2.10:** वर्ष 1987 में ही माइक्रोसॉफ्ट कंपनी ने अपना अगला ऑपरेटिंग सिस्टम विंडोज 2.10 ऑपरेटिंग सिस्टम के नाम से लांच किया। इस ऑपरेटिंग सिस्टम की खासियत रही आभासी मशीन (Virtual Machines) इस मशीन का तात्पर्य ऐसे सिस्टम से है जो मुख्य कंप्यूटर से जुड़कर एक ऐसी व्यवस्था बनाता है, जो पूरे ऑपरेटिंग सिस्टम पर निगरानी रखते हुए जरूरत के हिसाब से किसी काम को करने के लिए हार्डवेयर को इस तरह नियंत्रित करते हैं कि वे एक ही कंप्यूटर में अवस्थित होने के बावजूद अलग–अलग काम करने में सक्षम हों।
- **विंडोज 3.0:** माइक्रोसॉफ्ट ने वर्ष 1990 में यह ऑपरेटिंग सिस्टम जारी किया। ग्राफिकल यूजर इंटरफेस (GUI) इंटरफेस प्लेटफॉर्म पर यह विंडोज का सबसे सफल ऑपरेटिंग सिस्टम रहा। उस दौर के जीयूआई आधारित मैक और अमीगा ऑपरेटिंग सिस्टम के मुकाबले यह सिस्टम उतारा गया था, जो काफी हद तक उपयोगकर्ताओं को लुभाने में कामयाब भी रहा। इस ऑपरेटिंग सिस्टम में पहली बार आइकन आधारित प्रोग्राम मैनेजर

(Program Manager) और फाइल मैनेजर (File Manager) की व्यवस्था दी गई।

इससे पहले माइक्रोसॉफ्ट कंपनी के सभी पुराने ऑपरेटिंग सिस्टम में डॉस (DOS) आधारित फाइल और प्रोग्राम मैनेजर दिया जाता था। लेकिन विंडोज ऑपरेटिंग सिस्टम में ऐसी नयी सुविधाएं दी गई, जिनकी मदद से सिस्टम को केंद्रीयकृत (Centralised) करना आसान हो गया। इनके अलावा विंडोज का बेहद लोकप्रिय गेम सॉलिटेयर पहली बार इसी सिस्टम में लांच हुआ। यही नहीं, आज टाइपिंग के लिए सर्वाधिक प्रयोग किया जाने वाला नोटपैड, कैल्कुलेट और कलरबार तथा विशेष मेनु के साथ पेंटब्रश भी परिष्कृत स्वरूप में इसी ऑपरेटिंग सिस्टम में लांच किए गए।

- **विंडोज 3.1**: विंडोज का यह नया परिष्कृत ऑपरेटिंग सिस्टम वर्ष 1992 में पेश किया गया। इस सिस्टम की खासियत थी मल्टीमीडिया और नेटवर्किंग की क्षमता। खास बात यह थी कि इस सिस्टम में पहली बार माइक्रोसॉफ्ट मेल (Microsoft Mail) की सुविधा उपयोगकर्ताओं को मिली। इस सिस्टम में माइक्रोसॉफ्ट ने नोटपैड के लिए तीन फॉन्ट का इस्तेमाल किया, ये थेः Times New Roaman, Arial और Courior New इनके अलावा चिह्नों (Symbols) को भी शामिल किया गया।
- **विंडोज 3.11**: यह ऑपरेटिंग सिस्टम वर्ष 1993 में लांच किया गया था। इसकी खासियत यह थी कि इसमें 32 बिट नेटवर्किंग और 32 बिट फाइल सिस्टम की सुविधा उपलब्ध थी। इसके जरिये यह ऑपरेटिंग सिस्टम मल्टीटास्किंग के साथ मल्टीयूजर भी बन गया। इससे एक ही ऑपरेटिंग सिस्टम से एक साथ 20 से अधिक कंप्यूटरों को जोड़ना संभव हो सका। माइक्रोसॉफ्ट की ओर से यह ऑपरेटिंग सिस्टम इस तरह तैयार किया गया था कि यह पर्सनल कंप्यूटरों के अलावा नेटवर्किंग उपयोगकर्ताओं और ऑफिस में उपयोग के लिए तैयार किया गया था।
- **विंडोज 95**: वर्ष 1995 में माइक्रोसॉफ्ट ने विंडोज 95 ऑपरेटिंग सिस्टम लांच किया। यह पूर्णतः 32 बिट ऑपरेटिंग सिस्टम था, जिसकी मदद से मल्टीटास्किंग और नेटवर्किंग का काम और अधिक आसान होता गया। सबसे बड़ी खासियत यह थी कि इस सिस्टम में माइक्रोसॉफ्ट ने अपने शुरूआती सिस्टम डॉस (DOS) और विंडोज 3.1 के फीचर्स को संयुक्त करने में कामयाबी हासिल की। प्लग एंड प्ले फीचर इस विंडोज के सबसे बड़े साधन (Tools) थे। आज भी हम कंप्यूटर पर जो स्टार्ट बटन देखते हैं (जिस पर क्लिक करने के बाद कंप्यूटर पर मौजूद सभी प्रोग्राम, फाइल मैनेजर आदि की सारिणी खुल जाती है) वह सबसे पहले इसी विंडोज

ऑपरेटिंग सिस्टम में पेश किया गया था। यही नहीं, जब भी हम कोई प्रोग्राम बंद करना चाहते हैं तो उसके लिए हमें लंबी प्रोसेस के बजाय सीधे क्लोज (Close) बटन पर क्लिक करना होता है। यह क्लोज बटन भी सबसे पहले विंडोज 95 में ही शामिल किया गया था।

(विंडोज 95 ऑपरेटिंग सिस्टम का होमपेज)

- **विंडोज 98:** वर्ष 1998 में माइक्रोसॉफ्ट ने यह ऑपरेटिंग सिस्टम लांच किया। इस ऑपरेटिंग सिस्टम की सबसे बड़ी खासियत यह थी कि इसकी मदद से इंटरनेट का इस्तेमाल कर पाना संभव और सुगम हो सका।
  पहली बार इस ऑपरेटिंग सिस्टम में माइक्रोसॉफ्ट ने इंटरनेट एक्सप्लोरर (Internet Explorer) 4.01 दिया, इसके अलावा इंटरनेट पर इस्तेमाल की जा सकने वाली अन्य एप्लीकेशन जैसे आउटलुक एक्सप्रेस, विंडोज एक्सप्रेस बुक, फ्रंटपेज एक्सप्रेस, माइक्रोसॉफ्ट चैट, पर्सनल वेब सर्वर, वेब पब्लिशिंग विजार्ड, नेट मीटिंग भी इस ऑपरेटिंग सिस्टम में शामिल की गईं।
  विंडोज ने वर्ष 1999 में इस ऑपरेटिंग सिस्टम में कुछ और सुधार करते हुए विंडोज 98 सेकंड एडिशन (SE) लांच किया। इस सिस्टम में इंटरनेट एक्सप्लोरर को और अधिक परिष्कृत करते हुए 5.0 वर्जन पेश किया गया। इसके अलावा पिछले सिस्टम में शामिल नेट शो प्लेयर की जगह विंडोज मीडिया प्लेयर भी डाला गया।
- **विंडोज 2000 एमई:** इस ऑपरेटिंग सिस्टम का मूल आधार भी विंडोज 98 ही था। वर्ष 2000 में लांच किया गया यह ऑपरेटिंग सिस्टम इंटरनेट के

बढ़ते स्कोप को ध्यान में रखते हुए विकसित किया गया था। इसमें अधिकतर फीचर्स विंडोज 98 वाले ही थे, लेकिन इसमें यह सुविधा दी गई थी कि इसकी मदद से इंटरनेट पर नेटवर्किंग का काम आसान हो सके। यही वजह थी कि इसे विंडोज एनटी भी कहा जाता है। माइक्रोसॉफ्ट ने इस सिस्टम के चार वर्जन प्रोफेशनल, सर्वर, एडवांस्ड सर्वर और डाटा सर्वर लांच किए। इससे यह सिंगल यूजर से लेकर मल्टी यूजर तक के लिए उपयोगी ऑपरेटिंग सिस्टम बन सका।

- **विंडोज XP:** विंडोज एनटी फैमिली की अगली कड़ी के तौर पर वर्ष 2004 में यह ऑपरेटिंग सिस्टम लांच किया गया। शुरूआत में यह सिस्टम व्यावसायिक उपयोग के लिए ही तैयार किया जा रहा था, लेकिन पर्सनल कंप्यूटरों की बढ़ती मांग को देखते हुए इसे पर्सनल और व्यावसायिक दोनों उपयोग के लिए बनाया गया। इस सिस्टम की खासियत इसका बेहतर जीयूआई, सुधारीकृत हार्डवेयर सपोर्ट, विस्तृत मल्टीमीडिया श्रृंखला रहीं। विंडोज एक्सपी इस कदर लोकप्रिय हुआ कि लांचिंग के महज पांच साल के भीतर चार लाख कंप्यूटरों पर यह ऑपरेटिंग सिस्टम इंस्टॉल कर लिया गया था। वर्ष 2014 में पूरी तरह बंद होने तक यह ऑपरेटिंग सिस्टम प्रयोग करने वाले कंप्यूटर उपयोगकर्ताओं की संख्या दुनियाभर में दस लाख से भी अधिक हो चुकी थी।

विंडोज विस्टाः वर्ष 2007 में विंडोज का यह ऑपरेटिंग सिस्टम लांच किया गया। इसमें नेटवर्किंग की बेहतर सुविधाओं के साथ प्रिंट, ऑडियो प्ले, विंडोज डीवीडी मेकर जैसे नये फीचर्स भी शामिल किए गए। इस सिस्टम में सबसे अहम खासियत थी इसका ऐरो ग्लास लुक (Aero Glass Look) इसके तहत विंडोज के पिछले ऑपरेटिंग सिस्टम में चले आ रहे ग्राफिक यूजर इंटरफेस (Graphical User Interface) को रि–डिजाइन करने के साथ आकर्षक स्वरूप दिया गया। इसके तहत लेआउट में बदलाव के साथ एप्लीकेशन में भी उपयोगकर्ता के लिए उपयोगी परिवर्तन किए गए। संचार (Communication) के स्तर पर यह विंडो प्रोग्राम लिखने वाले विशेषज्ञों के लिए खासी मददगार साबित हुई। इसके अलावा इस विंडोज में नेटवर्किंग पर खासा ध्यान दिया गया था। इसके तहत इस ऑपरेटिंग सिस्टम की मदद से अलग–अलग कंप्यूटरों पर मल्टीमीडिया, फाइलों का आदान–प्रदान कर पाना संभव हो सका। लेकिन परेशानी यह थी कि इस विंडोज को चलाने के लिए सिस्टम में काफी हैवी हार्डवेयर की जरूरत होती थी।

इसके अलावा इसकी लाइसेंसिंग प्रक्रिया भी काफी जटिल थी। सुरक्षा के पहलू पर भी इसकी गुणवत्ता को लेकर सवाल उठते रहे। इसके बावजूद वर्ष 2009 में विंडोज के नये वर्जन विंडोज 7 की लांचिंग तक दुनियाभर में

चार लाख से अधिक इंटरनेट यूजर्स विस्टा का प्रयोग करने लगे थे। हालांकि, यह संख्या विंडोज एक्सपी से काफी कम थी।

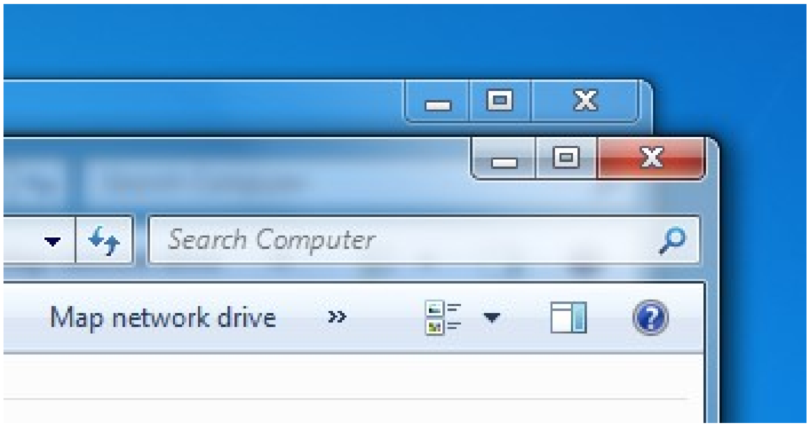

(विंडोज विस्टा का ऐरो ग्लास लुक)

- **विंडोज 7**: माइक्रोसॉफ्ट ने वर्ष 2009 में सिर्फ पर्सनल कंप्यूटर आधारित अपना पहला ऑपरेटिंग सिस्टम विंडोज 7 लांच किया। आलोचकों ने विंडोज विस्टा की जिन कमियों को उजागर (Point Out) किया था, कंपनी ने विंडोज 7 में उन्हें दूर करने पर फोकस किया।
  विंडोज ऐरो में लगातार सुधार के साथ इस सिस्टम में कुछ नये फीचर्स जोड़े गए, जिनमें इंटरनेट एक्सप्लोरर 8, विंडोज मीडिया प्लेयर, विंडोज मीडिया सेंटर, सुरक्षात्मक प्रक्रियाओं के लिए एक्शन सेंटर, नया रिडिजाइन्ड टास्कबार और लाइब्रेरी शामिल हैं। इस सिस्टम को इस तरह तैयार किया गया कि यह कंप्यूटर के हार्डवेयर और सॉफ्टवेयर के बीच बेहतर सामंजस्य स्थापित करने का जरिया बन सके। सबसे बड़ी बात यह थी कि जिन आलोचकों ने विंडोज विस्टा पर सवालिया निशान खड़े किए थे, उन्होंने ही विंडोज 7 को अब तक का बेहतरीन ऑपरेटिंग सिस्टम करार दिया।

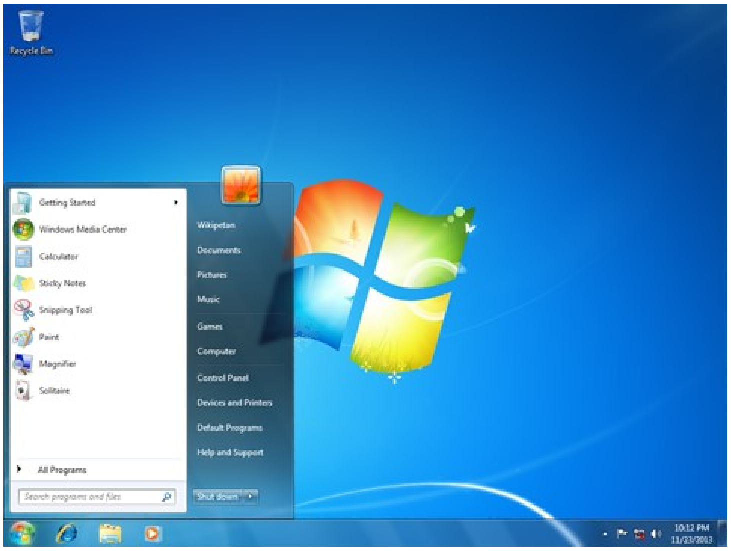

(विंडोज 7 की होमस्क्रीन)

विंडोज 7 माइक्रोसॉफ्ट कंपनी के लिए बेहतरीन वरदान साबित हुआ। विशेष पहलू यह है कि कंपनी ने ऑनलाइन रिटेल कंपनी अमेजन.कॉम पर अपने इस उत्पाद की बिक्री शुरू की थी और महज छह महीने के भीतर ही एक लाख से अधिक ग्राहकों ने यह ऑपरेटिंग सिस्टम खरीद लिया जो 2012 तक करीब साढ़े साठ लाख हो गए। ताजा आंकड़ों पर नजर डालें तो विंडोज 7 डेस्कटॉप ऑपरेटिंग सिस्टम के मार्केट में 47.77 प्रतिशत हिस्सेदारी रखता है। यह माइक्रोसॉफ्ट का सबसे अधिक उपयोग किया जाने वाला ऑपरेटिंग सिस्टम है।

- **विंडोज 8**: माइक्रोसॉफ्ट ने वर्ष 2012 में विंडोज 8 नाम से नया पर्सनल कंप्यूटर ऑपरेटिंग सिस्टम लांच किया। इसे हम निम्न चित्र से आसानी से समझ सकेंगे:

(विंडोज 8 ऑपरेटिंग सिस्टम की होमस्क्रीन)

यह सिस्टम दरअसल, इस तरीके से डिजाइन किया गया है कि यह टैबलेट का इस्तेमाल करने वाले उपभोक्ताओं के लिए मददगार साबित हो सके। मोबाइल फोन की दुनिया में इस समय तक एंड्रॉयड (Android) आईफोन ऑपरेटिंग सिस्टम (i-OS) विंडोज से काफी आगे निकल चुके थे। मूलतः विंडोज 8 का स्वरूप इस तरह रखा गया है कि इसे मेट्रो डिजाइन (Metro Design) कहा जाता है। इसकी होम स्क्रीन पर प्रोग्राम और एप्लीकेशन पिछली विंडोज की तरह सारिणी में दिखने के बजाय ग्रिड में नजर आते हैं, ठीक वैसे ही जैसे हमें अपने मोबाइल फोन में दिखते हैं। माइक्रोसॉफ्ट ने इस ऑपरेटिंग सिस्टम को इस तरह तैयार किया है कि यह माउस के साथ अंगुलियों से छूकर भी परफॉर्म (Perform) करे, यानी यह ऑपरेटिंग सिस्टम टचस्क्रीन (Touchscreen) प्रकिया पर काम करता है। इसके अलावा सुरक्षा की दृष्टि से इस ऑपरेटिंग सिस्टम में इन–बिल्ट (In Built) एंटीवायरस (Antivirus) उपलब्ध है, साथ ही यह माइक्रोसॉफ्ट स्मार्टस्क्रीन फिशिंग फिल्टरिंग (Microsoft Smart Screen Phishing Filtering) सिस्टम से भी ऑनलाइन जुड़ सकता है, जो वायरस से इस सिस्टम की रक्षा करता है। जुलाई 2015 में माइक्रोसॉफ्ट ने अपना नवीनतम ऑपरेटिंग सिस्टम विंडोज 10 लांच किया है।

- **ऑपरेटिंग सिस्टम का बाजार (Market Share of OSs)**

कंप्यूटर और मोबाइल फोन के बढ़ते इस्तेमाल ने दुनिया को ग्लोबल विलेज (Global Village) की शक्ल दे दी है। टनों वजनी मशीन से प्रारंभ हुई कंप्यूटर की विकास यात्रा आज महज 100–150 ग्राम वजनी मोबाइल फोन तक आ चुकी है। इसके पीछे जहां वैज्ञानिक शोधों–अनुसंधानों का परिणाम है, वहीं इसके पीछे लगातार परिष्कृत होते गए ऑपरेटिंग सिस्टम भी महत्वपूर्ण हैं। इन दिनों दुनियाभर में कंप्यूटरों और मोबाइल फोन में इस्तेमाल किए जा रहे ऑपरेटिंग सिस्टम के कितने उपभोक्ता हैं और बाजार में कौन सा ऑपरेटिंग सिस्टम कितना शेयर रखता है, यह हम निम्न सारिणी से समझ सकते हैं:

ऑपरेटिंग सिस्टम	**उपभोक्ता (मिलियन में)**
एंड्रॉयड	878
विंडोज	328
मैक और आईफोन	267
ब्लैकबेरी	24
अन्य	803
कुल	2300

(नोटः यह आंकड़े वर्ष 2013 के हैं, स्रोतः गूगल)

22.4: ओएस के घटक (Components of OS)

विकीपीडिया (Wikipedia) पर नजर डालें तो उसमें ऑपरेटिंग सिस्टम की परिभाषा कुछ यूं दी गई है, 'ऑपरेटिंग सिस्टम किसी कंप्यूटर का मेरूदंड होता है, जो इसके सॉफ्टवेयर और हार्डवेयर को नियंत्रित रखता है। यह हार्डवेयर और सॉफ्टवेयर के बीच सेतु का काम करता है और सॉफ्टवेयर घटक होता है। इसकी मदद से एक से अधिक सीपीयू में भी प्रोग्राम चलाए जा सकते हैं।

इस यूनिट के अध्ययन के जरिये अब तक हम ऑपरेटिंग सिस्टम के कार्य, उसके प्रकार, ऑपरेटिंग सिस्टम के महत्व आदि से अच्छी तरह वाकिफ हो चुके हैं। लेकिन यह जानना भी हमारे लिए बहुत आवश्यक है कि ऑपरेटिंग सिस्टम के मुख्य घटक (Components) क्या हैं। यूनिट के इस हिस्से में हम इन्हीं घटकों के बारे में विस्तार से जानेंगे। ये घटक

ऑपरेटिंग सिस्टम के वे हिस्से हैं, जिनकी बदौलत ऑपरेटिंग सिस्टम कंप्यूटर के सॉफ्टवेयर यानी एप्लीकेशन प्रोग्राम और हार्डवेयर यानी सीपीयू के बीच बेहतर सामंजस्य स्थापित करने में सफल हो पाता है।

कर्नल (Kernel)

कर्नल किसी ऑपरेटिंग सिस्टम का सबसे अहम और केंद्रीय (Central) भाग है। यानी ऑपरेटिंग सिस्टम की जो भी गतिविधियां होती हैं, वे सब कर्नल के ही इर्द–गिर्द होती हैं या यूं भी कह सकते हैं कि कर्नल की वजह से ही ऑपरेटिंग सिस्टम ठीक से काम कर पाता है। हालांकि, इस सबके बावजूद कंप्यूटर उपयोगकर्ता (User) कभी भी न तो कर्नल को देख पाता है, न ही इसे महसूस कर सकता है, क्योंकि यह नेपथ्य (Behind The Scene) रहकर काम करता है। किसी ऑपरेटिंग सिस्टम में कर्नल किस तरह काम करता है, यह हम निम्नवत ग्राफ से समझ सकते हैं:

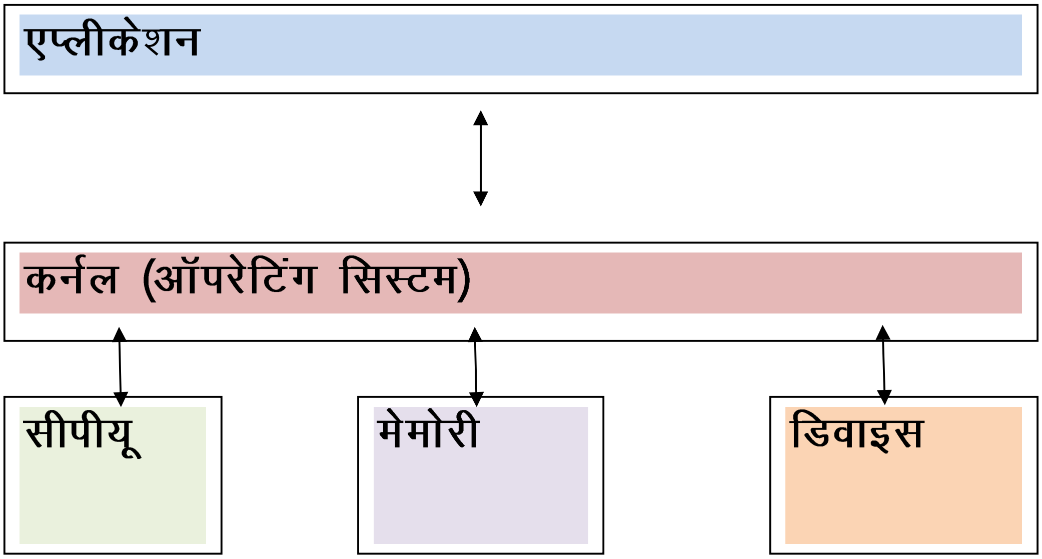

सामान्य शब्दों में यह भी कहा जा सकता है कि कर्नल ही किसी ऑपरेटिंग सिस्टम की बुनियाद है। इसकी मदद से ही ऑपरेटिंग सिस्टम यह तय कर पाता है कि किसी एप्लीकेशन सॉफ्टवेयर के लिए कब–किस वक्त पर कौन सा हार्डवेयर समुचित परिणाम प्राप्त करने के लिए इस्तेमाल करने की जरूरत होगी। हम जब भी कंप्यूटर ऑन करते हैं, वह कर्नल ही है जो सिस्टम को रिबूट (Reboot) करता है, मेमोरी को चेक करता है, किसी प्रोग्राम के लिए मेमोरी लोकेट (Locate) करना या नहीं करना यह सब कर्नल की मदद से ही संभव हो पाता है। अब कर्नल (ऑपरेटिंग सिस्टम) किसी एप्लीकेशन सॉफ्टवेयर की मदद में किस तरह पूरी प्रक्रिया करता है, इसे हम निम्न बिंदुओं में समझ सकेंगे:

- **प्रोग्राम एक्जीक्यूशन (Program Execution):** एक्जीक्यूशन का हिन्दी अर्थ होता है निष्पादन या प्रक्रिया यानी किसी काम को संपन्न करना या करने का तरीका। अब हम यह भली–भांति जानते हैं कि ऑपरेटिंग सिस्टम का मुख्य काम एप्लीकेशन प्रोग्राम और कंप्यूटर हार्डवेयर के बीच सामंजस्य बनाना है। इसमें कर्नल सबसे अधिक मददगार साबित होता है। दरअसल, कर्नल ही ऑपरेटिंग सिस्टम का वह हिस्सा है जो प्रोग्राम के लिए मेमोरी स्पेस तय करता है, इसके लिए जरूरी हार्डवेयर उपलब्ध करवाता है, मल्टीटास्किंग सिस्टम में एक से अधिक एप्लीकेशन के लिए टाइम शेयरिग (Time Sharing) करता है, उपयोगकर्ता की ओर से मिलने वाले निर्देशों को बाइनरी कोड में तब्दील कर हार्डवेयर, सीपीयू तक पहुंचाता है और फिर परिणाम हासिल कर उन्हें दोबारा हाई लेवल लैंग्वेज में बदलकर उपयोगकर्ता के समझने लायक बनाता है।
- **व्यवधान (Interrupt):** प्रोग्राम एक्जीक्यूशन के दौरान कई बार हार्डवेयर और एप्लीकेशन प्रोग्राम के बीच बाधाएं या व्यवधान उत्पन्न होते हैं। दरअसल, ये व्यवधान सिग्नल (Signal) के रूप में होते हैं, जो हार्डवेयर से ऑपरेटिंग सिस्टम को या एप्लीकेशन प्रोग्राम से ऑपरेटिंग सिस्टम को मिलते हैं। ये सिग्नल असल में तब आते हैं, जब किसी प्रोग्राम को चलाने के लिए किसी खास हार्डवेयर की जरूरत होती है या एक्जीक्यूशन के दौरान हार्डवेयर प्रोग्राम एप्लीकेशन के किसी खास हिस्से को और बेहतर समझना चाहता है। ऐसी स्थिति में यह कर्नल की जिम्मेदारी है कि वह तुरंत प्रक्रिया जहां तक पहुंची है, वहीं रोक दे, लेकिन जितनी प्रोसेसिंग हो चुकी है, उसे सुरक्षित (Save) भी रखे। इसके बाद कर्नल हार्डवेयर के लिए जरूरी प्रोग्राम या प्रोग्राम के लिए जरूरी हार्डवेयर को तलाशकर प्रक्रिया को दोबारा वहीं से शुरू करवाता है, जहां वह रुकी थी।
- **मोड (Modes):** आधुनिक सीपीयू (Central Processing Unit) कई मोड पर काम करती हैं। इनमें यूजर मोड (User Mode) और सुपरवाइजर मोड (Supervisor Mode) प्रमुख हैं। सुपरवाइजर मोड में कर्नल खुद ही सभी प्रोग्राम के एक्जीक्यूशन के लिए जरूरी निर्णय लेता है और हार्डवेयर को निर्देश प्रदान करता है। दूसरी ओर कुछ प्रोग्राम एप्लीकेशन ऐसे होते हैं, जो कर्नल की मदद के बिना खुद ही सीधे ऑपरेटिंग सिस्टम की लाइब्रेरी और अन्य संसाधनों का उपयोग करते हैं। अब ऐसे किसी प्रोग्राम के संचालन की स्थिति में कंप्यूटर सिस्टम भ्रमित न हो और वह क्रैश (Crash) न हो जाए, यह सुनिश्चित करता है कर्नल। कर्नल यूजर मोड और सुपरवाइजर मोड के बीच एक लक्ष्मणरेखा सी खींच देता है, जिससे किसी एप्लीकेशन के स्वतंत्र रूप से काम करने के दौरान कर्नल के स्तर पर कोई बाधा उत्पन्न न हो।

- **मेमोरी प्रबंधन (Memory Management)**: हम जानते हैं कि मल्टीटास्किंग सिस्टम का तात्पर्य एक ऐसे सिस्टम है, जिस पर एक ही समय में एकसाथ एक से अधिक प्रोग्राम संचालित किए जा सकें। अब यदि इसे मानवीय उदाहरण के जरिये समझने की कोशिश करें तो हम जानेंगे कि जब कभी हम एक ही समय में एक साथ दो या दो से अधिक काम करने लगते हैं तो आशंका इस बात की अधिक रहती है कि हमारा कोई काम या तो अधूरा रह जाएगा या पूरा ध्यान नहीं दे पाने के कारण प्रारंभ ही नहीं होगा। कंप्यूटर सिस्टम में ऐसी स्थिति से ऑपरेटिंग सिस्टम को बचाता है कर्नल। कर्नल एक से अधिक प्रोग्राम चलने पर यह सुनिश्चित करता है कि सिस्टम की पूरी मेमोरी का सही उपयोग हो। इसके लिए वह हर प्रोग्राम को जरूरत के हिसाब से मेमोरी उपलब्ध कराता है। यही नहीं, यह भी तय करता है कि जिस वक्त किसी खास मेमोरी लोकेशन पर कोई एक प्रोग्राम एक्जीक्यूट (Execute) हो रहा है, उसी मेमोरी लोकेशन पर दूसरा प्रोग्राम न जा सके।
- **मल्टीटास्किंग (Multitasking)**: हम जब भी किसी कंप्यूटर पर एक साथ एक से अधिक प्रोग्राम चलाते हैं, तो हमें भले ही यह अनुभूति (Experience) होती है कि दोनों प्रोग्राम एकसाथ एक ही समय पर चल रहे हैं, लेकिन दरअसल दोनों अलग–अलग समय पर चलते हैं। होता यह है कि यह सब एक्जीक्यूशन इतनी तेजी से और इतने व्यवस्थित ढंग से होता है कि समय का यह अंतर बेहद नगण्य होता है। प्रोग्राम संचालन की यह समय व्यवस्था भी कर्नल की बदौलत संभव हो पाती है। कर्नल ही तय करता है कि किस प्रोग्राम के एक्जीक्यूशन के लिए कितना समय लगने वाला है। वह एक से अधिक प्रोग्राम के संचालन के लिए समय निर्धारण (Time Scheduling) करता है, जिससे मल्टीटास्किंग संभव होती है। एक प्रोग्राम पहले से चल रहे दूसरे प्रोग्राम के संपन्न होने तक कतार (Queue) में रहता है।
- **डिस्क एक्सेस–फाइल सिस्टम (Disk Access-File System)**: हम जब भी कंप्यूटर खोलते हैं तो उसमें सी, डी, ई, एफ, सीडी के आइकन नजर आते हैं। इनमें से सी, डी, ई, एफ.... आदि उस हार्डडिस्क ड्राइव के भाग हैं, जो कंप्यूटर की मेमोरी और सीपीयू का हिस्सा है। सीडी या डीवीडी ड्राइव कंप्यूटर की एक्सटर्नल मेमोरी का हिस्सा है। अब ऑपरेटिंग सिस्टम का यह काम है कि किसी डाटा को फाइल की शक्ल में इन मेमोरी में सुरक्षित रखे।

  इस पूरी प्रक्रिया को फाइल सिस्टम (File System) कहा जाता है, जिसमें उपयोगकर्ता को यह सहूलियत मिलती है कि वह किसी डाटा, सूचना, परिणाम को फाइल की शक्ल में सुरक्षित रखे और इसे नाम या चिह्नों की मदद से पहचान दे। अब जब भी कोई प्रोग्राम कंप्यूटर पर चलता है तो कर्नल तय करता है कि प्रोग्राम

के लिए कौन सा डाटा उपयुक्त है और यह फाइल सिस्टम में कहां उपलब्ध है। इसके बाद हार्डवेयर और एप्लीकेशन आसानी से संबंधित जानकारी तक पहुंच सकते हैं।

- **डिवाइस ड्राइवर्स (Device Drivers)**: डिवाइस ड्राइवर ऑपरेटिंग सिस्टम का अहम हिस्सा हैं। ये भी दरअसल कुछ खास तरह के प्रोग्राम हैं, जो किसी खास एप्लीकेशन की मदद में हार्डवेयर के लिए तैयार किए जाते हैं। किसी प्रोग्राम को चलाने के दौरान कौन सा हार्डवेयर किस तरह काम करेगा, यह इन ड्राइवर के जरिये तय किया जाता है। यही वजह है कि अकसर एप्लीकेशन प्रोग्राम के लिए अलग डिवाइस ड्राइवर कंप्यूटर में इंस्टॉल करने की जरूरत पड़ती है। कंप्यूटर ऑपरेटिंग सिस्टम के पुराने वर्जनों में अकसर यह होता था कि डिवाइस ड्राइवर किसी प्रोग्राम के चलने पर खुद ही एक्जीक्यूशन शुरू कर देते थे। लेकिन विंडोज के विस्टा वर्जन की लांचिंग के बाद से ऑपरेटिंग सिस्टम में बदलाव किया गया है। इसके तहत अब डिवाइस ड्राइवर प्रोग्राम के चलने पर कर्नल की मदद लेते हैं। कर्नल एक बार एक्जीक्यूशन शुरू हो जाने के बाद खुद को प्रक्रिया से अलग कर लेता है और प्रक्रिया पूरी हो जाने या प्रक्रिया के बीच कोई अगला निर्देश नहीं मिलने तक डिवाइस ड्राइवर को अपने स्तर पर ही काम करने की स्वतंत्रता प्रदान करता है।

• नेटवर्किंग (Networking)

हम जानते हैं कि विकास के अनुक्रम में कंप्यूटर मल्टीयूजर, मल्टीटास्किंग मशीन बन चुका है। इसीका एक स्वरूप है नेटवर्किंग। नेटवर्किंग का तात्पर्य उस व्यवस्था से है जो एक से अधिक कंप्यूटरों को एक–दूसरे के बीच डाटा एक्सचेंज (Data Exchange) की सुविधा प्रदान कर सके। ये कंप्यूटर या तो तारों के जाल के जरिये एक–दूसरे से जुड़े हो सकते हैं या फिर वायरलेस (Wireless) नेटवर्क की मदद से, जिसे नेटवर्क नोड (Network Nodes) कहा जाता है। इस प्रक्रिया में पर्सनल कंप्यूटर, सर्वर, फोन आदि कुछ भी जोड़ा जा सकता है। आज के दौर में नेटवर्क का सर्वाधिक प्रचलित स्वरूप है इंटरनेट, जिसके बारे में हम आगे विस्तार से जानेंगे।

• सुरक्षा (Security)

कंप्यूटर की बढ़ती जरूरतों और दैनन्दिन मानव जीवन में उपयोग की वजह से आधुनिक दौर के ऑपरेटिंग सिस्टम ऐसे असंख्य संसाधनों (Resources) को कंप्यूटर पर मौजूद एप्लीकेशन को चलाने की आजादी प्रदान करते हैं। लेकिन इस पूरी प्रक्रिया के बीच ऑपरेटिंग सिस्टम यह भी तय करते हैं कि प्रोग्राम संचालन के लिए उन्हें नेटवर्क के जरिये

जो भी निर्देश मिलते हैं, वे अनुमतियोग्य हैं भी या नहीं। यही वजह है कि आज के दौर के अधिकतर ऑपरेटिंग सिस्टम ऐसे सुरक्षा फीचर्स से लेस हैं, जो कंप्यूटर सिस्टम पर किसी भी तरह के अनधिकृत गतिविधियों को रोक सकती हैं। कंप्यूटर पर यूजर एकाउंट, मोबाइल फोन पर फिंगरप्रिंट एक्सेस, ईमेल पर ईमेल–पासवर्ड आदि ऐसे ही फीचर्स हैं, जिनसे गुजरने के बाद ही कोई उपयोगकर्ता कंप्यूटर एप्लीकेशन और हार्डवेयर का इस्तेमाल कर पाता है।

विंडोज ऑपरेटिंग सिस्टम की बात करें तो इनमें एन्टी फिशिंग फिल्टर (Anti Phishing Filter) इंटरनेट एक्सप्लोरर में पहले से मौजूद होता है। फिशिंग वह प्रक्रिया है, जिसके जरिये उपयोगकर्ता की व्यक्तिगत (Personal) जानकारी, जैसे– डेबिट कार्ड का पिनकोड, ई–मेल के पासवर्ड आदि, निकालने का प्रयास किया जाता है। एन्टी फिशिंग फिल्टर की मदद से इंटरनेट एक्सप्लोरर इस तरह की गतिविधियों को पहचान कर उन्हें नुकसान पहुंचाने से पहले ही रोक देता है। इसके अलावा विंडोज सिस्टम फायरवॉल (Firewall) से सुसज्जित होता है, जिसकी मदद से वायरस से बचा जा सकता है। हालांकि, फायरवॉल कंप्यूटर में पहले से स्थापित और इंटरनेट तक सूचनाएं पहुंचाने में सक्षम प्रोग्रामों को नियंत्रित नहीं करता है। ऐसे में अधिकतर उपयोगकर्ता बाह्य फायरवॉल को कंप्यूटर इंस्टॉल करते हैं। विंडोज डिफेंडर भी विंडोज ऑपरेटिंग सिस्टम का हिस्सा है। यह स्वयं काम करता है और किसी भी तरह की अनधिकृत प्रक्रिया की सूचना उपयोगकर्ता तक पहुंचा देता है। इसके अलावा एक्शन सेटिंग (Action Settings) के जरिये उपयोगकर्ता को यह सुविधा मिलती है कि वह ऑपरेटिंग सिस्टम में प्रदत्त सुरक्षा व्यवस्था को अपनी सहूलियत के अनुरूप शुरू या बंद कर सके।

• यूजर इंटरफेस (User Interface)

हम जानते हैं कि कंप्यूटर हमारी यानी मानवों की भाषा नही समझ सकता, न ही हम कंप्यूटर की बाइनरी भाषा को समझ सकते हैं। ऐसे में यह जरूरी हो जाता है कि कंप्यूटर और इसे उपयोग करने वाले के बीच कुछ ऐसा अंतराफलक (Interface) हो, जो एक–दूसरे को समझ नहीं पाने के बावजूद दोनों के बीच बेहतर समझदारी विकसित कर सके। यही प्रक्रिया यूजर इंटरफेस कहलाती है और कंप्यूटर–मानव संबंध में यही ऑपरेटिंग सिस्टम की बड़ी जिम्मेदारी है।

कंप्यूटर के विकास के क्रम में इसकी शुरुआत चिह्नों, संकेतकों, अक्षरों से हुई थी और मौजूदा दौर के अधिकतर ऑपरेटिंग सिस्टम ग्राफिकल यूजर इंटरफेस (Graphical User Interface) का इस्तेमाल करते हैं, जिसमें आइकन के जरिये प्रोग्राम एप्लीकेशन और उपयोगकर्ता के बीच बेहतर संबंध बन पाता है। यूजर मॉनीटर पर नजर आने वाले

आइकन के जरिये किसी फाइल, प्रोग्राम या डाटा को आसानी से पहचान सकता है और उस पर क्लिक कर अभीष्ट परिणाम हासिल करता है।

22.5: इंटरनेट (Internet)

कंप्यूटर के मानव जीवन का अभिन्न अंग बन जाने के बाद आज के दौर में शायद ही ऐसा कोई व्यक्ति होगा जो इंटरनेट (Internet) से परिचित न हो या जिसने इस सुविधा का कभी इस्तेमाल नहीं किया हो। हम जानते हैं कि नेटवर्किंग वह व्यवस्था है, जिसमें एक से अधिक कई कंप्यूटरों को डाटा एक्सचेंज के लिए आपस में जोड़ा जा सकता है, लेकिन इस तरह की नेटवर्किंग की सीमाएं तय हैं। इस तरह का नेटवर्क किसी एक संस्थान में, ऑफिस में, शिक्षण संस्थान में संभव है, जहां सभी कंप्यूटर एक–दूसरे से जुड़े हुए हों। अब इंटरनेट शब्द भी नेटवर्किंग से ही जुड़ा हुआ है, लेकिन इसका तात्पर्य किसी निश्चित या सीमित दायरे में कंप्यूटरों का एक–दूसरे से जुड़ना ही नहीं है। बल्कि यह नेटवर्कों का एक ऐसा नेटवर्क (Ntwork of Networks) है, जो असीमित है। इसमें आम आदमी से लेकर निजी संस्थाओं, शैक्षणिक संस्थानों, कंपनियों, व्यापार, स्वास्थ्य, खेल–मनोरंजन समेत जीवन के हर आयाम की जानकारियों का स्थानीय से लेकर वैश्विक (Global) पहुंच का जाल है जो इंटरनेट प्रोटोकॉल (Internet Protocol), वर्ल्ड वाइड वेब (World Wide Web) इलेक्ट्रॉनिक मेल (E-mail), टेलीफोन के जरिये दुनियाभर के कंप्यूटरों से जुड़ा हुआ है। कंप्यूटरों के बीच यह जुड़ाव वायरलेस, इलेक्ट्रिक और ऑप्टिकल तकनीक के माध्यम से संपन्न होता है।

• इंटरनेट का संक्षिप्त इतिहास (Internet's Brief History)

इंटरनेट की शुरुआत कब, कैसे हुई यह हम निम्न बिन्दुओं से समझेंगे:

- वर्ष 1969 में अमेरिकी रक्षा विभाग ने एडवांस रिसर्च प्रोजेक्ट एजेंसी (Advanced Research Project Agency- ARPA) नाम से एक नेटवर्क लांच किया, यह नेटवर्क युद्धकाल में गोपनीय सूचनाओं के त्वरित आदान–प्रदान के उद्देश्य से तैयार किया गया था
- एआरपीए की कामयाबी के बाद इसे रक्षा मामलों से इतर सामान्य जनजीवन के लिए उपयोग करने लायक बनाने का प्रोजेक्ट प्रारंभ किया गया। तब इसे नाम दिया गया एडवांस रिसर्च प्रोजेक्ट एजेंसी नेटवर्क (ARPANET) अमेरिकी वैज्ञानिक लियोनॉर्ड क्लिनरॉक और पॉल बैरन तथा ब्रिटिश वैज्ञानिक डोनाल्ड डेविस और लॉरेंस रॉबर्ट्स ने इस सिस्टम का कांसेप्ट डिजाइन किया था
- ARPANET में कार्यरत अमेरिकी वैज्ञानिक रेमंड सैमुअल टॉम्लिनसन या रे टॉम्लिनसन ने नेटवर्क के लिए पहला फाइल ट्रांसफर प्रोग्राम (FTP) सीपीवाईनेट

(CPYNET) तैयार किया। इसके जरिये ARPANET से जुड़े कंप्यूटरों पर सूचनाओं का आदान–प्रदान संभव हो सका। टॉम्लिनसन ने ही सबसे पहले 1972 में ई–मेल की शुरुआत की। हालांकि, प्रारंभ में इस तरह की ई–मेल उसी उपयोगकर्ता को भेजी जा सकती थी, जो उसी कंप्यूटर को प्रयोग करता हो, जिससे ई–मेल भेजी गई है। यानी ई–मेल भेजने के बाद उसे खोलने के लिए उसी कंप्यूटर काम करना जरूरी था। इस दिक्कत से निजात के लिए टॉम्लिनसन ने @ की ईजाद की। इसके बाद ई–मेल को एक से दूसरे कंप्यूटर और बाद में एक से दूसरे देश तक भेजना सरल हो गया।

- 1979 में ब्रिटिश डाकघर इंटरनेट तकनीक का इस्तेमाल करने वाला पहला संस्थान बना
- 1984 तक 1000 से अधिक कंप्यूटर इंटरनेट तकनीक से जोड़े जा चुके थे, धीरे–धीरे यह तकनीक तेजी से बढ़ने लगी और लोग इससे जुड़ने लगे
- 1985 में अमेरिका ने नेशनल साइंस फाउंडेशन नेटवर्क (NSFNET) प्रोजेक्ट शुरु किया। इसके बाद इंटरनेट तकनीक का तेजी से विकास हुआ और यह दुनियाभर में फैलती चली गई।
- हमारे देश भारत में वर्ष 1980 में इंटरनेट की शुरुआत हुई, जब एजुकेशन एंड रिसर्च नेटवर्क (ERNET) प्रोजेक्ट प्रारंभ हुआ। इस प्रोजेक्ट को भारत सरकार और संयुक्त राष्ट्र के विकास कार्यक्रम (UNDP) की मदद से प्रारंभ किया गया।
- 15 अगस्त 1995 को विदेश संचार निगम लिमिटेड (VSNL) ने गेटवे सिस्टम शुरु कर इंटरनेट सुविधा भारत में आम उपयोग के लिए उपलब्ध कराई। इसके बाद से देश में इंटरनेट सुविधा लगातार बढ़ती गई। आज भारत संचार निगम लिमिटेड समेत कई मोबाइल कंपनियां, ब्रॉडबैंड कंपनियां इंटरनेट सुविधा दे रही हैं, जिनसे 13 करोड़ से अधिक लोग जुड़ चुके हैं। उल्लेखनीय पहलू यह है कि दुनिाभर के देशों में इंटरनेट इस्तेमाल करने वाले लोगों की संख्या के मामले में भारत का हिस्सा 13.5 प्रतिशत है। आम आदमी तक इंटरनेट की पहुंच के हिसाब से अमेरिका दुनिया का सबसे बड़ा देश है। वहां की कुल आबादी 31 करोड़ से कुछ अधिक है, जबकि इंटरनेट सुविधा से 24 करोड़ से अधिक लोग जुड़े हुए हैं।

इंटरनेट कनेक्शन के प्रकार (Types of Internet Connection)

इंटरनेट की मदद से हम घर बैठे अपने कंप्यूटर पर दुनियाभर की सूचनाएं पलक झपकते ही हासिल कर सकते हैं। लेकिन कंप्यूटर पर इंटरनेट सुविधा प्राप्त करने के लिए हमें इंटरनेट कनेक्शन की आवश्यकता होती है। आधुनिक दौर में डेस्कटॉप से लेकर लैपटॉप, गेमिंग कन्सोल, टैबलेट्स, मोबाइल फोन तक में इंटरनेट कनेक्शन का इस्तेमाल किया

जाता है। यह उपयोगकर्ता पर निर्भर करता है कि वह किस तरह के इंटरनेट कनेक्शन से जुड़ना चाहता है। कुछ प्रमुख कनेक्शन निम्नवत हैं:

- **डायलअप कनेक्शन (Dial Up Connection)**: इस प्रक्रिया में उपभोक्ता का कंप्यूटर फोन लाइन के जरिये जोड़ा जाता है। इस तरह के कनेक्शन को एनालॉग (Analog) कनेक्शन कहा जाता है। इस कनेक्शन के जोड़ने के बाद फोन का इस्तेमाल करना संभव नहीं होता। हालांकि, गति धीमी होने के कारण अब इस कनेक्शन का प्रचलन लगभग खत्म हो चुका है।
- **ब्रॉडबैंड कनेक्शन (Broadband Connection)**: ब्रॉडबैंड कनेक्शन सबसे ज्यादा तीव्र गति वाला इंटरनेट कनेक्शन है। इसमें भारी मात्रा में सूचनाएं भेजने के लिए एक से अधिक डाटा चैनलों का इस्तेमाल किया जाता है। ब्रॉडबैंड ब्रॉड बैंडविथ (Broad Bandwidth) का संक्षिप्त रूप है। केबल और टेलीफोन कंपनियां ब्रॉडबैंड सेवाएं उपलब्ध कराती हैं।
- **डीएसएल कनेक्शन (DSL Connection)**: डीएसएल कनेक्शन की फुलफॉर्म है, डिजिटल सब्सक्राइबर लाइन (Digital Subscriber Line) इस कनेक्शन में उपभोक्ता के घर में उपलब्ध दो तारों वाली टेलीफोन लाइन का इस्तेमाल किया जाता है। इससे यह सुविधा लैंडलाइन कनेक्शन के साथ ही उपलब्ध हो जाती है। डायल अप कनेक्शन से इतर इस व्यवस्था में इंटरनेट के इस्तेमाल के दौरान उपभोक्ता लैंडलाइन फोन का भी प्रयोग कर सकता है।
- **वायरलेस कनेक्शन (Wireless Connection)**: जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है कि इस तरह के कनेक्शन में तारों की मदद नहीं ली जाती है। इसमें केबल या टेलीफोन नेटवर्क के बजाय रेडियो तरंगों (Radio Frequency) का प्रयोग किया जाता है। इस कनेक्शन की सबसे बड़ी सुविधा यह है कि इसमें कनेक्शन हमेशा ऑन रहता है।
- **मोबाइल कनेक्शन (Mobile Connection)**: संचार क्रांति के दौर में अब इंटरनेट हर उपयोगकर्ता के हाथों तक आसान पहुंच बना चुका है। इसका जरिया बना है मोबाइल फोन। जीएसएम (GSM) 3जी, 4–जी जैसी नयी तकनीकों की मदद से अब हम मोबाइल, टैबलेट पर आसानी से इंटरनेट सुविधा हासिल कर सकते हैं।

• इंटरनेट के साधन (Tools of Internet)

इकाई के इस हिस्से हम उन साधनों को जानने का प्रयास करेंगे जो इंटरनेट सुविधा को सफल बनाने का काम करते हैं। इनमें किसी कंप्यूटर को इंटरनेट से जोड़ने वाले उपकरण

भी शामिल हैं तो कंप्यूटर पर इंटरनेट और संचार सुविधा संचालित करने वाले एप्लीकेशन प्रोग्राम भी। आइए, इनका संक्षिप्त परिचय लेते हैं:

- **मोडेम (Modem)**: मोडेम का विस्तारित शब्द है मॉडुलेटर डि मॉडुलेटर (Modulator-De-Modulator) यह एक ऐसा उपकरण है जो कंप्यूटर में मौजूद डिजिटल डाटा (Digital Data) को एनालॉग सिग्नलों (Analog Signal) में बदलता है। एनालॉग सिग्नल वे सिग्नल होते हैं, जो टेलीफोन लाइन या अन्य संचार माध्यम के जरिये एक से दूसरे स्थान तक भेजे जा सकते हैं। इसी तरह वह एनालॉग सिग्नल को डिजिटल डाटा में बदल देता है, ताकि कंप्यूटर सिग्नल को समझ सके।
- **वेब ब्राउजर (Web Browser)**: वेब ब्राउजर दरअसल एक तरह के सॉफ्टवेयर प्रोग्राम हैं, जो कंप्यूटर में ही स्थापित रहते हैं। इनकी मदद से उपभोक्ता इंटरनेट का इस्तेमाल सूचनाएं, डाटा की तलाश करने में कर पाता है। उदाहरणः इंटरनेट एक्स्प्लोरर, गूगल का गूगल क्रोम ब्राउजर,, मोजिला फायर फॉक्स, एप्पल सफारी आदि।
- **वर्ल्ड वाइड वेब (World Wide Web)**: हम जानते हैं कि वेब का अर्थ जाले से होता है। वर्ल्ड वाइड वेब का अर्थ सूचनाओं या डाटा के एक ऐसे जाल से है जो पूरी दुनिया में विस्तृत हो और कोई भी इंटरनेट उपयोगकर्ता इस डाटाबेस से अपनी जरूरत के मुताबिक सूचना हासिल कर सकता है। यह मूलतः डाटाबेस के अलग–अलग पेजों का एक समूह है जो शीर्षकों (Titles) में बंटे रहते हैं और जिन्हें वेबसाइट कहा जाता है।
- **वेबसाइट (Website)**: इंटरनेट पर कोई भी जानकारी डाटाबेस संबंधित पेजों के रूप में उपलब्ध रहती है, जिन्हें वेबसाइट कहा जाता है। ब्राउजर के जरिये उपयोगकर्ता इन वेबसाइट तक पहुंच सकता है। वेबसाइट जीवन के हर आयाम, पहलू पर आधारित होती हैं। खेल, मनोरंजन, विज्ञान अलग–अलग विषय की हजारों–लाखों वेबसाइट यानी पेज इंटरनेट पर उपलब्ध रहते हैं। शोधकार्यों के लिए ये वेबसाइट शोधार्थियों (Research Fellows) की खासी मददगार साबित होती हैं।
- **वेब पेज और एचटीएमएल (Webpage and HTML)**: एचटीएमएल एक उच्चस्तरीय प्रोग्रामिंग लैंग्वेज है, जो वेबपेज तैयार करने में काम आती है। वेबपेज क्या है, यह हम पहले ही जान चुके हैं। कोई भी वेबसाइट कई वेबपेजों का एक समूह हो सकता है। एचटीएमएल का विस्तृत शब्दरूप है हाइपर टेक्स्ट मार्कअप लैंग्वेज (Hypertext Markup Language)

- **एचटीटीपी (HTTP/ http)**: एचटीटीपी का विस्तृत शब्दरूप है हाइपर टेक्स्ट ट्रांसफर प्रोटोकॉल (Hypertext Transfer Protocol) यह प्रोटोकॉल दरअसल वर्ल्ड वाइड वेब में मौजूद डाटाबेस की बुनियाद है, हम जब भी ब्राउजर पर किसी वेबसाइट को सर्च करने के लिए किसी वेबसाइट का नाम लिखते हैं तो उसके आगे http:// लिखा जाता है। इसका तात्पर्य यह है कि उपयोगकर्ता वेब पर वह फाइल तलाशना चाहता है, जो एचटीएमएल भाषा में उपलब्ध हो। एचटीटीपी को वर्ल्ड वाइड वेब की आचार संहिता भी माना जाता है।
- **डोमेन नेम (Domain Name)**: इंटरनेट पर एक ही विषय से जुड़ी हजारों–लाखों वेबसाइट उपलब्ध होती हैं, ऐसे में इनमें से उपयोगकर्ता के वास्तविक उपयोग वाली वेबसाइट तलाशना लंबा समय और उर्जा खाने वाला काम बन जाता है। ऐसे में हर वेबसाइट को जो नाम दिया जाता है वह डोमेन नेम कहलाता है। वास्तव में डोमेन नेम इंटरनेट पर किसी वेबसाइट का पता होता है। ब्राउजर पर जब भी उपयोगकर्ता किसी वेबसाइट का नाम लिखता है तो ब्राउजर तुरंत लाखों वेबपेज में से संबंधित वेबपेज को आसानी से तलाश लेता है।
- अब जब भी हम ब्राउजर पर किसी वेबसाइट को तलाश करते हैं तो उसे इस तरह पूरा लिखा जाता है– www.facebook.com इसमें शुरूआती तीन अक्षर www बताते हैं कि हम जिस पेज की तलाश कर रहे हैं, वह वर्ल्ड वाइड वेब पर उपलब्ध है, जबकि बाकी के दो शब्द यानी facebook.com इस वेबपेज का डोमेन नेम है। किन्हीं भी दो वेबसाइट का डोमेन नेम कभी भी एकसमान नहीं हो सकता है। यही वजह है कि ब्राउजर पर वेबसाइट का पूरा नाम लिखते ही अभीष्ट वेबपेज तुरंत खुल जाता है।
- **यूआरएल (URL)**: यूआरएल यानी यूनिफॉर्म रिसोर्स लोकेटर (Uniform Resource Locator) किसी वेबसाइट का पूरा नाम यानी वर्ल्ड वाइड वेब पर उस वेबसाइट या वेबपेज का पूरा पता है। इसे हम इस उदाहरण से समझ सकते हैं। यदि हमें अपने विश्वविद्यालय यानी उत्तराखंड मुक्त विवि (Uttarakhand Open University) की वेबसाइट खोलनी है तो हम वेब ब्राउजर पर इस तरह लिखते हैं: http://www.uou.ac.in अब हम जानते हैं कि इस नाम के आखिरी तीन शब्द डोमेन नेम, पहले शब्द और चिहृन हाइपर टेक्स्ट प्रोटोकॉल और www वर्ल्ड वाइड वेब के परिचायक हैं। इन सभी से मिलकर वेबसाइट का जो पूरा पता बना है, वह यूआरएल कहलाता है।
- **सर्च इंजन (Search Engines)**: कई बार होता यह है कि उपयोगकर्ता को उस विषय की तो जानकारी रहती है, जिसके लिए उसे डाटा या सूचनाओं की आवश्यकता है, लेकिन उसे यह मालूम नहीं होता कि कौन सी वेबसाइट उसके

लिए उपयोगी होगी। कई बार उसे अभीष्ट वेबसाइट का नाम भी मालूम नहीं होता है। ऐसे में सर्च इंजन इंटरनेट उपयोगकर्ता के खासे मददगार साबित होते हैं।

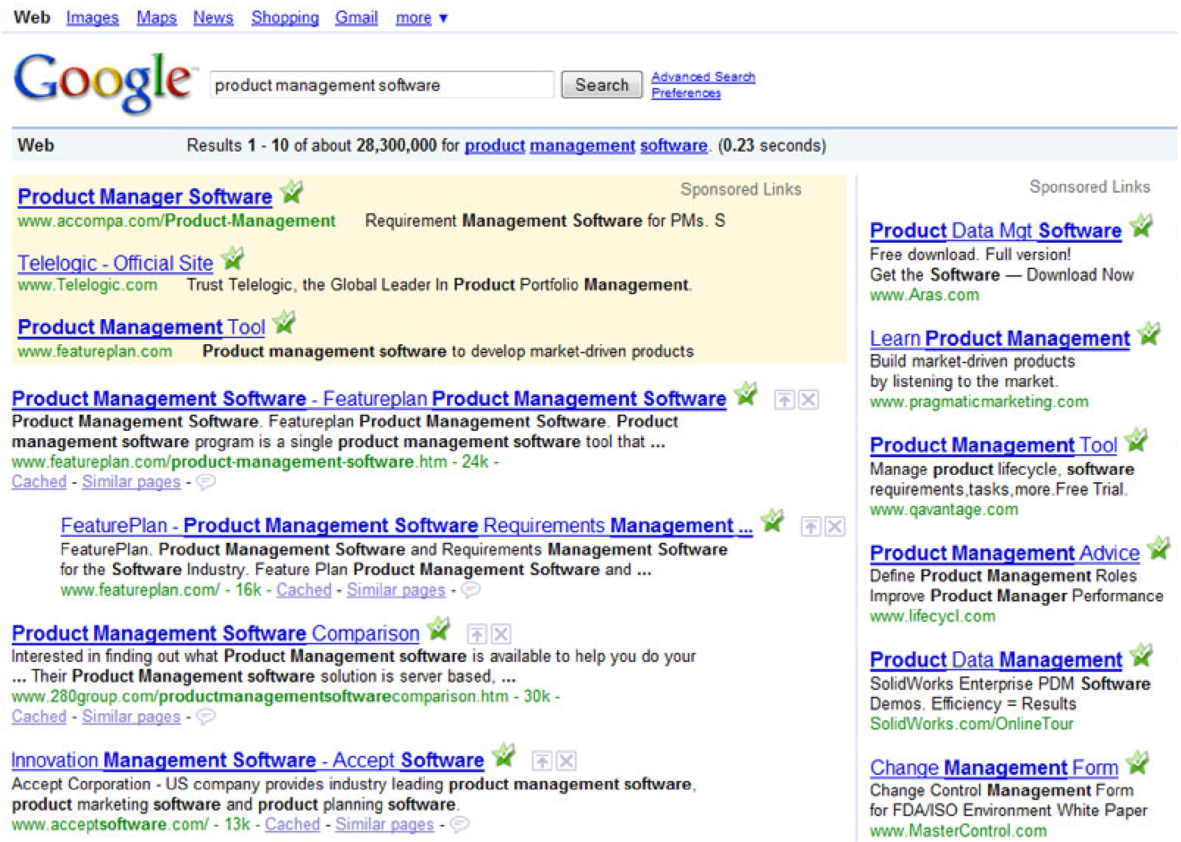

(गूगल सर्च इंजन पर इस तरह की वर्ड की मदद से साइट ढूंढी जाती हैं)

दरअसल, सर्च इंजन पर उपयोगकर्ता को वेबसाइट का पूरा नाम लिखने के बजाय सिर्फ कुछ कीवर्ड (Keywords) ही लिखने की जरूरत होती है। उदाहरण के लिए अगर उपयोगकर्ता समाज में बढ़ते अपराधों के विषय पर डाटा–सूचनाएं और जानकारी जुटाना चाहता है, लेकिन उसे नहीं मालूम है कि वह किस वेबसाइट पर जाए तो वह ब्राउजर पर क्राइम (Crime) या समाज (Society) या समाज में अपराध (Crime in Society) जैसे शब्द ही लिख सकता है। सर्च इंजन तुरंत इन शब्दों के आधार पर एक साथ कई वेबपेज की सूची उपलब्ध करा देता है, जिन पर क्लिक कर उपयोगकर्ता अभीष्ट जानकारी हासिल कर पाता है। गूगल, याहू, बिंग आदि ऐसे ही सर्च इंजन हैं।

- **ईमेल (E-mail):** ई–मेल, जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है कि यह एक ऐसी चिट्ठी या संदेश है जिसका स्वरूप इलेक्ट्रॉनिक यानी डिजिटल है। वास्तव में ई–मेल भी एक तरह का सॉफ्टवेयर है, जो उपयोगकर्ता को कोई संदेश दूसरे उपयोगकर्ता तक पहुंचाने की सुविधा देता है। ई–मेल दो प्रकार की होती हैं। पहली ब्राउजर आधारित, इस तरह की मेल में उपयोगकर्ता को इंटरनेट पर मौजूद ई–मेल सुविधा

देने वाली कंपनी से जुड़ना होता है। इसके लिए उपयोगकर्ता को संबंधित कंपनी में अपना विशेष खाता बनाना होता है। जीमेल, याहूमेल, रेडिफमेल, हॉटमेल ऐसी ही कंपनियां हैं जो ई–मेल सुविधा देती हैं। यह प्रक्रिया निःशुल्क होती है। इनसे जुड़ा उपयोगकर्ता इस तरह अपना ई–मेल खाता या ई–मेल आईडी बनाता हैः xyz@gmail.com दूसरी ई–मेल होती हैं उपभोक्ता आधारित। इस तरह की मेल कंप्यूटर में इंस्टॉल सॉफ्टवेयर पर ही उपलब्ध होती हैं। मसलन माइक्रोसॉफ्ट ऑफिस सॉफ्टवेयर पर आउटलुक, आउटलुक एक्सप्रेस आदि।

• इंटरनेट का सामाजिक प्रभाव (Socio Impact of Internet)

किसी भी सुविधा के दो पहलू होते हैं। हर काम, हर संसाधन के साथ सकारात्मक और नकारात्मक परिणाम जुड़े होते हैं, यह हम पर निर्भर करता है कि हम किस पहलू को अधिक तवज्जो देते हैं। इंटरनेट सुविधा भी इस सार्वभौमिक सत्य का अपवाद नहीं है।

पहले चर्चा करते हैं इंटरनेट के सकारात्मक पहलू की। इंटरनेट मानव समुदाय को संचार क्रांति का सबसे बड़ा उपहार है। आज आधुनिक दौर में यह एक ऐसा हथियार बन गया है जो दुनियाभर के मानव समुदाय में समभाव (Equalty) का जरिया है, चाहे वह जाति–धर्म के आधार पर हो या फिर अमीरी–गरीबी के आधार पर। इंटरनेट न तो छुआछूत देखता है न सामाजिक स्थिति के हिसाब से किसी व्यक्ति का आकलन करता है। उपयोगकर्ता के स्टेटस (Status) का ध्यान रखे बगैर यह हर उस व्यक्ति को दुनिया–जहान की हर जानकारी लैपटॉप, डेस्कटॉप या मोबाइल फोन पर उपलब्ध कराता है, जो इसका उपयोग कर पाने में सक्षम है या उपयोग करना चाहता है।

इंटरनेट आज न सिर्फ आम से आम आदमी तक दुनियाभर की जानकारियों के अकूत भंडार के तौर पर सहज–सुलभ है, बल्कि फेसबुक, ट्वीटर, इंस्टाग्राम और इन जैसी तमाम सोशल साइट्स के जरिये यह उस व्यक्ति को भी अपनी बात पूरी दुनिया के सामने रखने की छूट और आजादी प्रदान कर रहा है, जो कभी जाति तो कभी स्टेटस के भेद के कारण खुलकर कहने–सुनने में खुद को सक्षम नहीं पाता था। इस लिहाज से यदि यह कहें कि इंटरनेट सामाजिक, वैचारिक परिवर्तन का भी एक माध्यम है तो शायद यह अतिश्योक्ति नहीं होगी।

अब बात नकारात्मक पहलू की। इंटरनेट पर बीते कुछ वर्षों में सोशल साइट्स का प्रचलन बहुत तेजी से बढ़ा है। फेसबुक आज हर उस शख्स के जीवन का अभिन्न अंग बन गया है जो कंप्यूटर चलाता है तो व्हाट्सएप हर उस व्यक्ति की जरूरत जो स्मार्टफोन इस्तेमाल कर रहा है। लेकिन यहीं इंटरनेट पर सवाल खड़े होने लगते हैं। दरअसल, पिछले कुछ समय में जिस तेजी से संचार क्रांति बढ़ी है, उसके साथ ही यह चिंता भी बढ़ती चली गई है कि यह सुविधा मानव समुदाय की सामाजिक संरचना को नुकसान पहुंचाने की वजह

बनती जा रही है। दरअसल, हुआ यह है कि आधुनिक दौर में लोग सदियों से चली आ रही सामाजिक संरचनाओं से विमुख होते जा रहे है। कई शोध रिपोर्ट ये बताती हैं कि आज का मनुष्य परिवार, समाज से कहीं अधिक वक्त लैपटॉप, टैबलेट या स्मार्टफोन पर ही बिता रहा है। परिजन, रिश्तेदार या समाज क्या कह, कर रहा है, इससे कहीं अधिक अहम उसके लिए सोशल साइट्स होती जा रही हैं। इसकी वजह से सामाजिक ढांचा सामूहिक से एकल की ओर बढ़ने लगा है। इंटरनेट सूचनाओं के आदान–प्रदान का सबसे तेज जरिया बन गया है। कोई घटना हो, दुर्घटना हो या सांस्कृतिक इवेंट हो, इसकी जानकारी सैकड़ों–हजारों मील दूर बैठे दूसरे शख्स तक चंद सेकंडों में पहुंच जाती है। शायद यही वजह है कि इंटरनेट और सोशल साइट्स ने राजनेताओं और राजनीतिक दलों का भी ध्यान तेजी से खींचा है। राजनीतिक परिदृश्य में भी अब यह माना जाने लगा है कि मतदाताओं तक कम समय में पैठ बनाने और अपना संदेश पहुंचाने के लिए सोशल साइट्स ही सबसे उपयुक्त माध्यम हैं। भारत समेत दुनिया के कई देशों में इंटरनेट और सोशल साइट्स चुनाव प्रचार का बड़ा हथियार बन गई हैं। दूसरी तरफ, टेलीमेडिसिन, ऑनलाइन एजुकेशन, रोजगार जैसी कई ऐसी सुविधाएं भी हैं, जिनके जरिये इंटरनेट ने आज मानव समुदाय के जीवन को और अधिक सरलीकृत किया है। शिक्षा, स्वास्थ्य की पहुंच इसके जरिये उन क्षेत्रों और लोगों तक भी बढ़ी है जो वर्षों तक इन बुनियादी सुविधाओं से वंचित रहे।

• सुरक्षा (Security)

इंटरनेट का जिस तेजी से इस्तेमाल बढ़ा है, उसी तेजी से इसके नकारात्मक पहलू भी लगातार सामने आए हैं। दरअसल, इंटरनेट पर जहां उपयोगकर्ता की मदद के लिए कई तरह के वेबपेज, प्रोग्राम उपलब्ध हैं, वहीं कई ऐसे प्रोग्राम और सॉफ्टवेयर भी इस पर मौजूद रहते हैं जो उपयोगकर्ता को नुकसान पहुंचा सकते हैं। यूनिट के इस हिस्से में हम ऐसे ही कुछ प्रोग्राम को जानेंगे, जो हानिकारक हैं:

- **वायरस (Virus):** वायरस एक प्रोग्राम या कंप्यूटर कोड होता है जो इंटरनेट पर कंप्यूटर के जुड़ते ही कंप्यूटर में प्रवेश कर जाता है। जिस तरह मानव शरीर में वायरस घुसता है तो संक्रमण फैलाता है। उसी तरह वायरस कंप्यूटर में घुसकर इसके सिस्टम को नुकसान पहुंचाता है। कंप्यूटर से महत्वपूर्ण फाइलें डिलीट करने के साथ यह हार्डडिस्क को भी करप्ट कर देता है। वायरस के कंप्यूटर पर आने की बड़ी वजह उपयोगकर्ता के संक्रमित फाइलें या ई–मेल अटैचमेंट खोलना होती हैं। इंटरनेट पर संदिग्ध वेबपेज खोलने पर भी अकसर वायरस आ जाते हैं।
- **वर्म (Worm):** वर्म वह कंप्यूटर प्रोग्राम है, जो कंप्यूटर में प्रवेश करने के बाद ऑटोमेटिक तरीके से अपनी ही कई प्रतियां बना लेता है। इसके बाद यह कंप्यूटर की प्रक्रियाओं को बाधित कर देता है। वायरस से इतर यह खुद को कंप्यूटर की

फाइलों या प्रोग्रामों से नहीं जोड़ता, बल्कि खुद ही प्रोग्राम बनकर प्रक्रिया रोकने लगता है। अगर कंप्यूटर नेटवर्किंग से जुड़े हुए हों तो यह संक्रमित कंप्यूटर से जुड़े दूसरे कंप्यूटरों में भी पहुंच जाता है। यह रैंडम एक्सेस मेमोरी को प्रभावित कर कंप्यूटर की प्रोसेसिंग को बेहद धीमा कर देता है।

- **ट्रोजन हॉर्स (Trojan Horse):** ट्रोजन हॉर्स वे प्रोग्राम हैं जो उपयोगकर्ता के सामने लाभदायक प्रोग्राम के रूप में आते हैं, लेकिन प्रयोग की कोशिश करते ही ये कंप्यूटर में घुसकर उसमें वायरस डाल देते हैं। वायरस और वर्म की तरह ट्रोजन हॉर्स अपनी कई प्रतियां नहीं बनाते, बल्कि यह कंप्यूटर मेमोरी में मौजूद संवेदनशील डाटा, जानकारी, फाइलें और व्यक्तिगत जानकारियां तलाशते हैं। मूलतः आपराधिक किस्म के लोग इसका इस्तेमाल करते हैं, जिससे वे किसी व्यक्ति की गोपनीय जानकारी हासिल कर सकें। ऑनलाइन ठगी के अधिकतर मामलों को इस श्रेणी में रखा जा सकता है।

• बचाव के तरीके (Prevention)

1. कंप्यूटर पर एंटी वायरस (Anti Virus) प्रोग्राम स्थापित किया जाना चाहिए, एंटी वायरस प्रोग्राम इंटरनेट पर जुड़ने के दौरान हर प्रोग्राम, फाइल, वेबपेज को स्कैन करते हैं और इनमें किसी भी तरह का संदेह होने की स्थिति में उपयोगकर्ता को संबंधित फाइल या वेबपेज से नही जुड़ने का संदेश देते हैं, इसके अलावा ये अनधिकृत प्रोग्रामों को कंप्यूटर में प्रवेश करने से भी रोकते हैं
2. उपयोगकर्ता को कंप्यूटर पर फायरवॉल का इस्तेमाल करना चाहिए, यह एक खास तरह का प्रोग्राम है, जो विंडोज ऑपरेटिंग सिस्टम में पहले से उपलब्ध रहता है, उपयोगकर्ता को करना सिर्फ यह होता है कि सेटिंग में जाकर इसे ऑन करना होता है। इसके बाद यह किसी भी बाहरी साधन को उपयोगकर्ता के कंप्यूटर तक पहुंचने से रोकने का काम करता है।
3. इंटरनेट पर कोई भी संदिग्ध फाइल, वेबपेज और ई–मेल पर कोई भी ऐसा संदेश कभी नहीं खोलें, जिसे भेजने वाला संदिग्ध हो, ई–मेल पर आने वाले अटैचमेंट को खोलने से पहले स्कैन जरूर करें
4. ई–मेल अटैचमेंट के फाइल एक्सटेंशन को ध्यान से जरूर देखें, यदि फाइल का एक्सटेंशन exe, pif, bat, bas, cmd, com, cml, inf, js, lnk, msi, scr, vbs हो तो इन्हें खोलने से पहले एंटीवायरस प्रोग्राम की मदद से स्कैन जरूर करें
5. ई–मेल और सोशल साइट्स पर कई बार ऐसे लिंक आते हैं, जो उपयोगकर्ता को लालच देकर फांसते हैं। इस तरह के लिंक में कई बार उपयोगकर्ता की लॉटरी लगने की जानकारी दी जाती है तो कभी कोई दूसरा ऐसा संदेश भेजा जाता है, जिसे पढ़ते ही उपयोगकर्ता उस पर क्लिक करे, लेकिन इससे हमेशा बचना चाहिए

6. इंटरनेट उपयोगकर्ताओं को वायरस से बचाने के लिए माइक्रोफ्ट पैच ट्यूजडे सेवा चलाता है। इसके जरिये माइक्रोसॉफ्ट हर महीने के दूसरे मंगलवार को उन सभी प्रोग्रामों की सूची तैयार करता है जो कंप्यूटर को नुकसान पहुंचा सकते हैं। इसमें इस तरह के प्रोग्रामों से बचने के तरीके भी सुझाए जाते हैं, जिन्हें पैच कहा जाता है। इन पैचों का प्रयोग कर उपयोगकर्ता इंटरनेट का सुरक्षित उपयोग कर सकते हैं।
7. सोशल साइट्स पर फोन नंबर, बैंक खाते, पासवर्ड, एटीएम पिन कोड जैसी गोपनीय जानकारी कभी भी दर्ज नहीं करें। फेसबुक, ट्विटर जैसी सोशल साइटों पर उपयोगकर्ता सेटिंग के जरिये अपनी जानकारियों को छिपा भी सकते हैं या यह तय कर सकते हैं कि कौन लोग इन जानकारियों को देख सकते हैं।
8. ऑनलाइन नेटबैंकिंग के इस्तेमाल के दौरान हमेशा बैंक या कंपनी के अधिकृत वेबसाइट का ही इस्तेमाल करें। कई बार अधिकृत वेबसाइट के बजाय होस्ट वेबसाइट पर कंपनी का लिंक दिया जाता है, इस तरह की होस्ट साइट पर क्लिक करने से उपयोगकर्ता का गोपनीय डाटा चोरी होने की आशंका रहती है।

22.6: उपसंहार (The Conclusion)

यूनिट के अध्ययन के बाद हम इस परिभाषा के तात्पर्य को समझने के साथ यह जान चुके हैं कि कंप्यूटर के संचालन में ऑपरेटिंग सिस्टम की कितनी बड़ी भूमिका है। इसके अलावा हम यह भी जाने हैं कि इंटरनेट किस तरह आज मानव के सामाजिक जीवन का अभिन्न अंग बन गया है और किस तरह इंटरनेट के सकारात्मक और नकारात्मक पहलू मानव के दैनन्दिन जीवन पर असर डाल रहे हैं। हालांकि, इस सबके बीच यह जरूर माना जा सकता है कि ऑपरेटिंग सिस्टम के विकास और इसके जरिये इंटरनेट के अविर्भाव ने मानव जीवन को सरल जरूर बनाया है।

22.7: अभ्यास प्रश्न (Exercise)

1. हाईलेवल लैंग्वेज में तैयार पहला ऑपरेटिंग सिस्टम था:

(e) बी5000
(f) ओएस360
(g) आईबीएम709
(h) विंडोज 1.0

2. ऑपरेटिंग सिस्टम का बुनियादी घटक है:

(e) सेंट्रल प्रोसेसिंग यूनिट
(f) की–बोर्ड

(g) प्रोग्राम
(h) कर्नल

3. माइक्रोसॉफ्ट का पहला सिर्फ पर्सनल कंप्यूटर आधारित ऑपरेटिंग सिस्टम थाः

(e) विंडोज 2.0
(f) विंडोज 10
(g) विंडोज 7
(h) विंडोज विस्टा

4. वर्तमान दौर में सर्वाधिक प्रचलित ऑपरेटिंग सिस्टम हैः

(e) एंड्रॉयड
(f) आईफोन
(g) ब्लैकबेरी
(h) विंडोज

5. इनमें से कौन सा ऑपरेटिंग सिस्टम टचस्क्रीन सपोर्ट करता हैः

(e) मैक
(f) विंडोज 8
(g) विंडोज विस्टा
(h) विंडोज 1.0

6. विंडोज से पहले आईबीएम में प्रयुक्त ऑपरेटिंग सिस्टम थाः

(e) डॉस
(f) मैक
(g) एंड्रॉयड
(h) उपरोक्त में से कोई नहीं

7. स्टार्ट और क्लोज बटन सबसे पहले इस सिस्टम में लाए गएः

(e) विंडोज 8
(f) विंडोज 3.1
(g) विंडोज 95
(h) विंडोज 7

8. विंडोज का पहला ग्राफिकल यूजर इंटरफेस ऑपरेटिंग सिस्टम था:

(e) विंडोज 1.0
(f) विंडोज 8
(g) विंडोज 3.1
(h) इनमें से कोई नहीं

9. विंडोज 98 में पहली बार यह लांच किया गया:

(e) पेंट ब्रश
(f) ग्राफिकल यूजर इंटरफेस
(g) एरो ग्लास लुक
(h) इंटरनेट एक्सप्लोरर 4.0

10. मोबाइल फोन पर इस्तेमाल होने वाले एंड्रॉयड का मूल आधार यह ऑपरेटिंग सिस्टम है:

(e) लाइनक्स
(f) यूनिक्स
(g) ब्लैकबेरी
(h) विंडोज

11. पहली पीढ़ी के कंप्यूटरों में ऑपरेटिंग सिस्टम की तरह काम करते थे:

(e) लाइनक्स
(f) एंड्रॉयड
(g) रेजीडेंट मॉनीटर
(h) इनमें से कोई नहीं

12. इनमें से कौन ऑपरेटिंग सिस्टम ओपन लाइसेंस मोड है:

(e) यूनिक्स फैमिली
(f) मैक ओएस
(g) विंडोज
(h) लाइनक्स

13. मैक ओएस की निर्माता कंपनी है:

(e)माइक्रोसॉफ्ट
(f) डाटा कॉरपोरेशन
(g) एप्पल
(h) जेरॉक्स कॉरपोरेशन

14. गूगल और गूगल कोम का मूलाधार ऑपरेटिंग सिस्टम है:

(e)विंडोज 1.0
(f) लाइनक्स
(g) यूनिक्स
(h) विंडोज 7

15. पर्सनल डिजिटल असिस्टेंट (पीडीए) में इस्तेमाल ऑपरेटिंग सिस्टम है:

(e)एंबेडेड
(f) मल्टी यूजर
(g) मल्टी टास्किंग
(h) इनमें से कोई नही

16. इनमें से किसे इंटरनेट की आचार संहिता माना जाता है:

(a)http://
(b) html
(c)www
(d) इनमें से कोई नही

17. एनालॉग सिग्नल को डिजिटल में और डिजिटल को एनालॉग में बदलने वाला उपकरण है:

(a)गूगल
(b) वर्ल्ड वाइड वेब
(c)मोडेम
(d) उपरोक्त में से सभी

18. इनमें से कौन सर्च इंजन है:

(a)गूगल
(b) मोडेम

(c)आउटलुक
(d) इनमें से कोई नहीं

19. वेबपेज इस भाषा में तैयार किए जाते हैं:

(a)http
(b) html
(c)c++
(d) java

20. वेब ब्राउजर इनमें से क्या है:

(a)सॉफ्टवेयर प्रोग्राम
(b) हार्डवेयर
(c)प्रोग्रामिंग लैंग्वेज
(d) उपरोक्त में से सभी

22.8: निबंधात्मक प्रश्न (Theoretical Questions)

1. ऑपरेटिंग सिस्टम क्या है, कंप्यूटर के सफल संचालन में महत्व को समझाते हुए ऑपरेटिंग सिस्टम के विकास की यात्रा का वर्णन करें।
2. ऑपरेटिंग सिस्टम कितने प्रकार का होता है? उदाहरण समेत विस्तार से बताएं, अलग–अलग तरह के ऑपरेटिंग सिस्टम की जरूरत क्यों महसूस हुई, इसकी जानकारी भी दें।
3. कुछ प्रमुख ऑपरेटिंग सिस्टम, इनकी विशेषताओं का उल्लेख करें।
4. विंडोज ऑपरेटिंग सिस्टम के विकास और हर वर्जन में आने वाले बदलाव की विशेषता, इसकी जरूरत आदि का विष्लेशणकरें।
5. ऑपरेटिंग सिस्टम के प्रमुख घटक क्या हैं? इनके कार्यों और जरूरतों का उल्लेख करें।
6. किसी ऑपरेटिंग सिस्टम में कर्नल क्या होता है? यह किस तरह एप्लीकेशन प्रोग्राम और हार्डवेयर के बीच संतुलन बनाता है?
7. नेटवर्किंग और इंटरनेट क्या हैं? इंटरनेट पर काम जितना सुविधाजनक है, उतना ही असुरक्षित भी, इस कथन का विष्लेशणकरते हुए जरूरी सावधानियों का भी जिक्र करें।

इकाई 23 माइक्रोसॉफ्ट ऑफिस, एमएस वर्ड और एमएस एक्सेल
Microsoft Office, MS-Word and MS-Excel

- **23.1: परिचय (Introduction to Unit)**
  (प्रस्तावना, उद्देश्य)
- **23.2: कंप्यूटर के प्रमुख साधन (Tools of Computers)**

  (नोटपैड, वर्डपैड, पेंट, कैल्कुलेटर, विंडोज मीडिया प्लेयर)

- **23.3: एमएस ऑफिस (MS-Office)**

  (एमएस ऑफिस क्या है, ऑपरेटिंग सिस्टम के विकास के हिसाब से ऑफिस का विकास, एमएस ऑफिस के घटक)

- **23.4: एमएस वर्ड (MS-Word)**

  (एमएस वर्ड की जरूरत, कार्यशैली, कमांड, उपयोग)

- **23.5: एमएस एक्सेल (MS-Excel)**

  (एमएस एक्सेल का उपयोग, कमांड)

- **23.6: उपसंहार (The Conclusion)**
- **23.7: अभ्यास प्रश्न (Exercise)**
- **23.8: निबंधात्मक प्रश्न (Theoretical Questions)**

• उद्देश्य (Objective)

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप समझ पाएंगे कि

- कंप्यूटर किस तरह अपने कुछ विशेष साधनों के माध्यम से मानव जीवन के लिए उपयोगी मशीन है
- माइक्रोसॉफ्ट ऑफिस क्या है, इसका उपयोग कहां–कैसे किया जाता है और इसका विकास किस तरह हुआ
- कंप्यूटर ऑपरेटिंग सिस्टम के विकास के साथ किस तरह एमएस ऑफिस में भी लगातार सुधार के बाद नये स्वरूप सामने आए
- एमएस–वर्ड, एक्सेल, पॉवरप्वाइंट क्या हैं, इनका उपयोग किस तरह हमारे लिए मददगार हो सकता है
- एमएस–वर्ड, एक्सेल और पॉवर प्वाइंट जैसे प्रोग्राम किस तरह काम करते हैं

23.1: प्रस्तावना (Introduction)

हम इस तथ्य से भली–भांति परिचित हैं कि कंप्यूटर आज मानव समाज का अभिन्न अंग और दैनन्दिन उपयोग का सबसे बड़ा उपकरण बन गया है। हम यह भी जानते हैं कि कंप्यूटर का विकास जटिल गणनाओं (Calculations) के समाधान के तौर पर होता चला गया। लेकिन समय के साथ हुए

विकास में कंप्यूटर महज गणनाओं तक सीमित नहीं रह गया है। यह जीवन के हर आयाम को छूता है और मानव के लिए सर्वाधिक उपयोगी मशीन बना है। टाइपिंग हो या ऑडियो विजुअल फीचर मानव जीवन का हर काम अब कंप्यूटर पर संभव है। इस यूनिट में कंप्यूटर के ऐसे ही फीचर या साधनों (Tools) का अध्ययन करेंगे, जिनकी मदद से हम अपने दैनिक उपयोग के कार्य आसानी से निष्पादित कर पाते हैं।

23.2: कंप्यूटर के प्रमुख साधन (Tools of Computer)

कंप्यूटर का विकास ही इस उद्देश्य के साथ हुआ कि जिन गणनाओं को हल करने में मानव को लंबा समय लगता था, उनका समाधान चुटकियों में प्राप्त किया जा सके। कालांतर में गणनाओं से इतर कई अन्य कार्य भी इस श्रेणी में जुड़ते चले गए। इसी अनुक्रम में ऑपरेटिंग सिस्टम का विकास हुआ और सिस्टम में ही कुछ ऐसे उपयोगी प्रोग्राम जोड़े जाते गए, जो मानवोपयोगी थे। इनकी मदद से उपयोगकर्ता (User) को ऐसे काम मिनटों में कर पाने की सहूलियत मिली, जिन्हें किसी अन्य साधन या विधि से करने में लंबा समय लगता। ऐसे ही कुछ साधनों के बारे में हम यहां जानने वाले हैं।

1.2.1: नोटपैड (Notepad)

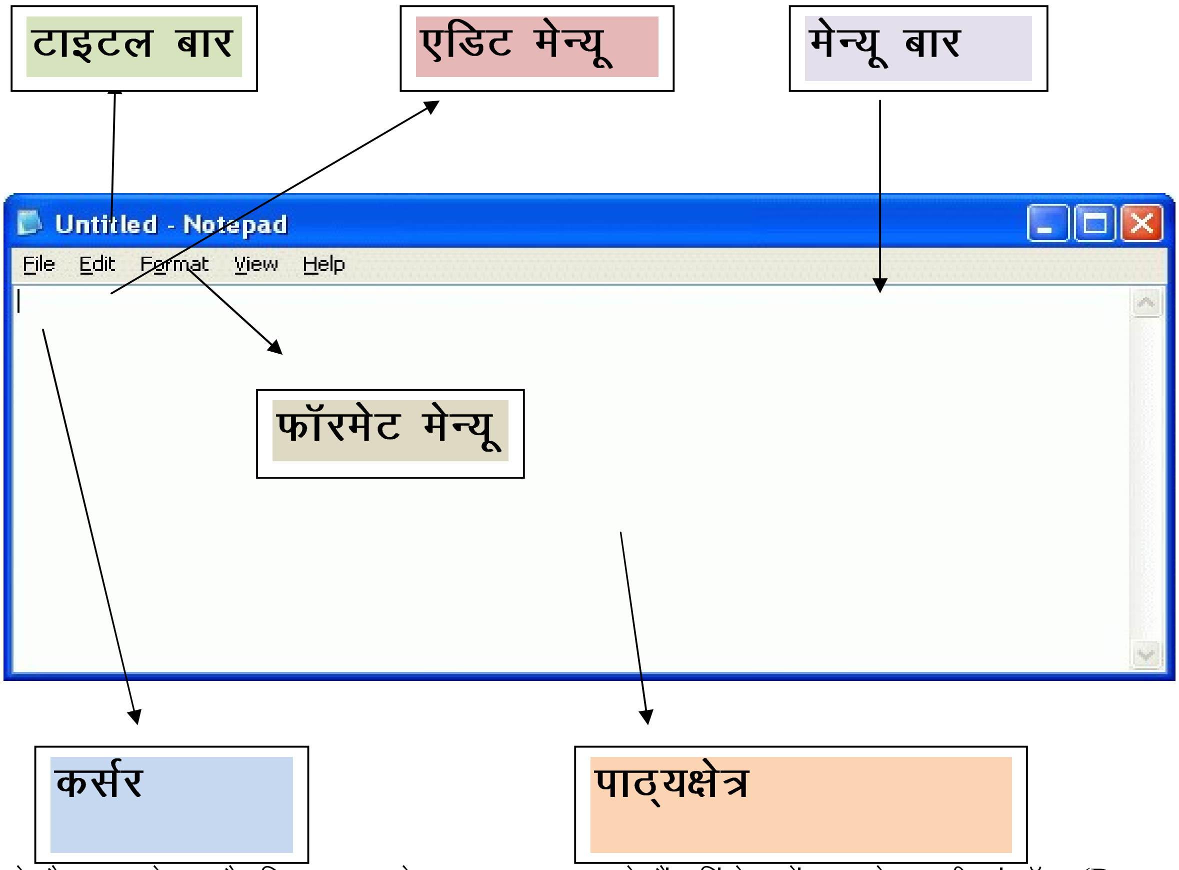

नोटपैड वह प्रोग्राम है, जिसका उपयोग हम अकसर करते हैं। विंडोज में यह प्रोग्राम प्री–इंस्टॉल (Pre Installed) रहता है। नोटपैड एक टेक्स्ट एडिटर (Text Editor) प्रोग्राम है। टेक्स्ट एडिटर प्रोग्राम का तात्पर्य उन प्रोग्राम से है, जिनमें उपयोगकर्ता अपनी जरूरत की टेक्स्ट फाइल (Text Files) तैयार कर सकता है। आम जीवन में हम डायरी, कॉपी, कागज पर सूचनाएं दर्ज करते रहते हैं। कंप्यूटर पर यही काम नोटपैड पर किया जाता है। यह भी कहा जा सकता है कि नोटपैड वह प्रोग्राम है जो उपयोगकर्ता को सूचनाओं या डाटा के डॉक्यूमेंटेशन (Documentation) में मदद करता है। हालांकि,

नोटपैड में हम किसी फाइल को आकर्षक स्वरूप नहीं दे सकते हैं। इस प्रोग्राम में सारा पाठ्य (Text) एक ही फॉन्ट में दिखाया जा सकता है। नोटपैड के संक्षिप्त इतिहास की चर्चा करें तो वर्ष 1983 में रिचर्ड ब्रॉडी ने माइक्रोसॉफ्ट के लिए डिस्क ऑपरेटिंग सिस्टम (DOS) के लिए पहला नोटपैड तैयार किया था, जिसे माउस की मदद से भी ऑपरेट किया जा सकता था। कालान्तर में माइक्रोसॉफ्ट विंडोज के हर वर्जन में नोटपैड में अपेक्षित सुधार किए जाते रहे। मौजूदा दौर में विंडोज के सभी प्रचलित ऑपरेटिंग सिस्टम का यह अभिन्न अंग है।

- **नोटपैड के घटक (Components of Notepad)**

सामान्यतः डेस्कटॉप या लैपटॉप की होमस्क्रीन के टूलबार में नोटपैड का शॉर्टकट की (टूलबार में नोटपैड का आइकन) रहती है। इस पर क्लिक करने से नोटपैड प्रोग्राम खुल जाता है। यदि यह शॉर्टकट न हो तो कंप्यूटर के स्टार्ट बटन पर क्लिक करने के बाद ऑल प्रोग्राम्स (All Programs) पर क्लिक करना होता है। यहां खुलने वाली सूची में एसेसरीज (Accessories) पर क्लिक करते ही नोटपैड का ऑप्शन सामने आता है। इस पर क्लिक करके नोटपैड प्रारंभ हो जाएगा। नोटपैड की विंडो में टाइटल बार (Title Bar), पाठ्यक्षेत्र (Text Area), मेन्यू बार (Menu Bar) और कर्सर (Cursor) होते हैं। नोटपैड की सबसे उपर की पंक्ति टाइटल बार है। इसमें उस दस्तावेज या फाइल का नाम नजर आता है, जो उपयोगकर्ता लिख रहा हो और उसे सेव कर कुछ नाम दिया हो। अगर फाइल सेव नहीं है तो यहां अनटाइटल्ड (Untitled) लिखा दिखता है। टाइटल बार के ठीक नीचे मेन्यू बार होता है। इसमें एडिट, फाइल, फॉरमेट, व्यू, हेल्प जैसे ऑप्शन होते हैं। हर मेन्यू में कई विकल्प होते हैं, जिनका प्रयोग उपयोगकर्ता अपनी जरूरत के हिसाब से कर सकता है।

पाठ्यक्षेत्र नोटपैड विंडो का वह हिस्सा है, जहां उपयोगकर्ता टाइपिंग की मदद से अपनी फाइल, सूचना, दस्तावेज तैयार करता है। नोटपैड खोलने पर यह हिस्सा खाली नजर आता है और टाइप करते जाने पर यह भरता जाता है। पाठ्यक्षेत्र में एक खड़ी लकीर ( ) नजर आती है, जिसे कर्सर कहा जाता है। कर्सर जिस जगह पर हो, वहां से टाइपिंग प्रारंभ की जा सकती है। अगर किसी शब्द में सुधार (Correction) करना हो तो उपयोगकर्ता माउस की मदद से कर्सर को संबंधित शब्द पर ले जाकर टाइप कर सकता है।

- **वर्डपैड (Wordpad)**

वर्डपैड भी नोटपैड की तरह टेक्स्ट एडिटर (Text Editor) है, लेकिन यह इस तरह का सॉफ्टवेयर या प्रोग्राम है, जिसकी मदद से फाइल के निर्माण के अलावा उसका संपादन और छपाई (Printing) भी की जा सकती है। सामान्यतः इस तरह के प्रोग्रामों को वर्ड प्रोसेसर (Word Processor) कहा जाता है। विंडोज ऑपरेटिंग सिस्टम में नोटपैड की तरह ही वर्डपैड प्रोग्राम भी प्री–इंस्टॉल रहता है। नोटपैड से इतर इस प्रोग्राम में उपयोगकर्ता को टाइपिंग के जरिये टेक्स्ट फाइल तैयार करने के अलावा ग्राफिक (Graphics) यानी चित्र और संकेत या चिह्न भी शामिल करने की सहूलियत मिलती है। इसके लिए इसमें टाइटल बार और मेन्यू बार के अलावा टूल बार भी शामिल किया गया है। इसे हम निम्न चित्र से समझ सकते हैं।

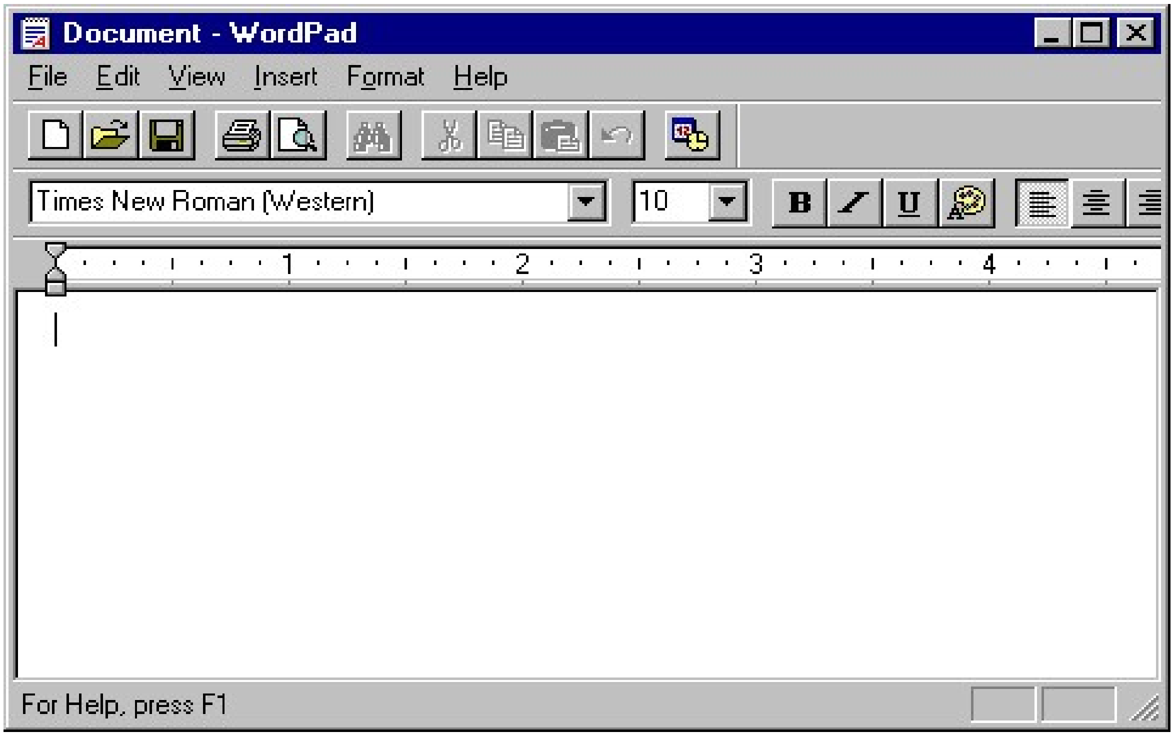

(माइक्रोसॉफ्ट वर्डपैड की विंडो)

वर्डपैड में बाकी सभी चीजें मूलतः नोटपैड जैसी ही हैं, लेकिन इसमें जोड़े गए टूल की मदद से उपयोगकर्ता के लिए टेक्स्ट फाइल को आकर्षक बनाने में मदद मिलती है। इसमें बोल्ड, इटेलिक, अंडरलाइन जैसे ऑप्शन के अलावा पेज (Page) को जूम या अनजूम करने की भी सुविधा उपलब्ध है। साथ ही इन्सर्ट (Insert) विकल्प के जरिये वर्डपैड में टेक्स्ट फाइल के साथ फोटो भी जोड़ी जा सकती है। फॉन्ट की विस्तृत श्रृंखला से उपयोगकर्ता मनचाहा फॉन्ट चुन सकता है, जबकि फॉन्ट का साइज भी वह अपने हिसाब से तय कर सकता है। माइक्रोसॉफ्ट ने सबसे पहले वर्ष 1995 में अपने ऑपरेटिंग सिस्टम विंडोज 95 में वर्डपैड को लांच किया था। इसके जरिये वर्ड फाइल को रिच टेक्स्ट फॉरमेट (Rich Text Format- RTF) में सुरक्षित कर पाना संभव हो सका।

आरटीएफ दरअसल, माइक्रोसॉफ्ट फाइल सिस्टम का खास अधिकृत स्वरूप है, जिसमें किसी दस्तावेज, डाटा को वर्ड फाइल में इस तरह सुरक्षित किया जाता है कि माइक्रोसॉफ्ट के सभी प्रोग्राम इस फाइल को आसानी से पढ़–समझ सकें। माइक्रोसॉफ्ट के लिए नोटपैड प्रोग्राम तैयार करने वाले रिचर्ड ब्रॉडी ने अपने साथियों चार्ल्स सिमोनी और डेविड ल्यूबर्ट के साथ मिलकर आरटीएफ फॉरमेट का तरीका तैयार किया था। इसकी मदद से ही वर्डपैड को और अधिक परिष्कृत कर पाना संभव हुआ। माइक्रोसॉफ्ट ने वर्ष 2008 में आरटीएफ फॉरमेट की मेंटेनेंस का काम बंद कर दिया है, लेकिन अब भी यह विंडोज ऑपरेटिंग सिस्टम में उपयोग किया जाता है।

- **पेंट (Paint)**

विंडोज ऑपरेटिंग सिस्टम के सभी संस्करणों की एसेसरीज में यह प्रोग्राम भी उपलब्ध रहता है। पेंट दरअसल, ग्राफिकल प्रोग्राम है यानी इसकी मदद से उपयोगकर्ता रंग–बिरंगे चित्र बना सकता है। इसमें

कई ऐसे साधन (Tools) मौजूद हैं, जिनकी मदद से उपयोगकर्ता अभीष्ट आकार, रंग, रेखाएं आदि के जरिये मनचाहा चित्र बना सकता है। इस प्रोग्राम की सबसे बड़ी खासियत यह है कि यह विंडोज के प्रारंभिक प्रोग्रामों में से एक है। वर्ष 1985 में विंडोज ने अपना पहला ऑपरेटिंग सिस्टम विंडोज 1.0 लांच किया था तो उसमें भी पेंट प्रोग्राम शामिल था।

हालांकि, उस वक्त इसे माइक्रोसॉफ्ट पेंट की जगह पेंटब्रश (Paintbrush) कहा जाता था। तब इसे जेडसॉफ्ट कॉरपोरेशन ने पीसी पेंटब्रश के नाम से तैयार किया था। इस लिहाज से इस प्रोग्राम का अधिकृत लाइसेंस इसी कंपनी के पास था। शुरुआती दौर में यह प्रोग्राम सिर्फ एक बिट मोनोक्रोम ग्राफिक्स को ही सपोर्ट करता था। माइक्रोसॉफ्ट ने जब अपना ऑपरेटिंग सिस्टम विंडोज 3.0 वर्ष 1990 में लांच किया तो पेंटब्रश को नये ग्राफिकल यूजर इंटरफेस (Graphical User Interface) के हिसाब से दोबारा तैयार किया गया। इससे यह कई तरह की फाइल को सपोर्ट करने लगा।

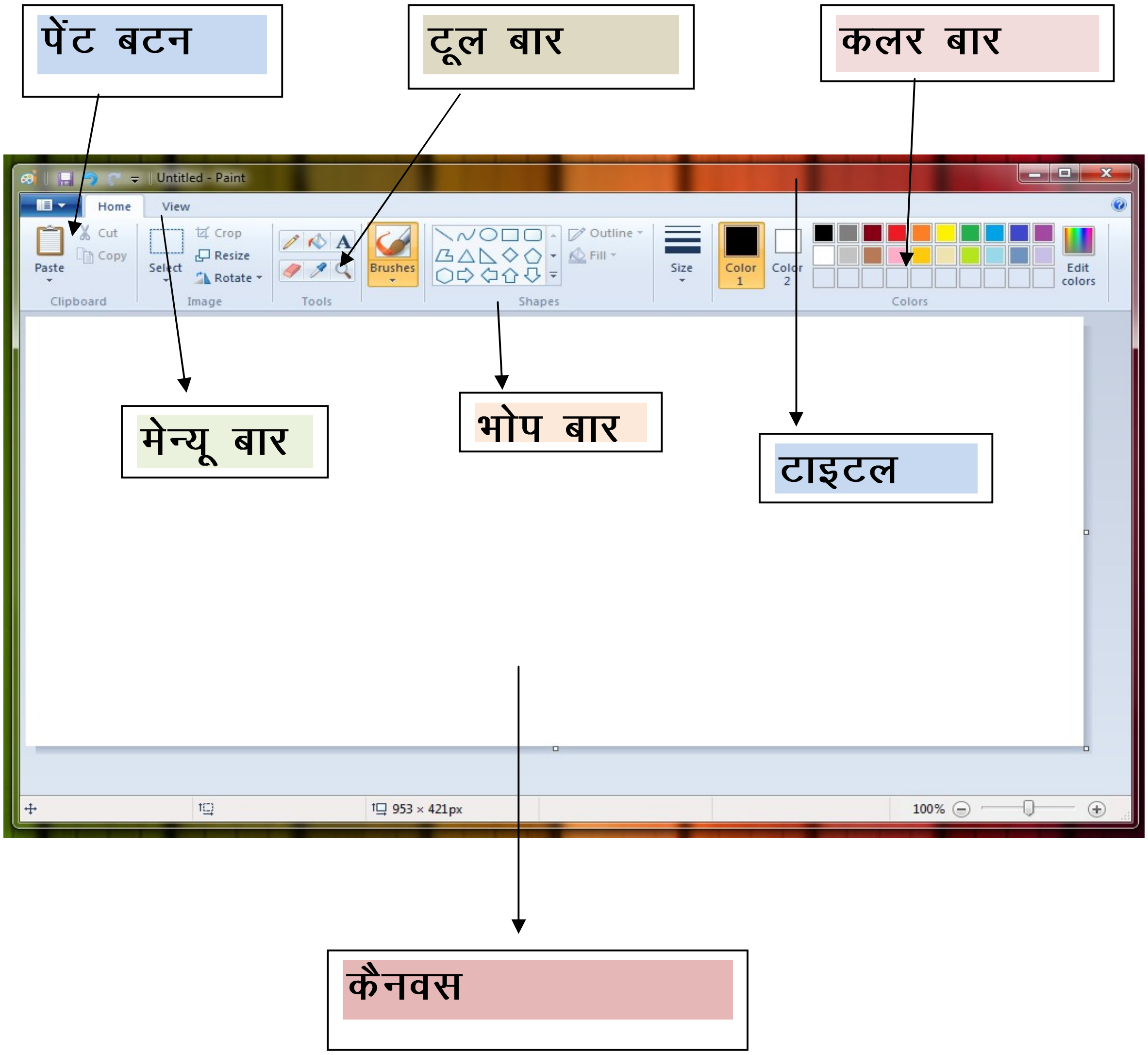

अक्टूबर 2016 में सोशल नेटवर्किंग साइट ट्विटर पर किसी व्यक्ति ने विंडोज पेंट का नया वर्जन विंडोज पेंट 3डी (Paint 3-D) का एक ट्यूटोरियल वीडियो डाला। उस समय तक माइक्रोसॉफ्ट ने

ऐसा कोई आधिकारिक प्रोग्राम लांच नहीं किया था। लेकिन, यह वीडियो लीक होने के बाद 28 अक्टूबर 2016 को माइक्रोसॉफ्ट ने अपना डमी एप न्यूकैसल (Newcastle) जारी किया, ताकि उपयोगकर्ता लीकेज वीडियो से लिंक के बजाय कंपनी का अधिकृत सॉफ्टवेयर ही इस्तेमाल करें।

माइक्रोसॉफ्ट की ओर से यह भी जानकारी दी गई कि यह प्रोग्राम जुलाई 2015 में लांच हुए विंडोज के नवीनतम ऑपरेटिंग सिस्टम विंडोज 10 के लिए तैयार किया गया है। माइक्रोसॉफ्ट ने विंडोज 10 उपयोगकर्ताओं के लिए विशेष वेबसाइट भ बनाई है, जिसमें इस प्रोग्राम के संचालन के तरीके बताए गए हैं। इस प्रोग्राम की खासियत इस पर 3–डी पेंटिंग करना है। इसके अलावा इस प्रोग्राम में पारदर्शी 2–डी पेंटिंग भी संभव है।

- **कैल्कुलेटर (Calculator)**

हम जानते हैं कि कंप्यूटर की खोज और विकास का मूल आधार गणनाएं (Calculations) थीं। समय के साथ कंप्यूटर पर अन्य आयाम जुड़ते चले गए, लेकिन गणनाएं आज भी कंप्यूटर का मूल उद्देश्य हैं। यही वजह है कि विंडोज के हर ऑपरेटिंग सिस्टम पर कैल्कुलेटर (Calculator) प्रोग्राम अनिवार्य रूप से उपलब्ध रहता है। कंप्यूटर पर काम करते वक्त किसी भी तरह की गणना करने में यह उपयोगकर्ता की मदद करता है। कैल्कुलेटर प्रोग्राम भी दो तरह का होता है, पहला सामान्य (Standard) और दूसरा वैज्ञानिक (Scientific) सामान्य कैल्कुलेटर में गुणा–भाग, जोडना–घटाना, प्रतिशत मान निकालना जैसी समान्य गणितीय प्रक्रियाओं को संपन्न करने की सुविधा उपलब्ध होती है। कैल्कुलेटर प्रोग्राम पर लिखे अंकों और गुणा–भाग, जोड़–घटाव के चिह्नों की मदद से उपयोगकर्ता आसानी से अभीष्ट परिणाम हासिल कर सकता है, लेकिन यदि उपयोगकर्ता को और जटिल गणनाएं करनी हों तो वह साइंटिफिक कैल्कुलेटर का इस्तेमाल कर सकता है। इस कैल्कुलेटर में सामान्य गणितीय प्रक्रियाओं के अलावा वर्ग (Square) घन (Cube) त्रिकोणमितीय मान (Trigonometrical Values) समेत सांख्यिकीय (Statistical) गणनाएं करने की भी सुविधा उपलब्ध रहती है।

- **विंडोज मीडिया प्लेयर (Windows Media Player)**

विंडोज मीडिया प्लेयर (WMP) भी माइक्रोसॉफ्ट द्वारा निर्मित एक ऐसा प्रोग्राम है, जो पर्सनल कंप्यूटरों पर इंस्टॉल विंडोज ऑपरेटिंग सिस्टम के साथ उपलब्ध रहता है। हम लगातार इस बात को दोहरा रहे हैं कि कंप्यूटर के विकास के अनुक्रम में समय के साथ गणनाएं ही एकमात्र उद्देश्य नहीं रह गया था। कंप्यूटर मनोरंजन का भी बड़ा साधन बनते चले गए और विंडोज मीडिया प्लेयर ऐसा ही एक साधन है, जो कंप्यूटर के जरिये उपयोगकर्ता को ऑडियो सुनने तथा वीडियो और फोटो देखने की सुविधा प्रदान करता है। पर्सनल कंप्यूटर के अलावा विंडोज मीडिया प्लेयर उन पॉकेट पीसी, टैबलेट और मोबाइल फोन पर भी उपलब्ध रहता है, जो विंडोज ऑपरेटिंग सिस्टम पर चलते हैं।

विंडोज ने सबसे पहले वर्ष 1991 में मीडिया प्लेयर लांच किया था, जब विंडोज ऑपरेटिंग सिस्टम का वर्जन विंडोज 3.0 जारी किया गया था। उस वक्त मीडिया प्लेयर एनीमेशन फाइलों को ही देखने में उपयोग किया जा सकता था, लेकिन जैसे–जैसे विंडोज ऑपरेटिंग सिस्टम के नये वर्जन लांच होते गए, मीडिया प्लेयर में भी सुधार आता गया। विंडोज के लगभग हर वर्जन के साथ मीडिया प्लेयर का भी सुधारीकृत वर्जन लांच किया जाता रहा। विंडोज 3.1 के साथ पहली बार मीडिया प्लेयर में वीडियो चलाने की भी सुविधा उपलब्ध कराई गई। विंडोज 95 में मीडिया प्लेयर की वीडियो चलाने की क्षमताओं में और अधिक सुधार किया गया। विंडोज मीडिया प्लेयर का आखिरी वर्जन विंडोज मीडिया प्लेयर 12

वर्ष 2009 में विंडोज 7 ऑपरेटिंग सिस्टम के साथ लांच किया था। मीडिया प्लेयर का यह वर्जन विंडोज 7 और इसके बाद अब तक जारी हुए विंडोज के सभी ऑपरेटिंग सिस्टमों में संचालित किया जाता है। विंडोज मीडिया प्लेयर 12 को हम निम्न चित्र से समझ सकते हैं:

विंडोज मीडिया प्लेयर उपयोगकर्ता को सिर्फ गाने सुनने, वीडियो देखने की ही सुविधा प्रदान नहीं करता, बल्कि इसकी मदद से उपयोगकर्ता ऑडियो सीडी, एमपी3 सीडी तैयार करने या सीडी से ऑडियो–वीडियो को कंप्यूटर पर सुरक्षित रखने का काम भी कर सकता है।

यही नहीं, विंडोज मीडिया प्लेयर इंटरनेट के जरिये उपयोगकर्ता को ऑनलाइन म्यूजिक स्टोर (Online Music Store) या विंडोज की ऑनलाइन मीडिया लाइब्रेरी (Windows Media Library) से भी जोड़ देता है। यहां यह भी उल्लेखनीय है कि विंडोज मीडिया प्लेयर को विंडोज ऑपरेटिंग सिस्टम के अलावा मैक ऑपरेटिंग सिस्टम पर भी उपयोग किया जाता था।

23.3: एमएस–ऑफिस (MS-Office)

माइक्रोसॉफ्ट ऑफिस (Microsoft Office or MS-Office) एप्लीकेशन प्रोग्रामों, सर्वर और सुविधाओं का एक ऐसा ऑफिस सुइट (Office Suite) है, जिसकी मदद से किसी कार्यालय (Office) के दैनिक कार्यों को कम समय में और प्रामाणिकता (Authenticity) और शुद्धता (Accuracy) के साथ संपन्न किया जा सके। ऑफिस सुइट का तात्पर्य उन सुविधाओं से है, जो ऑफिशियल कार्यों में मददगार हों। इनमें दस्तावेजों का संरक्षण, निर्माण, बिल, प्रजेंटेशन, हिसाब–किताब आदि गतिविधियां शामिल हैं।

बिल गेट्स ने माइक्रोसॉफ्ट ऑफिस सुइट तैयार करने की घोषणा सबसे पहले 1 अगस्त 1988 को अमेरिका के लास वेगास में आयोजित कॉमडेक्स (COMDEX) में की थी। कॉमडेक्स का अर्थ है कंप्यूटर डीलर्स एक्जीबिशन (Computer Dealers' Exhibition) यह प्रदर्शनी जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है, नवीनतम कंप्यूटर, कंप्यूटर तकनीक और कंप्यूटर उत्पादों की जानकारी लोगों को देने के मकसद से आयोजित होती थी। वर्ष 1979 से 2003 तक हर साल आयोजित होती रही इस प्रदर्शनी में दुनियाभर से कंप्यूटर निर्माता कंपनियों के प्रतिनिधि, कंप्यूटर उपकरण बेचने वाले डीलर और कंप्यूटर विशेषज्ञ–वैज्ञानिक शामिल होते थे।

वर्ष 1990 में लांच हुए विंडोज ऑपरेटिंग सिस्टम विंडोज 3.0 में माइक्रोसॉफ्ट ऑफिस सुइट लांच की गई, जिसमें ऑफिस के तीन प्रमुख प्रोग्राम माइक्रोसॉफ्ट वर्ड, माइक्रोसॉफ्ट एक्सेल और माइक्रोसॉफ्ट पॉवर प्वाइंट शामिल थे। माइक्रोसॉफ्ट ने समय के साथ ऑफिस सुइट में कुछ और नये फीचर्स भी जोड़े, हालांकि, ये तीनों प्रोग्राम हमेशा सुइट के मूल आधार बने रहे। खास बात यह है कि एमएस–ऑफिस के तीनों प्रोग्रामों के ग्राफिकल यूजर इंटरफेस में भी उसी तरह समान बदलाव किए गए, जैसे संबंधित ऑपरेटिंग सिस्टम के ग्राफिकल यूजर इंटरफेस में किए जाते थे। इससे विंडोज के हर संस्करण के साथ एमएस–ऑफिस भी लगातार अपडेट होते रहे।

दुनियाभर में प्रचलित ऑपरेटिंग सिस्टम, प्रोग्राम, ऑनलाइन गेम्स और कंप्यूटर से जुड़े अन्य उत्पादों की बिक्री, डिमांड जैसे पहलुओं पर नजर रखने वाली वेबसाइट सॉफ्टपीडिया (Softpedia) के अनुसार वर्ष 2012 तक विश्वभर में माइक्रोसॉफ्ट ऑफिस इस्तेमाल करने वाले उपयोगकर्ताओं की संख्या एक अरब से भी अधिक है।

• एमएस–ऑफिस के घटक (Components of MS-Office)

माइक्रोसॉफ्ट ऑफिस को समय की मांग के अनुरूप लगातार सुधारा और परिष्कृत किया जाता रहा है। ऐसे में एमएस–ऑफिस में तीनों बुनियादी प्रोग्रामों के अलावा कई नये प्रोग्राम भी लगातार जुड़ते गए हैं। इकाई के इस हिस्से में हम एमएस–ऑफिस के ऐसे ही कुछ प्रोग्राम के बारे में जानकारी हासिल करेंगे:

- **एमएस–वर्ड (MS-Word)**: माइक्रोसॉफ्ट वर्ड एक वर्ड प्रोसेसर है, यानी एक ऐसा प्रोग्राम, जिसमें उपयोगकर्ता टेक्स्ट फाइल तैयार करने के साथ उसमें ग्राफिकल सुधार भी कर सकता है। यह विंडोज और मैक ऑपरेटिंग सिस्टम पर समान रूप से काम करता है। एमएस–वर्ड के बारे में हम यूनिट के अगले हिस्से में विस्तार से जानेंगे।
- **एमएस–एक्सेल (MS-Excel)**: माइक्रोसॉफ्ट एक्सेल मूलतः स्प्रेडशीट (Spreadsheet) आधारित प्रोग्राम है। यहां दिलचस्प पहलू यह है कि एमएस–एक्सेल को सबसे पहले वर्ष 1985 में मैक ऑपरेटिंग सिस्टम के लिए तैयार किया गया था, दो साल बाद वर्ष 1987 में यह प्रोग्राम

विंडोज के साथ कुछ सुधारीकरण के बाद शामिल किया गया। एमएस–एक्सेल के बारे में भी हम यूनिट के अगले हिस्से में विस्तार से जानेंगे।

- **एमएस–पॉवरप्वाइंट (MS-Powerpoint)**: माइक्रोसॉफ्ट पॉवरप्वाइंट विंडोज और मैक ऑपरेटिंग सिस्टम का प्रजेंटेशन प्रोग्राम (Presentation Program) है। इसकी मदद से उपयोगकर्ता टेक्स्ट, ग्राफिक्स आदि की मदद से स्लाइड शो (Slide Show) तैयार कर सकता है, जिन्हें प्रिंट किया जा सकता है या प्रोजेक्टर की मदद से प्रजेंट करना संभव हो पाता है।
- **एमएस–एक्सेस (MS-Access)**: माइक्रोसॉफ्ट एक्सेस मूलतः डाटाबेस मैनेजमेंट सिस्टम (Database Management System) है, जो एमएस–ऑफिस सुइट का हिस्सा है। हालांकि, पर्सनल कंप्यूटरों से इतर इसका उपयोग प्रोफेशनल (Proffessional) कंप्यूटरों पर ही किया जाता है। डाटाबेस का अर्थ प्रोग्राम स्कीम, क्वेरी (Queries), टेबल, रिपोर्ट और उन अन्य जरूरी डाटा का सामूहिक स्वरूप है जो किसी प्रोग्राम या ऑपरेटिंग सिस्टम के सफल संचालन के लिए जरूरी होता है। डाटाबेस मैनेजमेंट सिस्टम दरअसल एक तरह का सॉफ्टवेयर प्रोग्राम होता है जो उपयोगकर्ता, कंप्यूटर पर मौजूद दूसरी एप्लीकेशनों और अपने ही भीतर मौजूद डाटा का परीक्षण (Analyzation) करता है, जिससे प्रोग्राम की कार्यशैली में सुधार आता है। किसी तरह की दिक्कत आने पर यह ऑनलाइन जुड़ने पर जेट डाटाबेस इंजन (Jet Databse Engine) से संपर्क करता है। जेट डाटाबेस इंजन, उन सभी प्रोग्रामों, एप्लीकेशनों के डाटाबेसों का विस्तृत खजाना है, जो माइक्रोसॉफ्ट ने तैयार किए हैं।
- **माइक्रोसॉफ्ट आउटलुक (MS-Outlook)**: माइक्रोसॉफ्ट आउटलुक मूलतः पर्सनल इंफॉर्मेशन मैनेजर (Personal Information Manager) है। विंडोज ऑपरेटिंग सिस्टम के साथ यह प्रोग्राम इसलिए शमिल किया गया था कि उपयोगकर्ता इसकी मदद से अपनी व्यक्तिगत जानकारियां, फोटो, डाटा, वीडियो और कोई भी अपेक्षित सूचना इस प्रोग्राम में सुरक्षित कर सकता था।

  विंडोज ने वर्ष 1997 में लांच विंडोज ऑपरेटिंग सिस्टम 97 के साथ पहली बार आउटलुक को शामिल किया था। आउटलुक की खासियत यह है कि इसे ऑपरेटिंग सिस्टम के सहयोगी प्रोग्राम के तौर पर भी इस्तेमाल किया जा सकता है और एक स्वतंत्र एप्लीकेशन या प्रोग्राम के तौर पर भी। हालांकि, यह विशेष तौर पर स्वतंत्र प्रोग्राम के तौर पर ही उपयोग किया जाता है। इसकी वजह इसमें ई–मेल, कैलेंडर, टास्क मैनेजर (Task Manager) फंक्शन की उपलब्धता है। अपने फीचर की वजह से यह कार्यालयी (Official) कार्यों के लिए उपयुक्त प्रोग्राम बन गया। माइक्रोसॉफ्ट एक्सचेंज सर्वर (Microsoft Exchange Server) और माइक्रोसॉफ्ट शेयरप्वाइंट सर्वर (Microsoft Sharepoint Server) से जुड़कर एमएस–आउटलुक साझा मेल बॉक्स (Mailbox), एक्सचेंज पब्लिक फोल्डर, शेयर प्वाइंट सूची और उपयोगकर्ता के अन्य ई–मेल कंपनियों पर बने ई–मेल खातों (E-mail Accounts) पर मिलने वाली ई–मेल को आयात करने जैसे कार्यालयी उपयोगी कार्यों में खासा मददगार होता है। यही वजह है कि आज अधिकतर कंपनियों में आउटलुक को ही कर्मचारियों की अधिकृत ई–मेल आईडी के तौर पर प्रयोग किया जाता है। जनवरी 2015 में माइक्रोसॉफ्ट ने एंड्रॉयड और आईफोन ऑपरेटिंग सिस्टम पर चलने वाले स्मार्टफोन (Smartphones) और टैबलेट (Tablets) के लिए ऑफिस 365 के साथ ई–मेल, कैलेंडर और कांटेक्ट फीचर वाला आउटलुक वर्जन जारी किया।

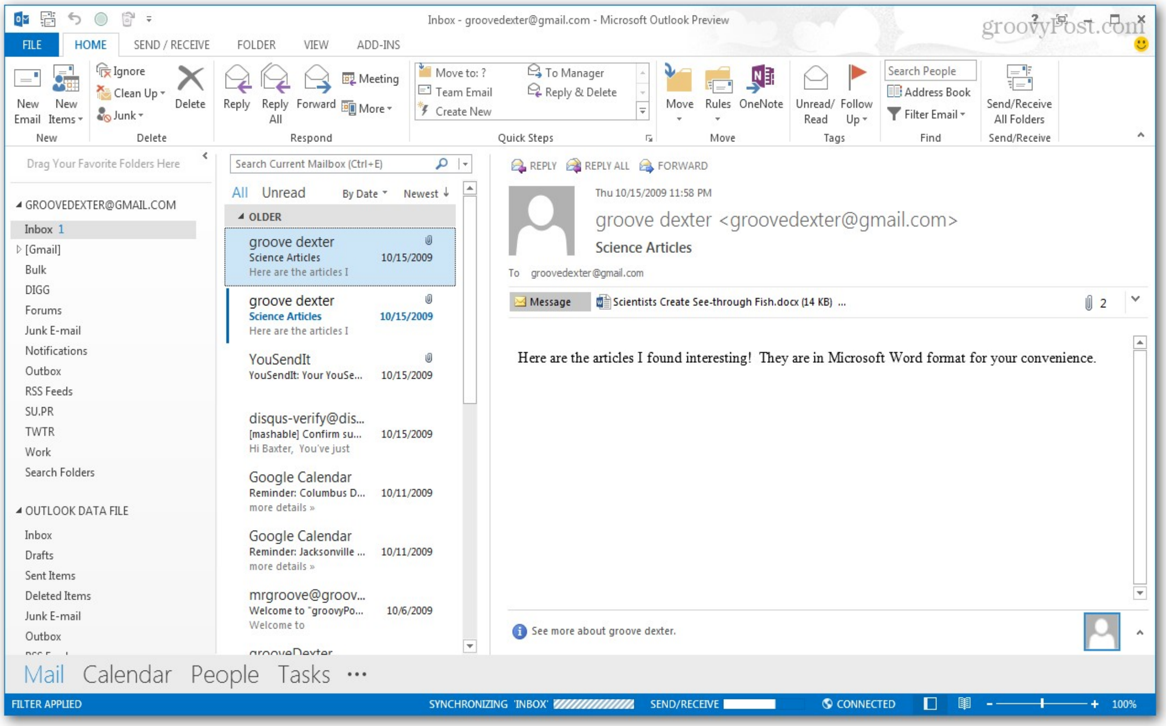

(माइक्रोसॉफ्ट आउटलुक एप्लीके□ान)

- **आउटलुक एक्सप्रेस (Outlook Express)**: माइक्रोसॉफ्ट के इस एप्लीकेशन का नाम भी पिछले एप्लीकेशन या प्रोग्राम के समान है, लेकिन यह आउटलुक से भिन्न है। दरअसल यह प्रोग्राम मूलतः ई–मेल और माइक्रोसॉफ्ट इंटरनेट एक्सप्लोरर से जुड़ा हुआ था। वर्ष 1996 में माइक्रोसॉफ्ट ने माइक्रोसॉफ्ट इंटरनेट मेल एंड न्यूज (MS-Internet Mail and News) नाम से नया फीचर विंडोज 95 में शामिल किया। इसके साथ ही इंटरनेट एक्सप्लोरर 3 वर्जन भी लांच किया गया था। हालांकि, तब यह मेल तब सिर्फ प्लेन टेक्स्ट (Plain Text) या रिच टेक्स्ट फॉरमेट (RTF) को ही सपोर्ट करती थी, हाइपर टेक्स्ट मार्कअप लैंग्वेज (HTML) को नहीं। वर्ष 1997 में माइक्रोसॉफ्ट इंटरनेट मेल एंड न्यूज को परिष्कृत कर इंटरनेट एक्सप्लोरर 4.0 के साथ आउटलुक एक्सप्रेस लांच किया गया।

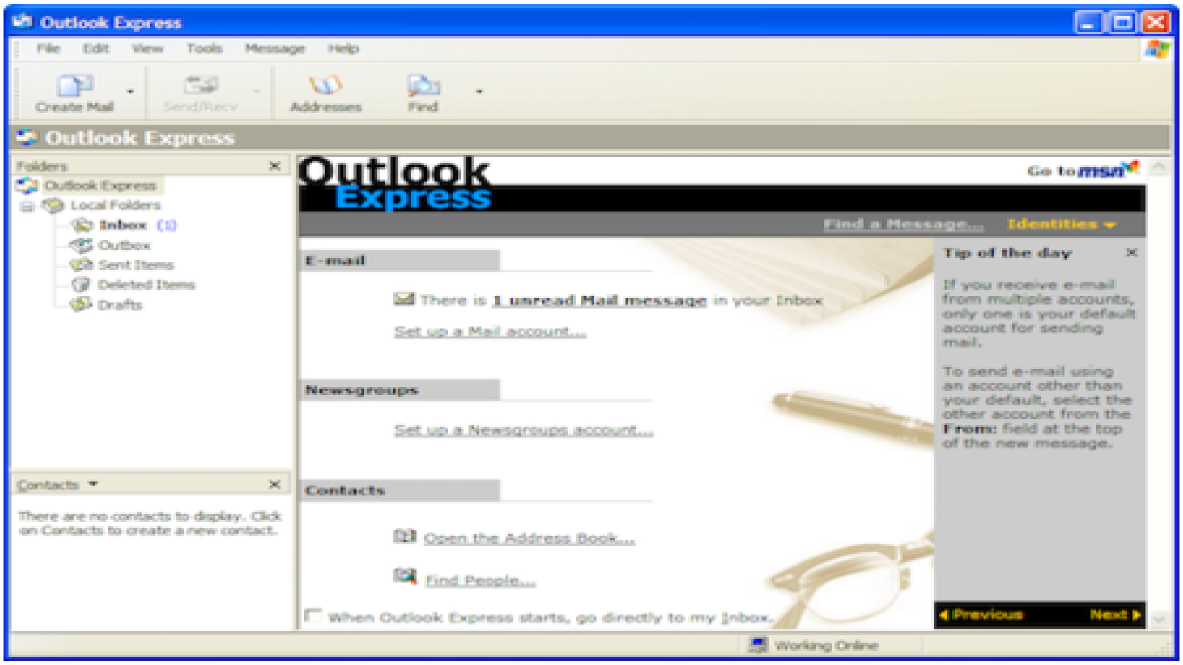

(आउटलुक एक्सप्रेस)

आउटलुक एक्सप्रेस की बड़ी खामी यह थी कि इसमें सुरक्षा उपकरणों का अभाव था। हालांकि, माइक्रोसॉफ्ट ने इसमें कुछ फीचर जोड़ने का प्रयास तो किया, लेकिन वे नाकाफी साबित हुए। आखिर वर्ष 2005 में विंडोज मेल (Windows Mail) की लांचिंग के साथ आउटलुक एक्सप्रेस को रिप्लेस (Replace) कर दिया गया।

- **एमएस–वन नोट (MS-One Note)**: माइक्रोसॉफ्ट वन नोट भी एमएस–ऑफिस सुइट का की (Key) कंपोनेंट है। यह प्रोग्राम मूलतः नेटवर्किंग पर आधारित है। वर्ष 2003 में रिलीज हुआ यह प्रोग्राम एमएस–ऑफिस के ऑनलाइन संस्करण के जरिये यह किसी वन नोट उपयोगकर्ता को दूसरे वन नोट उपयोगकर्ता तक सूचनाएं भेजने की सुविधा प्रदान करता है। इसके अलावा यह उपयोगकर्ता के हर तरह के डाटा को संग्रहीत (Collect) करने की भी सहूलियत देता है, चाहे वे हस्तलिखित (Handwritten) हों, ड्राइंग (Drawing) के रूप में हों या ऑडियो (Audio) के रूप में। विंडोज 10 समेत यह फीचर इस तरह के ऑपरेटिंग सिस्टमों में ज्यादा कारगर है, जो टचस्क्रीन हैं या जिनमें कीबोर्ड के बजाय पेन (Digital Pen) का इस्तेमाल किया जाता है। यही वजह है कि माइक्रोसॉफ्ट ने इस प्रोग्राम का स्टैंडअलोन (Standalone) संस्करण (Version) विंडोज फोन, आईफोन और एंड्रॉयड के लिए लांच किया है।
- **एमएस–स्वे (MS-Sway)**: माइक्रोसॉफ्ट स्वे एमएस–ऑफिस का नवीनतम प्रोग्राम है, जो विंडोज 10 के साथ रिलीज किया गया है। 39 भाषाओं में उपलब्ध स्वे मूलतः पॉवरप्वाइंट की तरह प्रजेंटेशन पर आधारित है, लेकिन यह प्रोग्राम उपयोगकर्ता को यह सुविधा प्रदान करता है कि वह टेक्स्ट, फोटो, ऑडियो आदि को जोड़कर प्रजेंटेशन लायक वेबसाइट (Website) बना सके। हालांकि, इसके लिए उपयोगकर्ता का माइक्रोसॉफ्ट एकाउंट होना जरूरी है। एकाउंट बनने के बाद उपयोगकर्ता अपने डेस्कटॉप, लैपटॉप पर संग्रहीत डाटा को स्वे के जरिये

माइक्रोसॉफ्ट सर्वर पर सुरक्षित रख सकता है। यही नहीं, स्वे उपयोगकर्ता को यह भी सहूलियत प्रदान करता है कि वह फेसबुक जैसी सोशल नेटवर्किंग साइट, यू–ट्यूब आदि से सीधे कोई फोटो, ऑडियो, लिंक या कोई अन्य डाटा–जानकारी भी स्वे के जरिये अपनी वेबसाइट में सीधे जोड़ सकता है। इन वेबसाइट को किसी भी ऐसी वेब एप (Web Applications) की मदद से देखा या संपादित (Edit) किया जा सकता है, जो एमएस–ऑफिस ऑनलाइन एप पर संचालित होने में सक्षम हों। विंडोज 10 के अलावा आईफोन भी ऐसे ऑपरेटिंग सिस्टम हैं, जिन पर स्वे को चलाया जा सकता है। एंड्रॉयड और विंडोज फोन पर यह सुविधा फिलहाल उपलब्ध नहीं है, लेकिन माइक्रोसॉफ्ट की ओर से इस दिशा में काम किया जा रहा है।

- **एमएस–डेस्कटॉप पब्लिशिंग (Desktop Publishing):** डेस्कटॉप पब्लिशिंग एमएस–ऑफिस सुइट में शामिल वह प्रोग्राम है, जो उपयोगकर्ता को पर्सनल कंप्यूटर पर ऐसी सामग्री तैयार करने की सहूलियत प्रदान करता है, जो छापी (Print) जानी हो। इस प्रोग्राम में पेज लेआउट (Page Layout) टेक्स्ट, इमेज आदि की लंबी श्रृंखला रहती है। इनकी मदद से ग्रीटिंग कार्ड, कैलेंडर, पत्रिकाएं, ब्रोशर (Brouchures) लेबल, स्टिकर, बिजनेस कार्ड, पोस्टकार्ड, वेबसाइट आदि डिजाइन किए जाते हैं। इस एप्लीकेशन का इस्तेमाल मूलतः पब्लिशिंग कारोबारी ही करते हैं।
- **एमएस–सर्वर और वेब सर्विस (MS-Server & Web Services):** माइक्रोसॉफ्ट अपने सभी ऑपरेटिंग सिस्टम, प्रोग्राम और एएस–ऑफिस सुइट को साझा सर्वर के जरिये संयुक्त रखता है। माइक्रोसॉफ्ट शेयर प्वाइंट (MS-Sharepoint) ऐसा ही सर्वर है। इसकी वजह से माइक्रोसॉफ्ट के सभी एप्लीकेशन का इस्तेमाल ऑनलाइन करना भी संभव हो पाता है। एक्सेल सर्वर, एमएस–प्रोजेक्ट सर्वर, एमएस–सर्च सर्वर, इंफोपाथ फार्म सर्विस और माइक्रोसॉफ्ट लिंक सर्वर ऐसे ही कुछ सर्वर हैं।

  माइक्रोसॉफ्ट वेब सर्विसेज की बात करें तो कंपनी अपने लगभग सभी उत्पादों की ऑनलाइन सेवा भी उपलब्ध कराती है। वर्ड ऑनलाइन, एक्सेल ऑनलाइन, पॉवरप्वाइंट ऑनलाइन, वननोट ऑनलाइन, आउटलुक.कॉम, पीपुल (आउटलुक.कॉम से संबद्ध एड्रेस बुक), कैलेंडर, डॉक्स.कॉम (Docs.com- एमएस–ऑफिस उपयोगकर्ता इसकी मदद से अपने प्रोफाइल में अपनी वर्डफाइल, पीडीएफ, पॉवरप्वाइंट प्रजेंटेशन आदि सुरक्षित रख सकता है), वन ड्राइव, स्वे, प्लानर, वीडियो आदि एमएस–ऑनलाइन सर्विस हैं।

- **एमएस–ऑफिस के वर्जन (Versions of MS-Office)**

एमएस–ऑफिस के कई वर्जन व्यावसायिक उपयोग और पर्सनल कंप्यूटरों के लिए उपलब्ध हैं, लेकिन इनमें सबसे अधिक प्रचलन वाला वर्जन एमएस–ऑफिस डेस्कटॉप वर्जन (Desktop Version) है। यह वर्जन मूलतः पर्सनल कंप्यूटरों के लिए डिजाइन किया गया था, जिन पर विंडोज ऑपरेटिंग सिस्टम या मैक ऑपरेटिंग सिस्टम चलाए जाते हैं। हम जान चुके हैं कि एमएस–ऑफिस का पहला वर्जन वर्ष 1990 में लांच हुआ था। एमएस–ऑफिस का नवीनतम संस्करण (Version) ऑफिस 2016 (Office 2016) है, जो विंडोज और मैक दोनों के लिए क्रमशः 22 सितंबर 2015 और 9 जुलाई 2015 को लांच किया गया था। विंडोज और मैक के लिए एमएस–ऑफिस सुइट के वर्जन, उनमें उपलब्ध सुविधाएं और लांचिंग का वर्ष निम्नवत हैं:

- **विंडोज (Windows):** विंडोज ऑपरेटिंग सिस्टम के लिए माइक्रोसॉफ्ट ने पहला एमएस–ऑफिस सुइट वर्ष 1990 में लांच किया था। इसका नाम एमएस–ऑफिस 4.0 था। इसके दो साल बाद एमएस–ऑफिस 3 या 92 वर्ष 1992 में रिलीज हुआ। वर्ष 1993 में एमएस–ऑफिस 4.X, वर्ष 1995 में एमएस–ऑफिस 95 और वर्ष 1997 में एमएस–ऑफिस 8.0 या 97 लांच किए गए। विंडोज के लिए एमएस–ऑफिस सुइट की श्रृंखला यहीं नहीं थमी। वर्ष 2000 में माइक्रोसॉफ्ट ने एमएस–ऑफिस 9.0 या 2000 लांच किया। इसके दो साल बाद यानी वर्ष 2002 में एमएस–ऑफिस XP रिलीज किया गया। वर्ष 2003 में एमएस–ऑफिस 11.0, 2007 में एमएस–ऑफिस 12.0 और वर्ष 2010 में एमएस–ऑफिस 14.0 माइक्रोसॉफ्ट ने लांच किए। वर्ष 2013 में एमएस–ऑफिस 15 या 2013 के बाद माइक्रोसॉफ्ट का अब तक का अंतिम एमएस–ऑफिस सुइट 2016 वर्ष 2016 में लांच हुआ।
- **मैक (Mac):** मैक ऑपरेटिंग सिस्टम के लिए माइक्रोसॉफ्ट ने वर्ष 1984 में पहली बार एमएस–वर्ड इंट्रोड्यूस (Introduce) किया था। इसका वर्जन एमएस–वर्ड 1.0 था। एक साल बाद 1985 में मैक के साथ एक्सेल 1.0 और इसके दो साल बाद यानी वर्ष 1987 में पॉवरप्वाइंट 1.0 भी मैक (Macintosh) ऑपरेटिंग सिस्टम में शामिल किए गए। वर्ष 1989 में माइक्रोसॉफ्ट ने पहली बार एमएस–ऑफिस सुइट के तीनों बुनियादी प्रोग्रामों वर्ड, एक्सेल और पॉवरप्वाइंट को संयुक्त कर ऑफिस मैक नाम से मैक ऑपरेटिंग सिस्टम के लिए लांच किया। वर्ष 1991 में ऑफिस मैक 1.5, 1992 में ऑफिस 3.0 और 1994 में ऑफिस 4.2 जारी किया गया। वर्ष 1998 में माइक्रोसॉफ्ट ने मैक ऑपरेटिंग सिस्टम के लिए अपना ऑफिस सुइट 98 लांच किया। वर्ष 2000 में ऑफिस मैक 2001, वर्ष 2001 में ऑफिस V.X और वर्ष 2004 में ऑफिस 2004 जारी हुए। इसके बाद 2008 में ऑफिस 2008, 2010 में ऑफिस 2011 जारी किए गए। मैक ऑपरेटिंग सिस्टम के साथ वन नोट और आउटलुक की सुविधाएं माइक्रोसॉफ्ट की ओर से वर्ष 2014 में जोड़ी गईं। वर्ष 2015 में माइक्रोसॉफ्ट ने मैक ऑपरेटिंग सिस्टम के लिए अपना अब तक का अंतिम ऑफिस सुइट ऑफिस मैक 2016 लांच किया।

23.4: एमएस–वर्ड (MS-Word)

माइक्रोसॉफ्ट वर्ड मूलतः एक वर्ड प्रोसेसर (Word Processor) है। माइक्रोसॉफ्ट ने वर्ष 1983 में यूनिक्स (Unix) आधारित जेनिक्स (Xenix) ऑपरेटिंग सिस्टम पर चलने वाले माइक्रोकंप्यूटर के लिए अपना पहला वर्ड प्रोसेसिंग प्रोग्राम लांच किया था, तब इसका नाम मल्टी टूल वर्ड (Multi Tool Word) था। इसी वर्ष इसे आईबीएम के डिस्क ऑपरेटिंग सिस्टम (DOS) आधारित कंप्यूटरों में भी शामिल किया गया। कालान्तर में वर्ड के वर्जन लांच होते गए। वर्ष 1989 में एमएस–वर्ड को विंडोज ऑपरेटिंग सिस्टम में शामिल किया गया और वर्ष 1990 में यह एमएस–ऑफिस सुइट का अभिन्न अंग बन गया।

वर्ष 2010 में एमएस–वर्ड का नवीनतम संस्करण (Version) लांच किया गया है। हालांकि, एमएस–वर्ड 2007 सर्वाधिक प्रचलित एमएस–वर्ड संस्करण है। अधिकतर पर्सनल कंप्यूटरों पर एमएस–ऑफिस सुइट में वर्ड के इसी संस्करण का उपयोग किया जाता है। इकाई के इस भाग में हम भी एमएस–वर्ड के बारे में ही विस्तार से अध्ययन करेंगे। यहां यह उल्लेखनीय है कि माइक्रोसॉफ्ट विंडोज ऑपरेटिंग सिस्टम में वर्डपैड (Wordpad) नाम से एक स्वतंत्र वर्ड प्रोसेसर भी उपलब्ध रहता है, लेकिन वर्डपैड में उपयोगकर्ता को मिलने वाली सुविधाएं काफी सीमित रहती हैं। एमएस–वर्ड में वर्डपैड के मुकाबले कहीं

अधिक साधन (Tools) उपलब्ध रहते हैं, जिससे उपयोगकर्ता के लिए अपने दस्तावेजों को तैयार करने और इन्हें बेहतर साज–सज्जा के साथ आकर्षक स्वरूप देना अधिक सरलीकृत और सुगम हो जाता है। इस लिहाज से हम यह भी मान सकते हैं कि एमएस–वर्ड वर्ड प्रोसेसिंग प्रोग्रामों के लिहाज से वर्डपैड की अगली और परिष्कृत कड़ी है।

एमएस–वर्ड के साधन (Tools of MS-Word)

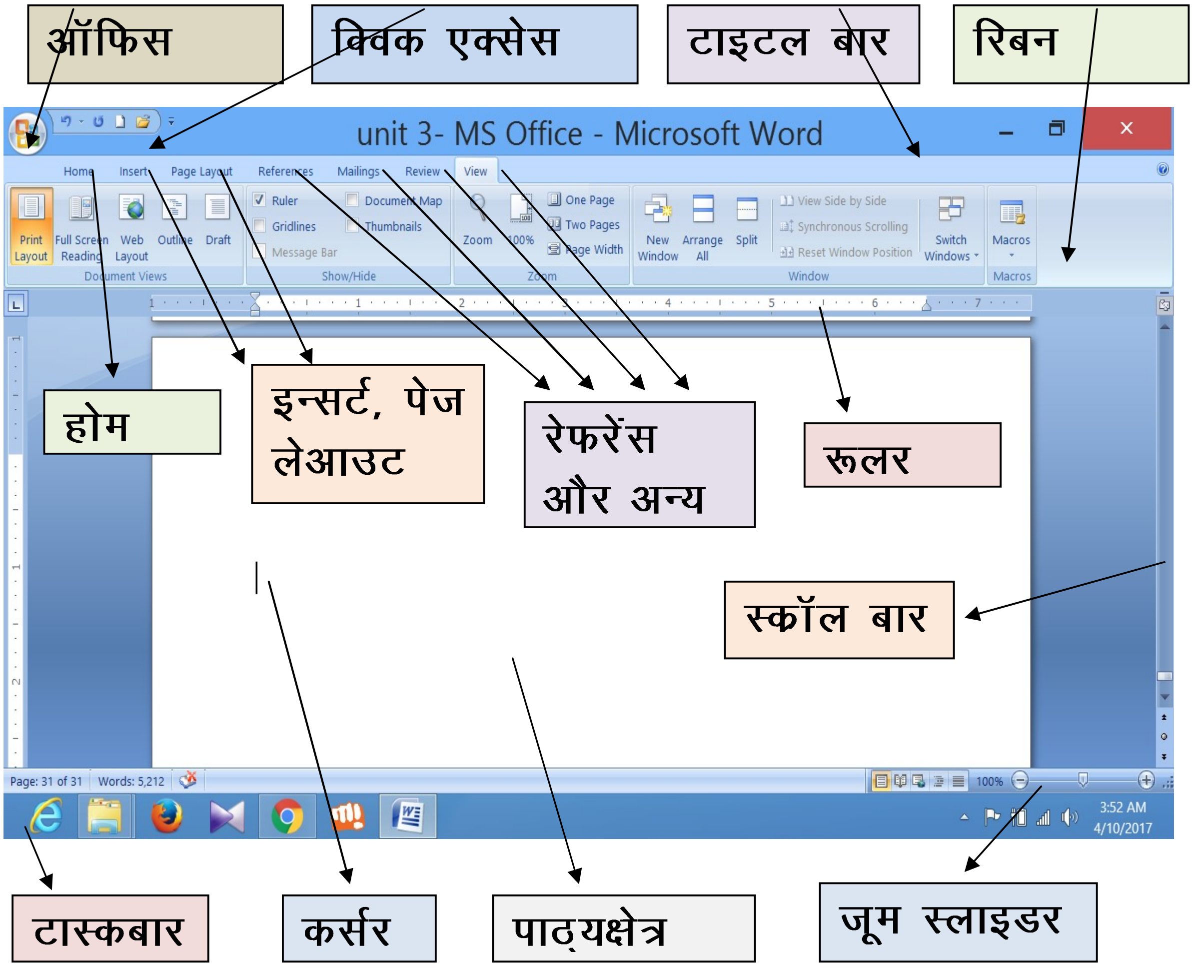

उपरोक्त चित्र में एमएस–वर्ड प्रोग्राम के प्रमुख हिस्से दर्शाए गए हैं, जिन्हें हम इस प्रोग्राम के साधन (Tools) मान सकते हैं। यहां साधन का तात्पर्य प्रोग्राम में मौजूद उन सुविधाओं से है, जो एमएस–वर्ड को उपयोगकर्ता के प्रयोग के लिए सरल बनाते हैं और अभीष्ट परिणाम उपलब्ध कराने में मददगार होते हैं। इन सभी साधनों को हम निम्नवत क्रमवार विस्तार से जान लेते हैं:

- **टाइटल बार (Title Bar):** जैसा कि नाम से ही स्पष्ट हो रहा है, प्रोग्राम के इस हिस्से में शीर्षक यानी टाइटल नजर आता है। उपयोगकर्ता जो भी फाइल, दस्तावेज बना रहा है यदि उसने इसे कुछ नाम दिया है तो वह नाम टाइटल बार में नजर आता है। यदि कोई नाम नहीं

दिया है तो टाइटल बार में अनटाइटल्ड डॉक्यूमेंट (Untitled Document) लिखा दिखता है।

- **ऑफिस बटन (Office Button):** एमएस–वर्ड के पुराने वर्जनों में इसके स्थान पर फाइल मेन्यू रहता था। लेकिन वर्ड 2007 में इसे बदलकर ऑफिस बटन कर दिया गया है। टाइटल बार के सबसे उपरी हिस्से में बायीं ओर विंडोज के लोगो वाला गोल बटन नजर आता है, वही ऑफिस बटन है। इस बटन पर क्लिक करते ही कई विकल्प (Option) सामने खुल जाते हैं। इनमें न्यू (New) बटन पर क्लिक करते ही नयी फाइल खुल जाती है, जिस पर उपयोगकर्ता अपना नया दस्तावेज तैयार कर सकता है। ओपन (Open) पर क्लिक करने से कंप्यूटर पर पहले से सुरक्षित दस्तावेज या फाइल खोली जा सकती है। सेव (Save) पर क्लिक करने से उपयोगकर्ता अपनी फाइल को सुरक्षित कर सकता है। सेव एज (Save As) उपयोगकर्ता को यह सुविधा प्रदान करता है कि वह अपने दस्तावेज को वर्ड डॉक्यूमेंट फाइल या अन्य किसी फॉरमेट में सुरक्षित कर सके। प्रिंट (Print) बटन पर क्लिक करने से उपयोगकर्ता अपने दस्तावेज का प्रिंट हासिल कर सकता है। इसका अगला बटन है प्रीपेयर (Prepare) की मदद से उपयोगकर्ता अपने दस्तावेज में कई ऐसे फीचर जोड़ सकता है, जो दस्तावेज को किसी अन्य उपयोगकर्ता के प्रयोग करने की स्थिति में इसे सुरक्षित रखें और अपरिवर्तनीय बना सकें। सेंड (Send) बटन दस्तावेज को ई–मेल के जरिये किसी दूसरे कंप्यूटर या उपयोगकर्ता तक भेजने की सुविधा देता है। पब्लिश (Publish) की मदद से उपयोगकर्ता अपने दस्तावेज को ब्लॉग बना सकता है या माइक्रोसॉफ्ट के डाटा मैनेजमेंट सर्वर में सुरक्षित रख सकता है। आखिरी बटन क्लोज (Close) है, जिसका अर्थ है बंद करना, यानी इसकी मदद से उपयोगकर्ता अपनी फाइल बंद कर सकता है।
- **क्विक एक्सेस टूलबार (Quick Access Toolbar):** ऑफिस बटन के ठीक उपर दायीं ओर क्विक एक्सेस टूलबार होता है। इसमें वे कमांड (Commands) शामिल हैं, जिनका इस्तेमाल उपयोगकर्ता एमएस–वर्ड पर काम करते वक्त बार–बार करता है। ऐसे में उसे लंबी प्रक्रिया से गुजरने के बजाय सीधे इन पर क्लिक कर काम करने की सुविधा मिलती है। इनमें सेव (save), अनडू (Undo), रिपीट (Repeat), ओपन (Open) जैसी कमांड शामिल हैं। उपयोगकर्ता अपनी जरूरत के हिसाब से टूलबार में कमांड जोड़ या हटा सकता है।
- **रिबन (Ribbon):** एमएस–वर्ड में अलग–अलग सात टैब (Tab) हैं। हर टैब एक खास तरह के कमांड का समूह है और ये सातों टैब जहां अवस्थित रहती हैं, उस हिस्से को रिबन कहा जाता है। यह टाइटल बार से नीचे अगली लंबी पट्टी होती है। ये सात टैब हैं होम, इन्सर्ट, पेज लेआउट, रेफरेंसेज, मेलिंग्स, रिव्यू और व्यू। आइए हम संक्षेप में इन सातों टैब के बारे में जानते हैं:

1. **होम टैब (Home Tab):** होम टैब की मदद से मुख्यतः पांच कार्य किए जा सकते हैं। यह भी मान सकते हैं कि किसी उपयोगकर्ता के लिए अपनी डॉक्यूमेंट फाइल तैयार करते वक्त सबसे अधिक जिन कमांड की जरूरत होती है। इनमें क्लिपबोर्ड, फॉन्ट, पैराग्राफ, स्टाइल और एडिटिंग शामिल हैं। इन सभी कमांडों की मदद से उपयोगकर्ता इच्छानुसार काम कर सकता है।
2. **इन्सर्ट टैब (Insert Tab):** इन्सर्ट का हिन्दी अर्थ है जोड़ना या घुसाना। उपयोगकर्ता अपनी फाइल में जब भी कोई ग्राफिक, चित्र, कोई खास चिह्न, टेबल आदि जोड़ना चाहता है तो

इन्सर्ट टैब मददगार साबित होती है। इस टैब के भी सात हिस्से हैं, पेजेस (Pages), टेबल्स (Tables), इलस्ट्रेशन (Illustrations), लिंक्स (Links), हेडर एंड फुटर (Header and Footer), टेक्स्ट (Text) और सिंबल्स (Symbols). पेजेस की मदद से उपयोगकर्ता मनचाहा पेज इस्तेमाल कर सकता है, जिस पर वह अपनी फाइल तैयार करना चाहता है। टेबल की मदद से उपयोगकर्ता सारिणी तैयार कर सकता है, जो कई दस्तावेजों में चीजों को समझाने में खासी उपयोगी होती हैं। इलस्ट्रेशन टैब उपयोगकर्ता को पिक्चर यानी फोटो, क्लिपआर्ट यानी चित्र, लोगो लगाने की सुविधा देती हैं। शेप्स की मदद से उपयोगकर्ता कई तरह की आकृतियों का इस्तेमाल कर सकता है। स्मार्टआर्ट में कई खास तरह के ग्राफिक्स का समूह पहले से उपलब्ध रहता है, जिनमें से उपयोगकर्ता मनचाहा चुन सकता है। चार्ट की मदद से दस्तावेज में ग्राफ (Graph) बनाए जा सकते हैं जो तुलनात्मक अध्ययन में मददगार होते हैं। लिंक्स की मदद से उपयोगकर्ता अपने दस्तावेज (Document) को वेबपेज की तरह तैयार कर सकता है, बुकमार्क बना सकता है। हेडर एंड फुटर किसी दस्तावेज का हेडर, यानी शीर्षक या परिचय और फुटर यानी निष्कर्ष को विशेष तरह से लिखने की सुविधा देता है। इसी टैब में पेज नंबर का भी विकल्प मौजूद होता है, इसकी मदद से उपयोगकर्ता अपने दस्तावेज में पन्नों के नंबर तय कर सकता है। टेक्स्ट टैब से उपयोगकर्ता को अपने पाठ्य को आकर्षक बनाने में मदद मिलती है। सिंबल्स की मदद से कुछ ऐसे संकेत, चिह्न पाठ्य में जोड़े जा सकते हैं, जिन्हें सामान्य तौर पर लिखना या टाइप कर पाना संभव नहीं हो पाता। इसमें कई गणितीय संकेत भी शामिल हैं।

3. **पेज लेआउट (Page Layout):** इस टैब में पांच कार्यसमूह होते हैं। थीम्स (Themes), पेज सेटअप (Page Setup), पेज बैकग्राउंड (Page Background), पैराग्राफ (Paragraph), अरेंज (Arrange). इन सभी की मदद से उपयोगकर्ता यह तय कर पाता है कि उसे अपना दस्तावेज किस तरह तैयार करना है। उसका स्वरूप कैसा होगा, पन्ने पर हाशिये (Margins) कितनी चौड़ाई के होंगे, पन्ने का आकार (Size) कितना होगा, कॉलम कैसे होंगे, पैराग्राफ के बीच दूरी कितनी रहेगी आदि।
4. **रेफरेंसेज** (References): उपयोगकर्ता जब कोई दस्तावेज तैयार करता है तो कई बार पाठ्य के साथ कुछ अन्य टिप्पणियां जोड़ने की भी जरूरत महसूस होती है। उदाहरण के तौर पर विषयसूची, शीर्षक, संदर्भ, फुटनोट, एंडनोट आदि। इस टैब में उपलब्ध कमांड टेबल ऑफ कंटेन्ट्स (Table of Contents), फुटनोट्स, साइटेशन एंड बिबिलोग्राफी (Citations and Bibilography), कैप्शन (Capyions), इन्डेक्स (Index) और टेबल ऑफ अथॉरिटीज (Table of Authorities) से यह सब कर पाना संभव होता है।
5. **मेलिंग्स (Mailings):** इस टैब के पांच भाग हैं, क्रिएट (Create), स्टार्ट मेल मर्ज (Start Mail Merge), राइट एंड इन्सर्ट फील्ड्स (Write & Insert Fields), प्रीव्यू रिजल्ट्स (Preview Results) और फिनिश (Finish). यह टैब मुख्यतः तब इस्तेमाल में लाया जाता है, जब उपयोगकर्ता अपने दस्तावेज को ई–मेल के जरिये किसी दूसरे उपयोगकर्ता तक भेजना चाहता हो या वेब संदेश तैयार करना चाहता हो। हालांकि, इसके लिए वर्ड ऑनलाइन (Word Online) से जुड़ा होना आवश्यक है।
6. **रिव्यू (Review):** जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है, यह टैब उपयोगकर्ता को सुधार का अवसर देता है। इसकी छह सहायक टैब हैं, प्रूफिंग (Proofing), कमेंट्स (Comments), ट्रैकिंग

(Tracking), चेंजेस (Changes), कंपेयर (Compare) और प्रोटेक्ट (Protect). इनकी मदद से उपयोगकर्ता अपने दस्तावेज में वर्तनी, व्याकरण की अशुद्धियां दूर कर सकता है, टिप्पणी जोड़ सकता है, दस्तावेज में एक ही बात बार–बार गलती से रिपीट हो रही हो या कॉपी–पेस्ट हो गई हो तो इसे चिह्नित किया जा सकता है। दस्तावेज में कोई सुधारात्मक परिवर्तन करना संभव होता है। यही नहीं, दस्तावेज को इस तरह सुरक्षित किया जा सकता है कि कोई अन्य उपयोगकर्ता इसमें बदलाव नहीं कर सके।

7. **व्यू टैब (View):** इस टैब के पांच सहायक टैब हैं, डॉक्यूमेंट व्यूज (Document Views), शो–हाइड (Show/ Hide), जूम (Zoom), विंडो (Window) और मैक्रो (Macro). इनकी मदद से उपयोगकर्ता अपने दस्तावेज का प्रिंट लेआउट (Print Layout) तय कर सकता है। पन्ने को जूम करके बड़ा या छोटा कर सकता है, ताकि पाठ्यक्षेत्र पर टाइप करने में आसानी हो। दस्तावेज की विंडो को दो टुकड़ों में बांट सकता है, ताकि पाठ्य के दो अलग–अलग भागों को एक ही समय पर पढ़ सके। मैक्रो की मदद से उन कमांड को एक समूह के रूप में व्यवस्थित किया जा सकता है जो दस्तावेज तैयार करने के दौरान उपयोगकर्ता कई बार इस्तेमाल करता है। इन कमांड को सामूहिक रूप देने के बाद एक बार मैक्रो पर क्लिक करने से सभी कमांड काम करती हैं।
8. **अन्य टैब (Other Tabs):** रिबन में कुछ टैब नजर नहीं आती हैं। जैसे डेवलपर टैब (Developer Tab) यह टैब मूलतः तकनीकी उपयोग में काम आती है। वे ही लोग इसे अधिक प्रयोग करते हैं, जो वर्ड के लिए एप्लीकेशन (Applications) तैयार करते हैं। सामान्य दैनिक जीवन में इस टैब का अधिक उपयोग नहीं होता है। इसके अलावा रिलीवेंट टैब (Relevant Tabs) भी वर्ड का हिस्सा हैं। ये टैब वे हैं, जो वर्ड में कोई खास काम करने के दौरान रिबन पर स्वतः उभर आती हैं। मसलन, जब हम दस्तावेज में कोई चित्र जोड़ते हैं तो पिक्चर टूल्स (Picture Tools) खुदबखुद सामने आ जाते हैं।

- **रूलर (Ruler):** वर्ड में काम करते वक्त हमें दो रूलर नजर आते हैं। दरअसल, यह वर्ड का मापक साधन है। इसकी मदद से उपयोगकर्ता यह तय कर पाता है कि दस्तावेज के पन्नों पर हाशिये किस तरह व्यवस्थित होंगे। व्यू टैब में जाकर शो या हाइड से रूरल को हटाया भी जा सकता है।
- **पाठ्यक्षेत्र (Text Area):** हम जानते हैं कि पाठ्यक्षेत्र वर्ड का वह हिस्सा है, जहां उपयोगकर्ता टाइपिंग करता है। सामान्य शब्दों में इसे वर्ड दस्तावेज का एक पन्ना भी मान सकते हैं।
- **कर्सर (Cursor):** कर्सर पाठ्यक्षेत्र में एक खड़ी लकीर (|) की तरह दिखता है। उपयोगकर्ता पाठ्यक्षेत्र में जो भी लिखता यानी टाइप करता है, वह इस कर्सर से ही प्रारंभ होता है। पाठ्यसामग्री के किसी भाग में यदि उपयोगकर्ता को कोई शब्द बदलना हो तो उसके लिए कर्सर को संबंधित शब्द पर ले जाना अनिवार्य होता है, तभी टाइपिंग संभव हो पाती है। इसी तरह पाठ्यक्षेत्र में एक माउस प्वाइंटर (Mouse Pointer) भी नजर आता है जो दिखने में अंग्रेजी अक्षर कैपिटल आई I की तरह होता है। इसे स्क्रीन पर माउस की मदद से कहीं भी ले जाया जा सकता है। जहां पर भी इसे माउस के क्लिक से छोड़ा जाता है, कर्सर वहीं आ जाता है।

- **स्टेटस बार (Status Bar):** यह एमएस–वर्ड के सबसे नीचे की पट्टी है। इसमें जूम स्लाइड (Zoom Slide) के अलावा कुछ अन्य क्विक कमांड मौजूद होती हैं। इसके अलावा बार के बायें हिस्से में दस्तावेज के पन्नों और इसमें टाइप किए गए कुल शब्दों की संख्या दर्शाई जाती है।

23.5: एमएस–एक्सेल (MS-Excel)

माइक्रोसॉफ्ट एक्सेल मूलतः एक स्प्रेडशीट (Spreadsheet) प्रोग्राम है। स्प्रेडशीट दरअसल डाटा या सूचनाओं का सारिणी रूप (Tabular Form) प्रस्तुतीकरण है, जिसमें डाटा या आंकड़ों को सारिणी (Tables) के छोटे हिस्सों, जिन्हें सेल (Cells) कहा जाता है, में दर्ज किया जाता है। यह डाटा अंकीय (Numeric) भी हो सकता है और शब्दीय (Text) के रूप में भी। स्प्रेडशीट कुछ विशेष सूत्रों (Formulas) पर काम करती है, जिसके तहत अलग–अलग सेल में दर्ज आंकड़ों या डाटा के आधार पर पूरा परिणाम प्राप्त किया जा सकता है। ये फॉर्मूला स्वतः (Automatically) काम करते हैं, यानी उपयोगकर्ता को स्प्रेडशीट पर तय सेल में आंकड़े सिर्फ भरने होते हैं और फॉर्मूला की मदद से प्रोग्राम खुद ही नतीजा उपलब्ध करा देता है।

माइक्रोसॉफ्ट ने वर्ष 1987 में पहली बार विंडोज के लिए एमएस–एक्सेल को रिलीज किया था। 1990 में एमएस–ऑफिस सुइट के लांच होने पर इसे सुइट में शामिल कर लिया गया। विंडोज के अलावा यह प्रोग्राम मैक, आईफोन और अब एंड्रॉयड ऑपरेटिंग सिस्टम पर भी उपलब्ध है। संक्षिप्त इतिहास की चर्चा करें तो माइक्रोसॉफ्ट ने वर्ष 1982 में अपना पहला स्प्रेडशीट प्रोग्राम मल्टीप्लान (Multiplan) नाम से लांच किया था। लेकिन आईबीएम के स्प्रेडशीट प्रोग्राम लोटस 1–2–3 (Lotus 1-2-3) के आगे यह टिक नहीं सका। ऐसे में माइक्रोसॉफ्ट ने वर्ष 1985 में मैक ऑपरेटिंग सिस्टम के लिए एमएस–एक्सेल नाम से प्रोग्राम को लांच किया।

- **एमएस–एक्सेल के साधन (Tools of MS-Excel)**

एमएस–एक्सेल की विंडो काफी हद तक एमएस–वर्ड की तरह ही नजर आती है। टाइटल बार, स्टेटस बार इसमें वर्ड के ही समान होता है, अंतर सिर्फ रिबन में रहता है, जहां पांच टैब होम (Home), इन्सर्ट मल्टीप्लान (Insert), पेज लेआउट (Page Layout), फॉर्मूलाज (Formulas), डाटा (Data), रिव्यू (Review) और व्यू (View) होते हैं। इनमें होम, इन्सर्ट, व्यू, पेज लेआउट और रिव्यू टैब लगभग वही हैं, जिन्हें हम एमएस–वर्ड में जान चुके हैं। इन सभी में फीचर्स का बेहद मामूली अंतर है, जो उपयोग के दौरान समझ में आ जाता है, मसलन एक्सेल में इन्सर्ट टैब की सहायक टैब चार्ट में ग्राफ के कुछ नये फीचर सामने आते हैं। इसी तरह हर टैब में हल्का अंतर है। एक्सेल पर उपयोगकर्ता जब भी काम करता है तो स्क्रीन पर सामने आने वाले पाठ्यक्षेत्र को वर्कशीट (Worksheet) कहा जाता है। वर्कशीट कतारों (Row) और कॉलम (Columns) में बंटा होता है। दिलचस्प पहलू यह है कि एक्सेल में अधिकतम एक लाख 48 हजार 576 रो और 16 हजार 384 कॉलम हो सकते हैं।

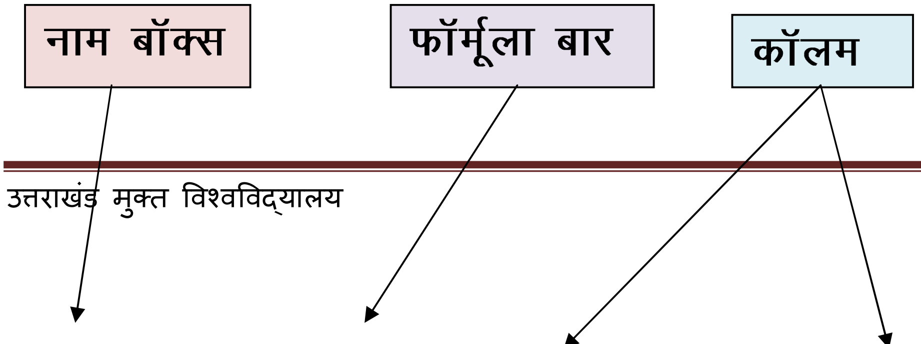

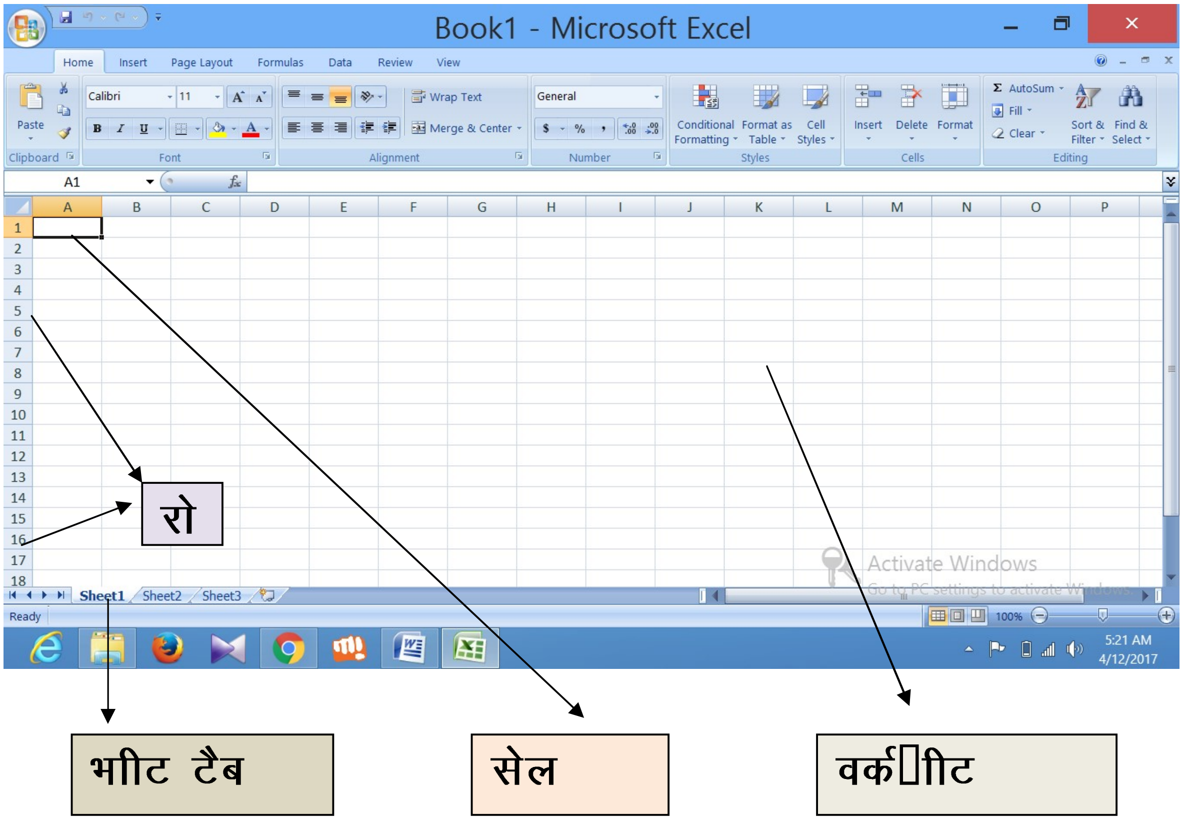

हम जानते हैं कि वर्कशीट में क्षैतिज पंक्तियां और ऊर्ध्वाकार कॉलम होते हैं। कॉलमों पर ए से लेकर जेड और फिर एए, एबी, एसी, एडी...... दर्ज होता है, पंक्तियों में 1,2,3,4,5...... अंक और संख्याएं लिखी होती हैं। हर कॉलम और पंक्ति का छोटा हिस्सा सेल (Cell) होता है। हर सेल की पहचान इसके कॉलम में दर्ज अक्षर और पंक्ति में दर्ज संख्या से होती है। मसलन उपरोक्त चित्र में जो सेल नजर आ रही है, उसका नाम या उसकी पहचान ए1 (A1) है, क्योंकि यह सेल कॉलम ए की पहली पंक्ति पर स्थित है। इसी तरह डी15 (D15) का तात्पर्य यह होगा कि संबंधित सेल डी कॉलम की 15वीं पंक्ति पर स्थित है। इस पहचान को संबंधित सेल का पता (Address) भी कहा जाता है। सेल में भरे जाने वाले टेक्स्ट या शब्दों को लेबल (Label) कहा जाता है। इसी तरह सेल में भरी जाने वाली संख्याओं को वैल्यू (Value) कहा जाता है। एमएस–वर्ड में जिस तरह हमें पाठ्यक्षेत्र में कर्सर मिलता था, एक्सेल की वर्कशीट में जोड़ (+) का एक मोटा निशान नजर आता है, जिसे सेल प्वाइंटर (Cell Pointer) कहते हैं। किसी सेल पर काम करने के लिए इस सेल प्वाइंटर को संबंधित सेल पर ले जाना जरूरी होता है, इससे वह सेल एक्टिव (Active) हो जाती है। इसके बाद हम इसमें लेबल और वैल्यू भर सकते हैं। वैल्यू का अर्थ सिर्फ 0 से 9 तक के अंकों से नहीं है, बल्कि इसमें हम गुणा–भाग, जोड़–घटाने और अन्य निशान भी भर सकते हैं। एक्सेल पर काम करते हुए उपयोगकर्ता

को सेलों का एक आयताकार समूह चुनना पड़ता है। इसके बाद इसी समूह में सारी क्रियाएं की जाती हैं। एक्सेल के इस समूह को रेंज (Range) कहा जाता है।

- **फॉर्मूलाज (Formulas):** एमएस–एक्सेल में फॉर्मूले का विशेष महत्व है। जब हम कोई गणना करना चाहते हैं, मसलन किसी कॉलम की कुछ सेल को जोड़ना, घटाना या गुणा करना चाहते हैं तो इसके लिए हमें फॉर्मूला बार में इसके लिए सूत्र डालना अनिवार्य होता है। उल्लेखनीय है कि एक्सेल में फॉर्मूले हमेशा = से शुरू होते हैं। अब उदाहरण के लिए मान लें कि सेल ई5 (E5) में हमें जो परिणाम चाहिए, वह ए5, बी5, सी5 का योग और इस योग में से डी5 का अंतर हो तो ई5 सेल पर क्लिक करने के बाद हम फॉर्मूला इस तरह भरेंगे, =a5+b5+c5-d5.
- **फॉर्मूला ऑपरेटर (Formula Operator)**: एक्सेल में हम फॉर्मूला तैयार करने में जिन चिह्नों, टेक्स्ट का इस्तेमाल करते हैं, उन्हें ऑपरेटर कहा जाता है। ये ऑपरेटर निम्नवत हैं:
- **अंकगणितीय ऑपरेटर (Arithmatic Operators): +, -, *, /, %, ^** हैं, जिनका अर्थ क्रमशः जोड़, घटाना, गुणा, भाग, प्रतिशत और घात है। अब यदि हमें डी16 (D16) सेल में बी10 का 45 प्रतिशत मान जानना है तो डी16 सेल को क्लिक करने के बाद फॉर्मूला इस तरह लिखा जाएगा, =b10*45%. कोष्ठकों के इस्तेमाल से जटिल गणनाएं करना भी संभव है। इस तरह के फॉर्मूले इस तरह लिख सकते हैं, =d8+(b5*a6)-(c3*25).
- **तुलना ऑपरेटर (Comparison Operators):** से दो मानों की तुलना करना संभव हो पाता है। ये ऑपरेटर इस प्रकार हैं– =, >>, >>=, <<, <<=, < > इनके अर्थ क्रमशः बराबर, बड़ा, बड़ा या बराबर, छोटा, छोटा या बराबर और बराबर नहीं हैं। इन चिह्नों का प्रयोग सामान्यतः तार्किक फंक्शन (Logical Functions) में किया जाता है।
- **टेक्स्ट ऑपरेटर (Text Operator):** वह ऑपरेटर है, जो किन्हीं दो सेलों में लिखे शब्दों को जोड़ता है। एक्सेल में प्रयुक्त होने वाला एकमात्र टेक्स्ट ऑपरेटर है &. इसका प्रयोग इस तरह होता है, मान लीजिए कि सेल a3 में books और सेल b6 में pens लिखा है और वर्कशीट के सेल c8 में हम books & pens साथ लेना चाहते हैं तो इसका फॉर्मूला =a3&b6 लिखा जाएगा।
- **सन्दर्भ ऑपरेटर (Reference Operators):** हम जानते हैं कि एक्सेल पर काम करने के लिए हम जितनी रो और कॉलम का इस्तेमाल करने वाले हैं, उन्हें वर्कशीट पर पहले सेलेक्ट (Select) करके रेंज तय करनी होती है। अब इस रेंज को दर्शाने के लिए कोलोन चिह्न (:) का प्रयोग किया जाता है। मसलन यदि

उपयोगकर्ता की रेंज a4 से f16 तक है तो इस रेंज को इस तरह प्रदर्शित किया जाएगा, a4:f16.

- **फॉर्मूलों का क्रम (Orders of Formulas):** जिस तरह सामान्य गणित में किसी जटिल गणना का हल निकालने के लिए हम गणितीय चिह्नों को तय क्रम यानी सबसे पहले कोष्ठक, फिर गुणा, भाग.... करते हैं, उसी तरह एक्सेल में भी फॉर्मूला ऑपरेटर का गणनाक्रम तय है, यह इस प्रकार है:

क्रम संख्या	चिह्न	आशय
1	:	रेंज संदर्भ
2	-	ऋणात्मक संख्या
3	%	प्रतिशत
4	^	घातांक
5	* या /	गुणा या भाग
6	+ या -	जोड़ या घटाना
7	&	पाठ्य का जोड़
8	=/<>/<=/>=	तुलना

- **नंबर फॉरमेट (Number Format):** होम टैब में सहायक टैब है नंबर, इसकी मदद से हम नंबर यानी संख्याओं का फॉरमेट तय कर सकते हैं। उल्लेखनीय है कि एक्सेल में कोई संख्या सेल में किस तरह दिखाई देगी, यह सेल के फॉरमेट पर ही निर्भर करता है। इस सहायक टैब में कई तरह के फॉरमेट हैं, लेकिन सामान्य उपयोग में इनमें से मुख्यतः सात–आठ ही इस्तेमाल में आती हैं। जनरल (General) का अर्थ है कि सेल में संख्या को किसी खास फॉरमेट में नहीं दिखाया जाना है, यानीएक्सेल का जो तय फॉरमेट है, उपयोगकर्ता उसे ही इस्तेमाल करना चाहता है। नंबर (Number) पर क्लिक करने के बाद दशमलव

संख्याओं को सेल में टाइप करना संभव हो पाता है। करेंसी (Currency) किसी संख्या के आगे मुद्रा का निशान लगाने के लिए यह कमांड उपयोग की जाती है। डेट (Date) की मदद से संख्या को तारीख के रूप में प्रदर्शित करना संभव हो पाता है। टाइम (Time) कमांड की मदद से संख्याओं को समय के रूप में सेल में दर्शाया जाता है। परसेंटेज (Percentage) यानी संख्या को प्रतिशत रूप में दिखाने के लिए उपयोगी कमांड।

- **फंक्शन (Functions):** एमएस–एक्से में फंक्शन वे सुविधाएं हैं, जिनकी मदद से जटिलतम गणनाएं करना भी आसान हो जाता है। जटिल गणनाओं के फॉर्मूले बनाने के लिए खास गणितीय व्याकरण (Mathematical Syntax) का इस्तेमाल करना होता है। इसमें ये फंक्शन काम आते हैं। एक्सेल में सैकड़ों फंक्शन उपलब्ध होती हैं, जिन्हें वित्तीय (Financial), तारीख और समय (Date & Time), गणित एवं त्रिकोणमिती (Maths & Trigonometry), सांख्यिकीय (Statistical), संदर्भ (Lookup & References), डाटाबेस (Database), पाठ्य (Text), तार्किक (Logical), सूचना (Information), अभियांत्रिकी (Engineering) और घन (Cube). इन फंक्शन के उपयोग और महत्व के बारे में अधिक जानने के लिए एक्सेल हेल्प (Excel Help) की मदद ली जा सकती है। हालांकि, इनका उपयोग सामान्य गणनाओं में बेहद कम किया जाता है।
- **डाटाबेस (Database):** हम जानते हैं कि डाटा का व्यवस्थित समूह डाटा बेस कहलाता है। एक्सेल में पंक्तियों (Rows) और कॉलम (Columns) में दर्ज आंकड़ों की सामूहिक वर्कशीट या रेंज को डाटाबेस कहा जा सकता है। एक्सेल में डाटाबेस की हर पंक्ति को रिकॉर्ड (Record) कहा जाता है। मसलन किसी वर्कशीट में यदि किसी कक्षा के 50 छात्रों के सात विषयों में प्राप्तांकों का विवरण दर्ज है तो a कॉलम की 1 से 50 तक पंक्तियों में छात्रों के नाम लिखे जाएंगे, अब मान लीजिए कि हमें a5 पर दर्ज छात्र के अंक देखने हैं तो पांच नंबर पंक्ति में b5, c5, d5, e5, f5, g5, h5 पर दर्ज विषयवार अंक संबंधित छात्र का रिकॉर्ड होगा।
- **फील्ड (Field):** एक्सेल में हर कॉलम को फील्ड कहा जाता है। इस लिहाज से हर एकल सेल को भी फील्ड माना जा सकता है। हर फील्ड में पाठ्य, संख्या, तारीखें, फंक्शन और फॉर्मूले भरे जा सकते हैं। जब किसी फील्ड में कोई फंक्शन या फॉर्मूला भरा जाता है, तो यह फील्ड गणनाकृत फील्ड (Computed Field) कहा जाता है।

23.6: उपसंहार (The Conclusion)

इकाई के अध्ययन के बाद हम यह जान पाने में सक्षम रहे हैं कि कंप्यूटर पर मानव जीवन के दैनन्दिन कार्यों को सरल बनाने के लिए कौन–कौन से प्रोग्राम उपलब्ध हैं। एमएस–ऑफिस सुइट किस तरह काम करता है और इसके प्रोग्रामों और उनमें उपलब्ध साधनों की मदद से किस तरह हम डॉक्यूमेंट तैयार करने से लेकर गणितीय हिसाब–किताब भी आसानी से कर सकते हैं। साथ ही ऑफिस सुइट की मदद से हम अपने प्रस्तुतीकरण को बेहतर बना सकते हैं। चूंकि, यह प्रायोगिक विषय है, लिहाजा कंप्यूटर पर इन साधनों के उपयोग से इसे और बेहतर समझा जा सकता है।

- **कुछ महत्वपूर्ण तथ्य (Important Facts):**

हम माइक्रोसॉफ्ट ऑफिस सुइट के बारे में विस्तार से जान चुके हैं। अब यह जानना भी आवश्यक हो जाता है कि उपयोगकर्ता जब जिस प्रोग्राम में काम करता है, उसके अनुरूप जो भी दस्तावेज वह बनाता है, उसे विशेष नाम से सुरक्षित करता है। किसी फाइल या दस्तावेज का नाम दो हिस्सों में बंटा होता है। पहला तो वह नाम, जो उपयोगकर्ता संबंधित दस्तावेज को देता है और दूसरा एक्सटेंशन (Extension). एक्सटेंशन दरअसल, इस बात का परिचायक है कि कोई दस्तावेज माइक्रोसॉफ्ट ऑफिस सुइट के किस प्रोग्राम को इस्तेमाल करके बनाया गया है। निम्न सारिणी से जानेंगे कि किस प्रोग्राम का दस्तावेज किस एक्सटेंशन से सेव किया जाता है:

फाइल	एक्सटेंशन	प्रकार	प्रोग्राम
xyz.txt	**.txt**	**टेक्स्टफाइल**	**नोटपैड**
abc.rtf	**.rtf**	**टेक्स्टफाइल**	**वर्डपैड**
puneet.jpg	**.jpg**	**फोटो**	**पेण्ट**
uou.doc	**.doc**	**टेक्स्टफाइल**	**एमएस–वर्ड**
123.xls	**.xls**	**स्प्रेडशीट**	**एमएस–एक्सेल**
uou.ppt	**.ppt**	**प्रजेंटेशन**	**एमएस–पॉवरप्वाइंट**

23.7: अभ्यास प्रश्न (Exercise)

1. इनमें से कौन माइक्रोसॉफ्ट ऑफिस सुइट का हिस्सा नहीं है:

(i) वर्ड

(j) एक्सेल
(k) मीडिया प्लेयर
(l) आउटलुक

2. विंडोज ने मीडिया प्लेयर लांच किया थाः
(i) 1991 में
(j) 2001 में
(k) 1985 में
(l) इनमें से कोई नहीं

3. उपयोगकर्ता को वेबसाइट बनाने की सुविधा इनमें से कौन सा प्रोग्राम प्रदान करता हैः
(i) स्वे
(j) एक्सेल
(k) डेस्कटॉप पब्लिशिंग
(l) उपरोक्त में से सभी

4. माइक्रोसॉफ्ट ऑफिस 365 लांच किया गयाः
(i) 1990 में
(j) 2015 में
(k) 2016 में
(l) 2003 में

5. ऑफिस सुइट से तैयार किसी टेक्स्ट फाइल का एक्सटें□ान निम्न में से कौन सा होता हैः
(i) .txt
(j) .doc
(k) .ppt
(l) इनमें से कोई नहीं

6. माइक्रोसॉफ्ट स्वे प्रोग्राम इनमें से किस विंडोज ऑपरेटिंग सिस्टम के ऑफिस सुइट का हिस्सा हैः
(i) विंडोज 3.0
(j) विंडोज xp
(k) विंडोज 8
(l) विंडोज 10

7. मैक ऑपरेटिंग सिस्टम में एमएस–ऑफिस का कौन सा प्रोग्राम सबसे पहले जारी किया गया थाः
(i) वर्ड
(j) एक्सेल
(k) पॉवरप्वाइंट
(l) उपरोक्त में से सभी

8. वर्श 2005 में आउटलुक एक्सप्रेस को इस प्रोग्राम से रिप्लेस कर दिया गयाः

(i) विंडोज मेल

(j) आउटलुक

(k) इंटरनेट एक्सप्लोरर

(l) इनमें से कोई नहीं

9. इनमें से कौन मूलतः पर्सनल इंफॉर्मोन मैनेजर की तरह काम करता हैः

(i) आउटलुक

(j) आउटलुक एक्सप्रेस

(k) उपरोक्त दोनों

(l) इन दोनों में से कोई नहीं

10. माइक्रोसॉफ्ट एक्सेल निम्न में से किस पर आधारित प्रोग्राम हैः

(i) वर्ड प्रोसेसर

(j) प्रजेंटेशन

(k) स्प्रेडशीट

(l) उपरोक्त सभी

11. बिल गेट्स ने माइक्रोसॉफ्ट ऑफिस सुइट लांच करने की घोशणा कब की थीः

(i) 1988 में

(j) 2000 में

(k) 1997 में

(l) इनमें से कोई नहीं

12. व्यावसायिक प्रिंटिंग में इस्तेमाल किया जाने वाला माइक्रोसॉफ्ट प्रोग्राम हैः

(i) स्वे

(j) वन नोट

(k) डेस्कटॉप पब्लिशिंग

(l) पॉवरप्वाइंट

13. एमएस–ऑफिस सुइट का नवीनतम वर्जन हैः

(i) एमएस–ऑफिस 5

(j) एमएस–ऑफिस 10

(k) एमएस–ऑफिस एक्सपी

(l) एमएस–ऑफिस 16

14. इनमें से कौन सा प्रोग्राम एंड्रॉयड, आईफोन और विंडोज फोन पर भी इस्तेमाल किया जा सकता हैः

(i) वन नोट

(j) वर्ड

(k) एक्सेल

(l) उपरोक्त सभी

15. इस प्रोग्राम के इस्तेमाल के लिए उपयोगकर्ता का माइक्रोसॉफ्ट पर एकाउंट होना आवश्यक है:

(i) वर्ड
(j) स्वे
(k) एक्सेल
(l) इनमें से कोई नही

16. किसी वर्ड दस्तावेज में कितने पन्ने और कितने भाब्द हैं, यह कहां देखा जा सकता है:

(e) टाइटल बार में
(f) इन्सर्ट टैब में
(g) स्टेटस बार में
(h) इनमें से कोई नहीं

17. एक्सले में प्रयोग किया जाने वाला >> किस तरह का ऑपरेटर है:

(e) तुलना ऑपरेटर
(f) अंकगणितीय ऑपरेटर
(g) पाठ्य ऑपरेटर
(h) उपरोक्त में से सभी

18. एमएस–एक्सेल में कॉलम को यह भी कहा जाता हे:

(e) फंक्शन
(f) रिकॉड्र
(g) फील्ड
(h) इनमें से कोई नहीं

19. एक्सेल में कॉलमों की अधिकतम संख्या है:

(e) 64
(f) 1,048,576
(g) 256
(h) 16384

20. एमएस–एक्सेल में उपयोगी पाठ्य ऑपरेटर है:

(e) &
(f) =
(g) *
(h) उपरोक्त में से सभी

23.8: निबंधात्मक प्रश्न (Theroetical Questions)

1. कंप्यूटर पर उपयोगकर्ता की मदद के लिए मौजूद कुछ प्रमुख साधनों यानी टूल्स के बारे में विस्तार से जानकारी दें
2. माइक्रोसॉफ्ट ऑफिस और इसके घटकों के बारे में बताएं।

3. माइक्रोसॉफ्ट ई–मेल, स्वे और वन नोट किस तरह के एमएस––ऑफिस टूल हैं। इनका इस्तेमाल एमएस–ऑफिस के सामान्य टूल से किस तरह अलग है। इनके क्या लाभ हैं।
4. एमएस–वर्ड क्या है, यह किस तरह काम करता है। एमएस–वर्ड में कोई नया दस्तावेज बनाने के लिए उपयोगकर्ता किन साधनों (Tools) की मदद लेता है, इनके बारे में विस्तार से बताएं।
5. एमएस–एक्सेल क्या है। यह किस तरह काम करता है, विस्तार से बताएं। एक्सेल का मानव जीवन में क्या उपयोग है।

इकाई 24 एसपीएसएस SPSS

24.0 उद्देश्य

24.1 प्रस्तावना

24.2 एसपीएसएस में सांख्किीय विधियॉ

24.3 एसपीएसएस में प्रयुक्त प्रोग्राम

24.4 डाटा एन्ट्री

24.5 सारांश

24.6 शब्दावली

24.7 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

24.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची

24.9 निबन्धात्मक प्रश्न

24.0 उद्देश्य

1. एसपीएसएस के सॉफ्टवेयर के बारे में जानकारी
2. डाटा इन्ट्री की विधि के बारे में जानकारी
3. एसपीएसएस में प्रयुक्त सांख्यिकी विधियों की जानकारी

24.1 प्रस्तावना

SPSS एक साफ्टवेयर पैकेज है जिसे सामाजिक विज्ञान के शोधों के लिये प्रयुक्त किया जाता है। हालॉकि अब यह बाजार अनुसंधानों, स्वास्थ्य शोध, कंपनियों द्वारा किये जाने वाले सर्वेक्षणों, सरकारों, शैक्षिक अनुसंधानों तथा बाजार विष्लेशण के लिये भी किया जाता है।

नील बेट तथा ल्टं द्वारा 1990 में (SPSS) का मौलिक मैनुअल जो समाज शास्त्र की सबसे प्रभावशाली पुस्तकों में से एक मानी जाती है के द्वारा साधारण शोधों का भी अच्छी तरह सांख्यिकीय विष्लेशण किया जाता है। इसके द्वारा न केवल सांख्यिकीय विष्लेशण किया जाता है बल्कि इसके द्वारा

आंकड़ों का व्यवस्थापन (Management) केस चुनाव, फाइल, रीशंपिंग आदि से किया जाता है तथा आंकड़ो का लेखीकरण (Documentation) भी किया जाता है।

SPSS के द्वारा जहं एक तरफ आंकड़ो का साधारण प्रतिशत ज्ञात कर सकते हैं वहीं दूसरी ओर जटिल से जटिल सांख्यिकीय विष्लेशण भी कर सकते हैं।

24.2 एसपीएसएस में प्रयुक्त सांख्यिकी विधियॉ

SPSS में सभी प्राथमिक सांख्यिकीय परीक्षण तथा Multivariate Analysis सम्मिलित होते है जैसे–

t-tests

Chi-Square tests

A NOVA

Correlations and other Associations measures

Regression

Nonparametric Tests

Factor Analysis

Cluster Analysis

24.3 एसपीएसएस सॉफ्टवेयर की जानकारी

SPSS साफ्टवेयर खोलने का तरीका : हम किस तरह के कम्प्यूटर पर कार्य कर रहे हैं इसको देखते हुये दो तरह से खोला जा सकता है –

1– अगर डेस्कटॉप पर SPSS का शॉटकट हो तो करसर उसपे रखकर बांयी तरफ माउस पर डबल क्लिक करें।

2– माउस को बांयी तरफ से स्कीन के स्टार्ट बटन पर क्लिक करें, फिर कर्सर को All Programmes पर ले जायें और माउस पर बायीं ओर क्लिक करें। फिर SPSS 12 की विंडो पर माउस बायीं तरफ से क्लिक करें। SPSS 12 का प्रयोग उदाहरण के लिये है।

इन दोंनो में से किसी भी प्रकार से करने पर SPSS का लेआउट खुलता है व डाटा एडिटर बिंडो में जो नया स्थान होता है जो कि स्कीन की बायी तरफ नीचे से चयनित किया जा सकता है।

SPSS Data Editor Window

SPSS Data Editor Window SPSS का मुख्य विडो है ।यही एक ऐसा विडो है जो SPSS Run कराने पर हमेशा खुलता है यह बॉये कोने में लाल आइकॉन से पहचाना जाता है।

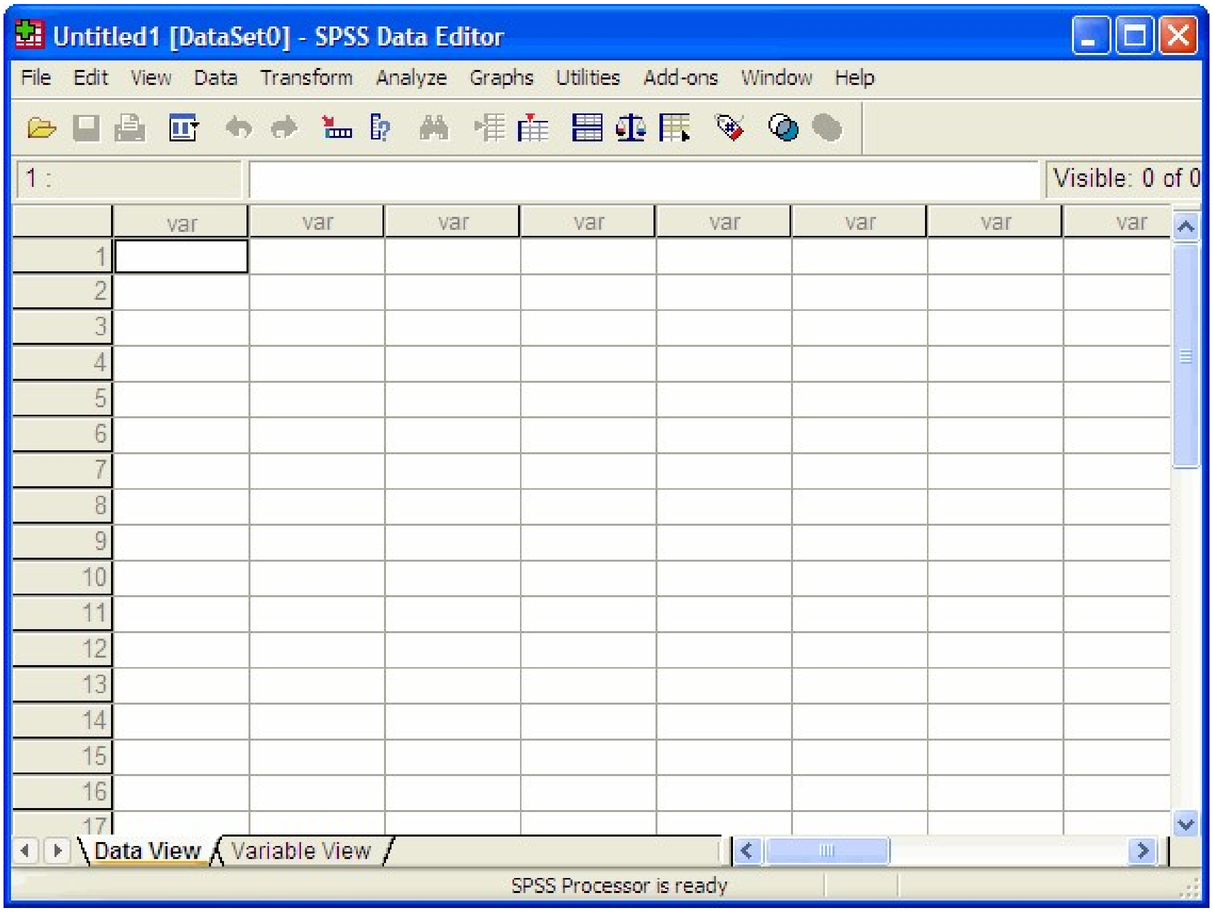

फाइल (File) : फाइल में वे सारे विकल्प होते है जो अन्य प्रोग्राम में होते है जैसे ओपन, सेव, एक्जीट इसमें पुरानी फाइल खोली जाती है या कई प्रकार की नयी फाइलों को खोला जाता है।

एडिट (Edit) में कट, कापी, पेस्ट का कमांड होता है इसके द्वारा आंकड़ा व परिणामों के प्रदर्शन के विभिन्न विकल्प मिलते हैं।

ऑप्शन (Option) पर क्लिक कीजिये और आपको बायीं तरफ डायलाग बाक्स दिखेगा। इसका उपयोग आंकड़ो को प्रारूपित करने, परिणाम तथा चार्ट आदि के लिये प्रयुक्त किये जाते हैं

व्यू (Views) के द्वारा फोंटसाइज, ग्रिड लाइन को जोड़ना या घटाना या मूल आंकड़ो को प्रदर्शित करना या न करने या आंकड़ों का लेबल प्रदर्शित किया जाता है।

Data के द्वारा निश्चित केसों को चुनने करने तथा विशिष्ट चरों के आधार पर आंकड़ो को चयनित किया जाता है।

ट्रांसफार्म (Transform) में प्रस्तुत चरों को परिवर्तित करने के लिये कई विकल्प होते हैं। उदाहरण के लिये, सतत चरों को श्रेणीगत चरों में परिवर्तित किया जा सकता है। प्राप्तांकों को श्रेणियों में परिवर्तित किये जा सकते हैं।

एनेलाइज (Analyze) के द्वारा सांख्यिकी विष्लेशण का कमांड होता है तथा इसके द्वारा विश्लेषित सांख्यिकी का प्रयोग होता है।

ग्राफ (Graph) में बाक्स प्लाट, लाईन ग्राफ, बार चार्ट जैसे कमांड होते हैं।

यूटिलिटी (Utilities) में सभी चरों की लिस्ट बतायी जाती है इसके द्वारा लेवल, वैल्यू, डाटा की लोकेशन तथा प्रकार का प्रयोग होता है।

Addons एडआन्स एक प्रोग्राम है जो SPSS पैकेज में जोड़ा जा सकता है।

विंडो (Windows) के द्वारा यह तय किया जाता है कि किस तरह के विंडो को हम देखना चाहते हैं जैसे – डाटा एडिटर, आउटपुट, यूसर या सिनटैक्स

Help में SPSS पैकेज के कई महत्वपूर्ण विकल्प होते हैं।

डाटा एडिटर के बॉये नीचे के कोने में दो टैब होते है – डाटा व्यू व वैरीबल व्यू । **डाटा व्यू** डाटा एडीटर में दो विंडो होते हैं। डेटा व्यू डिफाल्ट में दिखता है जिससे आंकड़ो को प्रविष्ट किया जाता है। आंकड़ो को डेटा व्यू स्प्रेडशीट में प्रविष्ट किया जाता है। अधिकतम विष्लेशण के लिये SPSS यह मान लेता है कि रो के द्वारा केसों एवं कॉलम के द्वारा चरों का प्रतिनिधित्व होता है।

डाटा व्यू, स्प्रेडशीट ब्यू व टाप डाउन मेन्यू द्वारा नियंत्रित होता है। इसके द्वारा सेल के फोट को बदला जा सकता है पंक्तियों को हटाया जा सकता है तथा वेल्यू लेबल को दर्शनीय बनाया जा सकता है। डाटा व्यू का प्रयोग तब करते है जब हम एसपीएसएस में डाटा की एण्टी करते है ।इसके स्तम्भों को चर कहा जाता है । स्तंभ के शीर्ष पर चर का नाम लिखा जाता है।पंक्तियों को केस कहा जाता है । डाटा सेल में ही वैल्यू निहित होता है जिसमें मूल्य निर्धारण होता है ।

वैरीवल ब्यू वैरीवल व्यू के द्वारा चरों को परिभाषित किया जाता है। जैसे ही आंकड़ो को डेटा व्यू के अन्तर्गत कॉलम में प्रविष्ट किया जाता है। वैसे ही वैरीवल व्यू में चर

कालम का डिफाल्ट नाम एक पंक्ति का रूप ले लेते हैं। वैरीवल व्यू में निम्न विशिष्टता पायी जाती है।

नाम (Name) – इसमें चुने हुये चरों का नाम होता है इसमें केवल आठ अल्फावेट तक के नाम आ सकते है। इसमें अंडरस्कोर (_) तो स्वीकार्य है परंतु हाइफन (-) तथा स्पेस स्वीकार्य नहीं है।

टाइप (Type) – इसमें आंकड़ो के प्रकार को रखा जाता है इसका एक डिफाल्ट सेल होता है।

चौड़ाई (Width) - इसके द्वारा वास्तविक आंकड़ो की प्रविष्ट आंकड़ो की प्रविष्ट आंकड़ो का फैलाव दिखाया जाता है इसमें आंकिक चरों की डिफाल्ट प्रविष्टि 8 है। तीसरे कॉलम में सेल को हाइलाइट करके चौड़ाई को बढ़ाया या घटाया जा सकता है। ऐसा केवल सेल में नये नंबर को टाइप करके भी प्राप्त किया जा सकता है।

दशमलव (Decimels) – प्रविष्ट आंकड़ो में दशमलव के दायी तरफ आंकड़ो का प्रदर्शन होता है लेकिन यह string data में नहीं प्रयुक्त होता है।

आंकड़ो का संग्रहण तथा आंकड़ो की पुर्नप्राप्ति (Storing and retrieving data files) – आंकड़ो का संग्रहण तथा आंकड़ो की पुर्नप्राप्ति मेन्यूबार में फाइल को सेलेक्ट करने के बाद उपलब्ध हुये टॉप डाउन के द्वारा की जा सकती है।

वैल्यू लेबल

वैल्यू के अन्तर्गत वैल्यू लेवल प्राप्त होता है जिसमें हमारे आकडों का मूल्य प्रदर्शित होता है ।वैल्यू लेवल के द्वारा चर के खास मूल्यों को लेवल प्रदान किया जाता है ।वैल्यू लेवल ज्यादातर नामित या वर्गीकृत चरों के लिये प्रयुक्त होता है –

1 हिन्दू, 2 मुसलमान,3 ईसाइ ,4 नास्तिक , 5 अन्य

वैल्यू लेवल का एक अन्य महत्वपूर्ण उपयोग होता है चरों का समूहीकरण करना । जैसे , मान लीजिये हमें एल्कोहल के विभिन्न मात्रा लेने वाले प्रतिभागियों के प्रतिक्रिया समय में अन्तर देखना है ।हम ग्रुप 1 वैल्यू लेवल का इस्तेमाल उनके लिये कर सकते है जिन्होनें एल्कोहल का सेवन नहीं किया ,ग्रुप 2 वैल्यू लेवल का इस्तेमाल उनके लिये कर सकते है , जिन्होंने 1 यूनिट एल्कोहल का प्रयोग किया था व ग्रुप 3 वैल्यू लेवल वाले समूह ने 2 यूनिट एल्कोहल का प्रयोग किया था । वैल्यू लेवल को एसपीएसएस में अर्न्तनिहित कर दिया जाता है , जिससे इन वैल्यू के मतलब का पता चल सके ।

मिसिंग वैल्यू –

कभी कभी हमारे पास आकडों का पूरा सेट उपलब्ध नहीं हो पाता । उदाहरण के लिये , कुछ प्रतिभागी अपने धर्म को नहीं बताते है या कुछ प्रतिभागियों से आकडें उपलब्ध नही हो पाते है । आकडों के इस अन्तर को मिसिंग वैल्यू कहतें है ।जब हमारे पास मिसिंग वैल्यू होता है तो यह आवश्यक होता है कि एसपीएसएस को यह बताया जाये कि हमारे पास उस चर पर इस प्रतिभागी का वैध आकडा उपल्बध नहीं है ।इसके लिये हम एक ऐसे वैल्यू को चूनते है जो उस चर के लिये सामान्यतः प्रयूक्त नही होते है । जैसे धर्म के लिये हम कोड 9 को ले सकते है ,जब उत्तरदाता अपने धर्म को नहीं बताता है । इस प्रकार कोड 9 धर्म के लिये मिसिंग वैल्यू है । मिसिंग वैल्यू सभी चरों के लिये अलग अलग हो सकता है

24.4 डाटा इंट्री

जब (SPSS) विंडो को खोलते हैं तो एक डिफाल्टर डायलाग बाक्स खुलता है जिसके द्वारा कई विकल्प प्राप्त होते हैं। जब टाइप इन डाटा का चयन होता है तो एक खाली स्प्रेडशीट खुलती है जिसे डाटा एडीटर कहते हैं। स्कीन के ऊपर एक मेन्यू बार होता है तथा नीचे की ओर एक स्टेटस बार होता है। स्टेटस बार द्वारा यह पता चलता है कि कौन सी सुविधायें अभी सक्रिय हैं। सेशन की शुरूआत में साधारणतः यह कहता है SPSS processor is ready SPSS के द्वारा एक टूलबार भी प्राप्त होता है जो सामान्य कार्यो को तेजी से आसानी से कर सकता है। प्रत्येक टूल के बारे में संक्षिप्त जानकारी टूलबार पर कर्सर ले जाकर प्राप्त किया जा सकता है।

जब हम नये डाटा सेट का निर्माण कर रहे होते है तो चरों के नाम व अन्य विशेषताओं से शुरूआत करते है फिर प्रत्येक स्वतन्त्र स्रोत के लिये प्रत्येक चर पर विशिष्ट वैल्यू को Enter करते है । आकडों के स्वतन्त्र स्रोत के लिये एक पंक्ति तथा प्रत्येक विशेषता (वैरीबल) के लिये एक कॉलम होता है ।

यह ध्यान रखना होता है कि एक प्रतिभागी का डेटा एक समय में इन्टर करना चाहिये । उदाहरण के लिये एक प्रतिभागी को लिंग,उम्र व किसी स्वतन्त्र चर पर उसके प्रांप्ताक मदजमत करते है ,फिर इसी रो में दूसरे प्रतिभागी का कंजं इंटर करने के पश्चात एक बार पुनः उनका निरीक्षण किया जाना चाहिये ।

डेटा फाइल को सेव करना – इसके लिये मेन्यू आइटम में फाइल पर क्लिक करते है । Save का Option आता है ।इसके लिये फाइल का नाम लिखते है फिर सेव करते है । इस फाइल का नाम का प्रयोग करते है ।

SPSS Variable Types-

SPSSे वैरीबल टाइप का व फारमेट का अध्ययन करने से कार्य और तेजी व विश्वसनीय तरीके से किया जाता है । SPSS में दो वैरीबल टाइप होते है – 1–स्ट्रिग 2– न्यूमेरिक । न्यूमेरिक चरों में केवल अंक आते है । स्ट्रिग वैरीबल में अक्षर , संख्या व अन्य विशेषतायें आती है । न्यूमेरिक वैरीबल के साथ गणना की जा सकती है पर स्ट्रिग वैरीबल के साथ नहीं ।

वैरीबल टाइप का व फारमेट का अध्ययन करने से कार्य और तेजी व विश्वसनीय तरीके से किया जाता है । SPSS में दो वैरीबल टाइप होते है – 1–स्ट्रिग 2– न्यूमेरिक । न्यूमेरिक चरों में केवल अंक आते है । स्ट्रिग वैरीबल में अक्षर , संख्या व अन्य विशेषतायें आती है । न्यूमेरिक वैरीबल के साथ गणना की जा सकती है पर स्ट्रिग वैरीबल के साथ नहीं ।

Syntax SPSS की तीन महत्वपूर्ण विडो में से दूसरा महत्वपूर्ण विडो है । यह वहा पर उपथित होता है जहॉ पर से हम फाइल को खोलने का कंमाड, एडिटिग का ,रिजल्ट जनरेट का व फाइल सेव करने का कमांड देते है । सिन्टेकस के द्वारा जटिल से जटिल कमान्ड को सेव कर लिया जाता है । सिन्टेकस के द्वारा आकडा विश्लषण (Data Analysis) का रिकार्ड रखा जाता है।

Output विडो वह विडो है जो सभी आउटपुट जिन्हें हमने विष्लेशणके दौरान उत्पन्न किया है को समाहित करता है इसके द्वारा मुख्यतः टेबल एवं चार्ट का प्रयोग किया जाता है । आउटपुट व्यूवर विडो तब अपने आप उत्पन्न हो जाता है जब हम परिणाम उत्पन्न करते है । यह बैगनी आइकॉन से प्रदर्शित किया जाता है । SPSS आउटपुट फाइल का उपयोग रिर्पोटिग के लिये नहीं किया जा सकता ।

डाटा एनालिसिस के लिये एनालिसिस में जाकर के जो सांख्यिकीय विधि प्रयुक्त करनी होती है उस पर क्लिक कर देते है । इसमें आवृति से लेकर कारक विष्लेशणअर्थात साधारण से लेकर जटिलतम सांख्यिकीय विधि आती है ।

अपरिष्कृत आकडों को विष्लेशणकरने से पहले कुछ एडिट करने की आवश्यकता होती है । इसमें नये चरों का निर्माण , आकडो का पुर्ननिर्माण किया जाता है ।

सभी चार्ट व तालिकायें SPSS द्वारा आसानी से प्राप्त की जा सकती है । इसके लिये डाटा एनालिसिस में ही जाना होता है लेकिन SPSS में एक कमी यह है कि इसके द्वारा उत्पन्न किया हुआ चार्ट देखने में अच्छा नहीं लगता है । इससे उबरने के लिये SPSS Graph Editor का प्रयोग करना होता है।

24.5 सारांश

- SPSS एक बहुत ही महत्वपूर्ण सॉफ्टवेयर है। इसके द्वारा हम बहुत बड़े आंकड़ों का सांख्यिकी विष्लेशणआसानी से कर सकते हैं। इस सॉफ्टवेयर का उपयोग वर्तमान जगत में बहुत तेजी से हो रहा है।

- SPSS में विभिन्न तरह के एप्लीकेशन जिसमें डेटा बेस मैनेजमेन्ट तथा रिर्पोटिग , सांख्यिकी विष्लेशणव ग्राफिक सम्मिलित है ।

- SPSS के द्वारा सभी स्रोतों से प्राप्त आकडों का संसाधन किया जा सकता है । इसमें डेटा एडीटर विडो , सिन्टेकस व आउटपुट विडो तीन महत्वपूर्ण विडो होती है ।

- डाटा एडीटर विडो में दो टैब होते है – डेटा व्यू ,वैरीबल व्यू। डेटा व्यू व वैरीबल व्यू का प्रयोग डेटा एट्री के लिये किया जाता है ।

- सिन्टेक्स विडो द्वारा सभी कमाडो का रिकार्ड रखा जाता है ।

- आउटपुट विडो द्वारा उत्पन्न परिणामों का संग्रहण किया जाता है ।

- इसके द्वारा आंकड़ों की कोडिंग की जाती है और उनका प्रविष्टन करके विभिन्न सांख्किीय विधियों द्वारा परिणाम पाया जा सकता है।

- इसमें साधारण से लेकर जटिल सांख्किीय विधियों का प्रयोग किया जा सकता है।

24.6 शब्दावली

- **एसपीएसएस** – यह एक ऐसा सॉफ्टवेयर है जिसे सामाजिक विज्ञान के शोधों, बाजार अनुसंधानों, स्वास्थ्य शोधों, कम्पनियों द्वारा किये जाने वाले सर्वेक्षणों, सरकारों व शैक्षिक अनुसंधानों द्वारा किया जाता है व बाजार विष्लेशणके लिए भी इसका उपयोग होता है।

- **डाटा इन्ट्री** – यह आंकड़ों के विष्लेशणकके पहले की अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रक्रिया है। इसमें आंकड़ों को आंकिक रूप से सॉफ्टवेयर में अंकित किया जाता है।

24.7 स्व मूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. एसपीएसएस द्वारा न केवल आंकड़ों का सांख्यिकीय विष्लेशणबल्कि उसके द्वारा आंकड़ों का .... भी किया जाता है।
2. एडिट मे .... का कमांड होता है।
3. एनेलाइज द्वारा .... का कमांड होता है।
4. वैरीबल व्यू में .... को परिभाषित किया जाता है।

उत्तर – 1. व्यवस्थापन 2. कट, कापी, पेस्ट, 3. सांख्यिकीय विष्लेशण 4. चरों

24.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची

SPSS for Psychologists. Nicola Brace, Richard Remp and Rosemery Shelgen. Palgrave.

24.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. एसपीएसएस में सॉफ्टवेयर का क्या उपयोग है। इसके द्वारा आंकड़ों का विष्लेशणकैसे होता है ?
2. एसपीएसएस द्वारा आंकड़ों की एन्ट्री का क्या तरीका है ?